स्तालिन

स्तालिन

[एक जीवनी]

★

राहुल सांकृत्यायन

१९५३

पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस लिमिटेड

बम्बई—४

७ नवम्बर, १९५३,

महान् अक्तूबर क्रांति की

३६ वीं वर्षगांठ के अवसर पर

मूल्य-तीन रुपया

न्यू एज प्रिंटिंग प्रेस, १९० बी. खेतवाडी मेन रोड, बम्बई-४ में जयन्त भट्ट द्वारा मुद्रित और उन्हीं के द्वारा पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस लि०, १९० बी. खेतवाडी मेन रोड, बम्बई-४ की ओर से प्रकाशित।

साथी श्रीपाद अमृत डांगे को

विषय सूची

६. उपनेता सन् (१९२१-२३)

७. पुनर्निर्माण (सन् १९२४-२७)

८. पंचवार्षिक योजनायें (सन् १९२७-४१)

चित्र सूची

भूमिका

दुनिया की अनेकों भाषाओं में स्तालिन की जीवनी या जीवनियों का अभाव नहीं, यद्यपि उनमें कितनी ही बातों की कमियां देखी जाती हैं। पर, हिन्दी में तो प्रायः उनका अभाव ही है। वैसे स्तालिन के ऐतिहासिक जीवन ही नहीं, बल्कि भावी संसार के पथ-प्रदर्शक के रूप के प्रति अपनी श्रद्धा प्रकट करना भी एक उद्देश्य हो सकता था, जिसके कारण मुझे लेखनी उठानी पड़ती। मैं यह मानता हूं कि इस जीवनी में भी एक त्रुटि दिखाई पड़ेगी, जो त्रुटि दूसरी भाषाओं की जीवनियों में भी देखी जाती है। वह है—वैयक्तिक जीवन की घटनाओं की कमी। मैं उनकी खोज में हूं, लेकिन उनके प्राप्त करने तक पुस्तक लिखने या उसे प्रकाशित करने से रोके रखना, इसे अनिश्चित काल के लिये स्थगित करना होता। दूसरे संस्करण में, मुझे आशा है, उस दिशा में भी मैं कुछ और चीजें पाठकों को दे सकूंगा। स्तालिन का जीवन केवल ज्ञानवर्द्धन का साधन ही नहीं है, बल्कि वह पग-पग पर गहन कर्म-पथ पर प्रकाश डालता है।

स्तालिन की जीवनी लिखते समय, मेरे मन में ख़्याल आया कि जैसे नये संसार के इस महान् निर्माता की जीवनी को हिन्दी के पाठकों के सामने रख रहा हूं, वैसे ही अच्छा होगा, यदि इसी तरह की मार्क्स, एंगेल्स, लेनिन और माओ की चारों जीवनियां भी लिख डालूं। इन पांचों महापुरुषों की जीवनियां लिखने का संकल्प करके, मैंने मार्क्स की जीवनी में हाथ लगा भी दिया है। आशा है, बाक़ी तीन जीवनियों को भी सन् १९५३ में ही लिख कर समाप्त कर सकूंगा। वैसे तो यह भी सोच रहा हूं कि "नये संसार के निर्माता" के नाम से नई दुनिया के बनाने वाले बीस पुरुषों की जीवनियां लिखूं जिनमें एशिया और युरोप के बहुत से देशों के नेता होंगे; लेकिन, बहुतों के बारे में अंग्रेज़ी और रूसी भाषा में भी सामग्री उपलब्ध नहीं है। इसलिये, नहीं कह सकता, कब तक वह संकल्प पूरा हो सकेगा।

राहुल सांकृत्यायन

मसूरी, १ नवम्बर '५३

अध्याय १.

बालपन

(सन् १८७९-८५)

१. जन्मभूमि

कोहकाफ़ का नाम हम बचपन से सुनते आये हैं। यह अद्भुत पहाड़ परियों का देश माना जाता था। उर्दू और फ़ारसी की पुस्तकों में यहां की अनिंद्य सुन्दर परियों की न जाने कितनी कहानियां हम पढ़ते-सुनते आये हैं। लेकिन, परियों और देवताओं का ज़माना अब बीत चुका है, उन पर कोई विश्वास करने के लिये तैयार नहीं। इसी कोहकाफ़ को रूसी में 'कफ़काश' और अंग्रेज़ी में 'काकेशस' कहते हैं। किसी समय सभी ने पाठशाला के भूगोल में पढ़ा होगा कि यहां के स्त्री-पुरुष दुनिया में सबसे सुन्दर होते हैं। लेकिन, इसकी सचाई के बारे में कुछ कहना मुश्किल है, तो भी यह मान लेने में कोई हर्ज नहीं कि काकेशस के लोग अपेक्षाकृत अधिक सुन्दर होते हैं। और, सुन्दरता के साथ वीर भी अधिक होते हैं, यह इतिहास बतलाता है।

काकेशस पर्वतमाला वस्तुतः उसी विशाल पर्वत-श्रेणी का एक अंग है, जो पश्चिमी चीन से स्विटज़रलैंड और स्पेन तक, अर्थात् लगभग प्रशान्त महासागर से अटलान्टिक महासागर तक यूरेशिया महाद्वीप की कटि-मेखला बनी हुई है। चीन के पर्वतों के बाद, आसाम से कश्मीर तक हमारा हिमालय उसी का एक अंग है; फिर पामीर, हिन्दूकुश और ईरान की उत्तरी पर्वत-श्रेणी (कोपेतदाग) को लेते हुये वह कास्पियन समुद्र के दक्षिणी पूर्वी कोने पर पहुंचती है। इसी स्थल पर, समुद्र के पश्चिमी तट से काला सागर के पूर्वी तट तक काकेशस पर्वत-श्रेणी फैली हुई है। यह पूर्व-पश्चिम जितनी चौड़ी है, उत्तर-दक्षिण में भी इसका विस्तार प्रायः उतना ही है। हिमालय की तरह, यहां भी सनातन हिम से आच्छादित बहुत से पर्वत-शिखर हैं, और सचमुच ही कास्पियन में सामुद्रिक यात्रा करने वाले उन्हें देख, भूल कर कह सकते हैं कि हम हिमालय के पास आ गये हैं। हिमालय की भांति, इस भूमि में भी प्रकृति की अद्भुत शोभा चारों तरफ़ बिखरी हुई है। कहीं देवदारों के घने जंगल हैं, नीचे बंज और दूसरे हिमालीय वृक्षों की हरियाली दिखलाई पड़ती है। हिमालय की तरह, काकेशस पर्वतमाला में भी भिन्न-भिन्न भाषा-भाषी जातियों का अद्भुत जमावड़ा है। यहां की लड़ाकू जातियों ने अपने पहाड़ों को किला बना कर हमेशा अपनी स्वतंत्रता की रक्षा की है—विदेशियों से भी, और पड़ोसियों से भी। कुर्द, ओसेत् (प्राचीन अलान) जैसी इंदो-ईरानी भाषायें बोलने वाली जातियां जहां काकेशस की गोद में आज भी मिलती हैं, वहां आज़ुर्बाइजानी जैसे तुर्की-भाषी लोग भी यहां के बहुत से भागों में रहते हैं। आज आज़ुर्बाइजान की राजधानी

बाकू दुनिया का प्रसिद्ध तेल-क्षेत्र है। दागिस्तान के तुर्की भाषा-भाषी लोगों से मिल कर, कास्पियन के पश्चिमी तट के काफ़ी भाग में तुर्कवंशी जातियां रहती हैं। ओसेती और अबखाज़ी काकेशस के सबसे ऊंचे भागों में रहते हैं। इनके अतिरिक्त, काकेशस के पश्चिमी भाग में इन्दो-युरोपीय भाषा की पुरानी शाखाओं—अर्मनी और गुर्जी (जार्जियन) बोलने वाले रहते हैं। विद्वानों का मत है कि ये दोनों जातियां अपनी भाषा के रूप में एक बहुत पुरानी भाषा के अवशेष को क़ायम रखे हुये हैं। इस प्रकार, मालूम होगा कि क्षेत्र में छोटा होने पर भी, इस भू-भाग में अनेकों जातियाँ एकत्रित हैं। तुर्की और तद्भाषा-भाषी जातियों की तरह यद्यपि ऐतिहासिक काल में बहुत सी भाषायें और जातियाँ यहाँ आपस में मिलकर एक हो गईं, लेकिन दुर्गम पर्वतों और लोगों की वीरता के कारण अब भी बहुत सी जातियाँ और भाषायें मिलती हैं।

काकेशस युरोप का नहीं, बल्कि हमेशा से एशिया का अभिन्न अंग रहा है। एशिया और युरोप की वर्तमान सीमा काला सागर से शुरू हो, काकेशस के उत्तर-उत्तर कास्पियन पहुंच, फिर उसमें गिरने वाली उराल नदी से होती हुई, उराल पर्वत-श्रेणी से मिल जाती है। गुर्जी (जार्जी) और अर्मनी लोग बहुत पहले ईसाई हो गये थे, जिसमें उनकी वीरता से फ़ायदा उठाते हुये उन्हें अपने प्रतिद्वंद्वी ईरानियों के विरुद्ध खड़ा करने का, रोमन साम्राज्य का प्रयत्न भी एक कारण था। सासानी ईरानियों के शासन को जब अरबों ने खतम किया, तब भी कितने ही समय तक अर्मनी और गुर्जी बहादुर वही काम करते रहे, जो कि भारत के पश्चिमोत्तर में अरबों और तुर्कों के विरुद्ध पठान करते रहे। उन्होंने कितनी सफलता के साथ मुक़ाबला किया, यह इसी से मालूम होगा कि इस्लामी विजेताओं ने गुर्जियों और अर्मनियों को मुसलमान बनाने में सफलता नहीं पाई। अर्मनी और गुर्जी जहां ईसाई होने से पश्चिम की शक्तियों की ओर आशा लगाये रहते थे, वहां कुर्द और तुर्क आदि मुसलमान हो जाने के बाद इस्लामी जगत से अपनी घनिष्टता मानते थे। शायद आज जैसा भाव उनमें कभी भी पैदा नहीं हुआ, जब कि सभी काकेशस का पुत्र मानते हुये, अपने को भाई-भाई समझते हों। आज काकेशस की भिन्न-भिन्न जातियों का आपसी संघर्ष अतीत की बात हो गई है, सभी जातियों की भाषा और संस्कृति के अनुसार अपने स्वतंत्र या स्वायत्त गणराज्य हैं, जहां वह अपनी जातीय इकाई को अक्षुण्ण बनाये, अपने को सोवियत की विशाल महाजाति का अंग मानती है। उनके ऐसे परिवर्तन तथा सुख-समृद्धि-पूर्ण सांस्कृतिक जीवन के निर्माण में जिस पुरुष का सबसे बड़ा हाथ है, वह इसी काकेशस भूमि में पैदा हुआ था।

२. जन्म

काला सागर के नातिदूर काकेशस के पश्चिमी भाग में गुर्जी लोगों का प्राचीन नगर तिफ़लिस (त्विलिसी) है, जिसके पास गोरी कस्बा है। इसी कस्बे के

पास दिदिलियो नामक छोटा सा गांव है, जहां पिछली शताब्दी के मध्य में बिसारियोन नामक एक ग़रीब चमार रहता था। उसके वंश का नाम जुगशविली था। बिसारियोन जूते बनाने के साथ-साथ कुछ खेती भी कर लिया करता था, लेकिन दोनों से भी उसका गुज़ारा मुश्किल से होता था। बिसारियोन ने गंबरयोली गांव के अर्धदास, गुर्जी गेलादूज़े की लड़की एकातेरिना (केथरिन) से ब्याह किया, जिसके बारे में मालूम है कि वह बड़ी सुन्दर, काली बड़ी आंखों तथा गम्भीर मुखमुद्रा वाली स्त्री थी। बिसारियोन को अपना काम दिदिलियो में ठीक चलता नहीं दिखाई पड़ा; क्योंकि अब कुटीर-उद्योग की तरह जूते बनाने वालों की भी प्रतिद्वंदिता जूते के कारखानों से थी। अब दूसरे देशों के सहकर्मियों की तरह, बिसारियोन ने भी पराजय स्वीकार करते हुये गांव छोड़ कर, पहिले गोरी फिर तिफ़लिस की अदिलख़ानोफ फैक्टरी में जा कर काम किया।

एशिया की एक इतनी उत्पीड़ित श्रेणी में पैदा हुए बालक के लिये कोई ज्योतिषी भी कब ऐसे पद की, जिस पर इस बालक को पहुँचना था, भविष्यवाणी कर सकता था? एक एशियाई चमार का लड़का दुनिया का अद्वितीय नेता और अमर पूज्यनीय शिक्षक होगा, इसकी आशा एकातेरिना और बिसारियोन भी कब कर सकते थे? बिसारियोन जार्जिया की तत्कालीन राजधानी तिफ़लिस की बूट-फैक्टरी में काम करता था। गोरी कस्बे के उपनगर में, वही छोटा सा पैतृक घर था, जिसके बारे में स्तालिन के सहपाठशालीय द० गोगोखिया ने अपने संस्मरण में लिखा है: "जिस घर में परिवार रहता था, वह पांच वर्ग गज़ से ज़्यादा बड़ा नहीं था। घर के साथ रसोई की कोठरी भी थी। दरवाज़े से सीधे आंगन में पहुँचते थे, वहां कोई दहलीज़ नहीं थी, फ़र्श ईंटों का था। एक छोटा सा झरोखा था, जिससे छन कर रोशनी आती थी। घर में सारा फ़र्नीचर यह था: एक छोटी सी मेज़, एक स्टूल, एक लम्बा सोफा, जो पुआल भर कर मामूली कपड़े से ढँक कर बनाया गया था।" बिसारियोन जुगशविली के काम के हथियार थे—एक पुराना सड़ा सा मोढ़ा, हथौड़ा और चमड़ा सीने की सुई, जो संग्रहालय में आज भी मौजूद है। इसी घर में ११ दिसम्बर, १८७९ को बिसारियोन और एकातेरिना के घर में एक पुत्र पैदा हुआ। रात-दिन घर का काम करके भी गुज़ारा होना मुश्किल देख, एकातेरीना दूसरों के कपड़े धोने का काम भी करती थी। इस प्रकार स्तालिन को अपने शैशव से ही अनुभव था कि ग़रीबी क्या चीज़ है।

मां-बाप ने लड़के का नाम सोसो रखा, जो रूसी योसेफ़ और अंग्रेज़ी जोज़फ का रूपान्तर है। बिसारियोन ने सात वर्ष की उमर में ही सोसो का अक्षरारंभ कराया। एक वर्ष में ही वह पहले गुर्जी और फिर रूसी पढ़ने लग गया। लेकिन, पिता बहुत दिनों तक न जी सका, इसलिये सोसो के पालन-पोषण का भार एकातेरीना के ऊपर पड़ा (एकातेरिना जून सन् १९३७ में मरी)। सोसो के बाल्य जीवन पर किसी ने प्रकाश डालने की कोशिश नहीं की। उसका बाद का जीवन इतनी बहुलता और भारी सफलताओं से भरा है कि इस ओर किसी का ध्यान ही नहीं गया।

अध्याय २.

विद्यार्थी जीवन

(सन् १८८५-९८)

१. गोरी में

सोसो का जन्म गोरी में हुआ था और उसका अक्षरारम्भ भी वहीं हुआ। यद्यपि माता-पिता शिक्षा से वंचित थे, लेकिन वह उसके महत्व को भली प्रकार जानते थे। कुछ दिनों तक सोसो साधारण पाठशाला में पढ़ता रहा। उनकी स्थिति के माता-पिता अपने लड़के को अधिक खर्चीली शिक्षा नहीं दे सकते थे। उस समय सारा काकेशस रूसी ज़ार के अधीन था, जिसका धर्म ईसाई था, और ईसाई पादरियों का बहुत सम्मान था। माता-पिता ने सोचा कि पादरी बनाने में पुत्र का भविष्य उज्ज्वल हो सकता है, इसीलिये सन् १८८८ में, जब कि सोसो अभी नौ वर्ष का ही था, उसे गोरी के पुरोहित स्कूल में दाखिल करा दिया। छ वर्ष तक सोसो वहीं पढ़ता रहा।

गोरी के पुरोहित स्कूल में सोसो बड़ा ही मेहनती और बुद्धिमान विद्यार्थी था। उसे सबसे अधिक अंक मिला करते थे। वह पढ़ने में जितना तेज़ था, उतना ही खेल-कूद में भी, इसीलिये सभी खेलों में वह अपने सहपाठियों का नेता बना करता था। अपने सहपाठियों के साथ उसका बड़ा प्रेम था। पढ़ने के अलावा उसे ड्राइंग तथा गाने का भी शौक था।

वह साधारण लोगों के साथ कितना मिलनसार था, यह उसके सहपाठी ग० एलिज़ाबेदेशविली द्वारा उल्लिखित निम्न घटना से मालूम होगा :

"एक दिन गांव में गये। एक खेत में हमने हलवाहों को विश्राम करते देखा। उनमें से एक को आनंदविभोर हो रोटी और दाल खाते देख, साथी स्तालिन (सोसो) ने उससे पूछा : 'तुम क्यों ऐसा खराब खाना खाते हो?'...

...'तुम जोतते हो, बोते हो और स्वयं फ़सल काट कर जमा करते हो। तुम्हें तो अच्छी तरह रहना चाहिये।'

'हां, यह बिलकुल ठीक है। हम स्वयं फ़सल काटते हैं,' किसान ने कहा, 'लेकिन पुलिस इन्स्पेक्टर को उसका भाग मिलना चाहिये, और पुरोहित को उसका। इस प्रकार तुम देखते हो, हमारे लिये बहुत कम बच रहता है।'

"इस भूमिका से बातचीत शुरू हो गई। उसके दौरान में साथी सोसो ने समझाना शुरू किया कि किसान क्यों इतनी ग़रीबी का जीवन बिताते हैं, कौन उनका शोषण करता है, कौन उनके मित्र हैं और कौन शत्रु। वह इतने सीधे-सादे शब्दों में और दिलचस्प ढंग से बातें करता रहा कि किसानों ने उससे फिर आकर बातें करने के लिये प्रार्थना की।"

सोसो के दूसरे लंगोटिया यार ग० ग्लुरजिद्ज़े की निम्न बातें बतलाती हैं कि गोरी के जीवन में ही सोसो धर्म के बारे में कहां तक पहुंच गया था :

"मैं भगवान के बारे में कहने लगा। सोसो मेरी बात सुनता रहा और फिर ज़रा सा चुप रहकर, उसने कहा : 'तुम जानते हो, वह (पादरी) हमें बेवकूफ़ बना रहे हैं, कोई भगवान नहीं है। ...'

"इन शब्दों को सुनकर, मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ। पहले मैंने उसके मुँहसे कभी ऐसी बात नहीं सुनी थी।

"तुम कैसे ऐसी बातें करते हो सोसो?"—मैंने आश्चर्य से पूछा।

'मैं तुम्हें पढ़ने के लिये किताब दूंगा, जो बतलायेगी कि दुनिया और सभी सजीव चीज़ें उससे बिलकुल दूसरी हैं, जैसा कि तुम मान रहे हो, और ईश्वर के बारे में कही जाने वाली सारी बातें केवल बेवकूफ़ी हैं।'-सोसो ने कहा।

"कौन -सी किताब?"—मैंने पूछा।—'डारविन की। तुम उसे ज़रूर पढ़ना'—सोसो ने बहुत ज़ोर देकर मुझसे कहा।"

गोरी के सहपाठी वानो केच्खोवेली ने अपने संस्मरण में लिखा है :

"वसंत और शरद में इतवार के दिन, हम अक़्सर देहात में घूमने जाया करते थे। गोरी के ज्वरी पर्वत की ढलान में एक छोटी सी खुली जगह थी, जो हमें बहुत पसन्द थी। दिन बीतते गये और अपने साथ हमारे शैशव की आशाओं और स्वप्नों को भी लेते गये। गोरी स्कूल के ऊपर के दर्जा में हमने गुर्जी साहित्य से परिचय प्राप्त किया, लेकिन वहाँ हमें रास्ता बताने वाला, और हमारे विचारों को एक निश्चित दिशा देने वाला कोई भी नहीं था। चोचवाद्ज़े की कविता 'डाकू काको' से हम बहुत प्रभावित थे। कज़्बेगी की कविता के नायकों ने हमारे तरुण हृदय को जगाकर, अपने देश के प्रति प्रेम पैदा कर दिया, और स्कूल छोड़ते समय हमें उससे अपने देश की सेवा के लिये प्रेरणा मिली थी। लेकिन हममें से कोई नहीं जानता था कि यह सेवा किस रूप में होगी।"

२. तिफ़लिस सेमिनरी

पादरी बनने की उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिये, सोसो पन्द्रह वर्ष की उमर में गोरी से जाकर तिफ़लिस की सेमिनरी में दाख़िल हो गया। सेमिनरी में दाख़िल होने के साथ ही साथ, सोसो अपने ही शब्दों में :

"मैं क्रांतिकारी आन्दोलन में पन्द्रह वर्ष की उमर में शामिल हो गया, जब कि उस समय काकेशिया में रहने वाले कुछ फ़रार (अन्डरग्राउण्ड) रूसी मार्क्सवादी समुदायों के साथ मैंने सम्बंध स्थापित किया। इन टुकड़ियों ने मेरे ऊपर भारी प्रभाव डाला और मुझ में ग़ैरक़ानूनी मार्क्सीय साहित्य की चाट पैदा कर दी।"

जब सोसो को वर्जित फल खाने की चाट लग गई, तो कहने की आवश्यकता नहीं कि तिफ़लिस की इस सेमिनरी में दाख़िल होने के बाद, उसका जीवन वह नहीं रह गया, जो एक भावी पादरी का होना चाहिये था। सोसो अपनी शिक्षा को अपनी पाठ्य-पुस्तकों तक ही सीमित नहीं रख सकता था। सन् १८९४ से १८९९ तक पांच वर्षों का जीवन, जब सोसो पन्द्रह वर्ष से बीस वर्ष का हो गया, उसके गंभीर अध्ययन का समय था।

३. राजनीतिक अवस्था

उस समय अर्मीनिया और अज़ुर्बाइजान के साथ, गुर्जी (जार्जिया) काकेशिया या 'काकेशस-पार' नामक रूसी सूबे का एक भाग था। तुर्की जैसे शक्तिशाली शत्रु से लड़ते-लड़ते, अन्त में १९ वीं सदी के आरम्भ में गुर्जी ने रूसी साम्राज्य का अंग बनना स्वीकार कर लिया। रूस के शासकों की इच्छा रहती थी कि अपनी प्रजा को रूसी सांचे में ढाला जाय, जिसके लिये गुर्जी सामन्त पहले से ही तैयार थे। साम्राज्यवादी अंग्रेज़ों की तरह, ज़ारशाही भी फूट डाल कर शासन करने की नीति का खूब पालन करती, और ज़रा भी सिर उठाते देख गुर्जियों, अर्मनियों, तुर्कों, कुर्दों को आपस में लड़ा देती। वह इस बात की पूरी कोशिश करती थी कि इन पहाड़ी जातियों के छुरे हमेशा एक दूसरे की गर्दन पर तने रहें। सन् १८५४-५६ में रूस को क्रिमिया के युद्ध में पड़ना पड़ा, जिसमें तुर्की की पीठ ठोकते हुये अंग्रेज़ों और फ्रांसीसियों ने स्वयं युद्ध में उतर कर ज़ार को भयंकर हार दी। पश्चिमी युरोप के सम्पर्क के कारण, रूस में इससे तीस साल पहले ही, उच्च वर्ग ने ज़ार की निरंकुशता को हटाने का प्रयास किया था। उस समय कितने ही 'दिसम्बरियों' को प्राणों से हाथ धोना पड़ा था। क्रिमिया पराजय के बाद, फिर ज़ारशाही के विरुद्ध रूसियों की भावना जाग उठी। ज़ार ने छोटे-मोटे सुधारों के

द्वारा बहलाना चाहा। सन् १८६० और १८६९ के कुछ सुधारों द्वारा किसानों के खून की एक-एक बूंद निचोड़ कर, जमींदारों को भारी रक़म दे, किसानी अर्ध-दासता को ख़तम किया गया। जेम्स्त्वो (म्युनिस्पैलिटी, जिला बोर्ड जैसी संस्थाओं) तथा न्यायालयों में कुछ सुधार करके क्रांति की लहर को दबाने की कोशिश की गई। अब नरोद्निकी ('जनतावादी') क्रांतिकारी बमों और पिस्तौलों को लेकर, उसी तरह ज़ार के खिलाफ़ खड़े हो गये थे, जिस तरह कि उससे चालीस वर्ष बाद भारत में अंग्रेजों के खिलाफ़ हमारे क्रांतिकारी। सन् १८७० से १८८१ तक 'जनतावादी' क्रांतिकारियों का युग रहा। ये स्वतंत्रता के दीवाने समझते थे कि ज़ार या उसके बड़े कर्मचारियों की इक्की-दुक्की हत्या करके, जनता की सहायता के बिना ही मुट्ठी भर वीर नया युग लाने में सफल हो सकते हैं। सन् १८८१ में, उन्होंने ज़ार अलेक्सान्द्र द्वितीय को मार डाला, जिसके 'अपराध' में ही लेनिन के बड़े भाई अलेक्सान्द्र को फांसी पर चढ़ना पड़ा था। लेकिन, धीरे-धीरे मालूम हो गया कि यह मुक्ति का रास्ता नहीं है; जैसा कि अपने बड़े भाई के फांसी पर चढ़ने की ख़बर सुन कर तरुण व्लादिमिर इलिच (लेनिन) ने कहा था : "नहीं, हमें दूसरा रास्ता अपनाना है। यह वह रास्ता नहीं है, जिसे हमें अपनाना होगा।"

और, यह दूसरा रास्ता था—कार्ल मार्क्स का कम्युनिज़म, जिसका अनुसंधान इस महान मनीषी ने १९ वीं सदी के पूर्वार्ध में करके, उसे सन १८४८ में प्रकाशित 'कम्युनिस्ट घोषणापत्र' के नाम से दुनिया के सामने रखा था।

ज़ारशाही साम्राज्य में भी रूस और उसके अधीन दो प्रकार के देश और दो प्रकार की प्रजायें उसी तरह थीं, जैसे कि इंग्लैंड में। लेकिन, दोनों में एक भेद था : ज़ार का राज्य स्थल द्वारा एक दूसरे से सम्बद्ध था; और बड़ी भारी संख्या में रूसी किसान और मजदूर भी परतंत्र एशियाई जातियों के बीच रहते थे। ज़ारशाही ने अपने शासन को मजबूत करने के लिये ही इन किसानों और मजदूरों को दूसरी जातियों में ले जाकर बसाया था, लेकिन उनके कारण परतंत्र जातियों को रूस के घनिष्ठ सम्पर्क में आने तथा वहां की सब तरह की हलचलों को जानने का सुभीता था; जब कि सात समुन्दर पार के इंग्लैंड को परतंत्र भारतीय किसी दूर के स्वप्नलोक जैसा समझते थे। 'जनतावादियों' के बाद अब रूस में मार्क्सवादी क्रांतिकारियों का युग आरम्भ हुआ। लोगों में मार्क्सवाद का प्रचार होने लगा। लेनिन कार्य-क्षेत्र में उतर चुके थे। ज़ारशाही इस नये ख़तरे को और भयंकर समझकर उसे दबाने की कोशिश करती थी। उन्हें पकड़ कर जेल या निर्वासन की कठोर सजायें दी जातीं। निर्वासित हुये लोग, रूसी लोगों से अलग रखने के लिये, दूर-दूर भेजे जाते; लेकिन वे वहां जाकर भी लोगों में मार्क्सवाद का संदेश पहुंचाते।

१९ वीं शताब्दी के अन्त में, अब रूस के अधीन दूसरे देशों में भी पूंजीवाद का प्रसार होने लगा था। काकेशस में बाकू का महान तेल-क्षेत्र था, जहां पर तेल

निकालने और साफ़ करने के कई कारखाने खुल गये थे। इन कारखानों में विदेशी पूंजी लगी हुई थी। अक्तूबर क्रांति के पहले रूसी पूंजीवाद बराबर इंगलैंड और फ्रांस की पूंजी और सहायता के बल पर जीता रहा। तेल के अलावा तम्बाकू और धातु के कारखाने भी काकेशस में जहां-तहां खुल गये। इन कारखानों ने नये तरह के सर्वहारा मजदूरों को पैदा किया। मजदूर श्रेणी के अस्तित्व में आने के साथ-साथ, मार्क्सवाद भी वहां पहुंचा।

सन् १८९६ में, सत्रह वर्ष की उमर में सोसो ने अपनी सेमिनरी में मार्क्सवादी अध्ययन-कक्षा चलानी शुरू कर दी। उस समय तक रूस में 'रूसी समाजवादी जनतांत्रिक मजदूर पार्टी' के नाम से मार्क्सवादियों का दल क़ायम हो चुका था, जिसकी शाखा 'मेस्सामेह दास्सी' के नाम से गुर्जी में भी स्थापित हो गई थी। अगस्त सन् १८९८ में सोसो तिफ़लिस के इस दल का सदस्य बन गया। इस दल ने सन् १८९३-९८ में मार्क्सवाद का प्रचार करने में बहुत काम किया था। 'मेस्सामेह दास्सी' वस्तुतः एक एकताबद्ध दल नहीं था, बल्कि उसमें मतभेद रखने वाले बहुत से दल शामिल थे। 'मेस्सामेह दास्सी' का अर्थ है—तृतीय दल। एक गुर्जी लेखक ग० चेरेतेली ने साहित्यकार नेनोश्विली की श्मशान-यात्रा के समय गुरिया में, अपने व्याख्यान में इस दल को यह नाम दिया था; जब कि मार्क्सवादी तरुणों का प्रोग्राम सार्वजनिक तौर से लोगों के सामने रखा गया था। तृतीय दल होने का मतलब ही है कि इससे पहले दो और राजनीतिक दल गुर्जी में पैदा हो चुके थे। 'मेस्सामेह दास्सी' में भी कई दल थे, जिनमें नोआ यारदानिया के दल (सन् १८९३-९८) का स्थान प्रमुख था। उसकी ओर से 'क्वाली' और 'मोअम्बेह' नाम के पत्र भी निकलते थे। यारदानिया के विचार कैसे थे, यह उसके निम्न वाक्यों से मालूम होगा :

> "गुर्जी संस्कृति के आधार पर गुर्जी भूमि में युरोपी-करण आगे बढ़ रहा है। हमारा देश और दूसरे देश—गुर्जी और युरोप हैं, लेकिन हमारे सामने नया लक्ष्य है, गुर्जी और युरोपीय दोनों ही बनना। इस समय का यह ऐतिहासिक कर्तव्य है कि हम इस तत्त्व को समझें और लोगों को इसके प्रति सचेत बनायें।"

यारदानिया का मार्क्सवाद अभी युरोपी-करण और युरोप के उदारवाद से बहुत आगे नहीं गया था। ब्रिटिश साम्राज्य उसके लिये एक आदर्श राज्य था, इसीलिये उसने लिखा था :

> "बोअर (दक्षिणी अफ्रीका के गोरों) के साथ हमारी सहानुभूति का यह मतलब नहीं कि हम अंग्रेजों के प्रति घृणा करें। हम बोअरों के साथ इसलिये सहानुभूति रखते हैं, कि वह एक छोटी सी जाति है, जो अपने देश और स्वतंत्रता की रक्षा के लिये लड़ रही है। और, इंग्लैंड? हमें इंग्लैंड के साथ प्रेम करना होगा और बहुत बातों में उसके साथ सहानुभूति दिखलानी होगी।

> इंगलैंड ऐसी सभी चीज़ों का गहवारा है, जिन पर आज की सभ्य मानव जाति अभिमान करती है। बोअरों को अपने छोटे राष्ट्र की रक्षा के लिये लड़ने दो।... लेकिन, साथ ही ब्रिटेन, नव-जीवन का अग्रदूत, नई ध्वजा का वाहक, एक महान ब्रिटेन बना रहे, वह सभ्यता का नेता और झंडाबरदार बना रहे।"

'मेस्सामेह दास्सी' (तृतीय दल) में सोसो १८९८ में शामिल हुआ, जब कि शाशा चुलुकिद्ज़े १८९५ में, और लादो केच्खोवेली १८९७ में उसके सदस्य हुये थे।

मेस्सामेह दास्सी में चाहे कितनी ही त्रुटियां रही हों, लेकिन मार्क्स और एंगेल्स की रचनाओं को गुर्जी में फैलाने का आरंभिक काम इसी ने किया था। सोसो के सदस्य होते ही उसी साल इस दल में एक क्रांतिकारी मार्क्सवादी दल तैयार हो गया, जिसमें सोसो के अतिरिक्त, अ. चुलूकिद्ज़े और लादो केच्खोवेली भी शामिल थे। मतभेद का पहला कारण तब पैदा हुआ, जब सोसो और उसके साथियों ने क़ानूनी अख़बारों पर संतोष न कर, मार्क्सवाद की क्रांतिकारी विचारधारा का स्पष्ट रूप से प्रचार करने के लिये गैरक़ानूनी प्रेस तैयार करने का प्रस्ताव रखा।

एक क्रांतिकारी के लिये सेमिनरी का जीवन असह्य हुये बिना कैसे रह सकता था? वहां के शिक्षक और प्रबंधक ज़ारशाही के कठपुतले और खुफ़ियों से कुछ कम नहीं थे। स्तालिन (सोसो) ने स्वयं लिखा था:

> "एक अत्यन्त अपमानजनक शासन तथा भारी स्वेच्छाचारी व्यवस्था से हमारा पाला पड़ा था। वहां बड़े ज़ोर की खुफ़ियागीरी चल रही थी। ९ बजे नाश्ते की घंटी बजी। हम भोजनशाला में गये। लौट कर आने पर देखा कि जब हम भोजन कर रहे थे, उसी समय हमारी सभी आलमारियां और सन्दूकें एक-एक कर खोल कर देख ली गईं और सब चीज़ों को उलट-पलट दिया गया।"

ज़ारशाही के अत्याचारों को चिरस्थायित्व देने के लिये, सेमिनरी के कर्ता-धर्ता तरुणों को तैयार करने में लगे हुये थे। उन्हें यह कब पसन्द हो सकता था कि वहां ज़ारशाही को उखाड़ फेंकने वाले क्रांतिकारी पैदा हों। लेकिन, दुनिया विरोधी समागमों से भरी पड़ी है। पादरियों के इस विद्यालय के विद्यार्थियों में कई राजनैतिक विचार वालों के अपने-अपने दल थे। राष्ट्रवादी तरुण स्वतंत्र गुर्जी देश का स्वप्न देख रहे थे, जनतंत्रवादी 'स्वेच्छाचार, क्रूरता—मुर्दाबाद' का नारा लगा रहे थे। इनके साथ, तीसरा दल सोसो जैसे मार्क्सीय अन्तर्राष्ट्रीयतावादियों का था।

सोसो बालपन में दुबला-पतला सा लड़का था। लेकिन, उस वक्त भी उसके चेहरे पर सदा निर्भयता की छाप देखी जाती थी और वह हमेशा सिर ऊपर

उठा कर चलता था। बढ़ कर जब वह और लम्बा हुआ, तब वह देखने में बहुत पतला-दुबला मालूम होता था। उसके रूप-रंग में आवश्यकता से अधिक कोमलता थी, यद्यपि उसके चेहरे से प्रतिभा साफ़ झलकती थी। उस वक्त भी कोयले जैसे काले, घने केश सोसो के सिर पर थे। उसके वर्तुलाकार चेहरे और बादामी काली-काली आँखों में गुर्जी लोगों की जातीय आकृति का पूरा आभास मिलता था। उसके एक सहपाठी एनोकिद्ज़े के कथनानुसार, अपने आरंभिक क्रांतिकारी जीवन में तरुण सोसो बुद्धिजीवी और मज़दूर दोनों के गुणों का एक अद्भुत सम्मिश्रण था। वह बहुत लम्बा नहीं था। उसके कंधे कुछ अधिक पतले, चेहरा कुछ अधिक लम्बा, दाढ़ी अभी छोटी-छोटी निकल रही थी, आँखें भारी और नाक लम्बी तथा सीधी। वह अपनी चौरस टोपी ज़रा एक ओर तिरछी लगाता था, जिससे एक ओर बहुत सारे घने काले केश दिखलाई पड़ते थे।

काकेशस में एनूकिद्ज़े क्रांति का सबसे पुराना कार्यकर्ता था, जो बाद में वहां का एक बड़ा नेता बना। उस समय सोसो जुगश्विली के साथ उसका बहुत घनिष्ट सम्बंध था। एनूकिद्ज़े के अनुसार, मज़दूरों से बातचीत करने में सोसो बहुत दक्ष था। हर वक्त मज़दूर उसके पास आसानी से पहुँच, दिल खोल कर बात कर सकते थे, उसी प्रकार जैसे कि उस समय सोसो से दस साल बड़े लेनिन के पास रूसी समाजवादी आन्दोलन के मुख्य केन्द्रों के कमकर। सोसो में एक स्वाभाविक ढंग की सादगी थी। वह अपने शरीर के बारे में बिलकुल उपेक्षा रखता था। अपने ज्ञान और नैतिक बल के कारण, वह तब भी लोगों पर अपना भारी प्रभाव रखता था। लोग खिंच कर उसके साथ हो जाते थे। तिफ़लिस के कमकर उसे 'हमारा सोसो' कहते थे।

सोसो में एक और भी चमत्कारिक गुण था, जिसके कारण वह कमकरों को मोह लेता था। वह बात करते वक्त, क्लास लेते वक्त या व्याख्यान देते वक्त, अपने को उसी स्तर पर लाकर रखता था, जो कि उसके श्रोताओं का होता था। इस कारण, वह जो भी कहता श्रोता उसकी एक-एक बात को हृदयंगत कर सकते थे। सोसो के उस समय के साथी ओरेखेलश्विली का कहना था: "न वह पंडितमन्य था, और न गंवार।" वह समाजवाद और राजनीति के गम्भीर सिद्धान्तों और विचारों को लोगों के सामने रखता, लेकिन उनकी व्याख्या इतने सरल और सीधे तौर से करता कि उसके श्रोताओं को समझने में ज़रा भी दिक्कत न होती। इसे दिखलाते हुये ओरेखेलश्विली ने कहा है:

> "उसके साथ प्रचारकों के एक दल में हम भी थे। लेकिन, हम कुछ परिभाषाओं को नहीं छोड़ पाते थे। वाद, प्रतिवाद तथा संवाद और इसी तरह के दूसरे तर्कशास्त्रीय शब्द हमारे पीछे पड़े रहते थे। जब हम मजूरों

और किसानों के सामने बोलते, तब भी यह परिभाषायें हमारे मुंह से निकलती रहतीं। लेकिन, सोसो के भाषणों में ऐसा नहीं होता। वह विषय को एक दूसरे ही ढंग से–जीवन के दृष्टिकोण से–उठाता। उदाहरणार्थ, यदि मध्यवर्गीय जनतंत्रता के विचार को लेता, तो वह उसे दिन की तरह स्पष्ट करके दिखला देता। जारशाही की अपेक्षा यह क्यों अच्छा है, और क्यों समाजवाद की अपेक्षा अच्छा नहीं। फिर तो, सभी समझ जाते कि जनतंत्रता यद्यपि साम्राज्य को उखाड़ फेंकने में बिलकुल समर्थ है, लेकिन एक दिन वह समाजवाद के विरुद्ध बाधा के रूप में उपस्थित होगी, और उसे तोड़ फेंकना ही पड़ेगा।..."

सोसो बड़ा खुशमिज़ाज और मिलनसार था। ओरेखेलश्विली ने लिखा है :

"एक दिन हम लोग एक काकेशीय मुखिया साथी के घर में जमा हुये। हम सदा किसी एक के घर में जमा होते थे, क्योंकि दूसरी जगह मिलना प्रायः असम्भव सा था। भोजन के समय घर के मालिक का बच्चा आकर अपने बाप की जांघ पर बैठ कर ठमकने लगा। बाप पीठ ठोक कर उसे चुप करने की कोशिश कर रहा था। जो गम्भीर बातचीत वहां चल रही थी, लड़का उसे समझने की आयु का नहीं था। बाप को असफल होते देख, सोसो अपनी जगह से उठा, बड़ी नरमी के साथ लड़के को हाथ से पकड़ उसे दरवाजे के पास ले जाकर बोला : "मेरे छोटे दोस्त, आज के प्रोग्राम में तुम्हें शामिल नहीं किया गया है।"
ओरेखेलश्विली ने सोसो के स्वभाव के बारे में यह भी लिखा है :

"वह अपने विरोधियों को कभी बुरा-भला नहीं कहता था। मेन्शेविक हमें उस समय इतना सता रहे थे कि जब कभी हम अपने भाषण में उन्हें बैठे देखते, तो अपने को उनके ऊपर तीक्ष्ण वाक्-बाण चलाने से नहीं रोक सकते थे। सोसो इस तरह के आक्रमण को कभी पसन्द नहीं करता, कटु वाणी उसके लिये वर्जित हथियार थी। जब वह अपने तर्कों और युक्तियों से अपने विरोधी को चुप कर देता, विरोधी मौन हो बच निकलने की कोशिश करता, तो उस समय वह चुटकी लेते हुये इतना भर कहता : "आप इतने भद्र पुरुष हैं, यह देख कर मुझे आश्चर्य होता है कि आप हमारे जैसे नगण्य आदमी से भय खाते हैं।"

गोरी स्कूल के अंतिम दिनों में ही, सोसो डारविन की पुस्तकों और मार्क्स के विचारों से परिचित हो चुका था। सन् १८९४ में, वह बहुत अधिक अंकों के साथ वहां की परीक्षा में उत्तीर्ण हुआ। तिफ़लिस की सेमिनरी में, दाखिल होने पर वहाँ का जीवन उसे बड़ा गलाघोंटू मालूम हुआ। यह बड़ा ही दक़ियानूसी स्कूल था। लड़के दुनिया से अलग-थलग करके कोठरियों में रखे गये थे। सब अध्यापक ईसाई साधू थे, जो विद्यार्थियों में ईश्वर, ज़ार और ईसाई चर्च के प्रति सम्मान के भाव को ज़बर्दस्ती भरने की कोशिश करते थे। मठों की तरह, विद्यार्थियों को प्रार्थना में आने के लिये

गिर्जे का घंटा निश्चित समय पर बजाया जाता। पाठ्य-विषयों में ईसाई धर्मशास्त्र का विशेष स्थान था। विद्यार्थियों पर खुफ़ियावालों की हर वक्त निगाह रहती थी। इस तरह की धार्मिक शिक्षा और खुफ़ियावालों की निगरानी लड़कों पर बड़ा बुरा प्रभाव डालती थी। लेकिन उससे क्या? सेमिनरी का तो काम ही था--ज़ार के भक्त-अनुचर, और धर्मान्ध प्रतिगामियों को पैदा करना। पर, सेमिनरी अपने उद्देश्य में सफल हुई नहीं दीख पड़ती थी, क्योंकि हम देखते हैं, कि उसी से निकोलाई चेर्नीशेव्स्की, लादो केत्स्खोवेली, मिखा छकाया और सोसो जुगशविली जैसे क्रांतिकारी पैदा हुये।

सेमिनरी के संकीर्ण वातावरण के बारे में स्तालिन ने स्वयं जर्मन लेखक एमिल लुडविग से कहा था:

> "सेमिनरी में जिस प्रकार का अपमानजनक शासन और धर्मान्धतापूर्ण व्यवहार सर्वत्र फैला हुआ था, उसके विरोध के लिये मैं तैयार था और वैसा ही हुआ भी, जब कि मैं एक क्रांतिकारी और मार्क्सवाद—जो कि एकमात्र असली क्रांतिकारी सिद्धांत है—का अनुयायी बना।"

तिफ़लिस में उन दिनों मार्क्सवादी साहित्य प्राप्त करना आसान नहीं था। सन् १९३८ में स्तालिन ने अपने पुराने जीवन की बातें बतलाते हुये कहा था कि कैसे तिफ़लिस के तरुण मार्क्सवादी पुस्तकों के लिये एक-एक पैसा जमा करते, और मार्क्स की 'कैपिटल' (पूंजी) की एक ही कापी होने से हाथ से लिख कर उसकी कापियां तैयार करते, इसी हस्तलिखित पुस्तक से अपने गुप्त अध्ययन-केन्द्रों में मार्क्स के ग्रंथ का अध्ययन करते। इन्हीं केन्द्रों में, पुस्तकों को बड़ी मुश्किल से प्राप्त करके उन्होंने मार्क्स, प्लेख़ानोफ़, चेर्नीशेव्स्की, पिसारेफ़, बेलिन्स्की, दोब्रोल्युबोफ़ और हर्ज़ेन की कृतियाँ पढ़ीं। सोसो के लिये रूसी पढ़ना-लिखना अब आसान हो गया था, इसलिये गुर्जी भाषा में न रहने पर भी रूसी लेखकों को उसने ध्यान से पढ़ा। उसके कारण उसके ज्ञान का क्षेत्र बहुत बढ़ गया और वह ज्ञान की भिन्न-भिन्न शाखाओं में खुलकर विचरने लगा। सेमिनरी के विद्यार्थियों के लिये वर्जित होने पर भी, वह तिफ़लिस के एक घुमन्तू पुस्तकालय का सदस्य हो गया था। उसे वहाँ से सस्ते में बहुत तरह की पुस्तकें पढ़ने को मिल जाया करती थीं। शेक्सपियर, शिलर, ताल्सताय, सल्तीकोफ़-श्चेद्रिन, गोगल और चेख़ोफ़ जैसे महान लेखकों के प्रति उसका बहुत प्रेम था। साथ ही, वह अपनी मातृभाषा के लेखकों का भी प्रेमी था। शोता रुस्थ्वेली, एरिस्तावी, चौचवाद्ज़े आदि के काव्यों और ग्रंथों को उसने बड़े ध्यान से पढ़ा था। केवल साहित्य ही उसका प्रिय विषय नहीं था। इतिहास और समाजशास्त्र के अतिरिक्त, उसे रसायन और भूगर्भशास्त्र जैसे विषयों में भी बड़ी दिलचस्पी थी। कविता के साथ तो अधिक प्रेम होना जरूरी ही था, क्योंकि तरुणाई में सोसो ने कवितायें भी की थीं, जो मामूली नहीं थीं। यह इसी से मालूम

होगा कि राफेल एरिस्तवी की जुबली को समर्पित किये गये एक कविता-संग्रह में तरुण सोसो जुगशविली की एक कविता भी सम्मिलित की गई थी। सोलह वर्ष की उमर (सन् १८९५) में सोसो ने ' सोसेलो ' के नाम से ' इबेरिया ' में अपनी एक कविता छपवाई थी (' इवेरिया ' गुर्जी देश का पुराना नाम है) जो इस प्रकार है :

" जिसकी कमर अन्तहीन मेहनत से टेढ़ी हो गई,
जो अभी कल तक दासता के सामने नतशिर था,

मैं कहता हूँ, वह उठेगा पर्वतों का ईर्ष्यापात्र हो,
आशा के पंखों पर, सबसे ऊंचे, ऊपर । "

ग. परकाद्ज़े ने अपने सहपाठी तरुण सोसो के विद्यार्थी जीवन के बारे में लिखा है :

" हम तरुणों को ज्ञान की हद से अधिक पिपासा थी; इसीलिये सेमिनरी के विद्यार्थियों के दिमाग से छ दिन में दुनिया पैदा करने की पौराणिक गप्प को हटाने के लिये, हमने भूगोलशास्त्रीय सृष्टि-संबंधी विचार, तथा पृथिवी की आयु के बारे में पढ़ा। इसीलिये, हमने डारविन की शिक्षाओं से परिचय प्राप्त किया। हमारे इस काम में गलीलियो, कोपर्निकस तथा कामिल फ्लामोरियोन की दिलचस्प पुस्तकों ने मदद दी। हमने लायल की ' मनुष्य की प्राचीनता ' और डारविन की ' मनुष्य की उत्पत्ति ' भी पढ़ी। डारविन की इस पुस्तक का अनुवाद शेचेनोफ़ ने किया था। साथी स्तालिन शेचेनोफ़ की वैज्ञानिक कृतियों को बड़े चाव से पढ़ते थे।

"क्रमशः हम वर्ग-समाज के अध्ययन की ओर बढ़े, और मार्क्स, एंगेल्स और लेनिन के ग्रंथों पर पहुंचे। उन दिनों मार्क्सीय साहित्य पढ़ने को क्रांतिकारी काम कह कर दंडनीय अपराध माना जाता था। सेमिनरी में तो वह और भी निषिद्ध था। वहां डारविन का नाम हमेशा गालियों के साथ लिया जाता था।

" सामाजिक शास्त्र और अर्थशास्त्र संबंधी साहित्य के परिचय के साथ हम तरुणों की दिलचस्पी ज्योतिष, भौतिकशास्त्र, और रसायनशास्त्र की ओर बढ़ी। लुडविग फ्वारबाख़ की पुस्तक ' ईसाइयत-सार ' पढ़ने से हमें बड़ा फ़ायदा हुआ।

" इन सब पुस्तकों से हमारा परिचय साथी स्तालिन (सोसो) ने कराया। वह कहा करते थे कि जो सबसे पहले करना है, वह है अनीश्वरवादी बनना। इसका फल यह हुआ कि हममें से बहुत से बाइबल के विचारों की उपेक्षा करके, भौतिकवादी दृष्टिकोण स्वीकार करने लगे।

" विज्ञान की भिन्न-भिन्न शाखाओं के अध्ययन ने हम तरुणों को सेमिनरी के धर्मान्ध और कूपमंडूकतापूर्ण वातावरण से मुक्त होने में सहायता ही नहीं दी,

बल्कि उसके कारण, मार्क्सीय विचारों को स्वीकार करने के लिये भी हमारे दिमाग़ तैयार हो गये। पुरातत्त्व, भूगर्भशास्त्र, ज्योतिष या आदिम सभ्यता के बारे में हम जो भी पुस्तक पढ़ते, वह मार्क्सवाद की सत्यता को हमारे हृदय में और दृढ़ कर देती।

"आज की तरुण पीढ़ी के लिये यह समझना भी मुश्किल है, कि उन दिनों किताबों का प्राप्त करना ही नहीं, बल्कि उन्हें पढ़ना भी बहुत मुश्किल था। उदाहरणार्थ, सेमिनरी के अधिकारियों ने सहायक-निरीक्षक की सूचना पर विक्तर ह्यूगो की पुस्तक 'समुद्र के मेहनतकश' को साथी स्तालिन से लेकर ज़ब्त कर लिया था। वही बात ह्यूगो की दूसरी पुस्तक 'तिरानवे' के साथ हुई।

"तिफ़लिस की किरोचनया स्ट्रीट के एक घुमन्तू पुस्तकालय से हम पुस्तकें लिया करते थे। इस पुस्तकालय में अध्यापक और दूसरे बुद्धिजीवी अक्सर जाया करते थे। सन् १८९० के आस-पास मैक्सिम गोर्की ने भी इससे फ़ायदा उठाया था। पुस्तकालय की स्थापना साधारण शिक्षण के उपयोग के लिये की गई थी, लेकिन, किसी को क्या पता था कि बिल्कुल साधारण सी पुस्तकों के रूप में वहाँ कितनी बारूद जमा की जा रही है।

"साथी स्तालिन हमें बतलाते थे कि कैसे किताबों के अर्थ को हृदयंगत करना चाहिये, और कैसे किसी विशेष विषय पर पुस्तकों के न होने पर मासिक पत्रिकाओं के लेखों, आलोचनाओं, यहां तक कि जब-तब की टिप्पणियों का इस्तेमाल करना चाहिये। इस कारण, हम जो कुछ पढ़ते उसे संक्षिप्त करके उतार लेने की हमें आदत पड़ गई। पढ़ने के लिये किसी विषय का सुझाव रखते समय, स्तालिन पहले आसान पुस्तकों को चुनते फिर कुछ अधिक कठिन। साहित्य को पढ़ने-समझने में जहां भी कठिनाई आती, उसे स्तालिन (सोसो) हमें बड़ी मेहनत से समझाते।

"एक दिन मुझे मेन्देलयेफ़ का 'रसायन' हाथ लगा। यह पुस्तक मुझे अब भी अच्छी तरह याद है। स्तालिन उसमें बहुत दिलचस्पी रखते थे।

"सेमिनरी के कागज-पत्रों से हमें आज मालूम है कि उसके सुपर्वाइजर साधू गेरमोगेन ने रिपोर्ट दी थी: 'जुगशविली (स्तालिन) एक सस्ते पुस्तकालय का सदस्य है, जिससे वह पुस्तकें लेता है"।'

"साथी स्तालिन की इतिहास के साहित्य के प्रति भारी आसक्ति थी। हमें अक्सर अचरज होता था कि वह इन पुस्तकों को कहां से पाते हैं। मुझे याद है, उनके पास महान फ्रेंच-क्रांति, सन् १८४८ की क्रांति, पेरिस कम्यून, रूसी इतिहास आदि पर पुस्तकें थीं...।

"साथी स्तालिन सत्रह वर्ष के थे, जब कि सन् १८९६ में सेमिनरी के भीतर प्रथम गैरक़ानूनी मार्क्सीय अध्ययन-चक्र क़ायम कर, वह मार्क्सवाद के प्रचारक बन गये। उसके बाद, एक दूसरा चक्र क़ायम हुआ। मेरा सम्बंध प्रथम चक्र से था।...इन दिनों जिन पुंस्तकों को स्तालिन और उनके साथी पढ़ते थे, उनमें थीं—'कम्युनिस्ट घोषणापत्र', एंगेल्स की 'इंगलैंड के मजूरों की स्थिति', लेनिन की 'जनता के मित्र कौन हैं और वह कैसे समाजवादी जनतंत्रियों से लड़ते हैं।' ऐडम स्मिथ और रिकार्डो की राजनीतिक अर्थशास्त्र की पुस्तकें, स्पिनोज़ा का 'आचारशास्त्र,' बर्कले का 'इंगलैंड में सभ्यता का इतिहास,' ल-तूर्नो का 'संपत्ति का विकास,' ज़ीबर का 'डेविड रिकार्डो' और कार्ल मार्क्स की सामाजिक और आर्थिक शोध और दर्शन पर भी पुस्तकें थीं।

"साथी स्तालिन को उपन्यास साहित्य से भी प्रेम था। उन्होंने सल्तिकोफ़-श्चेदरिन के 'गोलोव्ल्योफ़ परिवार', गोगल की 'मृत आत्मायें', येर्कमान-चत्रियान की 'एक किसान की कहानी,' थेकरे के 'वैनिटी फ़ेअर' और दूसरी पुस्तकें पढ़ डाली थीं। बचपन से ही वह गुर्जी साहित्यकारों से परिचित थे, और रुस्तावेली, इलिया चौचवाद्ज़े और वाजा प्शावेली को बड़े चाव से पढ़ते थे। साहित्य के प्रति उनका बहुत अनुराग था। तिफ़लिस सेमिनरी में रहते वक्त, उन्होंने कितनी ही कवितायें लिखी थीं, जिनकी प्रशंसा इलिया चौचवाद्ज़े ने की थी। चौचवाद्ज़े ने अपने सम्पादित पत्र में विशेष स्थान देते हुये, इन कविताओं को मुखपृष्ठ पर छापा था; यद्यपि सेमिनरी के विद्यार्थियों के लिये पत्र-पत्रिकाओं में लेख लिखने की सख़्त मनाही थी।"

तिफ़लिस सेमिनरी के जीवन के बारे में सोसो के दूसरे सहपाठी ग० ग्लुरजिद्ज़े ने अपने संस्मरण में लिखा है :

"कभी-कभी गिर्जाघर में, हम उपासना के समय बेंचों के पीछे छिपाकर पुस्तकें पढ़ते। हमें बहुत सावधानी रखनी पड़ती थी कि मास्टर देख न ले। पुस्तकें सोसो की अभिन्न मित्र थीं, भोजन के समय भी वह उनको नहीं छोड़ता था।...

"सेमिनरी के असह्य गलाघोंटू वातावरण में हमारे आनन्द की एक सबसे बड़ी चीज़ थी—गाना। हम फूले नहीं समाते, जब सोसो हमारे लिये जैसे-तैसे एक संगीत-मंडली जमा करता, और अपने स्पष्ट और मधुर कंठ से हमारे किसी प्रिय लोकगीत को गाने लगता था।"

स्तालिन को सेमिनरी में रहते समय ही पहले-पहल लेनिन की सबसे पहली लिखी कृतियाँ पढ़ने को मिलीं। सेमिनरी में स्तालिन के साथी पपानाद्ज़े ने लिखा है :

"मुझे सन् १८९८ की एक दिलचस्प बात विशेष तौर से याद आती है। एक दिन पूर्वाह्न में नाश्ते के बाद, मैं पुश्किन-चौरस्ते पर टहलने गया।

वहां मैंने अपने विद्यार्थियों के एक झुंड से सोसो को भिड़े देखा, वह उनके साथ *गर्मागर्म बहस करते हुये यारदानिया के विचारों की आलोचना कर रहा था।* सभी बहस में भाग ले रहे थे। यहीं पर मैंने सबसे पहले लेनिन के बारे में सुना। इसी समय घंटी बजी और हम सभी जल्दी-जल्दी अपनी क्लासों में दौड़ गये। मुझे यारदानिया के विचारों की सोसो द्वारा इतनी सख़्त आलोचना सुनकर आश्चर्य हुआ। मैंने उससे इसके बारे में कहा। उसने बतलाया कि उसने अभी-अभी तूलिन (लेनिन) का लेख पढ़ा है, जो उसे बहुत पसन्द आया। उसने यह भी कहा : चाहे जैसे भी हो, मुझे इस (लेनिन) से मिलना है।"

* * *

सेमिनरी के अधिकारियों को यह पता लगते देर नहीं लगी कि उनके कुछ अत्यन्त कुशाग्र बुद्धि विद्यार्थी सोसो को अगुवा मानते और उसकी बातों पर चलते हैं। यह जान कर, वह सोसो पर सावधानी से निगाह रखने और उसके बारे में रिपोर्ट देने लगे। २९ सितम्बर, १८९८ को सेमिनरी के रेक्टर को यह रिपोर्ट दी गई :

"९ बजे शाम को भोजनशाला में विद्यार्थियों का एक समूह सोसो जुगशविली के पास बैठा था। सोसो उन्हें ऐसी पुस्तकें पढ़कर सुना रहा था जिनकी सेमिनरी के अधिकारियों ने स्वीकृति नहीं दी थी। इसके लिये विद्यार्थियों की तलाशी ली गई।"

सेमिनरी के चाल-चलन सम्बंधी रजिस्टर में सोसो के बारे में कुछ बड़ी ही दिलचस्प बातें लिखी हुई मिलीं :

"मालूम होता है कि जुगशविली के पास सस्ते पुस्तकालय की सदस्यता का टिकट है। वह वहां से किताबें लिया करता है। आज मैंने विक्तर ह्यूगो की पुस्तक 'समुद्र के मेहनतकश' को छीन लिया, जिसमें उक्त पुस्तकालय का टिकट पाया।—स० मुराखोव्स्की, सहायक-सुपर्वाइजर, फ़ादर गेरमोगेन, सुपर्वाइजर।"

रिपोर्ट में दंड के तौर पर निम्न पंक्तियां लिखी हैं : "दंड वाली कोठरी में उसे लम्बे अर्से के लिये बन्द कर दो। मैं उसे एक बार पहले भी एक असम्मत पुस्तक—विक्तर ह्यूगो की 'तिरानवे'—के बारे में सावधान कर चुका हूं। (नवम्बर १८९६)"

"११ बजे रात को मैंने सोसो जुगशविली से ल-तूरनो की पुस्तक 'राष्ट्रों का साहित्यिक विकास' छीन ली, जिसे वह सस्ते पुस्तकालय से लाया था। पुस्तकालय का टिकट किताब के भीतर मिला। जुगशविली इस पुस्तक को गिर्जे की सीढ़ियों पर बैठा पढ़ रहा था। यह तेरहवीं बार है, जब इस विद्यार्थी

स्तालिन की माता—एकातेरिना

बाल्पन (सन १८९३)

तरुण क्रांतिकारी (सन १९०२)

को सस्ते पुस्तकालय से उधार ली गई पुस्तकों को पढ़ते पाया गया। मैंने पुस्तक फ़ादर सुपर्वाइजर के हाथ में दे दी।—स० मुराख़ोव्स्की, सहायक-सुपर्वाइजर।"

इस पर दंड के लिये निम्न नोट लिखा गया : "फ़ादर रेक्टर की आज्ञानुसार कड़ी चेतावनी देकर, उसे कालकोठरी में लम्बे अर्से के लिये बन्द कर दो—(मार्च सन् १८९७)।"

"निरीक्षण बोर्ड के सदस्य जब पांचवीं श्रेणी के विद्यार्थियों की तलाशी ले रहे थे, तो सोसो जुगशविली ने कई बार उनके साथ बहस करनी चाही, और विद्यार्थियों की बार-बार तलाशी लेने के बारे में असंतोष प्रकट करते हुये घोषित किया कि दूसरी सेमिनरियों में इस तरह की तलाशियाँ कभी नहीं ली गई। जुगशविली आम तौर से अधिकारस्थ व्यक्तियों के प्रति बड़ा ही असम्मान पूर्ण और रूखा बर्ताव करता है। एक मास्टर स० अ० मुराख़ोव्स्की को प्रणाम करने से बराबर इन्कार करता है, क्योंकि उसने बार-बार उसके बारे में निरीक्षण बोर्ड के पास शिकायत की है।—अ० र० जावेन्स्की, सहायक-सुपर्वाइजर।"

इस पर नोट है : "उसे फटकारा गया। फादर रेक्टर की आज्ञानुसार उसे पांच घंटे के लिये काल कोठरी में बन्द किया गया।—फादर (साधू) दिमित्रि-(१६ दिसम्बर, १८९८)।"

ऐसी ही एक तलाशी के समय, सेमिनरी सुपर्वाइज़र फ़ादर दिमित्रि सोसो के कमरे में दाख़िल हुआ। उस समय वह अपनी किताब पढ़ता रहा, मानो उसने फ़ादर को देखा ही नहीं। इस पर फादर ने पूछा : "देखते नहीं हो, तुम्हारे सामने कौन खड़ा है?" सोसो अपनी आंखें मलते हुये खड़ा हो, बोला : "मुझे कुछ नहीं दिखाई पड़ता, सिवाय इसके कि मेरी आंखों के सामने एक काला दाग़ है।"

२७ मई, १८९९ को इसी 'काले दाग़' ने सेमिनरी परिषद के सामने प्रस्ताव किया : "सोसो जुगशविली को राजनीतिक तौर से अविश्वसनीय समझ कर सेमिनरी से निकाल दिया जाय।"

यद्यपि बाहर से यह लिखा गया कि सोसो को फीस न दे सकने तथा 'अज्ञात कारणों से' परीक्षा में उपस्थित न होने के लिये निकाला गया, लेकिन असली कारण था —सोसो का राजनीतिक कार्य।

स्तालिन ने सन् १९३१ में एक प्रश्न के उत्तर में लिखा था : "(मैं) मार्क्सवाद का प्रचार करने के कारण सेमिनरी से निकाला गया।"

जिस वक्त सोसो ने सेमिनरी छोड़ी, उस समय तक उसका मार्क्सवादी दृष्टिकोण पक्का और पूरा हो चुका था।

अध्याय ३.

क्रांतिकारी जीवन

(सन् १८९९-१९०५)

सेमिनरी ने सोसो जुगशविली को अपने क़ैदख़ाने से मुक्त करके बाहर खुल कर काम करने का मौका दे दिया, इसलिये उन्हें उसका जरा भी अफ़सोस नहीं हुआ। १९ वीं सदी का अन्त होते-होते काकेशस के पिछड़े प्रदेश में भी पूंजीवाद अपने पैर फैलाने लगा था। अब वहां भी रूसी पूंजीपति अपने कल-कारख़ाने बढ़ा रहे थे। तिफ़लिस और बातूम पूंजीवाद के केन्द्र बनते जा रहे थे। हमें इस नई प्रगति का पता नगरों की जन-वृद्धि से भी मालूम होता है। सन् १८६३ में जहां काकेशस के नगरों में साढ़े तीन लाख आदमी बसते थे, वहां सन् १८९७ में उनकी संख्या नौ लाख हो गई थी। काकेशस का और भी महत्त्वपूर्ण स्थान इसलिये था कि दुनिया का एक सबसे बड़ा तेल-क्षेत्र-बाकू भी वहीं था, जहां नोबेल और राथचाइल्ड जैसे विदेशी पूंजीपतियों ने भी करोड़ों की पूंजी लगा कर, एक विशाल उद्योग खड़ा कर दिया था। एक ओर रूसी और विदेशी पूंजीपति काकेशस के लोगों के शोषण में लगे थे, दूसरी ओर जारशाही इन पहाड़ी जातियों का घोर उत्पीड़न कर रही थी। वह पद-पद पर उनकी राष्ट्रीय भावना को कुचलने का प्रयत्न करती थी। अगर स्कूल के विद्यार्थियों में कोई अपनी भाषा बोलता, तो उसकी गर्दन में जीभ निकाले हुये एक कुत्ते के सिर की तसवीर लटका दी जाती थी।

सोसो जुगशविली, लादो केत्स्खोवेली, और सासा चुलुकिद्ज़े जैसे तरुण इस तरह के अपमान और शोषण को कैसे बर्दाश्त कर सकते थे? उन्होंने अपने जीवन को जन-मुक्ति के लिये अर्पित कर दिया, लेकिन सोसो के दोनों तरुण साथी बहुत दिनों तक इस काम को नहीं चला पाये। लादो 'सोसो और सासा के साथ, काकेशस में क्रांतिकारियों के काम और गुप्त प्रेस के संगठन में दिलोजान से लग गया था। लेनिन ने गुप्त संगठन सम्बन्धी कई जिम्मेवारियां उसे सौंपी थीं, जिन्हें उसने बड़ी योग्यता से पूरा किया। जारशाही ने उसे पकड़ कर जेल में ही बन्द नहीं कर दिया, बल्कि पहरेदार सैनिक ने १७ अगस्त, १९०३ को उसे कालकोठरी में गोली भी मार दी। सोसो के दूसरे साथी, सासा चुलुकिद्ज़े का स्वास्थ पहले से ही बहुत कमजोर था, लेकिन वह अपने आदर्श और लक्ष्य के सामने उसकी परवाह नहीं करता था। तरुण सोसो अपने प्रतिद्वंदियों के साथ बहस-मुवाहिसा करने में बहुत भाग लिया करते थे। मार्क्सवादी विचारधारा के प्रचार के लिये यह शास्त्रार्थ अच्छे साधन थे।

उनमें कमकर जनता देखती थी कि मार्क्सवादी विचारधारा कितनी दृढ़ और सत्य है। साशा भी इस काम में सोसो का सहायक होता था। उसने ग़ैरक़ानूनी पत्रों में बहुत से लेख लिखे थे। अन्त में तपेदिक ने सन् १९०५ में उसके तरुण जीवन को खतम कर दिया।

उक्रइनी बोल्शेविक जूबेनली मेलनीकोफ़ ने कहा था: "जनता को एक इंच ऊपर उठाना उससे कहीं अधिक अच्छा है कि एक आदमी को पूरे एक मंजिले तक उठाया जाय।" सोसो जुगशविली की भी यही धारणा थी। गम्भीर विचारक और अध्ययन-शील होते हुये भी, वह दूसरे प्रचारकों की तरह, लोगों के सामने अपनी पंडिताई दिखाना बिलकुल पसन्द नहीं करते थे। हम यह बतला चुके हैं कि वह कैसे गम्भीर तत्त्वों को श्रोताओं के तल पर उतर कर, बहुत सरल करके, उनकी ही भाषा में रख देते थे। फ़िजूल की बातें बघारने के लिये उनके पास फुर्सत नहीं थी। उनके एक पुराने साथी तोद्रिया ने लिखा है:

> "मैंने सोसो से कहा—'वह हमें बतलाते हैं, सूर्य कैसे घूमता है।' इस पर उन्होंने मुस्कुराते हुये, जवाब दिया—'सुनो दोस्त, सूर्य के बारे में तुम चिन्ता मत करो, वह अपनी कक्षा से नहीं हटेगा। तुम्हारे लिये यह सीखना बेहतर है कि क्रांतिकारी कैसे आगे बढ़ता है और इसके लिये एक छोटे से ग़ैरक़ानूनी प्रेस स्थापित करने में मेरी सहायता करो।"

ज्यार्जी निनुवा नामक कमकर ने सोसो के आरम्भिक प्रचार-कार्यों के बारे में बतलाया:

> "साथी सोसो ने दो वर्षों से अधिक समय तक हमारी क्लास चलायी। जिस विषय पर भी उन्हें बोलना होता, वह उसे पहले भिन्न-भिन्न प्रकरणों में बांट लेते। उन्हें पश्चिम के मज़दूर आन्दोलन के इतिहास और क्रांतिकारी समाजवादी जनतांत्रिक सिद्धांतों का अद्भुत ज्ञान था। मज़दूरों का ध्यान तुरन्त उनकी बातों की ओर खिंच जाता। वह अपने भाषणों में उपन्यासों और कहानियों से लेकर वैज्ञानिक ग्रंथों तक के उद्धरण देते। कहावतें तो उनकी जीभ पर नाचती रहती थीं। हमारे सामने बोलते समय, उनके सामने एक नोटबुक या बारीक अक्षरों में लिखा हुआ कोई कागज का टुकड़ा होता। वह पहले से तैयारी करके बोलते, इससे यह स्पष्ट है। हम अधिकतर शाम को, गोधूलि के समय इकट्ठे होते और इतवार की छुट्टी के दिन पांच-दस आदमियों के गिरोह में देहात चले जाते, जहाँ समय का बिल्कुल ख़्याल किये बिना वार्तालाप और बहस करते रहते।
>
> "साथी स्तालिन के उस समय के भाषण अधिकतर मामूली बातचीत के ढंग पर होते थे। उनका नियम था कि जब तक एक विषय को अच्छी तरह

न समझा लें, तब तक दूसरे विषय को हाथ न लगायें। उनके प्रश्नों का जवाब देते वक्त, हम मजदूरों के जीवन की घटनायें पेश करते और बतलाते कि फैक्टरियों में क्या हो रहा है, प्रबन्ध-विभाग, ठेकेदार और फोरमैन किस तरह हमारा शोषण कर रहे हैं। जब कभी इस विषय पर बात होती, तो साथी स्तालिन उसे बड़े ध्यान से सुनते। वह हमसे बहुत से प्रश्न करते और अन्त में निष्कर्ष निकालते।... साथी स्तालिन हमारे अध्यापक थे, लेकिन वह अक्सर कहते कि मैं स्वयं मजूरों से सीख रहा हूं। स्तालिन की यह धारणा बराबर बनी रही और वह हमेशा इस बात की हिदायत करते थे कि आदमी को जनता से सीखना चाहिये : 'सबसे बड़ी बीमारी जो एक नेता पर आक्रमण कर सकती है, वह है—जनता का भय।'

"नेता की जनता को जितनी आवश्यकता है, उससे कहीं अधिक नेता को जनता की आवश्यकता है। जनता उससे जितना सीखेगी, नेता उसकी अपेक्षा जनता से कहीं अधिक सीख सकता है। जैसे ही कोई नेता जनता पर विश्वास किये बिना अपनी योजनायें बनाना शुरु करता है, वह अपनी विजय और उद्देश्य दोनों की सफलता को बरबाद कर देता है।"

सेमिनरी से निकल कर, कार्यक्षेत्र में प्रवेश करना फूलों की शैया नहीं, बल्कि बड़ी ही कंटकाकीर्ण राह थी। सोसो ने उसे अपनाया। अपने क्रांतिकारी जीवन में ज़ारशाही पुलिस से बचने के लिये सोसो को बहुत से नाम बदलने पड़े, कभी वह 'दाविद' थे, कभी 'कोबा' (कोबी), कभी 'नियेरादूज़े' तो कभी 'रिचइकोफ़', 'इवानोविच' और कभी 'स्तालिन'।

सोसो मज़दूरों की हड़तालों में सबसे पहले तिफ़लिस में पड़े, जब सन् १८९८ में रेलवे मिस्त्रीखाने और कुछ दूसरे कारखानों के मजदूरों ने हड़ताल की। सोसो और लादो ने इन हड़तालों के संगठन में बहुत काम किया था। पहले-पहल सन् १८९९ में तिफ़लिस के मजदूरों ने मई दिवस को क्रांतिकारी तरीके से मनाया। इस महोत्सव के उपलक्ष्य में पांच सौ मजदूरों की एक सभा हुई, जिसमें सोसो ने भाषण दिया था। उसी साल के अन्त में, तिफ़लिस में ट्रामवाले मजदूरों ने हड़ताल की, जिसमें उनकी विजय हुई।

विद्यार्थी जीवन ही में सोसो का पिता बिसारियोन मर चुका था। विधवा मजूरिन मां अपने क्रांतिकारी बेटे की क्या सहायता कर सकती थी? इसलिये, सोसो को अपनी रोटी का भी कोई प्रबन्ध करना ज़रूरी था। काम ढूंढने पर, उन्हें तिफ़लिस की वेधशाला में नौकरी मिल गई। सोसो के पीछे पुलिस इतनी हाथ धोकर पड़ी कि रोटी कमाने के अतिरिक्त, छिपने की भी कोई जगह चाहिये थी। वानो केत्स्खोवेली वेधशाला की नौकरी के बारे में लिखता है :

"दिसम्बर सन् १८९९ के अन्त में, वेधशाला में, एक वेधक की जगह खाली थी। लादो के कहने पर, सोसो ने उसके लिये अर्जी भेज दी। वेधशाला में सारी रात जाग कर, निश्चित समय के अन्तर से बारीक यंत्रों द्वारा वेध लेना पड़ता था। काम में बड़े धैर्य और दिमाग थकाने वाली एकाग्रता की आवश्यकता थी, इसीलिये वेधक की जगह सदा खाली हो जाया करती थी। यही कारण था, जो सेमिनरी छोड़ने के बाद पहले मैंने, फिर साथी स्तालिन ने, फिर म० दवितशविली और अन्त में वासो बेर्इज़निशविली ने वेधशाला में बहुत आसानी से काम पाया।"

बातूम में (सन् १९०१-२)

सोसो बहुत दिनों तक तिफ़लिस में नहीं रह सके। इसमें गिरफ़्तार होने का डर ही एक कारण नहीं था, बातूम अब कालासागर का एक बहुत महत्वपूर्ण बन्दरगाह बन चुका था, जिसके कारण वहां मजदूरों की संख्या बहुत बढ़ गई थी। ११ नवम्बर, १९०१ को तिफ़लिस के समाजवादी-क्रांतिकारी संगठन की पहली कान्फ्रेंस हुई। इसमें २५ प्रतिनिधि शामिल हुये थे। इसी में एक कमिटी का चुनाव किया गया, जिसके एक सदस्य सोसो भी बनाये गये। कमिटी ने नवम्बर के अन्त में ही सोसो को बातूम भेज दिया। बाकू और तिफ़लिस के बाद, काकेशस में यह तीसरा सबसे बड़ा मज़दूरों का केन्द्र था। वहां पहुंचते ही, सोसो ने बड़े ज़ोरों से अपना काम शुरू किया। सजग मज़दूरों से सम्बंध स्थापित करने में देर नहीं लगी, और जल्दी ही उन्होंने वहां भी अपने अध्ययन-चक्र स्थापित कर लिये, जिनमें से कुछ में वह स्वयं भाग लेते थे। बातूम से तिफ़लिस नजदीक ही है, इसलिये सोसो का सम्बंध दोनों जगहों के संगठनों से था, इसे कहने की आवश्यकता नहीं। साथ ही, सोसो का ध्यान बाकू पर भी था। सोसो की प्रेरणा से, लादो केत्स्खोवेली ने एक ग़ैरक़ानूनी प्रेस क़ायम किया, और सितम्बर सन् १९०१ में तिफ़लिस से गुर्जी भाषा का प्रथम ग़ैर-क़ानूनी पत्र बरदज़ोला (संघर्ष) क्रांतिकारी समाजवादी-जनतंत्रियों की ओर से निकलना शुरू हुआ। पत्र का लक्ष्य था—कमकरों को जार, ज़मींदारों और पूंजीपतियों के ख़िलाफ़ संघर्ष करने के लिये तैयार करना। बरदज़ोला सारे रूस के मजूरों की अटूट एकता का पक्षपाती था। वह उत्पीड़ितों को समाजवाद के लिये लड़ने को प्रेरित करता था। बरदज़ोला ने अपने पहले ही अंक में घोषित किया था : "गुर्जी समाजवादी जनतांत्रिक आन्दोलन...सम्पूर्ण रूसी आन्दोलन के साथ हाथ में हाथ मिलाये चलेगा, इसलिये वह अपने को रूसी समाजवादी जनतांत्रिक दल के आधीन मानता है।" पत्र खुल्लमखुल्ला कमकरों की अधिनायकता का समर्थन करता था और जारशाही से डरने वाले 'क़ानूनी मार्क्सवादियों' और ग़ैरक़ानूनी संगठनों से अलग रहने

वाले 'अर्थशास्त्रियों' के विचारों की धज्जियाँ उड़ाता था। वह कमकर वर्ग के खुलकर क्रांतिकारी संघर्ष करने पर जोर देता था।

सेमिनरी से निकलने के साथ ही अब, पुलिस हाथ धोकर सोसो के पीछे पड़ गई। सोसो उस समय बेर्दज़ेनिशविली के साथ जिस मकान में रहते थे, पुलिस ने २१ मार्च, १९०१ को उसकी तलाशी ली। सोसो उस वक्त वहां नहीं थे। बेर्दज़ेनिशविली ने इस तलाशी के बारे में लिखा है:

"पुलिस ने एकाएक कमरे के भीतर घुसकर पूछा कि मैं कौन हूँ और उस घर में दूसरा कौन रहता है। इसके बाद तलाशी शुरू की। उन्होंने पहले मेरी कोठरी को एक-एक करके ढूँढ मारा और मार्क्सवादी विचारधारा के कुछ क़ानूनी प्रकाशनों को मुहरबन्द कर, सूची बना कर मुझसे उस पर हस्ताक्षर कराया। फिर, वह साथी स्तालिन (सोसो) की कोठरी में गये। वहाँ की एक-एक चीज को उन्होंने उलट-पलट दिया, कोने-कोने को देख डाला, बिस्तरे को झाड़ा;—लेकिन कोई भी चीज़ उनके हाथ नहीं आई। साथी स्तालिन की आदत थी कि पढ़ कर समाप्त करते ही वह पुस्तक को लौटा देते, उसे कभी घर में नहीं रखते थे। जहाँ तक ग़ैरक़ानूनी पुस्तकों का सम्बंध था, वह उन्हें कुरा नदी के किनारे एक ईंटों के ढेर के भीतर छिपा कर रखते थे। इन बातों में साथी स्तालिन बहुत सावधान रहते थे। दूसरी कोठरी की तलाशी के बाद, पुलिसवाले एक सूची बना कर ख़ाली हाथ लौट गये।"

सोसो के बातूम जाने से पहले, कार्लो, चूखेइद्ज़े और दूसरे क़ानूनी मार्क्सवादी बातूम में काम कर रहे थे। चूखेइद्ज़े ने सोसो को यह कह कर मना करने की कोशिश की कि बातूम में किसी काम का भी संगठन करना बिलकुल असम्भव है। उसने बहुत चाहा कि सोसो बातूम से निराश होकर चले जॉय, लेकिन जहां तक साधारण जनता और विशेषतः मज़दूरों का सम्बन्ध था, सोसो उन्हें कहीं अधिक जानते थे। सोसो ने चौबा मुहल्ले में जाकर अपना डेरा डाला और बड़े जोर-शोर के साथ अपना काम शुरु किया। बातूम में मज़दूरों की बहुत भारी संख्या थी, जो मन्ताशेफ़ सीदेरिदी, राथचाइल्ड और नोबेल की बड़ी-बड़ी तेल-शोधनियों में काम करते थे। राजनीतिक क्लासों के अतिरिक्त सोसो ने गुप्त छापाख़ाने की भी व्यवस्था की। वह स्वयं पुस्तिकायें लिखते और उनके छापने में मज़दूर उनकी सहायता करते। बातूम की खुफ़िया पुलिस ने उस वक्त रिपोर्ट दी थी कि वहां के कमकर सोसो जुगशविली का बड़ा सम्मना करते तथा उसे अपना गुरू समझते हैं:

"...समाजवादी जनतांत्रिक आंदोलन ने सन् १९०१ की शरद से बहुत प्रगति की है, जब से रूसी समाजवादी जनतांत्रिक दल ने सोसो जुगशविली नामक अपने सदस्य को यहां भेजा है। सोसो तिफ़लिस धर्मशास्त्रीय सेमिनरी के

छठे दर्जे का विद्यार्थी था।...जुगशविली की तत्परताओं के कारण, बातूम के सभी कारखानों में समाजवादी जनतांत्रिक संगठन बनने लगे हैं।..."

३१ दिसम्बर, १९०१ की रात को सोसो ने नव वर्ष के उत्सव के बहाने कमकरों के अध्ययन-चक्रों की एक कान्फ्रेन्स बुलाई, जिसमें क़रीब तीस आदमी शामिल हुये। इसी कान्फ्रेन्स में रूसी समाजवादी जनतांत्रिक दल की बातूम कमिटी का संगठन हुआ। बातूम में स्थापित होने वाला यह पहला लेनिनवादी संगठन था, इस कान्फ्रेंस के बारे में सोसो के सहकारी रोदियोन कोर्किया ने लिखा है :

"सोसो ने अपना भाषण समाप्त करते हुये कहा—'देखो, प्रभात हो चुका है। जल्दी ही सूर्य ऊगेगा। सूर्य हमारे लिये प्रकाशित होगा। मेरी बातों पर विश्वास करो, साथियो!'"

बातूम की कमिटी ने सन् १९०२ के आरम्भ में वहां कई बड़ी हड़तालें कराईं। कारखानों की हड़ताल-कमेटियों का संचालन सोसो स्वयं करते थे। जारशाही के अधिकारी इतने घबड़ा गये कि उन्होंने बातूम के लिये एक सैनिक राज्यपाल नियुक्त किया। राज्यपाल ने धमका कर हड़ताल खतम करने का प्रयत्न किया, लेकिन उसका कोई भी फल नहीं हुआ। ७ मार्च की रात में लोगों को भारी संख्या में गिरफ़्तार किया, तो भी कोई फ़ायदा नहीं हुआ। गिरफ़्तारी के विरुद्ध ८ मार्च, १९०२ को सोसो ने मजूरों का एक सामूहिक प्रदर्शन संगठित किया, जिसने गिरफ़्तार साथियों को छोड़ने की मांग की। पुलिस ने इसका जवाब तीन सौ प्रदर्शनकारियों को गिरफ़्तार करके दिया। अगले दिन सोसो ने एक और भी ज़बर्दस्त प्रदर्शन संगठित किया, जिसमें राथचाइल्ड और मन्ताशेफ़ के कारखाने के मज़दूर ही नहीं, बल्कि जहाज़घाट, रेलवे और दूसरे स्थानों के मज़दूर भी शामिल हुये। प्रदर्शन बड़ी ही सुव्यवस्थित रीति से सड़कों पर घूमा। हाथों में लाल झंडे लिये, लोग क्रांतिकारी गीत गा रहे थे। वह उस बैरिक तक गये, जिसमें उनके गिरफ़्तार साथी बंद थे। छोड़ने की मांग करने पर, अबकी बार पुलिस ने गोली चलाई। पन्द्रह मज़दूर वहीं मर गये और चौवन घायल हुये। उस दिन के प्रदर्शन के बारे में ई० दरख्वेलिद्ज़े नामक कमकर कहता है :

"साथी सोसो कमकरों के तूफ़ानी समुद्र के बीच खड़े, स्वयं प्रदर्शन का संचालन कर रहे थे। कलन्दाद्ज़े नामक मजूर जब बाँह में घायल हो गया, तो साथी सोसो ने उसे भीड़ से बाहर निकाल कर स्वयं घर तक पहुंचाया।"

१२ मार्च को, साथी सोसो ने ९ मार्च के दिन मारे गये मज़दूर शहीदों की क्रांतिकारी श्मशान-यात्रा का प्रबन्ध किया। लोग पुलिस की गोलियों और खून के अभिषेक से भयभीत नहीं हुये और वह भारी संख्या में शहीदों की श्मशान-यात्रा में शामिल

हुये। इस अवसर पर सोसो ने एक क्रांतिकारी भावों से ओत-प्रोत पुस्तिका छपाकर बातूम और दूसरे नगरों में बंटवाई थी, जिसके कुछ वाक्य थे :

"हम सम्पूर्ण हृदय से तुम्हारा सम्मान करते हैं, जिन्होंने सत्य के लिये अपने प्राणों को अर्पण किया। जिस स्तन ने तुम्हें दूध पिलाया, हम उसकी पूरी इज्जत करते हैं! जिनकी पेशानी शहीदी मुकुट से शोभित हुई और जिन्होंने मृत्यु के अन्तिम घंटे में अपने पीले और कांपते ओठों से संघर्ष के नारों को दोहराया, उनके लिये पूरा सम्मान! उस छाया (आत्मा) के लिये पूरा सम्मान जो हमारे कानों में आशा का संदेश संचार करती हुई कहती है— हमारे खून का बदला लो!"

सोसो पहले मते रुमिदूजे के घर में रहे। वहां से क़ासिम स्मिरबा नामक एक किसान के घर में चले गये। स्तालिन के इस समय के जीवन के बारे में निनुत्सा मोत्बाद्जे ने 'जार्या वस्तोका' में प्रकाशित अपने लेख में कहा है :

"साथी स्तालिन मते रुसिदूजे के घर में रहते थे, जिसकी दो कोठरियों में दरुत्वेलिदूजे माई और कोन्सिया कन्देलाकी रहते थे। पास की एक छोटी कोठरी में साथी स्तालिन रहते थे। इस कोठरी में कोई खिड़की या रोशनदान नहीं था। इसका बाहर का दरवाजा हमेशा बन्द रहता, जिसके कारण किसी का भी ध्यान उधर नहीं जा सकता था। बाहरी और भीतरी दरवाजों के बीच की जगह में कपड़े लटकते थे, जिनके देखने से मालूम होता था कि द्वार में कोई आलमारी है।

"घर के दूसरे आधे भाग में इविलियान और देस्पिने शपतवा रहते थे। सोसो की कोठरी में छापे का प्रेस रखा था, यहीं वह काम करते थे और यहीं उनके पैम्फलेट छपते थे। काफ़ी रात बीतने पर, यहीं अग्रगामी कमकरों की बैठकें होतीं।

"मेरी बहन देस्पिने अक़्सर इन पुस्तिकाओं को विश्वसनीय साथियों के पास ले जाती थीं। साथी स्तालिन स्त्रियों को क्रांतिकारी कामों की ओर खींचते और उन्हें क्रांति के सम्बन्ध में बातें बतलाते थे।"

सोसो जब अपनी जगह बदल कर क़ासिम के घर चले गये, तो गुप्त छापखाना अब वहीं काम करने लगा। यह अबख़ासी मुसलमान किसान बिलकुल सीधा-सादा, अनपढ़ था, लेकिन सोसो के सम्पर्क ने उसके दिल में भी क्रांति की आग जला दी थी। वह अपने सोसो की लिखी और छापी पुस्तिकाओं को फलों की टोकरी में छिपा कर बाहर ले जाता। क़ासिम की तरह ही, सैकड़ों सीधे-सादे किसान और मजदूर सोसो के काम में सहायता कर रहे थे। भावी स्तालिन के साथ उनकी इतनी

आत्मीयता और विश्वास था कि वह उनके लिये सब कुछ करने को तैयार थे। बातूम के कमकर उन्हें 'कमकरों का गुरु' कहते थे। इन कमकरों में स्तालिन के अपने जाति के गुर्जी ही नहीं थे, बल्कि क़ासिम की तरह के अबख़ासी, आज़ुर्बाइजानी, कुर्द, अर्मनी और रूसी भी थे। स्तालिन को इस प्रकार अपने क्रांतिकारी जीवन के आरम्भ में ही अन्तर्राष्ट्रीय मज़दूरों और किसानों के घनिष्ट सम्पर्क में आने का मौका मिला। राष्ट्रीय समस्याओं के अध्ययन का इससे अच्छा मौका और कहां मिल सकता था?

२. *प्रथम गिरफ़्तारी*

५ अप्रैल, १९०२ को पार्टी के मुख्य सदस्यों की एक बैठक हो रही थी। उसी समय पुलिस ने छापा मार, सोसो को पकड़ कर बातूम जेल में बन्द कर दिया, फिर कुछ समय बाद कुतैस के जेल में भेज दिया। लेकिन, जेल में बन्द करके सोसो को अपने क्रान्तिकारी कामों से नहीं रोका जा सकता था। आखिर सभी जगह मनुष्य रहते थे, जिनमें अधिकांश शोषित और पीड़ित ही थे, जिनके लिये ही सोसो ने अपना जीवन अर्पण किया था और जिनके प्रति उनके हृदय में अगाध प्रेम था। जेल के इन आदमियों द्वारा, सोसो ने अपने बाहर के साथियों से सम्बन्ध स्थापित किया। साथ ही, जेल में बन्द राजनीतिक बंदियों में तत्परता से काम करना शुरू किया। उन्हें मार्क्स, एंगेल्स और लेनिन के विचारों को समझने में मदद दी। ज़ारशाही ने सोसो जुगशविली पर बातूम के मज़दूरों के क्रान्तिकारी आन्दोलन का मुख्य नेता और शिक्षक, एवं तिफ़लिस समाजवादी जनतांत्रिक संगठन का सदस्य होने के अपराध लगाये थे। फरवरी सन् १९०३ में काकेशीय समाजवादी जनतांत्रिक संगठन की प्रथम कांग्रेस हुई, जिसमें काकेशीय फेडरल कमिटी का संगठन हुआ था। सोसो यद्यपि ५ अप्रैल, १९०२ से ही जेल में बन्द थे, लेकिन उनकी अनुपस्थिति में ही उन्हें कमिटी का सदस्य चुना गया। प्रायः सवा वर्ष जेल में बन्द रखने के बाद, ९ जुलाई, १९०३ को परममहाभट्टारक (ज़ार) का निर्णय घोषित करते हुये, सोसो को तीन वर्ष के लिये पुलिस की खुली देख-रेख में पूर्वी साइबेरिया में निर्वासित करने की सज़ा दी गई। साइबेरिया भेजने से पहले ही, नवम्बर सन् १९०३ के अन्त में सोसो को बातूम के जेल में लाया गया, जहां से उन्हें इर्कुत्स्क प्रदेश के बलगान्स्क जिले के नोवयाउदा नामक गाँव में भेज दिया गया।

इस प्रथम निर्वासन के समय तक सोसो एक प्रमुख संगठनकर्त्ता और जनता के बड़े नेता हो चुके थे। काकेशस की भूमि में उनका नाम सभी जगह बड़े सम्मान के साथ लिया जाने लगा था। यही नहीं सन् १९०३ तक, अब रूस के क्रांतिकारी भी इस गुर्जी तरुण को सम्मान की दृष्टि से देखने लगे थे। सोसो आतंकवाद के मानने वाले नहीं थे, मार्क्सवाद ने उन्हें सिखाया था कि क्रांति के लिये काम आने वाली सारी

शक्तियों का स्रोत जनता ही है। उसी जनता को जगाना सबसे जरूरी काम है, जिसके लिये छापेखाने की सबसे अधिक अवश्यकता थी। सोसो ने अपने मित्रों लादो केंत्खावेली, साशा चुलुकिद्ज़े, मिखा चूखाकया और दूसरे साथियों से मिलकर, गुप्त प्रेस स्थापित करने की व्यवस्था की थी, जिनके बारे में हम आगे देखेंगे कि वह कुछ ही वर्षों में कितना विशाल रूप ले चुका था।

इसी प्रथम निर्वासन के समय से सोसो का लेनिन से पत्र व्यवहार होने लगा। २८ जनवरी, १९०४ को क्रैमलिन सैनिक स्कूल की लेनिन संस्मरण सभा में बोलते हुये, स्तालिन ने इसके बारे में कहा था :

> "पहले-पहल सन् १९०३ में मैंने लेनिन का परिचय प्राप्त किया। यह सच है कि यह परिचय अभी साक्षात्कार के रूप में नहीं था। तो भी पत्र-व्यवहार द्वारा, यह परिचय लगातार जारी रहा। उन्होंने मेरे हृदय पर एक ऐसी अमिट छाप छोड़ी, जो मेरे पार्टी के सारे कामों पर अपना प्रभाव डाले बिना नहीं रही। उस समय में साइबेरिया में निर्वासित था। लेनिन के क्रांतिकारी कामों के बारे में १८९० वाली दशाब्दी के बाद, विशेषकर १९०१ से, जब कि 'इस्क्रा' (चिनगारी) का प्रकाशन शुरू हुआ, जो बातें मुझे मालूम हुईं उन्होंने मेरे मन में पक्की तरह से बैठा दिया कि लेनिन एक असाधारण प्रतिभा के धनी पुरुष हैं। मैं उन्हें दल के केवल एक नेता ही नहीं, बल्कि उसके वास्तविक संस्थापक समझता था; क्योंकि केवल वही ऐसे पुरुष थे जो हमारी पार्टी की अत्यावश्यक जरुरतों और आन्तरिक तत्त्वों को समझते थे। जब मैं पार्टी के दूसरे नेताओं से उनकी तुलना करता, तो मुझे सदा मालूम होता कि प्लेखानोफ़, मर्तोफ़, अक्सेलरोद और दूसरे नेता उनके कन्धों तक भी नहीं पहुंचते थे। लेनिन बहुत से नेताओं में से केवल एक नहीं थे, बल्कि वह सर्वोच्च नेता, एक शाहबाज़ थे; जो संघर्ष में भय क्या चीज़ है इसे नहीं जानते थे। उन्होंने बड़ी हिम्मत और निर्भीकता के साथ, क्रांतिकारी आन्दोलन के अपरिचित मार्ग से पार्टी को आगे बढ़ाया। यह प्रभाव मेरे ऊपर इतना जबर्दस्त था कि मैं इसके बारे में उस समय विदेश में निर्वासित अपने एक घनिष्ट मित्र को लिखे बिना नहीं रहा; और उससे इसके बारे में पूछा भी। कुछ समय बाद सन् १९०३ के अन्त में, जब मैं साइबेरिया में निर्वासित हो चुका था,—मुझे अपने मित्र का एक बड़ा ही उत्साहवर्धक पत्र मिला, जिसके साथ एक सीधा-सादा, लेकिन बहुत ही भावपूर्ण पत्र लेनिन का भी था, जिससे मालूम हुआ कि मेरे मित्र ने मेरे पत्र को उन्हें दिखा दिया था। लेनिन का पत्र अपेक्षाकृत बहुत छोटा था।... इस सीधे-सादे, किन्तु निर्भीक पत्र ने लेनिन के बारे में मेरी राय को और भी दृढ़ कर दिया कि वह हमारी पार्टी के

शाहबाज़ हैं। मैं इसके लिये अपने को क्षमा नहीं कर सकता कि, मैंने पुराने गुप्त कार्यकर्ताओं की आदत के अनुसार, और बहुत से पत्रों की तरह लेनिन के इस पत्र को भी आग में डाल दिया। लेनिन से मेरा परिचय उसी समय से शुरु होता है।"

नोवयाउदा में सोसो २७ नवम्बर, १९०३ को पहुँचे और १९०४ की वसंत तक, साइबेरिया का यही ग्राम उनका निवास स्थान रहा। क्रान्तिकारियों को साइबेरिया के इन सुदूरस्थ स्थानों में भेज कर ज़ारशाही चाहती थी कि क्रान्ति के कीटाणु जनता के भीतर न पड़ने पायें, लेकिन उसमें उसे सफलता कहां मिल सकती थी, जब कि इन कीटाणुओं से सारा वातावरण ही भरा हुआ था और जो ज़ारशाही के अपने शोषण और उत्पीड़न से पैदा होते थे। ज़ारशाही के दुर्भाग्य से, सोसो का यह निर्वासित जीवन डेढ़ महीने से भी कम का रहा। ५ जनवरी, १९०४ को एक दिन आंख बचा कर, वह गुर्जी तरुण नोवयाउदा से गायब हो, छिपते-बचते अपने केन्द्र बातूम में पहुँच गया! अपने संस्मरण में नतालिया किरतादेज़े बतलाती है कि स्तालिन उसके घर कैसे पहुँचे :

"सन् १९०४ के आरंभिक भाग में, एक रात मेरे दरवाज़े पर खटखट की आवाज़ हुई। आधी रात बीत चुकी थी। मैंने पूछा : 'कौन है?'

"मैं हूं, भीतर आने दो।'

"तुम कौन हो?'

"मैं हूँ, सोसो।'

"मेरे लिये यह विश्वास करने वाली बात नहीं थी; और मैंने तब तक दरवाज़ा नहीं खोला जब तक कि उन्होंने अपना संकेत-वाक्य—'हज़ार बार दीर्घजीवी'—नहीं बता दिया। मैंने पूछा 'तुम बातूम में कैसे चले आये?' सोसो ने जवाब दिया : 'मैं निकल भागा।' इसके बाद ही वह तिफ़लिस के लिये रवाना हो गये, जहां से उन्होंने कई बार हमें चिट्ठियां लिखीं। साथी सोसो उस समय काकेशीय फेडरल कमिटी के कामों का संचालन कर रहे थे। सन् १९०४ की वसंत में, एक बार फिर सोसो बातूम आये। अबकी बार उन्होंने बर्तज़खाना में इलिको शराशिदज़े के घर में मेन्शेविकों के साथ कई शास्त्रार्थ किये।"

अब सोसो का नाम 'कोबा' था। साथी कोबा का न कोई घर था, न परिवार। उनका सारा समय मज़दूरों के संगठन और क्रांति के काम में बीतता था। उनके पास एक भी पैसा नहीं था। निनुवा और दूसरे साथी जैसे चार वर्ष पहले उनके लिये भोजन आदि का प्रबन्ध करते थे, उनकी वही हालत अब भी थी। जलावतन से भाग कर

आये आदमी के पीछे ज़ारशाही पुलिस का पड़ा रहना स्वाभाविक था, इसलिये साथी कोबा को बहुत सावधानी से रहने की ज़रूरत थी। सभाओं में वह एकाएक पहुंचते, चुपचाप कहीं बैठ जाते और सिर्फ़ बोलने के समय ही प्रकट होते। दो-तीन साथी हमेशा उनके साथ रह कर दरवाज़े पर रखवाली किया करते। कोबा लम्बे भाषण कैसे दे सकते थे? उनका काम था भाषण दिया और लुप्त हुये। कोबा को बराबर एक जगह से दूसरी जगह घूमते रहना पड़ता था, क्योंकि उनके लिये अपने को छिपाना नहीं, बल्कि असली काम प्रचार और संगठन था। रेलवे लाइन सन् १८८३ में ही काकेशस पार करके, बाकू से तिफ़लिस और बातूम जा चुकी थी। सन् १९०० में बाकू का तेल पाइप द्वारा बातूम पहुंचने लगा था, जिसके कारण वहां कई बड़ी-बड़ी तेल-शोधनियां स्थापित हुई थीं, जहां से जहाज़ों द्वारा तेल काला सागर से दरे दानियाल होते हुये दुनिया के दूसरे देशों में जाता था। कोबा को यात्रा में ट्रेन का भी सहारा लेना पड़ता, लेकिन उन्हें इस बात का बहुत ही ध्यान रखना पड़ता कि खुफ़ियापुलिस वाले पीछा न कर सकें। कोबा की सावधानी का एक उदाहरण लीजियेः "एक गुप्त बैठक हो रही थी। स्थान नाट्यशाला का एक ऐसा भाग चुना गया था कि यदि पुलिस इमारत को घेर ले, तो एक दरवाज़ा तोड़ कर प्रेक्षणशाला के लोगों में मिलकर अपने को छिपाया जा सकता था।" एक बार वह विशाल पपोफ़ पुस्तकालय में गये। वहां रूसी लेखक बेलिन्स्की की पुस्तक मांग कर उसे ध्यान से पढ़ने लगे, लेकिन साथ ही वह हमेशा कनखियों से पुस्तकालय के एक सहायक की ओर देखते रहे, जिसको उन्होंने बिना दूसरे के देखे-जाने दो झूठे पासपोर्ट दे दिये थे। यह पासपोर्ट दो साथियों को देश से बाहर निकालने के लिये बनाये गये थे, जिन्हें पुलिस थोड़ी ही देर बाद गिरफ़्तार करने वाली थी।' पपोफ़ एक राजवादी पुस्ताकाध्यक्ष था, इसीलिये स्तुरोना रुइकोफ़, तोंदरिया, एनोकिद्ज़े जैसे क्रांतिकारी वहां आपस में मिला करते थे।

पुलिस बड़े ध्यान से कोबा की हुलिया लिये फिरती थीः "जुगशविली योसेफ़ बिसारियोनोविच, मोटा-तगड़ा...गम्भीर स्वर...बांये कान पर छोटा सा चिन्ह... सिर की आकृति साधारण...देखने में एक साधारण सा आदमी।" बाकू की ओखराना (पुलिस) खुफ़िया-विभाग के मुखिया को रिपोर्ट देती थी : "किसान योसेफ़ जुगशविली यहां की (गुप्त) सभाओं का प्रधान संचालक है, जिनका उद्देश्य है-एक गुप्त छापाखाना स्थापित करना।" दूसरे समय एक खुफ़ियापुलिस का आदमी ख़बर देता है कि इस समय जेल भेजा जाने वाला केसोम नीयेराद्ज़े नाम वाला आदमी और कोई नहीं, किसान जुगशविली ही है।

किसान जुगशविली या कोबा गुप्त-प्रेस को पहले भी संगठित कर चुके थे; क्योंकि वह जानते थे कि सबसे बड़ा हथियार ज्ञान का प्रसार ही है-राजनीतिक ज्ञान, वर्ग चेतना और वर्ग संघर्ष के ज्ञान का प्रसार ही है। इसीलिये, जिस तरह आतंकवादियों

का ध्यान बमों और रिवाल्वरों की तरफ़ जाता, उसी तरह कोबा का ध्यान प्रेस की तरफ़ था। अपने साथियों से मिल कर, उन्होंने अबलाबार में एक बड़ा गुप्त प्रेस संगठित किया, जिससे बहुत सी पुस्तिकायें और गैरक़ानूनी पत्र-पत्रिकायें निकलती थीं। इस प्रेस के बारे में हम आगे लिखने वाले हैं।

कोबा और उसके बोल्शेविक साथी काकेशस के नगरों और कस्बों में बराबर घूमा करते थे। यह वह समय था जब कि कोबा शास्त्रार्थ के मैदान में अपने प्रतिद्वंदी मेनशेविकों, समाजवादी क्रांतिकारियों, और क्रोपाट्किन के अनुयायी अराजकतावादियों से बराबर लोहा लेते रहते थे। तरुण कोबा की प्रतिभा का चमत्कार इस समय इन बहस की सभाओं में अच्छी तरह दिखाई पड़ता था। कभी वह तिफ़लिस में जाते, कभी बाकू में, कभी कुतैस, गोरी, चियातुरी, खोनी, वोर्चालो, बातूम या अन्य जगहों में। इन जगहों में जाकर कोबा ने शास्त्रार्थ ही नहीं किये, बल्कि पार्टी के संगठनों को बना कर मजबूत करना भी उनका काम था। चियातुरी में उन्होंने एक बोल्शेविक इलाक़ा कमिटी स्थापित की। उसी की प्रेरणा से कुतैस में भी भूतपूर्व कुतैस प्रदेश के लिये पार्टी की कमिटी बनी। खोनी में मेन्शेविकों के साथ जो शास्त्रार्थ हुआ था, उसके बाद ही वहां भी एक बोल्शेविक कमिटी स्थापित हो गई। इन शास्त्रार्थों में तर्कों और युक्तियों के द्वारा क्रान्तिकारी मार्क्सवाद के पक्ष का समर्थन करते हुए, कोबा ने श्रोताओं को मुग्धकर दिया था। सन् १९०५ में दो हज़ार कमकरों की सभा में अराजकतावादी गोगेलिया, चेरेतली और दूसरों से एक बड़ा शास्त्रार्थ हुआ। उसके एक प्रत्यक्षदर्शी केकेलिद्ज़े ने इस सभा के बारे में बतलाया है :

> "सभा आरम्भ हुई। कोबा पहले बोले। इस पर बहस शुरु हुई। विरोधियों ने बहुत जोर लगाकर उनके पक्ष का खंडन किया। साथी कोबा ने ज़रा भी घबराहट या उतावलापन न दिखलाते हुये, विरोधियों के एक-एक तर्क के चिथड़े-चिथड़े उड़ा दिये। इस प्रकार यहां भी बोल्शेविक विजयी हुये। मजूर एक राय से साथी कोबा के समर्थक हो गये।"

शास्त्रार्थों के अतिरिक्त, कमकरों में जाग्रति पैदा करने के लिये उनके कष्टों को दूर करने का रास्ता हड़ताल का था। दिसम्बर, १९०४ में बाकू तेल-क्षेत्र में एक जबर्दस्त हड़ताल हुई, जिसके लिये कहा जा सकता है कि अगले साल होने वाली रूसी क्रान्ति की वह पूर्व-सूचना थी। हड़ताल में बाकू के मज़दूरों की जीत हुई और रूसी कमकर-आन्दोलन के इतिहास में पहली बार यहां मालिकों ने मज़दूरों के सामूहिक-बातचीत के अधिकार को स्वीकार किया। इसका फल यह हुआ कि मेन्शेविकों, समाजवादी-क्रांतिकारियों, अराजकतावादियों, कादेतों और दशनकों (आर्मेनियन राष्ट्रीयनावादियां) की बाकू से टिक्की उड़ गई। सर्वत्र बोल्शेविकों की जय-जय होने लगी।

कोबा इस समय प्रतिवादि-भयंकर के रूप में शास्त्रार्थ-सभाओं में दिखाई पड़ते थे। सुधारवादी राजनीतिक दलों के मंतव्यों का भंडाफोड़ करने के लिये इससे अच्छा साधन और क्या हो सकता था। तिफ़्लिस बूट फैक्टरी में भी कोबा ने शास्त्रार्थ किया था। यह वही फैक्टरी थी, जिसमें उनका पिता जूते बनाया करता था। नोवा योरदानिया, ई० चेरेतेली, न० रामेशविली जैसे मेन्शेविक नेताओं को तरुण कोबा ने शास्त्रार्थों में परास्त कर दिया। बातूम के एक बड़े शास्त्रार्थ में वह न० रामेशविली और र० अर्सेनिद्ज़े आदि मेन्शेविक नेताओं के सामने बोले थे। पेरेविस्सी और शुकुर्ती आदि की मैंगानीज़ की खानों में भी जाकर कोबा ने शास्त्रार्थ किया। उनके विरोधी मेन्शेविक नेता ग० लोर्दकीपानिद्ज़े, न० खोमेरिकी, क० नीनिद्ज़े, ज० गुरुली आदि थे। कुतैम के शास्त्रार्थ ने वहां मेन्शेविकों का प्रभाव कम किया। खोनी जिले के खोनी और कुखी आदि स्थानों में कोबा, मिखा चूखाकया, फ० मखराद्ज़े आदि ने मेन्शेविकों के साथ शास्त्रार्थ जीता। पोती में भी साथी कोबा ने सफलतापूर्वक शास्त्रार्थ करके, वहां बोल्शेविक संगठन स्थापित किया। खिसिया कर योरदानिया, न० रामेशविली आदि मेन्शेविक नेताओं ने बोल्शेविकों पर झूठे लांछन लगाने शुरु किये; ख़ासकर कोबा और उनके गुरु लेनिन को तानाशाह, खूनी ब्लांकवादी आदि के नाम देकर बदनाम करने लगे।

भाषण-शैली—साथी कोबा के बोलने का ढंग बड़ा सरल और आकर्षक था। कोबा जानते थे कि वह उन मजदूरों के सामने हैं, जो क्रांति के सबसे बड़े सैनिक हैं। इसलिये, उनका सारा ध्यान इस ओर रहता था कि मार्क्सवाद के क्रांतिकारी विचारों को किस तरह उनके हृदयों में बैठाया जाय। एक भाषण में वह इस सिद्धांत को समझाने लगे कि जीवन की भौतिक स्थितियों के बदल जाने पर भी विचारधारायें उसी गति से नहीं बदलतीं। इसे उन्होंने इस तरह पेश किया—जैसे एक मोची को ले लो (यह मोची शायद कोबा का अपना पिता बिसारियोन ही उनके ध्यान में रहा होगा)। वह पहले अपनी छोटी सी झोपड़ी में काम करता था। उसके अपने छोटे-छोटे हथियार थे और किसी से कुछ लेना-देना नहीं था। लेकिन, एक बड़ा आदमी अदिलखानोफ़ जूते के बाजार में आया। वह सस्ते जूते बेचने लगा। मोची बेचारा उसके सामने कैसे ठहर सकता था? उसने अपनी झोपड़ी और दूकान छोड़ी और वह अदिलखानोफ़ की फैक्टरी में भर्ती हो गया। भर्ती होते वक्त, उसका यह ख़्याल नहीं था कि मैं हमेशा के लिये मजूरी करने वाला मोची बन जाऊंगा। उसका ध्यान था कि कौड़ी-कौड़ी करके कुछ पैसा जमा कर, मैं अपना एक छोटा सा कारख़ाना खोल लूँगा। मोची कारख़ाने में भर्ती होकर, अब सर्वहारा हो चुका है। इस जीवन से बचने का उसके पास कोई उपाय नहीं है, लेकिन अब भी वह अपने सर्वहारापन को स्वीकार करने के लिये तैयार नहीं है और स्वतंत्र कारीगर होने का स्वप्न देख रहा है। स्वतंत्र कारीगरी या असर्वहारापन उसके लिये अब

बीती कहानी है, लेकिन तब भी वह उसी मनोभाव को पकड़े हुये है। अपनी नई सामाजिक स्थिति को स्वीकार करने के लिये वह तैयार नहीं है। इस तरह साफ़ है कि मनुष्य के जीवन की बाहरी स्थितियां पहले ही बदल जाती हैं, लेकिन उसके मनोभावों के बदलने में देर लगती है। इसे बतलाते हुये, साथी कोबा ने अपने श्रोताओं के मन में यह भी बैठा दिया कि भौतिक स्थिति जब पहले ही बदल जाती है, तो इसी बदली हुई स्थिति के सहारे हमें अपने मनोभावों को बदल कर आगे बढ़ना चाहिये। हवाई विचारधारायें कोई क्रांति नहीं कर सकतीं, न उनसे कोई सफलता प्राप्त हो सकती है। आर्थिक स्थितियों पर निर्भर विचार-धारा ही सफलता की ओर ले जाती है। इसके साथ ही, साथी कोबा ने यह भी समझाया कि मनुष्य के मनोभाव, आचार-विचार या आदतें उसकी बाहरी भौतिक स्थिति से ही पैदा होती हैं। अगर क़ानूनी और राजनीतिक रूप अपनी बाहरी आर्थिक या भौतिक स्थितियों के प्रतिकूल हैं, तो इसका प्रभाव लोगों के सदाचार, आदतों आदि पर भी पड़े बिना नहीं रहेगा। भौतिक स्थिति या आर्थिक स्थिति ने जो अवसर दिया है, उससे लाभ उठाकर हमें लोगों के आर्थिक सम्बन्धों में मौलिक परिवर्तन करने का प्रयत्न करना चाहिये, और मोची को बतलाना चाहिये कि तुम्हारी बीती हुई स्थिति फिर नहीं लौट सकती, अब तुम सर्वहारा हो; अब तो सर्वहारों की विजय अर्थात् पूंजीपतियों की समाप्ति पर ही तुम्हारे लिये भले दिनों की आशा है।

एक भाषण में कोबा अर्थशास्त्रीय भौतिकवाद की आलोचना कर रहे थे। अपने सिद्धांत के लिये मार्क्स की दुहाई देने वाले, इस फ़ूहड़ भौतिकवाद के समर्थकों से कोबा ने पूछा: "किस ग्रह में, कौन से मार्क्स ने कहा है कि आदमी की विचारधारा उस रोटी पर निर्भर है, जिसे वह खाता है।" उन्होंने विरोधियों को चुनौती दी कि अपनी बातों के समर्थन में मार्क्स की किताबों में से एक भी वाक्य निकाल कर दिखलायें, "यह सच है, मार्क्स कहते थे कि मनुष्य के मनोभाव—उसकी विचारधारा—की निर्णायक उसकी आर्थिक स्थितियाँ हैं। लेकिन, उन्होंने यह कहाँ कहा है कि आर्थिक स्थितियाँ और रोटी एक ही चीज़ है? क्या यह स्पष्ट नहीं है कि रोटी जैसा एक शरीरोपयोगी पदार्थ समाज-शास्त्रीय पदार्थ से बिलकुल भिन्न है।"

उस वक्त का उनका फ़रारी जीवन ही इसका कारण नहीं था, बल्कि वैसे भी वह छोटे-छोटे भाषण दिया करते थे, लेकिन वह होता था गागर में सागर। ओर-खेलशविली कहता है कि **स्तालिन के भाषणों में पानी की एक बूंद भी नहीं रहती?** पानी की बूंद से यहाँ मतलब बेकार की बातों से है। वह उतने ही शब्द बोलते थे जिनकी आवश्यकता श्रोताओं के मन में किसी बात के बैठाने के लिये ज़रूरी होती थी। भाषण में वक्तृत्वकला के लिए आवश्यक स्वर का आरोह-वरोह और नाटकीय ढंग, लेनिन की तरह ही, कोबा में भी नहीं था। उनका ध्यान अपने सारे तर्कों और

युक्तियों से उसी एक बात के समझाने की ओर होता, जिस पर कि वह उस समय बोलते थे, मानो वह सुन्दर इमारत की एक-एक ईटें चुनकर अपने तर्कों और युक्तियों द्वारा रख रहे हैं। सीधी-सादी भाषा अपनी एक अलग ही कला रखती है। इस प्रकार हम नहीं कह सकते कि कोबा अर्थात् भावी स्तालिन के भाषण में कला का अभाव था।

कोबा को मालूम हो रहा था कि सशस्त्र संघर्ष का समय दूर नहीं है। वह आतंक-वाद के पक्षपाती नहीं थे कि दो-चार तरुणों को बम और रिवाल्वर चलाने के लिये तैयार करके सफलता की आशा रखते। उन्हें कमकरों को हथियारबंद कर, संघर्ष के लिये तैयार करना था। उन्होंने इसके लिये काकेशीय वीर कामो पेत्रोस्यान की सहायता से हथियार इकट्ठ करने का काम शुरु किया। तृतीय पार्टी कांग्रेस इसी साल, सन् १९०४ में हुई थी, जिसमें साथी कोबा नहीं जा सके और काकेशीय बोल्शेविकों की ओर से मिखा चूखाकया प्रतिनिधि बनकर गये। काकेशस की घटनाओं पर कांग्रेस ने यह विशेष प्रस्ताव पास किया था :

" जबकि,

" १. काकेशस की आज की विशेष सामाजिक और राजनीतिक स्थितियां इसके अनुकूल हैं कि वहां हमारी पार्टी के अत्यन्त लड़ाकू संगठन क़ायम किये जा सकें;

" २. काकेशस के नगर और देहात—दोनों के अधिकांश लोगों में क्रांतिकारी आन्दोलन उस अवस्था तक पहुंच गया है जब कि स्वेच्छाचारिता के विरुद्ध सारे देश में विद्रोह किया जा सके;

" ३. निरंकुश सरकार अपनी सेनाओं और तोपखानों को इसीलिये गुरिया में भेज रही है कि विद्रोह के सभी महत्वपूर्ण केन्द्रों को बड़ी निष्ठुरतापूर्वक दबा दिया जाय;

" ४. अगर निरंकुश शासन काकेशस के लोगों के विद्रोह को दबाने में सफल हुआ, जिसमें वहां की ग़ैर जातियों के अधिक होने से सुभीता भी है, तो यह रूस में विद्रोह की सफलता के लिये आम तौर से हानिकारक होगा।

" इसलिये, रूसी समाजवादी जनतांत्रिक दल की तृतीय कांग्रेस रूस के वर्ग चेतना वाले सर्वहारों के नाम से बोलते हुये काकेशस के बहादुर सर्वहारों और किसानों के पास अपना हार्दिक अभिनन्दन भेजती है, और केन्द्रीय समिति तथा पार्टी की स्थानीय समितियों को हिदायत करती है कि काकेशस की स्थिति के संबंध की सूचनायें पुस्तिकाओं, सभाओं, कमकरों की बैठकों और सामूहिक वाद-विवादों आदि के द्वारा, बड़े व्यापक पैमाने पर सब जगह फैलायें; और अपने पास जितने भी साधन हैं उनसे ठीक समय पर काकेशस की मदद करें।"

इसी समय काकेशस में आन्दोलन को और आगे बढ़ाने के लिये कोबा ने 'पोलेतारियातिम् बरदृज़ोला' (सर्वहारा-संघर्ष) की स्थापना की, जो आवलाबार के गुप्त प्रेस से निकलता था। लेनिन द्वारा सम्पादित 'प्रोलेतारी' (सर्वहारा) के भी कितने ही लेख इसमें उद्धृत किये जाते थे।

'बुर्दृज़ोला' का सातवां अंक १ सितम्बर, १९०४ को निकला था, जिसमें साथी कोबा ने सबसे पहले जातियों की समस्या का प्रश्न छेड़ा था। लेख का नाम था—'जातीय प्रश्न के बारे में समाजवादी जनतांत्रिक दृष्टिकोण'। इस समस्या को समय-समय पर और भी विकसित करके, अन्त में व्यवहारिक रूप से उसका हल निकालने का काम कोबा ने ही स्तालिन के रूप में किया। अपने इस लेख में कोबा ने मध्यवर्ग के राष्ट्रीयतावादी तथा मेन्शेविकों के इस विचार का खंडन किया कि मजदूरों के संगठन जातीयता पर निर्भर होने चाहिये और ऊपर से उनका फैडरेशन (संघ) भर होना चाहिये। कोबा ने कहा कि सर्वहारा की विजय के लिये, जातीयता का कोई भी ख़्याल किये बिना सभी कमकरों की एकता आवश्यक है, और जहां तक कमकरों के संगठन का सवाल है रूसी, गुर्जी, अर्मेनी, पोल, यहूदी आदि का कोई भी भेद न रख, सबका एक ही संगठन होना चाहिये। इसके बिना, सारे रूस में सर्वहारों की जीत नहीं हो सकती। काकेशस इस विचार की परीक्षा का सबसे उपयुक्त स्थान था, जहां बाकू, तिफ़लिस, बातूम आदि में सभी जातियों के कमकर इकट्ठे काम करते थे। लेकिन साथ ही, सन् १९०५ में कोबा ने यह भी स्पष्ट कर दिया कि जातियों को आत्म-निर्णय का अधिकार होना चाहिये। गुर्जी पत्र 'सकरत्वेलो' में जो वाद-विवाद चला था, उसमें भाग लेते हुए कोबा ने अपने ये विचार रखे थे।

कोबा के सम्पादकत्व में निकलने वाला 'प्रोलेतारियातिस बरदृज़ोला' उस समय लेनिन के 'प्रोलेतारी' के बाद, बोल्शेविकों का सबसे प्रभावशाली पत्र था।

इसी गुप्त जीवन में ४ जनवरी, १९०४ को कोबा की शादी एकातेरिना स्वानिदृज़ नामक एक गुर्जी तरुणी से हुई, जिससे सन् १९०६ में याक़ोब नामक पुत्र हुआ। क्रान्तिकारी कोबा को परिवार संभालने की फ़ुर्सत कहां थी? बीबी कुछ समय बाद तपेदिक से मर गई और याकोब के पालन-पोषण का भार नाना-नानी ने अपने ऊपर ले लिया।

सन् १९०५ में, कोबा का घनिष्ट मित्र और सहकारी शाशा चुलुकिदृज़े २९ वर्ष की छोटी उमर में मर गया। कोबा ने अपने मृत साथी की अन्त्येष्टि क्रिया के समय बड़ा मार्मिक व्याख्यान दिया था। शाशा को खोनी में दफ़नाया गया।

३. विद्रोह की तैयारी

सन् १९०४ से १९०७ तक, काकेशस में बोल्शेविक आन्दोलन का संचालन कोबा के हाथ में था। इस सारे समय में उन्होंने जहाँ कमकरों में वर्ग चेतना फैलाने,

उनके संगठन को मजबूत करके उनकी रोज-रोज की शिकायतों के लिये लड़ने का प्रबन्ध किया था, वहां अब सशस्त्र विद्रोह के लिये तैयारी करना भी जरूरी समझा। काकेशस की अवस्था के बारे में लेनिन ने उसी समय लिखा था : "इस बारे में हम (रूसी) काकेशस, पोलैंड और बाल्तिक प्रदेशों से पीछे रह गये हैं। यही वह केन्द्र हैं, जहां हमारा आन्दोलन पुराने आतंकवादी ढंग से बहुत ही आगे बढ़ चुका है, जहां पर विद्रोह की सबसे अच्छी तैयारी हुई है, जहां सर्वहारा संघर्ष का सामूहिक रूप अत्यंत स्पष्ट और शक्तिशाली दिखाई पड़ता है।"—'बरद्ज़ोला' के १५ जुलाई, १९०५ वाले अंक में 'हथियारबन्द विद्रोह और हमारे दाव-पेंच' नाम से एक लेख प्रकाशित हुआ, जिसमें यह घोषित किया गया था कि क्रांति दूर-दूर तक फैलती जा रही है, और वह समय दूर नहीं है जब कि सारे रूस में वह एक ऐसे विशाल तूफ़ान के तौर पर फूट पड़ेगी जिसके सामने ज़ारशाही स्वेच्छाचारिता की सारी गंदगी बह जायेगी। 'बरद्ज़ोला' ने इस बात पर भी जोर दिया कि प्रत्येक ज़िले में विद्रोह की एक योजना बननी चाहिये और शत्रु के रक्षा-कवच के उस सबसे निर्बल स्थान का पता लगाना चाहिये, जहां से विद्रोह आरम्भ करना है। पहले से ही उस स्थान का निश्चय कर लेना चाहिये। अपनी सेनाओं को ठीक अनुपात से सारे ज़िले में बांट कर रखना चाहिये और ज़िले की भूमि के नक़्शे का सैनिक दृष्टि से अध्ययन करना चाहिये। ऐसा होने पर ही विजय निश्चित हो सकती है। 'बरद्ज़ोला' के प्रथम अंक में ही इस तरह का लेख निकला था। उस समय काकेशस के मेन्शेविक 'सोत्सियल-देमोक्रात' (समाजवादी जनतंत्री) नाम से अपना एक पत्र निकालते थे। 'बरद्ज़ोला' उससे लोहा लेकर मेन्शेविकों के विचारों की धज्जियां उड़ाता था।

अभी रूस में प्रथम क्रांति का सूत्रपात नहीं हुआ था। इसी समय ५ अक्तूबर, १९०५ के अंक में 'बरद्ज़ोला' में 'प्रतिगामिता फैल रही है' के नाम से एक लेख निकला, जिसमें बतलाया गया कि जनता की क्रांति को दबा देने के लिये ज़ारशाही सरकार हर तरह के प्रयत्न कर रही है। सर्वहारा के लिये गोलियां, किसानों के लिये झूठे वादे, बड़े बूर्जुवाओं को अधिकार—यह वे हथियार हैं, जिनसे कि प्रतिगामिता अपने को हथियारबन्द कर रही है।

ज़ार ने १७ अक्तूबर, १९०५ को जो सुधारों की घोषणा प्रकाशित की थी, उसे मेन्शेविक एक भारी विजय समझते थे। कोबा ने तिफ़लिस में नद्ज़लादेवी की सभा में उसका मुँहतोड़ जवाब दिया था। सभा में उपस्थित एक लेखक ने सन् १९२९ के 'कम्युनिस्ट' में, अपने संस्मरण के तौर पर इसका वर्णन किया है :

"साथी कोबा भाषण-मंच पर आये और उन्होंने लोगों से कहा—'तुम्हारी एक बुरी आदत है, जिसे मैं तुम्हारे सामने साफ़-साफ़ कहना चाहता हूं। चाहे कोई भी सामने आये और चाहे कुछ भी कहे, तुम बराबर दिल खोल कर,

तालीं बजा कर उसका अभिनन्दन करते हो। अगर वह कहता है—स्वतंत्रता चिरंजीव, तो तुम ताली पीटते हो; अगर वह कहता है— क्रांति चिरंजीव, तो भी तुम ताली पीटते हो; और यह बिलकुल ठीक है। लेकिन, अगर जब कोई आकर कहता है—हथियार मुर्दाबाद, तब भी तुम ताली पीट देते हो! बिना हथियारों के क्रांति को सफल होने का अवसर कब मिल सकता है? वह किस तरह का क्रांतिकारी है, जो चिल्लाता है—हाथियार मुर्दाबाद? जो वक्ता ऐसा कहता है, वह शायद तालस्ताय का अनुयायी हो सकता है, किन्तु क्रांतिकारी हरगिज़ नहीं। चाहे वह जो भी हो, वह क्रांति का शत्रु है, लोगों की स्वतंत्रता का शत्रु है!'—सभा के लोगों में खलबली सी मच गई। लोग एक दूसरे से पूछने लगे—'कौन है यह? कितना कड़ा बोल रहा है! जैसे किसी याकोबीय (पेरिस के क्रांतिकारी) की जबान हो!' कोबा आगे बोल रहे थे—'विजय प्राप्त करने के लिये, वस्तुतः हमें किस चीज़ की ज़रूरत है? हमें तीन चीज़ों की ज़रूरत है। अच्छी तरह गांठ बांध लो। पहली चीज़ है—हथियार, दूसरी चीज़ है-हथियार, और तीसरी हथियार और फिर हथियार'!—चारों ओर से तालियों की गड़गड़ाहट सुनाई देने लगी, लेकिन तब तक वक्ता भाषण-मंच से जा चुका था।"

नवम्बर, १९०५ में काकेशीय पार्टी संगठन का चतुर्थ बोल्शेविक सम्मेलन साथी कोबा के नेतृत्व में हुआ। उसमें बाकू, तिफ़लिस, गुरिया आदि के प्रतिनिधि आये थे। सम्मेलन ने हथियारबन्द विद्रोह की ज़बर्दस्त तैयारी का प्रस्ताव पास किया और उसके लिये संगठन की कई बातें निश्चित कीं।

दिसम्बर, १९०५ में प्रथम रूसी इन्क़लाब हुआ। यह महीनों से चलने वाले सर्वहारों के संघर्षों का ही चरम रूप था। कोबा पहले से ही उसके लिये तैयारी कर रहे थे, यह हम बतला आये हैं। मेन्शेविक जगह-जगह होने वाले कमकरों के संघर्ष को स्वतःस्फूर्त संघर्ष बतलाते थे। इसका जवाब कोबा ने ९ जनवरी, १९०५ के अपने एक लेख द्वारा इस प्रकार दिया था:

"नहीं, भद्रपुरुषो, तुम्हारा यह सारा प्रयत्न व्यर्थ है! रूसी क्रांति अनिवार्य है, इतनी ही अनिवार्य है, जैसे सूर्य का ऊगना। क्या तुम सूर्य को ऊगने से रोक सकते हो? इस क्रांति की मुख्य सेना है-शहर और देहात के सर्वहारा; इसका झंडाबरदार समाजवादी जनतांत्रिक मज़दूर दल है, तुम नहीं!..."

सन १९०५ में ही, ज़ारशाही के विरुद्ध दो तरह के संघर्षों को लोगों ने देखा एक था-जनवरी के आरंभ वाले खूनी इतवार का वह जुलूस, जिसमें लोग ईसा मसीह और संतों की मूर्तियां तथा ज़ार की तसवीरें लिये हुये, धार्मिक भजन गाते, 'भगवान ज़ार की रक्षा करें' कहते हुये पादरी गैपन के नेतृत्व में, ज़ार के पास अपने दुखों की गाथा

लिख कर पेश करने जा रहे थे,. जिनका स्वागत ज़ार ने गोली चलवा कर सैकड़ों निहत्थे स्त्री-पुरुषों, बाल-बच्चों का खून करके दिया। लेकिन, दिसम्बर में ज़ारशाही के सामने दूसरी तरह के लोग आये, इनके हाथों में न मूर्तियां थीं और नज़ार के चित्र। इनके हाथों में लाल झंडे और मार्क्स तथा एंगेल्स की तसवीरें थीं। भजन और ज़ार की मंगल कामना की जगह, वह-'मार्सेइयेज़'-वीरतापूर्ण गान तथा दूसरे क्रांतिकारी गीत गा रहे थे। वह निहत्थे नहीं थे। उनके हाथों में हथियार थे, यद्यपि अभी उनकी संख्या बहुत नहीं थी। पादरी गैपन नहीं, बल्कि बोल्शेविक इस संघर्ष का संचालन कर रहे थे। मॉस्को की इस प्रथम क्रांति के असफल होने का एक कारण था—कमकरों में पूर्ण एकता का अभाव, और दूसरा कारण था—आक्रमण की नीति छोड़ कर, रक्षात्मक दाव-पेंच स्वीकार करना। साथी कोबा ने भविष्य के लिये सजग करते हुये, कहा था: "विद्रोह की विजय के लिये, यह ज़रूरी है कि दल एकताबद्ध हो, उसके द्वारा विद्रोह का हथियारबन्द संगठन किया जाय और लड़ने में आक्रमण की नीति को अपनाया जाय।"

दिसम्बर की क्रांति को मेन्शेविक तटस्थ होकर देखते ही नहीं रहे, बल्कि उन्होंने उसे असफल करने की भी कोशिश की थी। क्रांति के विफल होने पर, वह हंसी उड़ा रहे थे। कोबा ने इस पर लिखा था: "नहीं साथियो!, सर्वहारा पराजित नहीं हुये, बल्कि कुछ समय के लिये पीछे हट आये हैं। अब वह एक नये और यशस्वी आक्रमण के लिये तैयार हो रहे हैं। रूसी सर्वहारा अपने खून से रंगे झंडे को गिरने नहीं देंगे। वही महान् रूसी क्रांति के नेता हैं, और वही योग्य नेता बनेंगे।"

४. तमरफोर्स (दिसम्बर, सन् १९०५)

क्रांति विफल होने के बाद, फिनलैंड के तमरफोर्स नामक स्थान पर दिसम्बर में अखिल रूसी बोल्शेविक कान्फ्रेंस हुई, जिसमें साथी कोबा काकेशस के प्रतिनिधि बनकर गये थे। यहीं पर, उनकी लेनिन से पहले-पहल मुलाक़ात हुई। पहले ही दोनों एक दूसरे से काफ़ी परिचित हो चुके थे, इसलिये यह कोई आश्चर्य की बात नहीं यदि कोबा को पार्टी के एक प्रमुख नेता के तौर पर लेनिन के साथ विषय-निर्धारिणी में काम करने का मौका मिला। लेनिन के साथ इस पहली मुलाक़ात के बारे में, बाद में स्तालिन ने अपने एक भाषण में कहा था:

"सन् १९०५ के दिसम्बर में तमरफोर्स (फिनलैंड) की बोल्शेविक कान्फ्रेंस में, मैं पहले-पहल लेनिन से मिला। मैं आशा करता था कि हमारी पार्टी के पहाड़ी गरुड़, महान् पुरुष को राजनीतिक तौर से ही महान् नहीं, बल्कि शारीरिक तौर से भी मैं महान् देखूंगा। मैंने अपनी कल्पना में लेनिन को एक विशालकाय, प्रभावशाली, भव्य रूप में चित्रित किया था, लेकिन मुझे निराशा हुई

जब देखा कि वह एक साधारण सा दिखाई देने वाला आदमी है, जो क़द में भी औसत से कम है, और मामूली आदमियों से किसी बात में भिन्नता नहीं रखता।

"एक महान् पुरुष के बारे में यह सामान्य धारणा है कि वह सभा में देर से आये, जिसमें लोग सांस रोके उसके प्रकट होने की प्रतीक्षा करें। फिर महान् पुरुष के प्रवेश करने से पहले तुरन्त सजग कर दिया जाय: 'हुश! चुप!-वह आ रहा है।' मुझे यह प्रक्रिया बेकार सी नहीं जान पड़ती थी; क्योंकि इससे प्रभाव पड़ता है, लोगों में सम्मान का भाव आता है। लेकिन, मुझे उस वक्त यह जान कर निराश होना पड़ा कि लेनिन प्रतिनिधियों के आने से पहले ही कान्फ्रेंस में पहुंच कर, किसी एक कोने में बैठ, बिना किसी दिखावे के बातचीत कर रहे थे। बिलकुल मामूली.सी बातचीत थी, और सो भी कान्फ्रेंस के अत्यंत मामूली प्रतिनिधियों के साथ। मैं आप लोगों से छिपाना नहीं चाहता कि उस समय लेनिन की यह बात मुझे कुछ आवश्यक नियमों के उल्लंघन जैसी मालूम हुई थी।

"कुछ समय बाद ही, मुझे पता लगा कि लेनिन की यह सादगी, यह शालीनता, दिखावा न करने का प्रयत्न या कम से कम अपने को विशेषता न देना, अपने ऊँचे पद का प्रकाशन न करना नई जनता, सीधी-सादी और साधारण जनता, बिलकुल मामूली मानवों के नये नेता के लिये सबसे महत्व की चीज़ थी।

"लेनिन ने कान्फ्रेंस में जो भाषण दिये थे, वह भी उल्लेखनीय थे। उनमें से एक राजनीतिक परिस्थिति के बारे में था, दूसरा किसानों की समस्या के बारे में। दुर्भाग्य से उनको लिख कर सुरक्षित नहीं रखा गया। सारी कान्फ्रेंस में उन्होंने भारी उत्साह का संचार कर दिया था।"

दिसम्बर की क्रान्ति के असफल होने से, लेनिन और बोल्शेविकों के निश्चय में कोई कमज़ोरी नहीं आई। कोबा ने भी इसको उसी रूप में लिया। फिर, आगे की तैयारी होने लगी।

अध्याय ४

बोल्शेविक क्रान्ति से पहिले

१. गुप्त प्रेस (सन् १९०६-१७)

हम यह बतला चुके हैं कि क्रांतिकारी प्रचार के लिये साथी कोबा ने तिफ़लिस के अवलाबार मुहल्ले में एक गुप्त प्रेस स्थापित किया था। तीन वर्ष से अधिक समय तक, इससे तरह-तरह का क्रांतिकारी साहित्य रूसी, गुर्जी, अर्मनी, आजुर्बाइजानी आदि भाषाओं में निकल कर काकेशस में ही नहीं, बल्कि रूस के और स्थानों में भी फैलता रहा। पुलिस बराबर खोज करती रही, लेकिन उसका पता न पा सकी। भारतीय क्रांतिकारियों के बारे में, यशपाल ने अपने संस्मरण में एक जगह लिखा है कि पहले पूर्ण एकाग्रता और उत्साह के साथ किसी बड़े काम को करने के लिये क्रांतिकारियों का उत्साह दो हफ़्ते से ज़्यादा नहीं रहता था, पीछे भगतसिंह और उनके साथी जब केवल आतंकवाद को अपर्याप्त समझ उसमें कुछ समाजवादी भावनाओं को भी लाने लगे, तो भी उसकी आयु दो महीने से ज़्यादा नहीं हुई। लेकिन, बोल्शेविकों को केवल विचारों के आधार पर क्रांति नहीं लानी थी, उनका आधार था—सब तरह से शोषित-उत्पीड़ित सर्वहारा वर्ग, जो नये आर्थिक सम्बंधों के साथ कल—कारख़ानों में संगठित हो रहा था। वहाँ दिन-दिन के संघर्ष उनमें स्फूर्ति और साहस पैदा कर रहे थे। क़ासिम जैसा अनपढ़ किसान भी बोल्शेविकों के प्रभाव में आकर, ख़तरे की कोई परवाह न कर उनकी सहायता के लिये तैयार था। क़ासिम अपने सोसो पर कितना विश्वास करता था, यह हम देख आये हैं। एक दिन उसने सोसो से कहा था: 'मैं बहुत ही अकिंचन और बहुत ही सताया हुआ आदमी हूं। मैं कभी किसी मुखिया के सामने नहीं बोला, लेकिन मैं तुम्हें पहचानता हूं...मैं अच्छी तरह जानता हूं कि तुम कौन हो, तुम 'नपि अफिर कात्ज़ा' (एक अबख़ासी वीर) हो। मालूम होता है कि तुम कड़क और बिजली से पैदा हुये हो; तुम बड़े सूक्ष्म हो; तुम्हारे पास एक महान् हृदय और एक महान् आत्मा है।'

क़ासिम और उसके बेटे स्वयं सोसो और उसके गुप्त प्रेस को अपने घर में लिवा ले गये थे, और पीछे लम्बा बुर्क़ा ओढ़ कर कई भारी-भरकम औरतों को भी वह अपने गांव में ले गये। यह सोसो के साथी थे, जो छापने का काम करने आये थे। गांव के लोग प्रेस चलने की आवाज़ सुन कर तरह-तरह की कल्पनायें करते। बेचारे प्रेस और क्रान्तिकारी साहित्य के बारे में क्या समझें? एक शाम को, उनमें से कुछ ने सोसो से आकर कहा: "तुम जाली सिक्का बना रहे हो, न? और यह शायद हमारे

लिये कोई उतना बुरा पेशा भी नहीं है; क्योंकि हम ग़रीब हैं। तुम अपने सिक्कों को कब चलाओगे ?" सोसो ने इसका जवाब देते हुये कहा : "मैं जाली सिक्का नहीं बना रहा हूं, बल्कि तुम्हारी तकलीफ़ों को छाप कर दुनियां को बतला रहा हूं।" इस पर गांव के किसान संतुष्ट हो, सहायता करने का वचन देकर चले गये। सोसो के इस प्रेस को जमीन में गाड़े कई साल होगये थे, जब सन् १९१७ में क़ासिम के उसी बग़ीचे में क्रांतिकारी सैनिक आकर ठहरे, तब क़ासिम ने खोद कर प्रेस के अलग-अलग पुर्ज़ों को निकाल, उन्हें जोड़ दिया। फिर, उसने अपने लड़के से कहा : "देख, यह वही चीज़ है, जिससे इन्क़लाब बनाया गया था।"

लेकिन, अवलाबार का प्रेस अधिक छोटा और खिलौनों जैसा प्रेस नहीं था। ज़ारशाही को बड़ी प्रसन्नता हुई, जब अवलाबार के प्रेस का पता लग गया। पुलिस ने छापा मार कर, उसे अपने हाथ में कर लिया। उसी समय, १६ अप्रैल, १९०६ को काकेशस के पूंजीवादी पत्र 'कफ़काज़' ने लिखा था :

"**गुप्त छापाखाना**—१५ अप्रैल, शनिवार को अवलाबार मुहल्ले में द० रोस्तोमश्विली के एक अलग-थलग निर्जन घर के हाते में, छूत की बीमारियों के नगर-अस्पताल से डेढ़-दो सौ क़दम पर एक सत्तर फुट गहरे कुयें का पता लगा, जिसके भीतर रस्सी और गराड़ी की सहायता से उतरा जा सकता था। पचास फुट नीचे उतर, एक गलियारा दूसरे कुयें की ओर जाता था, जिसमें पैंतीस फुट ऊंची एक सीढ़ी लगी हुई थी, जिसके द्वारा घर के तहख़ाने के नीचे एक मकान में पहुँचा जा सकता था। इस मकान में सब सामान सहित एक पूरा छापाख़ाना निकला, जिसमें रूसी, गुर्जी, अर्मनी अक्षरों के बीस केस थे; हैंड-प्रेस था, जिसका मूल्य डेढ़-दो हज़ार रूबल हो सकता है। साथ ही, वहाँ भिन्न-भिन्न प्रकार के एसिड, भड़कने वाले गैलातिन तथा बम बनाने की दूसरी चीजें भी थीं। ग़ैरक़ानूनी साहित्य, भिन्न-भिन्न पलटनों और सरकारी संस्थाओं की मुहरें तो भारी मात्रा में थीं ही, साथ ही साढ़े सात सेर डायनामाइट वाली एक भयंकर मशीन भी थी। वहां रोशनी एसिटिलेन वाली लालटेनों से होती थी और बिजली के सिगनल का भी प्रबन्ध था। घर के हाते के एक झोंपड़े में तीन सजीव बम, कितने ही बमों के खोल और उसी तरह की दूसरी चीजें पाई गईं। 'एलवा' (बिजली) पत्र के सम्पादकीय आफिस में मीटिंग करते हुये चौबीस आदमियों को पकड़ कर, उन पर इस कांड में शामिल होने का दोष लगाया गया। 'एलवा' के आफिस की तलाशी लेने पर ग़ैरक़ानूनी साहित्य और पुस्तिकाओं के भारी परिमाण में प्राप्त होने के अतिरिक्त, बीस के क़रीब सादे पासपोर्ट के फार्म भी मिले। संपादकीय आफिस को बन्द करके, मुहर लगा दी गई। गुप्त छापाख़ाने से भिन्न-भिन्न दिशाओं में जाने वाले बिजली के तार प्राप्त हुये हैं, इसलिये घर के नीचे की भूमि से और चीज़ों का

पता लगाने के लिये खुदाई की गई। छापाखाने से निकली चीजों को पांच गाड़ियों पर लाद कर हटाया गया। इसी कांड के सम्बन्ध में, उसी शाम को तीन और आदमी गिरफ़्तार हुए। गिरफ़्तार किये हुये आदमी जब जेल की ओर ले जाये जा रहे थे, तो वह मार्सेइयेज़ गा रहे थे।"

अवलाबार प्रेस का यह रूप बतलाता है कि सोसो या कोबा ज़ारशाही पुलिस से आंख बचा कर काम करने में कितने चतुर और सफल थे।

२. *चौथी पार्टी कान्फ्रेंस (सन् १९०६)*

सन् १९०६ के अप्रैल महीने में, स्टॉकहोम (स्वीडन) में पार्टी की चौथी कान्फ्रेंस हुई, जिसमें कोबा, इवानोविच के नाम से काकेशीय प्रतिनिधि के तौर पर शामिल हुये। लेनिन ने इस कान्फ्रेंस में मेन्शेविकों के खिलाफ़ युद्ध घोषित कर दिया था। इवानोविच ने अपने भाषण में मेनशेविकों को लक्ष्य कर कहा : "चाहे तो सर्व-हारा का नायकत्व स्वीकार करो, या जनतांत्रिक पूंजीवादियों का—पार्टी के सामने यह सीधा प्रश्न है, जिसके सम्बन्ध में हमारा मतभेद है।" इस कांग्रेस में प्लेखानोफ़, अखेलरोद, मर्तोफ़ जैसे चोटी के मेन्शेविक नेता भाग ले रहे थे। लेनिन ने उनकी युक्तियों में से एक-एक की धज्जी उड़ाई थी। लेनिन भी नाटकीय ढंग की भाषण-कला पसन्द नहीं करते थे। वह भाषण नहीं दे रहे थे, बल्कि बोल रहे थे। वह लोगों की भावुकता को अपील नहीं करते थे, बल्कि अपनी बातों की सचाई को हृदयंगत कराते थे। स्टॉकहोम कान्फ्रेंस में बोल्शेविकों को सफलता नहीं मिली और बहुमत मेन्शेविकों के पक्ष में रहा इस समय के लेनिन के मनोभाव के बारे में, स्तालिन ने बाद में एक बार कहा था :

> "...इस समय पहली बार, मने लेनिन को पराजित के रूप में देखा था। लेकिन, वह हताश नहीं थे। वह भविष्य की विजय की बात सोच रहे थे। दूसरे बोल्शेविक कुछ हतोत्साहित से हो गये थे। लेनिन ने उन्हें प्रोत्साहन देते हुये कहा: 'साथियो, मत घबराओ, हम अवश्य विजयी होंगे; क्योंकि हम ही ठीक रास्ते पर हैं।' लेनिन ने उस समय कुड़बुड़ाते हुये बुद्धिवादियों के प्रति घृणा, अपनी शक्ति और विजय में हमारे अन्दर विश्वास पैदा किया। हम सोच रहे थे, बोल्शेविकों की पराजय केवल क्षणिक है। अन्त में हम अवश्य विजयी रहेंगे।"

चौथी कान्फ्रेंस एकता की कान्फ्रेंस कही जाती थी, क्योंकि स्टॉकहोम में बोल्शेविक और मेन्शेविक दोनों ही उसमें सम्मिलित हुये थे और दोनों पक्षों को एक करने का प्रयत्न भी किया गया था। एकता की कान्फ्रेंस कही जाने पर भी, वह एकता लाने में

सफल नहीं हुई। मेन्शेविक क्रान्तिकारी नहीं, बल्कि सुधारवादी थे। वह अपने विचारों पर दृढ़ थे। उन्होंने अपने स्वतंत्र संगठनों को भी बरक़रार रखा। अवसरवादी मेन्शेविकों से क्रान्तिकारी बोल्शेविकों की कैसे पट सकती थी? इसलिये, रूसी समाजवादी जनतांत्रिक मजदूर दल की एकता केवल कागजी ही रह गई।

कोबा कान्फ्रेंस से काकेशस लौट आये। वहां बोल्शेविकों के संगठन को मजबूत करने के लिये, उन्होंने एक बोल्शेविक क्षेत्रीय ब्यूरो की स्थापना की। इस ब्यूरो के द्वारा, इस बात के लिये जबर्दस्त आंदोलन शुरु किया गया कि पार्टी की एक नई काँग्रेस बुलाई जाय, जिसमें क्रान्तिकारी मार्क्सवाद के आधार पर वास्तविक एकता क़ायम की जाय। इसका फल जहां काकेशस में पार्टी का प्रचार और संगठन मजबूत करने के रूप में हुआ, वहीं पांचवीं कांग्रेस का आयोजन भी निश्चित हुआ।

३. *पांचवीं (लंदन) कांग्रेस (सन् १९०७)*

सन् १९०७ की अप्रैल और मई में होने वाली इस कांग्रेस में, साथी कोबा ने काकेशस के प्रतिनिधि के तौर पर भाग लिया। कोबा के अनुसार, इस कांग्रेस का सबसे महत्वपूर्ण काम यह हुआ कि इसने फूट नहीं, बल्कि पार्टी की अटूट एकता का काम किया। सारे रूस के प्रमुख कार्यकर्त्ताओं को एक अटूट पार्टी में लाकर एक कर दिया। यह सच्चे अर्थों में अखिल रूस की एकता-काँग्रेस थी। लंदन कांग्रेस उस समय हुई थी, जब कि ज़ारशाही जनता के अधिकारों पर भारी प्रहार करने के लिये तैयार हो रही थी। इसके बाद ही, ३ जून को ज़ारशाही ने द्वितीय राज्य-दूमा (संसद) को तोड़ दिया और अब वह बोल्शेविक संगठनों को चूर्ण-विचूर्ण करने में लगी हुई थी। सन् १९०५ की क्रांति विफल होने के बाद, जो निर्बलता और निराशा कमकरों में आई थी, उससे फ़ायदा उठाकर ज़ारशाही अपने विरोधियों का नामोनिशान मिटा देना चाहती थी। चारों तरफ़ आतंक का राज्य था। लेकिन यही समय था, जब साथी कोबा ने लंदन से लौट कर बाकू को अड्डा बना, मजदूरों में ज़ोर-शोर से काम करना शुरू किया।

इस कठिन परिस्थिति में, बाकू में सफलतापूर्वक काम करना कोबा जैसे योग्य संगठक और प्रचारक का ही काम था। कोबा ने अपने कामों से बाकू के कमकरों को बोल्शेविकों की ओर करने में सफलता पाई। बाकू का तेल-क्षेत्र बहुत दूर तक फैला हुआ था और दुनिया का एक सबसे बड़ा तेल क्षेत्र होने से, उसका औद्योगिक महत्व भी बहुत था। बालाखानी, बीबीऐबत, चोर्नीगोरद और वेलीगौरद के तेल-क्षेत्रों में यहां के मजदूर बिखरे हुये थे। मेन्शेविकों का उन पर काफ़ी प्रभाव था। लेकिन, उन्हें कोबा जैसे विरोधी का सामना करना पड़ रहा था, जो हर तरह से मेन्शेविकों के रास्ते को गलत साबित कर मजूरों को अपनी

ओर खींच रहे थे । कोबा ने ' बाकिन्स्की प्रोलेतारी ', ' गुदांक ' और ' बाकिन्स्की रबोची ' नाम के ग़ैरक़ानूनी पत्र निकाले । इसी समय, तृतीय राज्य-दूमा (पार्लामैन्ट) का निर्वाचन हो रहा था । निर्वाचन में भाग लेते हुये, कोबा ने ' तृतीय राज्य दूमा के समाजवादी जनतांत्रिक डेपुटियों का कर्त्तव्य-पत्र ' के नाम से एक लेख लिखा, जिसे २२ सितम्बर को बाकू में मजदूर प्रतिनिधियों की सभा ने स्वीकार किया। कोबा के सहायक उस समय सेर्गो ओर्जोनीकिद्ज़े, क्लिमेन्त वोरोशिलोफ़ (वर्तमान राष्ट्रपति), अल्योशा जापरिद्ज़े, स्त्वोपानी, सुरेन स्पन्दरयान, स्तेपन शौम्यान, वान्या फयोलेतोफ़, व. प. नोगिन (मकर), वतसक, अलीलयेफ़, ग्वंचलादूज़े अपोसतोल, रादुस जैकोविच (ईगर) जैसे लगन वाले कर्मी थे। बोरोशिलोफ़ उस समय बीबीऐबत ज़िले के तेल-मजदूर-संघ का मंत्री था और ओलियम कंपनी में ब्वाइलर बनाने का काम करता था। बाकू में मंताशेफ़, लियानोज़ोफ़ जैसे रूसी और राथचाइल्ड तथा नोबल जैसे विदेशी करोड़पति पूँजीपतियों से मुक़ाबला था। बाकू के अलग-अलग तेल-क्षेत्रों की अलग-अलग कमिटियां थीं, जिनके ऊपर बाकू कमेटी तथा उसके कार्यकारिणी ब्यूरो को कोबा की अध्यक्षता में क़ायम किया गया था। बाकू के मुसलमान मजदूर सबसे पिछड़े हुये थे, जिनको बहकाने के लिये पूंजीपति और ज़ारशाही मुल्लों और प्रतिगामी शक्तियों की सहायता लेती थी। उनमें काम करने के लिये, उम्मत (गुम्मेंत) के नाम से एक नया संगठन क़ायम किया गया, जिसका काम था मुसलमान कमकरों में तत्परता के साथ काम करना, उन्हें मुल्लों और सामन्तों के पंजे से निकालना । बीबीऐबत ज़िले को मेन्शेविकों का गढ़ समझा जाता था, इसलिये कोबा ने उसकी ओर विशेष तौर से ध्यान दिया । उन्होंने अपने एक लेख ' कान्फ्रेंस और कमकर ' में बाकू के काम के बारे में लिखा था :

> " सन् १९०३ की वसंत में, बाकू की पहली साधारण हड़ताल ने जुलाई की हड़तालों के आरंभ और रूस के दक्षिणी नगरों के प्रदर्शनों की सूचना दी। सन् १९०४ के नवम्बर-दिसम्बर की आम हड़ताल ने सारे रूस में होने वाले जनवरी-फरवरी के यशस्वी संघर्षों का सिगनल दिया । सन् १९०५ में, बाकू के सर्वहारा अर्मनी-तुर्क-हत्याकांड के प्रभाव से जल्दी मुक्त हो, अब संघर्ष में भाग लेने लगे, जिसका प्रभाव सारे काकेशस में एक भारी जोश के रूप में देखा जा रहा था । १९०५ की क्रांति असफल होने के बाद भी, सन् १९०६ में बाकू का जोश कम नहीं हुआ, मई-दिवस का उत्सव यहां रूस की और सभी जगहों से अच्छी तरह प्रति वर्ष मनाया जाता था, जिसे देख कर दूसरे नगरों को डाह हो सकती थी। "

लंदन कांग्रेस के बाद ही, मैन्शेविक जारशाही के अत्याचार से घबराकर बाकू के कमकरों के सभी लड़ाकू संगठनों को ठप्प करने लगे, जिसका बोल्शेविकों ने जबर्दस्त

विरोध किया और उन संगठनों को फिर से स्थापित किया। अगस्त सन् १९०७ में, कोबा ने एक पुस्तक प्रकाशित की, जिस पर संगठन-कमीशन का हस्ताक्षर था। इस संगठन-कमीशन में बालाखान, बीबीऐबत, चोर्नीगोरद, वेलीगोरद, मॉस्कोइ जिलों के संगठन ही नहीं, बल्कि रूसी समाजवादी जनतांत्रिक मजदूर पार्टी के बाकू संगठनों वाला मुस्लिम उम्मत गुट भी शामिल था। इस लेख में मजदूरों से मेन्शेविक केन्द्र के नेतृत्व को छोड़ देने की अपील की गई थी, जिसका जनता से कोई सम्बन्ध नहीं था और जो अवसरवादी नीति का अनुसरण करता था और बाकू के सर्वहारा के विचारों और भावों का प्रतिनिधित्व नहीं करता था। मेन्शेविकों का यह केन्द्र सचमुच ही बाकू के सर्वहारों का विश्वासपात्र नहीं हो सकता था; क्योंकि वह उनके संघर्षों में नेतृत्व करने के लिये तैयार न हो, उन्हें पीछे खींचना चाहता था। जार ने राज्य दूमा को तोड़ दिया, तो उसके विरुद्ध भी बाकू में कुछ करना जरूरी समझा गया। वहां के रेलवे कमकरों तथा बाकू के चार तेल-क्षेत्रों के मजदूरों का सम्मेलन किया गया। आपस में विचार-विनिमय के लिये भिन्न-भिन्न पार्टियों के प्रतिनिधियों का एक और भी सम्मेलन हुआ। तृतीय राज्य दूमा के चुनावों का प्रश्न था। अतः इसके लिये आर्जुबाइजानी (तुर्की) और अर्मनी भाषाओं में भी पुस्तिकायें निकाली गईं, जिनमें दशनकों (अर्मनी राष्ट्रवादियों), बंद (यहूदी मजदूर सभा) और मेन्शेविकों की अवसरवादिता की पोल खोली गई। इसी समय, मॉस्को और पीतरबुर्ग की तरह, बाकू में भी एक बोल्शेविक केन्द्र स्थापित करने का सवाल उठा, जिसका सभी जगह से समर्थन हुआ; और वह बोल्शेविक केन्द्र स्थापित हो गया। इस केन्द्र ने बाकू के मजदूर आन्दोलन को बढ़ाने में बड़ा काम किया।

अगस्त सन् १९०७ में, दूमा के निर्वाचन के सम्बन्ध में कई जिला-कमेटियों की तरफ़ से एक पुस्तिका प्रकाशित की गई, जिसमें बतलाया गया—यद्यपि जारशाही दूमा में सच्चे जन प्रतिनिधियों का पहुंचना असम्भव है, लेकिन तो भी कमकरों को वोट की पेटियों से फ़ायदा उठा, जारशाही सरकार की चालाकियों का भंडाफोड़ करना चाहिये, जिसमें वह मजदूरों को धोखा देने के अपने लक्ष्य में सफल न हो सके। निर्वाचन में बोल्शेविक इसलिये भाग ले रहे हैं कि जारशाही सरकार को हटाकर, जनतांत्रिक गणराज्य स्थापित करने के लिये, एक नये संघर्ष का आरम्भ किया जाय। यद्यपि प्रथम क्रांति के बाद, दूसरे स्थानों में आन्दोलन का जोर बहुत घट गया था, लेकिन जहां तक बाकू का सम्बन्ध था, वहां के कमकर अक्तूबर की महान् क्रांति तक बोल्शेविकों के पथ-प्रदर्शन में उसी तरह डटे रहे।

२२ अगस्त, १९०७ को 'गुदांक' में साथी कोबा का एक लेख 'समाजवादी जनतंत्रियों में' छपा। अवसाद और निराशा के समय अराजकतावाद बुद्धिजीवियों पर काफ़ी प्रभाव डालने लगा था और यह बीमारी घटने की जगह बढ़ती ही जा रही थी;

चोर-डाकू भी इससे लाभ उठाने के लिये तैयार थे। कोबा ने अपने लेख में कमकरों और किसानों से कहा कि अपने आदर्श के लिये, श्रमिक जनता की मुक्ति के लिये अपने को संगठित करो और अराजकतावाद के दलदल में मत फँसो।

कोबा जाति के गुर्जी थे, जो धर्मतः ईसाई होते थे; और बाकू आजुर्बाइजान के मुसलिम इलाक़े में है। भारतीय पाठकों को यह बतलाने की आवश्यकता नहीं कि निरक्षर और पिछड़ी जनता कितनी आसानी से उन मुल्लों के हाथ में फंस जाती है, जो हाकिमों के इशारों पर नाचते हैं। यह साथी कोबा के अनुकरणीय कार्य का चमत्कार ही था कि एशियाई और रूसी, मुसलमान और ईसाई, सब एक ही तरह से उन्हें अपना नेता मानते थे। बीबीऐबत ज़िले में, नैप्थलन कंपनी के तेल के कुंये थे। वहां खानलार नामक एक आजुर्बाइजानी मज़दूर कर्मठ कार्यकर्ता था। उसके कारण मुसलमानों में प्रतिगामियों की नहीं चलती थी। मालिक भयभीत थे। इसलिये उनके इशारे पर, जाफ़र और अबजरबेक दो गुंडों ने खानलार को मार डाला। कोबा ने सितम्बर, सन् १९०७ में 'खानलार पर जो बीती, वह हम पर बीती' के नाम से एक पर्चा निकाला, जिसमें लिखा था :

> "हत्यारों ने खानलार के ऊपर गोली नहीं चलाई, बल्कि हमारे ऊपर, आगे बढ़े हुये कार्यकर्त्ताओं के ऊपर चलाई है। हमारे ऊपर गोली चला कर, पूंजीपतियों के गुर्गे हमारे अग्रगामी साथियों की पांति को छिन्न-भिन्न करना चाहते हैं, जिसमें आगे चलकर वह बाकू के सर्वहारों की गर्दनें और कड़ाई के साथ रस्सी से कस सकें।"

पर्चे में हड़ताल करने तथा खानलार के हत्यारों को काम से निकाल देने की मांग पेश की गई थी। दो हफ़्ते की हड़ताल घोषित कर दी गई, और उसके बारे में एक पर्चा निकाल कर कहा गया : 'हम सारी दुनिया को दिखला देंगे कि खानलार अकेला नहीं था, और हर एक आगे बढ़े हुये कार्यकर्त्ता के पीछे हजारों की सेना तैयार है, जो अपने साथियों और नेताओं की रक्षा करने के लिये मज़बूती से खड़ी है।'

'गुदांक' के पांचवें अंक (१४ अक्तूबर, १९०७) में साथी कोबा ने खानलार की शहादत पर एक टिप्पणी लिखी थी, जिसमें शहीद के प्रति श्रद्धांजलि देते हुये कहा था : 'उसके हृदय में सर्वहारा की आत्मा की आग और भाव-प्रवणता थी; उसके दिल में किसानों का दुख और कष्ट भरा हुआ था।' खानलार के अतिरिक्त, दुश्मनों ने रेलवे और दूसरे कारखानों में काम करने वाले तुछकिन, लीसैनिन और दूसरे कितने ही सजग मज़दूरों की हत्या करवाई थी। इस पर बोल्शेविक बाकू कमेटी ने कमकरों को आत्म-रक्षा के लिये संगठित होने तथा जरूरी सामान जमा करने के लिये आदेश दिया।

तीसरी राज्य दूमा तोड़ देने के बाद, चौथी राज्य दूमा निर्वाचित हुई, जिसके पथ-प्रदर्शन के लिये भी साथी कोबा ने एक निर्देश-पत्र तैयार किया। इस पत्र में लंदन कांग्रेस की कार्रवाइयों के बारे में भी बतलाया गया था। २२ सितम्बर, १९०७ को *बाकू में कमकर प्रतिनिधियों ने इस पत्र का समर्थन* किया। इसमें कहा गया था कि राज्यदूमा में समाजवादी जनतांत्रिक डेपुटियों को अपना अलग गुट क़ायम करना चाहिये, और एक ख़ास पार्टी के प्रतिनिधि होने के कारण उन्हें अपनी पार्टी और उसके नेतृत्व के साथ घनिष्ट सम्बन्ध रखना चाहिये। इस गुट को सर्वहारा वर्ग के हित के लिये एक विशेष कार्यक्रम पर चलना; पार्लामेन्ट का उपयोग कादेतों (राजवादियों) और मेन्शेविकों से भिन्न तौर पर करना है। कमकरों के प्रतिनिधि दूमा में विधान बनाने के अभिप्राय से नहीं जा रहे हैं, बल्कि अपने विचारों के प्रचार और क्रांतिकारी शक्तियों को मज़बूत करने के लिये, उसे मंच के तौर पर इस्तेमाल करने जा रहे हैं। यह बातें तृतीय दूमा के देपुटियों के पथ-प्रदर्शन के लिये कही गई थीं। तृतीय राज्य दूमा के उद्घाटन के समय, नवम्बर सन् १९०७ में एक पर्चा निकाल कर कहा गया कि कमकरों का गुट दूमा में तभी सफलतापूर्वक काम कर सकता है, जब कि वह लोगों को यह सूचित करता रहे कि दूमा में क्या हो रहा है और साथ-साथ, पार्टी-संगठन लोगों को समझाते रहें कि शांतिपूर्ण, अहिंसात्मक ढंग और पार्लामेन्टी तरीक़े से अपनी मांगें पूरी कराने की आशा केवल दुराशा मात्र है।

सन् १९०८ के आरंभ में, मिस्त्रीखानों के फोरमैनों की परिषद और तेल-उद्योग के कमकरों तथा आफिस के नौकरों की परिषद के प्रतिनिधियों की प्रथम मीटिंग, मालिकों के साथ होने वाली कान्फ्रेंस में अपने प्रतिनिधि चुनने के लिये हुई। इस कान्फ्रेंस ने बतला दिया कि बाकू के कमकरों में बोल्शेविक पार्टी का कितना अधिक प्रभाव है। जब मालिकों ने देखा कि ऐसे प्रतिनिधियों के साथ बातचीत करके वह अपना मतलब पूरा नहीं कर सकते, तो उन्होंने दूसरा रुख लिया और मज़दूरों पर आक्रमण करने एवं कारखानों के फोरमैनों को—जो कमकरों पर बहुत प्रभाव रखते थे-नौकरी से निकालना शुरू किया; और कमकरों में जातीय वैमनस्य पैदा करने के लिये भी अपने गुर्गों को भेजा। इस पर 'गुदांक' के २२ वें अंक (९ मार्च, १९०८) में साथी कोबा ने 'तेल के मालिक पैंतरा बदल रहे हैं' के नाम से एक लेख लिखा, जिसमें कमकरों को तेल-कमकर-संघ के साथ जुट जाने और छुट-फुट हड़ताल करके अपनी शक्ति को व्यर्थ ही बरबाद न करने के लिये कहा गया। बाकू कमेटी ने पहले पूंजीपतियों द्वारा प्रस्तावित कान्फ्रेंस में सम्मिलित होने का विरोध किया और इसके लिये २९ सितम्बर, १९०७ के 'गुदांक' में कोबा के नाम से एक लेख 'कान्फ्रेंस का बायकाट करो' निकाला, जिसमें साथी कोबा ने कहा था :

"कान्फ्रेंस में शामिल होने या बायकाट करने का प्रश्न, हमारे लिये कोई सिद्धान्त का प्रश्न नहीं है, बल्कि यह व्यवहारिक उपयोगिता की बात है। हम

एक ही बार, सदा के लिये सभी कान्फ्रेंसों के बायकाट का निश्चय नहीं कर सकते...और, न हम एक बार ही सदा के लिये कान्फ्रेंस में सम्मिलित होने का निर्णय ही कर सकते हैं, जैसा कि कादेत-मनोभाव रखने वाले लोग कर लेते हैं। हमें सम्मिलित होने या बायकाट करने पर, यथार्थ घटनाओं और केवल घटनाओं की दृष्टि से ही विचार करना होगा।"

मार्क्सवाद का अत्यंत शीघ्रता से दुनिया, उसकी चीजों और घटनाओं के क्षण-क्षण बदलते रहने का सिद्धान्त केवल दार्शनिक उड़ान भरने के लिये नहीं है, बल्कि हर क्षण सजग रह कर, घटनाओं के अनुसार व्यवहार के परिवर्तन के लिये नये रास्ते ढूंढ़ निकालने में उसकी मदद लेनी जरूरी है। लेनिन और स्तालिन हवाई विचारक नहीं थे। वह दार्शनिकों और वेदांतियों की तरह, दुनिया की व्याख्या नहीं करते फिरे, बल्कि दुखों और अत्याचारों की मारी दुनिया को बदलने के लिये, उन्होंने उसका इस्तेमाल किया। इसी पर आरूढ़ रहकर, स्तालिन ने अपने जीवन के अन्त तक भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में सफलता पाई। प्रतिभा के साथ, क्रांतिकारी दर्शन का व्यवहार में ठीक से उपयोग करना उनकी सफलता का गुर था।

मालिकों ने कमकरों पर हल्ला बोल दिया। उनके आक्रमणों को मेन्शेविक और अराजकतावादी ही अनदेखा कर सकते थे। बोल्शेविकों ने सन् १९०८ की जनवरी और फरवरी में कितनी ही हड़तालों से इसका मुंहतोड़ जवाब दिया, जिनमें से कई बहुत सफल रहीं। इनके कारण, बोल्शेविकों का प्रभाव और भी बढ़ा। इससे पहले सन् १९०७ की शरद में, कान्फ्रेंस में सम्मिलित होने के लिये बोल्शेविकों ने निम्न शर्तें पेश की थीं:

(१) अपनी मांगों पर बहस करने का अधिकार हो,
(२) अपनी भावी फोरमैन-परिषद की मीटिंगें करने का अधिकार हो,
(३) अपनी मजदूर सभाओं की सेवाओं से लाभ उठाने का अधिकार हो,
(४) कान्फ्रेंस की तारीख चुनने का अधिकार हो।

'समाजवादी-क्रांतिकारी', मेन्शेविक और 'दशनक' (अर्मनी राष्ट्रवादी) बोल्शेविकों के प्रस्ताव का विरोध करते थे। मेन्शेविकों ने तो यह भी कहा था कि बिना किसी गारंटी या शर्त के कान्फ्रेंस में शामिल होना चाहिये। उनका नारा था—'चाहे जिस मूल्य पर भी—कान्फ्रेंस!'। समाजवादी क्रांतिकारियों और दशनकों को मजदूरों से कोई आशा नहीं थी, इसलिये उन्होंने नारा लगाया—'चाहे जिस मूल्य पर भी—बायकाट!'। इसके लिये कमकरों में प्रचार और मत-संग्रह किया गया, जिसका परिणाम निम्न प्रकार का हुआ: 'पैंतीस हजार कमकरों के पास कनवैसिंग की गई, जिनमें से आठ हजार ने समाजवादी-क्रांतिकारियों और दशनकों

(बिना शर्त बायकाट) के पक्ष में वोट दिया, आठ हज़ार ने मेन्शेविकों (बिना शर्त कान्फ्रेंस) का समर्थन किया, जब कि उन्नीस हज़ार कमकरों ने बोल्शेविकों की मांग (गारंटी के साथ कान्फ्रेंस) का समर्थन किया।

साथी कोबा के नेतृत्व में, सन् १९०७ के अन्त में ये सब घटनायें बाकू में उस वक्त घटित हो रही थीं, जब राजनीतिक अवसाद से लाभ उठाकर, ज़ारशाह कसाई स्तोलिपिन सारे देश में आतंक फैलाए हुये था और लोग सहमे-सहमे से मालूम होते थे।

बाकू के कमकर और उनके नेता देशव्यापी क्रूर अत्याचारों से आंखें नहीं मूंद सकते थे। इसीलिये, १५ अप्रैल, १९०८ के 'बाकिन्स्की प्रोलेतारी' (बाकू सर्वहारा) में 'वर्तमान प्रतिगामिता और हमारा कर्त्तव्य' के नाम से एक लेख निकला, जिसमें स्तोलिपिनीय अत्याचारों की काली छाया के सिर पर मंडराने से सजग करते हुये कहा गया कि मजूरों ने भारी विजय प्राप्त की है, लेकिन वह उसके फल को अपने हाथों में नहीं रख सके। इसका कारण यही था कि किसान अपने सर्वहारा भाइयों की सहायता के लिये आगे नहीं बढ़े। ज़ालिम सरकार ने इससे फ़ायदा उठाकर, सर्वहारा के ऊपर आक्रमण कर दिया। पिछले अक्तूबर में जो अधिकार मजूरों ने प्राप्त किये थे, उन्हें वह एक-एक करके छीन रही थी। छापे की स्वतंत्रता और संगठन की स्वतंत्रता को छीनती जा रही थी। साथी कोबा ने बतलाया कि यह स्थिति अधिक समय तक नहीं रह सकती। जागरूक शक्तियां ज़ारशाही को मनमानी करने के लिये बहुत दिनों तक नहीं छोड़ सकतीं। पुराने और नये रूस का निर्णायक संघर्ष अवश्य होके रहेगा। क्रांति अनिवार्य है। इससे मालूम होगा कि बोल्शेविक सर्वहारा वर्ग के अंतिम संघर्ष में, किसानों के सहयोग की कितनी आवश्यकता समझते थे। 'बाकिन्स्की प्रोलेतारी' ने इसीलिये गांवों के सर्वहारों तथा अर्ध-सर्वहारों, ग़रीब किसानों में भी आन्दोलन और संगठन करने पर जोर दिया।

कमकरों का यह रुख देख कर, कांन्फ्रेंस को रोक दिया गया। इस पर, जुलाई सन् १९०८ में 'बाकिन्स्की प्रोलेतारी' के पांचवें अंक के परिशिष्ट के रूप में, कोबा के नाम से 'कान्फ्रेंस और कमकर' लेख निकला। इस लेख में कहा गया था: "मिस्टर जुनकोव्स्की, तिफ़लिस का पुराना भांड घोषित कर रहा है कि तमाशा खतम हो गया। पूंजीपतियों का खुशामदी कुत्ता, मिस्टर करामुर्ज़ा उस पर ताली पीट रहा है। पर्दा गिरता है और हम पुराना परिचित दृश्य देखते हैं—तेल-मालिक और कमकर नये संघर्ष के लिये, नये तूफ़ान के लिये, अपनी पुरानी जगह पर खड़े प्रतीक्षा कर रहे हैं।" लेख में कान्फ्रेंस के इतिहास का वर्णन करते हुये बतलाया गया, कि मालिक इसीलिये कान्फ्रेंस नहीं करना चाहते क्योंकि वह जानते हैं कि मजूर उनकी बात नहीं मानेंगे, बल्कि बोल्शेविकों के कहने पर चलेंगे।

हम देख चुके हैं कि सन् १९०७ के बाद, कोबा और उसके बोल्शेविक साथी बाकू के कमकरों को कितना संगठित किये हुये थे और किस तरह पूंजीपतियों और ज़ारशाही की एक भी नहीं चलने देते थे। ज़ारशाही परेशान थी और वह साथी कोबा को पकड़ने के लिये बेक़रार थी। साथी कोबा को जिस तरह अपने बाकू के काम में बरोशिलोफ़, ओर्योनिकिद्ज़े जैसे बोल्शेविक क्रांतिकारियों का सहयोग मिला था, उसी तरह ख़ानलार, महमदेफ़, अज़ीज़बेकोफ़, क्याज़ीमामेत और दूसरे वर्गचेतन कमकरों का भी पूर्ण सहयोग प्राप्त था। इसी कारण, बाकू बोल्शेविकों का गढ़ बन गया। अपने इस जीवन पर दृष्टिपात करते हुये, स्तालिन ने बाद में कहा था :

> "तेल-उद्योग के कमकरों में तीन वर्ष के क्रान्तिकारी काम ने मुझे व्यवहारिक योद्धा, व्यवहारिक स्थानीय नेता के रूप में फ़ौलादी (दृढ़) बना दिया। बाकू के वत्सैक, सरातो वेत्सक और फयेलेतोफ़ जैसे आगे बढ़े हुये मजूरों तथा तेल-स्वामियों और कमकरों के बीच चलने वाले कठोर संघर्ष के तूफ़ान ने मुझे पहले-पहल सिखलाया कि मजूरों के एक भारी समूह के नेतृत्व करने का क्या मतलब होता है। यह बाकू ही था, जहां इस प्रकार मैंने द्वितीय क्रांतिकारी अग्नि-अभिषेक प्राप्त किया।"

४. *द्वितीय गिरफ़्तारी (सन् १९०८)*

अन्त में, २५ मार्च, १९०८ को पुलिस साथी कोबा को गिरफ़्तार करने में सफल हुई। वह उन्हें बेलोफ़ जेल ले गई। वहां भी बोल्शेविक कोबा विश्राम करने नहीं गये थे। उन्होंने बाहर के साथियों से सम्बन्ध स्थापित किया। उनके लेख बराबर जेल से बाहर जाकर, कमकरों के पत्रों में छपते रहे। 'बाकिन्स्की प्रोलेतारी' के द्वितीय अंक की प्रायः सारी लेख-सामग्री उन्होंने जेल से तैयार करके भेजी थी। राजनीतिक बंदी इस तरुण बोल्शेविक का बड़ा सम्मान करते थे। उन्होंने वहां पर भी समाजवादी क्रांतिकारियों और मेन्शेविकों के साथ क्रांतिकारी संघर्ष के सिद्धांत और व्यवहार पर कई शास्त्रार्थ किये। स्तोलिपिन काल-रात्रि की काली छाया जेलों पर भी पूरी तरह पड़ रही थी। जेल के अधिकारी राजबन्दियों के साथ और भी कठोरता का व्यवहार करते थे। जेल में कोबा की कलम ही नहीं चल रही थी, न वह केवल बहस-मुबाहिसों में ही भाग लेते थे, बल्कि वहां भी वह ज़ारशाही के साथ संघर्ष कर रहे थे। जेल के अधिकारियों ने राजनीतिक बन्दियों को पाठ पढ़ाने का निश्चय कर लिया था। उन्हें दबाने के लिये 'साल्यान्स्क' पलटन बुलाई गई। दो पांति में सैनिक खड़े कर दिये गये और, राजनीतिक बंदियों को उनके बीच से जाने के लिये मजबूर किया गया। बीच से गुज़रते समय सैनिक बंदूकों के कुंदों से उनको खूब पीटते थे। कोबा कुंदों की वर्षा के बीच से सिर को सीधा किये हुये निकले। उनके सिर पर मार्क्स की पोथी

लेनिन का प्रथम पत्र [सन १९०४]

अपने शिक्षक के साथ [सन १९१७]

बाकू की हड़ताल का नेतृत्व करते हुए (९ मार्च. १९०२)

थी। मार्क्स की पोथी के साथ सिर का सीधा रखना भी कोबा की दृढ़ता और मार्क्सवाद की अंतिम विजय पर उनके विश्वास को प्रकट कर रहा था।

आठ महीने जेल में रखने के बाद, मुक़दमे का फ़ैसला हुआ और कोबा को सोल्वीचेगोद्स्क (वोलोग्दा) में दो वर्ष निर्वासन का दंड मिला। लेकिन, तरुण गुर्जी बोल्शेविक कोबा अपनी सारी मियाद पूरी करने के लिये कब तैयार थे। उन्हें चुपचाप निर्वासित जीवन बिताने के लिये फ़ुर्सत कहां थी? २४ जून, १९०९ को वह सोल्वी-चेगोद्स्क से ग़ायब हो, बाकू पहुंच गये। अपने निर्भीक और निःस्वार्थ नेता को छिपाने के लिये, बाकू के सारे कमकर तैयार थे। नरमदली मेन्शेविक और दूसरे भी ज़ारशाही के अत्याचार से परास्त हो, अपना सब काम छोड़ कर मुंह छिपाते थे और लेनिन का कड़ा विरोध कर रहे थे। इसी समय, लेनिन के समर्थन में ओगनेस तोतोम्यान्त्स ने 'काकेशस के पत्र' के नाम से कई महत्वपूर्ण पत्र बोल्शेविक पार्टी के केन्द्रीय पत्रों में, साथ ही कई लेख 'बाकिन्स्की प्रोलेतारी' में भी लिखे। लौट कर, ओगनेस के नाम से कोबा ने फिर गुप्त छापाख़ाने को संगठित किया। छापाख़ाना उनका तोपख़ाना था। यद्यपि इस समय तक ज़ारशाही के अत्याचारों के कारण शिथिलता आ गई थी, लेकिन ओगनेस ने बाकू कमेटी को फिर कर्मशील बनाया, फिर प्रचारकों की टुकड़ियां तैयार हुईं। इसी टुकड़ी में ओगनेस भी सम्मिलित थे। वह बाकू से बाहर भी जाते रहते थे। बाकू के तेल-मजूरों के अतिरिक्त रेलवे मज़दूरों, चेरनीगोरद और वेलीगोरद के कमकरों में ही नहीं, बल्कि जहाज़ी मज़दूरों में भी उन्होंने काम शुरू कर दिया।—बाकू कास्पियन समुद्र के किनारे एक महत्वपूर्ण बन्दरगाह है, जहां काम करने वाले मल्लाहों और दूसरे कमकरों को ओगनेस कैसे छोड़ सकते थे? ओगनेस, कोबा या सोसो ने जिस क्षेत्र में भी क़दम रखा, उसी में अपना कमाल दिखाया।

ओगनेस के कामों ने फिर जागृति पैदा कर दी। जनवरी सन् १९१० में, फिर जागृति के लक्षण दिखलाई पड़ने लगे। इसी समय, 'तिफ़लिसिकी प्रोलेतारी' पत्र के प्रथम अंक में ओगनेस ने 'हम नये संघर्ष के आरंभ में हैं' आदि लेख लिखे। ओगनेस बुद्धिजीवियों के मुरझाये चेहरों से भविष्य की परख नहीं किया करते थे, इसके लिये वह कमकरों और साधारण जनता को, उनकी दिन पर दिन ख़राब होती भौतिक-आर्थिक-परिस्थिति को, जो उग्र होकर सर्वहारों को कभी चुप नहीं रहने दे सकती थी—देखते थे। ओगेनस के 'काकेशस के पत्र', केन्द्रीय पत्र 'सोत्सियल देमोक्रात' (समाजवादी जनतंत्री) के २६ फ़रवरी, १९१० के अंक तथा 'बहस का पर्चा' के २४ जून, १९१० के अंक में निकले; जिनमें काकेशस में क्या हो रहा है इसका सजीव वर्णन किया गया था। इनमें मेन्शेविकों और दूसरे अवसर-वादियों का भी पर्दाफ़ाश किया गया था, जिसके कारण वह बहुत चिढ़ गये थे। इस समय, पत्र-व्यवहार द्वारा ओगनेस का लेनिन के साथ बराबर सम्बंध था।

५. *तृतीय गिरफ़्तारी (सन् १९१०)*

इस बार बाहर आकर, उन्हें बहुत समय तक काम करने का मौक़ा नहीं मिला। आठ महीने के बाद बाकू में ही, २३ मार्च, १९१० को ओगनेस को फिर गिरफ़्तार कर लिया गया। २३ सितम्बर, १९१० तक जेल में रख कर उन्हें फिर सोलविचेगोद्स्क में निर्वासित कर दिया गया, जहां ६ जुलाई, १९११ तक रहना पड़ा।

इस निर्वासित जीवन को ओगनेस जिस घर में बिता रहे थे, वहां दूसरे राजनीतिक निर्वासित बराबर आया करते थे। पुलिस ने रिपोर्ट दी थी कि यहां बराबर क्रांतिकारी प्रचार और व्याख्यान होते रहते हैं। पुलिस की आंख बचाकर यहाँ से भी ओगनेस लेनिन के पास पत्र लिखते रहे, जिसमें प्लेख़ानोफ़ के समर्थकों के रवैये का खंडन करते हुये, वह त्रॉत्स्की के सिद्धांतहीन गुट पर भी छींटे कसते थे। इसी समय, उन्होंने राय दी कि एक क़ानूनी समाचार-पत्र निकालने की बड़ी आवश्यकता है। थोड़े ही दिनों बाद, 'ज़्वेज़्दा' (तारा) के नाम से ऐसा पत्र निकलने भी लगा। उन्होंने रूस में प्रमुख सदस्यों की एक केन्द्रीय समिति तथा उसके ब्यूरो के स्थापित करने के लिये कहा, जिससे देश में पार्टी का काम ठीक से संचालित किया जा सके। अपने बारे में लिखते हुये, उन्होंने कहा था : "अभी मुझे छः महीने और बिताने हैं। इस मियाद के ख़तम होते ही, मैं आपकी सेवा के लिये बिल्कुल तैयार हूं। अगर लोगों ने बहुत जरूरत समझी, तो मैं तुरन्त केंचुल छोड़ सकता हूं।"—स्तालिन केंचुल छोड़ने में कितने उस्ताद थे, हम यह देख चुके हैं।

जून सन् १९११ में बोल्शेविक केन्द्रीय समिति की जो कान्फ्रेंस हुई थी, उसमें स्तालिन को अखिल रूसी कान्फ्रेंस के बुलाने के लिये बनाई गई संगठन-कमिटी का सदस्य चुना गया था।

यह हम बतला चुके हैं कि योरदानिया जैसे तरुण एक समय मार्क्सवाद के वाहक रह चुके थे। उनके द्वारा काकेशस में नये विचारों का काफ़ी प्रचार हुआ था। लेकिन, बाद में वह फिसल गये। योरदानिया जैसे आदमियों की किसी देश में भी कमी नहीं है। हमारे देश में भी ऐसे चेहरे दिखाई पड़ते हैं, जो समाजवाद के नाम की रटन इसीलिये लगाया करते हैं कि देश में समाजवाद न आने पाये, जिसमें पूंजीवादी जोंकें अपने काम को निर्द्वन्दतापूर्वक करती रहें। यदि कुछ पूंजीपति इन योरदानियों को हाथों पर उठाये फिरें, उनके पत्र उनकी तारीफ़ करते न थकें, तो आश्चर्य की क्या बात है ? पंजाबी कहावत के अनुसार, वह जानते ही हैं कि यह 'साझा बन्दा' है। एक बड़ा गुर्जी पूंजीपति द० सर्जिशविली मर गया। उसको दफ़न करने के दिन २६ जून, १९११ को मेन्शेविक नेता उसके गुणों का बखान करते नहीं अघाते थे।

गुर्जी मेन्शेविकों के जयप्रकाश—योरदानिया ने इस युरोपीय कारखाने के शिक्षित मालिक के भव्य संस्मरण में एक लेख लिखा था :

" हाल ही में, निष्ठुर मृत्यु ने हमें दुर्लभ गुर्जी—द० ज० सरजिशविली से वंचित कर दिया।...स्वर्गीय पुरुष एक उद्योगपति के नाम से विख्यात था, लेकिन यह बहुत कम लोग जानते हैं कि युरोपीय ढंग का वह प्रथम उद्योगपति था। उसने एक बार मुझसे कहा था : ' हमारे देश में भौतिक तौर पर अपने पैरों पर खड़ा होना, आर्थिक सफलता प्राप्त करना मुश्किल है, जैसे ही कोई आदमी कुछ जख़ीरा जमा कर पाता है, वैसे ही सैकड़ों भूखे-नंगे उसके पीछे पड़ जाते हैं और तब तक चैन नहीं लेने देते, जब तक कि उसका सफ़ाया नहीं कर देते।' ऐसी स्थिति में भूखों की पलटन से अपने को बचाये रख, अपनी सम्पत्ति का ठीक तौर से इस्तेमाल वही कर सकता है, जिसमें दुर्लभ प्रतिभा और बड़ी व्यवहारिक बुद्धि हो। अगर स्वर्गीय दाविद सच्चा गुर्जी उद्योगपति होता, तो गुर्जी तरीक़े से वह कभी का अपने को खतम कर चुका होता और उसकी सम्पत्ति का कुछ भी बाकी न रहता। एक युरोपियन ही इस तरह की व्यवस्था कर सकता है, जिससे वह हर एक को संतुष्ट भी रखे, और साथ ही अपने धन को बरबाद न करे।...एक बार हम ठंडी सड़क पर एक दूसरे के सामने से गुज़र रहे थे। उसने मुझे दूर से पुकार कर कहा : ' देखो तो तुम्हारा बर्न्स्टाइन (एक अवसरवादी समाजवादी) क्या लिख रहा है? घर चलो और इसे लेकर पढ़ो।'—पुस्तक अभी-अभी जर्मनी में प्रकाशित हुई थी और तिफ़लिस में नहीं मिल सकती थी। दूसरे दिन, मैंने दाविद के पास जाकर उस पुस्तक को लिया। ' इसके बारे में तुम्हारी क्या राय है?'—मैंने उससे पूछा।—' मेरी क्या राय है? जर्मनी से यह भयंकर बम है। सारी किताब में, मैं एक स्थल को पसन्द करता हूं, जिसमें वह कहता है कि आन्दोलन सब कुछ है, अन्तिम लक्ष्य कुछ भी नहीं है।'

"एक बार मैंने स्वर्गीय पुरुष को उसके आफिस में बहुत ही चिंतित देखा। वह निराशावादी नहीं था। मैंने पूछा—'क्या बात है?'—उसने कहना शुरू किया : ' हमारा कोई भविष्य नहीं है। तुम दावा करते हो, और कहते हो कि निम्न-मध्य वर्ग बड़े मध्यवर्ग को पैदा करेगा, लेकिन मैं उसे नहीं देख पा रहा हूं। ऐसा होने के लिये भी, हमें नागरिक भावों और संस्कृति की आवश्यकता है, किन्तु हम मामूली योकेल हैं।...स्वर्गीय दाविद चकाचौंध में पड़े बच्चे की तरह, क्रांति में बह नहीं गया था, लेकिन साथ ही वह प्रतिगामिता का दास भी नहीं बना था।...आज हम इस अद्वितीय पुरुष को क़ब्र में रख रहे हैं। वह

उसी खुले दिल और दिमाग़ के साथ मरा, जिस तरह कि जीता रहा। विदा, प्रिय दाविद ! तुम्हारी महान स्मृति सदा हमारे साथ रहेगी। ”

यह एक समाजवादी द्वारा गुर्जी के एक बड़े सेठ की स्तुति थी, एक करुणापूर्ण मर्सिया था। सेठ सर्जिशविली के पास तिफ़्लिस, किज़लयर, एरिवान (अर्मनी), कलाराश (बेसराबिया) और ग्योक्चे में शराब के अच्छे-अच्छे कारख़ाने थे, जहां अंगूरी तथा दूसरी मदिरायें बनती थीं। ज़ारशाही सरकार ने अपने परम भक्त सेठ को १ जनवरी, १९०२ को ‘व्यापार कॉन्सलर’ की उपाधि दी थी, जो हमारे यहां के ‘सर’ के आसपास की थी; क्योंकि वह देश के उद्योग और व्यापार के क्षेत्र में उपयोगी काम कर रहा था! यह कोई आश्चर्य नहीं था कि योरदानिया बोल्शेविक क्रांति के बाद भी, पश्चिमी साम्राज्यवादियों का परम विश्वासपात्र बना रहा और जब गुर्जी में मेन्शेविकों की सरकार नहीं टिक सकी, तो उसे बड़े सम्मान के साथ उन्होंने अपने यहां बुला कर रखा।

पार्टी की कान्फ्रेंस प्राग में होने जा रही थी। ऐसे समय में, स्तालिन बलोगदा में रहना कैसे पसन्द करते? उन्होंने ६ सितम्बर, १९११ को चुपचाप वहां से निकल कर, रूस की राजधानी पीतरबुर्ग का रास्ता लिया और वहां पहुंच कर, वह पार्टी के संगठन को मज़बूत करने के काम में लग गये। अब काकेशस नहीं, रूस की राजधानी में उनका काम करना यही बतलाता है कि स्तालिन प्रादेशिक नेता न रह कर, सारे देश के नेताओं में से थे, और उसी के अनुरूप उन्हें अपनी प्रतिभा और अनुभव का प्रयोग करना था। इसी समय से, स्तालिन के जीवन का पीतरबुर्ग वाला अध्याय शुरु हुआ। लेकिन, जान पड़ता है पीतरबुर्ग में अभी उनके लिये काकेशस जैसे सुरक्षित स्थान तैयार नहीं हो पाये थे। साथ ही, वह मेन्शेविकों की अकर्मण्यता फैलाने वाली नीति के ज़बर्दस्त आलोचक थे, जिससे वह भी पुलिस की तरह ही, उनके पीछे पड़े हुये थे।

६. चतुर्थ गिरफ़्तारी (सन् १९११)

९ सितम्बर, १९११ को पुलिस ने उन्हें गिरफ़्तार कर, फिर बलोगदा भेज दिया, लेकिन फरवरी सन् १९१२ में स्तालिन ने फिर केंचुल छोड़ दी।

पुलिस स्तालिन के बारे में कैसे विचार रखती थी, इसके कुछ उदाहरण उसके रेकार्डों से लीजिये :

क. “३० सितम्बर की पुलिस–विभाग की मांग के अनुसार, काकेशीय जिला–खुफ़ियापुलिस–विभाग के अध्यक्ष की सूचना के अनुसार, साइबेरिया से भागने वाला सोसो वही है, जो कोबा के नाम से संगठन कर रहा है; और ओगनेस वर्तानोफ़, तोतोम्यन्तस भी उसी का नाम है। वह तिफ़लिस नगर का

निवासी है, जिसके नाम से इस साल १२ मई को तिफ़लिस पुलिस सुपरिंटेंडेंट द्वारा एक साल के लिये दिया गया ९८२ नम्बर का पासपोर्ट उसके पास है। ...तोतोम्यन्तस, कोबा तथा मलोच्नी नाम का आदमी रूसी समाजवादी जनतांत्रिक मजूर पार्टी के बाकू-संगठन का मुखिया है, बीबी ऐबत ज़िले के दो दूसरे सदस्य भी उसी संगठन से सम्बंधित हैं। उन पर गुप्त रूप से लगातार, और कभी-कभी खुले तौर से भी, निगाह रखी जाती है। संगठन तोड़ने के लिये जो क़दम उठाया जाये, उसमें यह भी आयेंगे।"

ख. "जुगशविली रूसी समाजवादी जनतांत्रिक मजूर पार्टी की बाकू कमेटी का एक मेम्बर है। उसे पार्टी संगठन में कोबा के नाम से पुकारा जाता है। ...शासकीय दंडों के होते हुये भी, वह अपने कामों में बड़ी दृढ़ता से लगा हुआ है और क्रांतिकारी संगठनों में सदा उसका प्रमुख स्थान रहा है। वह अपने निर्वासन-स्थान से दो बार भाग चुका है और उसे राज्य की ओर से जो दंड दिये गये थे, उनमें से उसने एक को भी पूरा नहीं किया। इसलिये, मैं और कड़ा दण्ड देने की सिफ़ारिश करूंगा। उसे पांच वर्ष के लिये साइबेरिया के सबसे दूर वाले ज़िले में निर्वासित कर देना चाहिये।—२४ मार्च, १९१० कप्तान गलिम्तोव्स्की"

ग. "२४ मार्च, १९१० को कप्तान मर्तिनोफ़ रिपोर्ट देता है कि रूसी समाजवादी जनतांत्रिक मज़दूर पार्टी की बाकू कमिटी के संगठन में कोबा के नाम से ज्ञात, तथा पार्टी का अत्यन्त कर्मठ नेता गिरफ़्तार कर लिया गया।"

घ. "१७ मई, १९१२ को काकेशीय ज़िला खुफ़ियापुलिस-विभाग ने पीतरबुर्ग के पुलिस विभाग के डाइरेक्टर को लिखा था: 'सोसो बिसारियोनोविच जुगशविली नाम के, तिफ़लिस प्रदेश के दीदीलियो गांव के एक किसान का नकली नाम है, जिसे पार्टी में कोबा कहा जाता है, सन् १९०२ से ही, एक समाजवादी जनतांत्रिक कर्मठ कार्यकर्त्ता के नाम से प्रसिद्ध है। सन् १९०२ में, तिफ़लिस के रू० स० ज० म० पार्टी के गुप्त चक्र के मुकदमे में अभियुक्त के तौर पर पूछ-ताछ के लिये, उसे तिफ़लिस प्रदेश के पुलिस विभाग के सामने लाया गया। इस अपराध में उसे पुलिस की खुली निगरानी में तीन वर्ष के लिये पूर्वी साइबेरिया में निर्वासित कर दिया गया जहां से वह भाग निकला। पुलिस-विभाग ने उसकी गिरफ़्तारी के लिये विज्ञापन निकाला। बाद में, जुगशविली भिन्न-भिन्न समयों में बातूम, तिफ़लिस और बाकू के समाजवादी जनतांत्रिक संगठनों का नेता होकर, काम करता रहा। कई बार उसकी तलाशी और गिरफ़्तारी हुई, लेकिन वह हवालात से निकल कर निर्वासन से बचता-छिपता फिरा। इस समय, पुलिस-विभाग के

१५ अप्रैल, १९१२ के सर्कुलर के अनुसार, गिरफ़्तारी के लिये उसकी मांग है। ६ तारीख़ को जिले के अफ़सर ने जो सूचना दी है, उससे पता लगता है कि जुगशविली हाल ही में तिफ़लिस नगर में था। इसी समय, बाकू के गुप्त खुफ़िया-विभाग के मुखिया ने गुप्त रूप से सूचना दी है कि कोबा रूसी केन्द्रीय समिति में नियुक्त किया गया है.... और, ३० मार्च को पीतरबुर्ग के लिये रवाना हो गया है। इसके बारे में लेफ़्टिनेंट कर्नल मर्तिनोफ़ ने ६ अप्रैल को तत्रभवान् राज्यपाल तथा पीतरबुर्ग-खुफ़ियापुलिस-विभाग के मुखिया को भी उसी दिन सूचित किया।"

ज़ारशाही पुलिस की इन रिपोर्टों से भी स्तालिन का एक विशेष रूप प्रकट होता है।

जनवरी सन् १९१२ में बोल्शेविक पार्टी की एक बड़ी कान्फ्रेंस प्राग में होने वाली थी। स्तालिन उसके महत्व को अच्छी तरह समझते थे। मेन्शेविकों और दूसरे अवसरवादियों से सम्बन्ध रखने से अब कोई फ़ायदा नहीं था। पीछे स्तालिन ने अपने एक व्याख्यान में इस कांग्रेस के बारे में कहा था:

"सबको पता है कि यह कान्फ्रेंस हमारी पार्टी के इतिहास में भारी महत्व रखती है, क्योंकि इसी ने बोल्शेविकों और मेन्शेविकों के बीच सीमा-रेखा खींची, और सारे देश के बोल्शेविक संगठनों को एक संयुक्त बोल्शेविक पार्टी के रूप में परिणित कर दिया था।"

लेनिन को यह देखकर बड़ी प्रसन्नता हुई कि पार्टी से मेन्शेविक निकाल दिये गये। उन्होंने गोर्की को लिखा था:

"आख़िर दिवालियों, कमीनों की सारी कोशिशों पर भी हमें पार्टी और उसकी केन्द्रीय समिति को फिर से मज़बूत करने में सफलता मिली। मुझे आशा है कि तुम इस पर हमारी ही तरह प्रसन्न होगे।"

इस कान्फ्रेन्स में स्तालिन उपस्थित नहीं हो सके, लेकिन तब भी उन्हें पार्टी के रूसी ब्यूरो का सदस्य बनाया गया। केन्द्रीय कमेटी में निर्वाचित हो जाने के बाद, अब निर्वासित की स्थिति में और रहना उनके लिये ठीक नहीं था, और स्तालिन को तुरन्त 'केंचुल छोड़ने' की आवश्यकता थी। वह सेर्गी ओर्योनिछीद्ज़े के साथ बलोगदा से २६ फर्वरी, १९१२ को भाग निकले। कितने ही जिलों में पार्टी संगठन को मज़बूत करते हुये, अन्त में वह पीतरबुर्ग में उसी समय लौटे जब कि साइबेरिया की लेना सुवर्ण-खान में ज़ारशाही ने मज़दूरों के साथ खून की होली खेली थी। 'ज़्वेज़्दा' ने इसी समय लेना-कांड पर स्तालिन का एक लेख छापा था, जिसकी कुछ पंक्तियां थीं:

"लेना-हत्याकांड ने अकर्मण्यता की बर्फ़ को तोड़ दिया और जन-आन्दोलन की भागीरथी बह निकली; बर्फ़ टूट गई।... वर्तमान शासन के सारे पाप, दुराचार तथा चिरकाल से उत्पीड़ित रूस के सारे दुर्भाग्य जिस एक बात पर केन्द्रित हो गये हैं, वह है लेना-कांड। इसीलिये यह लेना-गोलीकांड ही था, जिसने हड़तालों और प्रदर्शनों के एक संकेत का काम किया।"

७. पांचवीं गिरफ़्तारी (अप्रैल सन् १९१२)

स्तालिन और लेनिन काफ़ी समय से पार्टी के एक केन्द्रीय मुख पत्र की बड़ी आवश्यकता अनुभव कर रहे थे। बोल्शेविक देपुती जहां दूमा को अपने विचारों के प्रचार के लिये एक भाषण-मंच के तौर पर इस्तेमाल कर रहे थे, वहां एक ऐसे शक्तिशाली दैनिक पत्र की भी आवश्यकता थी। यह काम 'ज़्वेज़्दा' नहीं कर सकता था। स्तालिन ने अब केंचुल बदलकर, ऐसे पत्र के निकालने की तैयारी में अपनी पूरी शक्ति का उपयोग किया। २२ अप्रैल, १९१२ को 'प्राव्दा' (सत्य) का प्रथम अंक निकला। लेकिन, उसी दिन किसी भेदिये ने पुलिस को ख़बर कर दी और फिर ज़ारशाही स्तालिन को गिरफ़्तार करने में सफल हो गई। 'प्राव्दा' का प्रकाशन क्रांतिकारी आन्दोलन के नये उत्थान के साथ-साथ हुआ। पुराने पंचांग के अनुसार यद्यपि प्रकाशन का दिन २२ अप्रैल था, लेकिन जब क्रांति के बाद, दुनिया के और भागों में प्रचलित पंचांग को सोवियत सरकार ने स्वीकार कर लिया, तो 'प्राव्दा' का प्रकाशन-दिवस ५ मई हो गया। आज भी, ५ मई को कमकर-प्रेस-दिवस के नाम से उसे मनाया जाता है। साथी स्तालिन ने 'प्राव्दा' की दसवीं वर्षगांठ के समय लिखा था: "सन् १९१२ में 'प्राव्दा' का निकालना, सन् १९१७ में बोल्शेविक विजय की आधार-शिला का रखना था।"

अबकी बार उन्हें गिरफ़्तार कर, ज़ारशाही ने कई महीनों तक जेल में बन्द रख कर तीन वर्ष के लिये एक बहुत दूर के स्थान नरिम में निर्वासित कर दिया। नरिम पश्चिमी साइबेरिया में बहुत ठंडे स्थान पर अवस्थित था। लेकिन ठंडा हो या गरम, स्तालिन को इतनी फ़ुर्सत कहां थी कि वहां पड़े रहते। लेना—गोलीकांड ने बर्फ़ तोड़ दी थी, क्रांति-धारा बह निकली थी, और उस धारा को गम्भीर और शक्तिशाली बनाने में इस गुर्जी तरुण को योग देना था। इसीलिये, २ जुलाई, १९१२ को तीन वर्ष का निर्वासन-दंड पाकर भी वह नरिम में दो ही महीने रहे। १ सितम्बर, १९१२ को नरिम से लुप्त हो वह फिर अपने कार्यक्षेत्र में पहुंच गये। लेनिन विदेश में थे, पर मानो बेतार के सम्बन्ध द्वारा वह रूस के भीतर होने वाली हर एक घटना को जानते हुये वहां की क्रांति की धारा का संचालन कर रहे थे, स्तालिन को लेनिन की ओर से

रूस के भीतर रह कर काम करना था। यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है, और इसे ठकुरसुहाती कहना सिर्फ़ अपने को धोखा देना है कि स्तालिन का लेनिन से कभी भी मतभेद नहीं हुआ। वस्तुतः मतभेद वहां होता है, जहां पुस्तकी ज्ञान और केवल दिमाग़ी कसरत काम करती है, लेकिन जहां घटना और वास्तविकता की व्यवहारिक कसौटी पर कस कर एक-एक क़दम आगे रखना हो, वहां मतभेद उसी तरह आवश्यक नहीं होते, जैसे कि सच्चे वैज्ञानिक आविष्कारों में। एक प्रयोगशाला में एक वैज्ञानिक जो कोई नई खोज करता है, उसी को जब दूसरे वैज्ञानिक अपनी-अपनी प्रयोगशालाओं में भी पाते हैं, तभी तो उसे वैज्ञानिक सत्य कहा जाता है। मार्क्स, ऐंगल्स, लेनिन और स्तालिन ने साम्यवादी विचारधारा और क्रांतिकारी सिद्धांतों को कोरे दिमाग़ से नहीं निकाला था, बल्कि यथार्थ की कसौटी पर कसा जाकर ही, उनका वाद वैज्ञानिक सत्य बना।

ध्रुवकक्षीय रेखा के बहुत भीतर सुदूर साइबेरिया के बादाइबो (लेना) स्थान में ज़ारशाही ने गोलियां चलाईं, जिसने सारे रूस को हिला दिया। इसके विरोध में देश में हड़तालों की बाढ़ आ गई। पीतरबुर्ग के सर्वहारा अपने क्षोभ-प्रदर्शन के लिये सड़कों पर निकल आये। 'ज़्वेज़्दा' ने इस समय की स्थिति के बारे में लिखा था: "हम सजीव हैं, अटूट शक्ति भरी आग हमारे लाल खून को खौला रही है।"

ऐसी परिस्थिति में, स्तालिन का साइबेरिया से भाग कर पीतरबुर्ग पहुंचना बड़े काम की बात थी। बोल्शेविक पार्टी की केन्द्रीय कमेटी के एक मेम्बर तथा केन्द्रीय मुख पत्र 'प्राव्दा' के सम्पादक के तौर पर, अब वह बड़ी लगन के साथ काम करने लगे। इसी समय तीसरी राज्य दूमा का चुनाव होने वाला था, जिसमें स्तालिन ने पीतरबुर्ग के कमकरों के संघर्षों का संचालन करते हुये पूरी तौर से भाग लिया। लेनिन इस समय रूस से बाहर क्राकोओ में रहते थे, जहाँ उस समय बोल्शेविक पार्टी का केन्द्रीय कार्यालय था। वह गुप्त रीति से अपने संदेश और पथ-निर्देश भेजते रहते थे; और मौक़े पर स्तालिन के होने से निश्चिंत थे कि सब काम ठीक से होगा।

स्तालिन 'प्राव्दा' के लिये लेख लिखते थे और उसके चलाने में उन्हीं का सबसे बड़ा हाथ था। कुछ ही समय बाद, बोल्शेविक पत्रिका 'प्रोस्वेश्चेनिये' (उद्बोधन) निकली। प्रथम अंक से ही स्तालिन उसमें हाथ बंटाने लगे। सन् १९१३ के उसके तीसरे, चौथे और पांचवें अंकों में स्तालिन का एक महत्वपूर्ण लेख 'जातीय समस्या और समाजवादी जनतंत्रता' के नाम से प्रकाशित हुआ, जो पीछे 'मार्क्सवाद और जातीय प्रश्न' के रूप में अलग प्रकाशित हुआ। इसी पत्रिका में स्तालिन ने यह भी बताया कि क्यों राजकीय दूमा का बायकाट नहीं करना चाहिये। पुलिस जिस तरह से इस 'खतरनाक क्रांतिकारी' के पीछे हाथ धोकर पड़ी थी, उसमें कमकरों की भक्ति और दृढ़ता ही ऐसी चीज़ थी, जिसने स्तालिन को पुलिस के हाथों में पड़ने से बचाये रखा। अक्तूबर में, दूमा-निर्वाचन के सम्बन्ध में निर्वाचक-प्रतिनिधियों की एक कान्फ्रेंस

हुई, जिसमें अपने कमकर देपुतियों के लिये पीतरबुर्ग के कमकरों का 'आदेशपत्र' (मेंडेट) पास किया गया। आज भी मॉस्को के केन्द्रीय लेनिन म्युजियम में लेनिन के हाथों के नोट के साथ, इस पत्र को देखा जा सकता है। आदेशपत्र को स्तालिन ने लिखा था, लेकिन लेनिन ने उसे इतना महत्वपूर्ण समझा कि उसके हाशिये पर नोट लिखा—'इसे अत्यन्त सावधानी से सुरक्षित रखो'। अभी बोल्शेविक क्रांति के होने में चार वर्षों की देर थी। आदेशपत्र में मजदूरों और किसानों की शोचनीय स्थिति का वर्णन करते हुये, बतलाया गया था :

"क्रांति की हरावल सेना मजदूर वर्ग है और किसान क्रांति में उसके सहायक हैं। जो संघर्ष हमारे सामने आने वाला है, उसमें दोनों मोर्चों पर लड़ाई लड़नी होगी—सामन्तवादी नौकरशाही व्यवस्था से भी और पुराणपंथी शासन की सहायता चाहने वाले उदार पूंजीवाद से भी।... हम चाहते हैं कि दूमा के मंच से समाजवादी जनतांत्रिक मंडली के सदस्यों की आवाज जोर से सुनाई दे, जो सर्वहारा के अन्तिम लक्ष्य की घोषणा करे, सन् १९०५ की सारी मांगें पूर्ण करने की घोषणा करे, रूसी मजदूर वर्ग को जन आन्दोलन का नेता घोषित करे, किसानों को मजूरवर्ग का अत्यन्त विश्वसनीय सहायक घोषित करे और उदार मध्यवर्ग को जन-स्वतंत्रता के विश्वासघाती के तौर पर घोषित करे।

"चतुर्थ दूमा में समाजवादी जनतांत्रिक गुट ऊपर के नारों के आधार पर अपने कामों में एकताबद्ध और घनिष्टता से सम्बद्ध हो।

"विशाल जनता के साथ लगातार सम्बन्ध रख कर, शक्ति प्राप्त करे।

"वह रूस के मजदूर वर्ग के राजनीतिक संगठन के साथ कन्धे से कन्धा मिला कर आगे बढ़ता चले।"

निस्सन्देह, आदेशपत्र ने भारी काम किया। निर्वाचन के परिणाम और आदेशपत्र के महत्व के बारे में १९ अक्तूबर, १९१२ के 'प्राव्दा' में 'क. स्त.' के हस्ताक्षर से स्तालिन ने लिखा था : "आदेशपत्र देपुतियों के लिये हिदायत है। आदेशपत्र देपुती को बनाता है। आदेशपत्र के गुणों पर देपुतियों के गुण निर्भर करते हैं।"

१५ नवम्बर, १९१२ को चतुर्थ दूमा का उद्घाटन हुआ। राजधानी की बोल्शेविक कमिटी ने इस समय जारशाही और उसके पिट्ठुओं के बातें बनाने और उत्सव मनाने के मुकाबिले में, राजनीतिक प्रदर्शन संगठित किया। यह स्तालिन की सूझ का परिणाम था। पता लगने पर लेनिन ने लिखा : "प्रदर्शन के लिये बहुत ही अनुकूल समय चुना गया! काली दूमा (पार्लामेन्ट) के उद्घाटन के मुकाबले में राजधानी की सड़कों पर लाल झंडों के प्रदर्शन करके सर्वहारा की एक अद्भुत सूझ का परिचय दिया गया!"

इस समय (सन् १९१२ में) स्तालिन का लेनिन के साथ पत्र-व्यवहार द्वारा लगातार सम्बन्ध था, लेकिन लेनिन उनसे मिलना चाहते थे। उन्होंने बाहर आने के लिये जोर दिया। स्तालिन जैसे क्रांतिकारी के लिये जारशाही पुलिस से बचकर विदेश जाना आसान काम नहीं था। लेकिन, खुफ़ियों की पांत को चीर कर नवम्बर सन् १९१२ में वासिली (स्तालिन) ने क्राकाओ में जाकर, लेनिन से मुलाक़ात की। भावी कार्यक्रम के बारे में इतनी बातें और इतने निर्णय करने थे कि वह सभी पत्र-व्यवहार से नहीं हो सकते थे। सब काम कर लेने के बाद, जब दिसम्बर में स्तालिन रूस की ओर लौटने लगे, तो अपने अद्भुत शिष्य के जीवन को हर वक्त ख़तरे में देख कर लेनिन ने कोशिश की कि वह कुछ दिन और बाहर रहें, लेकिन वासिली को काम पुकार रहा था, उन्हें ख़तरे का भय कब रोक सकता था। भय क्या है इसे उन्होंने कभी जाना ही नहीं। लेनिन ने दूमा के छः बोल्शेविक देपुतियों को भी लेकर आने के लिये २३ दिसम्बर, १९१२ के पत्र में वासिली को लिखा था : "आओ...हमें बड़ी चिन्ता हो रही है।" कुछ ही समय बाद, वासिली फिर क्राकाओ पहुँचे और रू० स० म० दल की केन्द्रीय कमेटी तथा पार्टी कार्यकर्त्ताओं की एक कान्फ्रेंस में भाग लिया। कान्फ्रेंस ने वासिली को रूस की केन्द्रीय कमेटी के ब्यूरो का मेम्बर चुना। यद्यपि यह कान्फ्रेंस सन् १९१२ में हुई थी, लेकिन इसे छिपाने के लिये फरवरी सन् १९१३ की कान्फ्रेंस कहा गया।

जनवरी और फरवरी सन् १९१३ में वासिली रूस से बाहर रहे। इसी समय, उन्होंने जातीय प्रश्न पर बहुत सामग्री जमा करके लेख लिखना शुरू किया। लेनिन ने उनके इस काम के बारे में, एक पत्र में गोर्की को लिखा था : "एक अद्भुत गुर्जी जो यहां बैठा एक 'प्रोस्वेश्चेनिये' के लिये लेख लिख रहा है, उसने आस्ट्रियन तथा दूसरी सभी सामग्रियों को इकट्ठा कर लिया है।"

इसी अध्ययन और परिश्रम का परिणाम था—स्तालिन की पुस्तक 'मार्क्सवाद और जातीय समस्या,' जो सदा सामन्तवाद और पूंजीवाद के लिये भयंकर सिरदर्द रही है। पिछले हजारों वर्षों के अपने इतिहास में, वे कोई हल नहीं निकाल पाये। उसी असम्भव काम को अब मार्क्सवाद संभव करने जा रहा था। मार्क्सवाद ने दिशा-निर्देशन किया। स्तालिन ने अपनी प्रतिभा और उनके जातियों के सम्मिलन-स्थान काकेशस की अपनी मातृभूमि के लम्बे तजर्बे से समस्या की रग को पहचाना, और उसका हल निकाला। दुनिया में कहीं भी यदि जातीय समस्या का हल करना होगा, तो स्तालिन के बतलाये हुये रास्ते से ही करना पड़ेगा। साठ-साठ, सत्तर-सत्तर जातियों का रूस क्यों एक ठोस पत्थर की चट्टान जैसा देश बन गया, जिससे टकरा कर हिटलर और दूसरे साम्राज्यवादियों ने सिर्फ़ अपना सर भर फोड़ा? इस हल का आधार था जातीय शोषण का अंत, पिछड़ी हुई जातियों को आर्थिक, सांस्कृतिक और राज-

नीतिक तौर से अपने बराबर लाकर खड़ा करना, और उन पर पूर्ण विश्वास करते हुये, उनके अलग होने तक के अधिकार को स्वीकार करना।

अपने इस ग्रंथ को समाप्त करने के बाद, वासिली पीतरबुर्ग लौट आये। कितने ही दिनों तक लेनिन को जब उनका कुछ पता नहीं लगा, तो ८ मार्च, १९१३ के अपने एक पत्र में उन्होंने पूछा : "वासिली की क्यों कोई खबर नहीं मिल रही है ? उसे क्या हुआ है ? हमें बड़ी चिंता हो रही है।" दो ही दिन बाद, फिर लेनिन ने लिखा : "उसका बहुत ध्यान रखना। वह बहुत बीमार है।"

८. छठी गिरफ़्तारी (फ़रवरी १९१३)

मालीनोव्स्की पार्टी की केन्द्रीय समिति का सदस्य और दूमा में बोल्शेविक देपुती था, जो पुलिस से मिल गया था। दूसरी पार्टियों के लिये यह उतनी आश्चर्य की बात नहीं थी; लोभ के कारण खुफ़ियापुलिस और विदेशी शक्तियों के हाथ में खेलने वाले पाये ही जाते हैं। लेकिन बोल्शेविक पार्टी उन पार्टियों की तरह नहीं थी। उसमें कड़ा अनुशासन था। तो भी, ज़ारशाही मालीनोव्स्की को कुछ चांदी के टुकड़ों पर विश्वासघाती बनाने में सफल हुई। 'प्राव्दा' में स्तालिन के अतिरिक्त, याकोफ़ (स्वेर्दलोफ़) और मोतो (मोलोतोफ़) भी सम्पादन का काम करते थे। मालीनोव्स्की ने पहले भेद बतला कर स्वेर्दलोफ़ को गिरफ़्तार करवा दिया—यही स्वेर्दलोफ़ पीछे बोल्शेविक रूस का प्रथम राष्ट्रपति बना। मालीनोव्स्की ने थोड़े ही दिनों बाद, उस गुप्त स्थान का भी पता बतला दिया जहां वासिली छिप कर काम करते थे। इस प्रकार २३ फरवरी, १९१३ को पुलिस पीतरबुर्ग में उन्हें गिरफ़्तार करने में सफल हुई। इस गिरफ़्तारी के बारे में, बद्येफ़ ने लिखा है :

> "पुलिस बड़ी व्यग्रता के साथ गिरफ़्तारी के लिये प्रतीक्षा कर रही थी कि कब वह सड़क पर आयें। जल्दी ही उसे ऐसा मौका मिल गया। 'प्राव्दा' और दूसरे क्रांतिकारी कामों की सहायता के लिये, क़शनिकोफ़-हाल में एक संगीत मंडली का अनुष्ठान किया गया था। ऐसी संगीत मंडलियों में बड़ी संख्या में मजदूर और सहानुभूति रखनेवाले बुद्धिजीवी उपस्थित हुआ करते थे। उनमें गुप्त रीति से काम करने वाले, पार्टी मेम्बर भी आते थे, क्योंकि ऐसी भीड़ में उन लोगों से मिल कर बातचीत की जा सकती थी, जिनके साथ खुले में मिलना खतरे से खाली नहीं था। स्तालिन ने क़शनिकोफ़-हाल की संगीत मंडली में ऐसे ही काम के लिये आने का निश्चय कर लिया था, जिसका पता मालीनोव्स्की को था। उस विश्वासघाती ने पुलिस-विभाग को इसकी सूचना दे दी। हमारी आंखों के सामने ही, उसी सांझ को हाल के कमरे में स्तालिन गिरफ़्तार कर लिये गये।"

इस प्रकार, छठी बार पुलिस ने स्तालिन को गिरफ़्तार कर चार साल के लिये साइबेरिया के सुदूर स्थान तुरुखान्स्क में निर्वासित कर दिया। पहले उन्हें कोस्तिने की छोटी सी बस्ती में रखा गया। लेकिन, फिर डर लगा कि वह कहीं केंचुल न बदल दें, इसलिये उन्हें वहां से हटा कर और उत्तर में कूरेइका बस्ती में रख दिया गया, जो कि ध्रुवकक्षीय रेखा के बिलकुल किनारे पर थी। इस समय पुलिस की कड़ाई बहुत अधिक थी। ज़ारशाही और दूसरी साम्राज्यवादी शक्तियां प्रथम महायुद्ध की तैयारियां कर रही थीं। इसके कारण, पुलिस ऐसा मौका नहीं देना चाहती थी कि स्तालिन फिर ऐसे मौके से लाभ उठा कर क्रांति की आग भड़काने के लिये मुक्त हो जायें।

साथी स्तालिन २ जुलाई, १९१३ को निर्वासित हुये थे, और तब से ८ मार्च, १९१७ तक उन्हें तुर्खन के इलाक़े में ही निर्वासित बन्दी का जीवन बिताना पड़ा। लेकिन, ध्रुवकक्षा के इस सुदूर स्थान में रहते हुये भी, स्तालिन चुपचाप नहीं रह सकते थे। अगले ही साल सितम्बर सन् १९१४ में, प्रथम महायुद्ध घोषित हो गया और घमासान लड़ाई शुरू हो गई। द्वितीय इन्टर्नेशनल (सुधारवादी समाजवादियों की अन्तर्राष्ट्रीय संस्था) के धनी-धोरियों ने तुरन्त अपने देश के पूंजीवादियों का साथ देते हुये युद्ध का समर्थन किया, लेकिन लेनिन साम्राज्यवादियों के बाज़ारों और उपनिवेशों की नोच-खसोट के लिये होने वाली इस लड़ाई में शामिल होना, सर्वहारा वर्ग के साथ विश्वास-घात करना समझते थे। उन्होंने तुरन्त बिना कुछ आगा-पीछा सोचे, साम्राज्यवादी युद्ध के विरुद्ध संघर्ष करने की घोषणा की। अभी स्तालिन का लेनिन के साथ पत्र-व्यवहार द्वारा सम्बन्ध स्थापित नहीं हो पाया था, और न पार्टी केन्द्र से ही कोई सम्बन्ध था, लेकिन सच्ची मार्क्सवादी अंतर्राष्ट्रीय दृष्टि होने के कारण कूरेइका में रहते हुये भी स्तालिन को अपना कर्त्तव्य वही सूझा, जिसे कि लेनिन ने दुनिया के सर्वहारा के सामने रखा था। उनका मार्क्सवाद का ज्ञान उथला होता, तो द्वितीय इन्टर्नेशनल वालों की तरह पथ-भ्रष्ट होने की सम्भावना होती।

कूरेइका में भी आखिर मनुष्य रहते ही थे और सभी बन्दी या निर्वासित नहीं थे। उनमें भी ग़रीबों और सर्वहारों की संख्या अधिक थी, जिनकी श्रद्धा और सहानुभूति स्तालिन को हमेशा मिला करती थी। उन्होंने बाहरी दुनिया से फिर सम्बन्ध स्थापित कर लिया। लेनिन के साथ चिट्ठी-पत्री होने लगी। सन् १९१५ में मोनारितस्कॉये गांव में बोल्शेविकों की एक सभा में उन्होंने व्याख्यान दिया। गुप्तचर मालीनोवस्की के अतिरिक्त, पांच और बोल्शेविक देपुती चतुर्थ राज्य दूमा के सदस्य थे, जिन पर ज़ारशाही ने राजद्रोह का मुकदमा चलाया था। कामेनेफ़ ने उस समय उनके साथ विश्वासघात किया, जिसकी स्तालिन ने इस मीटिंग में बड़ी कड़ी आलोचना की थी।

बोल्शेविकों ने इसी समय 'वोप्रोसिस्त्रखोवानिया' (बीमा के प्रश्न) के नाम से एक पत्रिका निकाली, जो वैधानिक तौर से खुलेआम प्रकाशित होती थी। बोल्शेविक वैधानिक और अवैधानिक दोनों ही तरह के पत्रों का होना उसी तरह आवश्यक समझते थे, जिस तरह कि गुप्त क्रांतिकारी संस्थाओं को रखते हुये वह साथ-साथ पार्लामेंट में भी अपने प्रतिनिधि भेजते थे। वह अपने कार्य और प्रचार के सुभीते के किसी भी साधन को हाथ से जाने देने के लिये तैयार नहीं थे। इस पत्रिका का उद्देश्य था: 'पेतरेस्सोफ़, लेवेच्की और प्लेखोनोफ़ जैसे 'भद्रपुरुषों के अन्तर्राष्ट्रीयतावादी सिद्धांतों' के विरुद्ध विचारों को फैलाना, देश के मज़दूर वर्ग के खिलाफ़ भ्रष्टाचारपूर्ण वक्तव्यों और अन्तर्राष्ट्रीयतावादी सिद्धांतों के विरुद्ध कही जाने वाली बातों के खिलाफ़ देश के मज़दूर वर्ग के विचार-सम्बन्धी बीमा को सुरक्षित रखने के लिये अपने सारे प्रयत्नों और शक्तियों को लगाना।'

अपने सम्पादकों की गिरफ़्तारी के बाद, फरवरी सन् १९१५ में यह पत्रिका कुछ दिनों बन्द रह कर फिर से निकलने लगी। पत्रिका जहां अपने को क़ानूनी प्रहार से बचाते हुये बोल्शेविकों की विचारधारा और कार्यनीति का प्रचार करती थी तथा विरोधियों का मुंहतोड़ जवाब देती थी, वहां इसके सम्पादकीय विभाग ने मोलोतोफ़ के नेतृत्व में पार्टी के एक खुले केन्द्र का काम करना शुरु किया था। सरकारी सेंसर पत्रिका की एक-एक लाइन को देखता, लेकिन जितने अंश को वह काट देता था, उसे पत्रिका में सादा ही छोड़ दिया जाता था। जब स्तालिन को इसका पहला अंक मिला, तो उन्होंने तुरन्त निर्वासितों से चन्दा करके छै रूबल पचासी कोपेक सम्पादक के पास भेजते हुये, तुरखान्स्क के बोल्शेविकों की तरफ़ से एक पत्र लिखा था, जिस पर स्तालिन, अ. मस्लेन्निकोफ़ (जिसे पीछे कोलचक ने गोली मरवा दी), स्पन्दर्यान वेरा, श्वाइजैर आदि के हस्ताक्षर थे। उसकी कुछ पंक्तियां थीं:

> "प्रिय साथियो, तुरखान्स्क के निर्वासितों की एक टुकड़ी 'वोप्रोसिस्त्रा-खोवानिया' के फिर से प्रकाशन का बड़ी प्रसन्नता के साथ स्वागत करती है। आज के समय में, जब कि रूस में कमकर समूह की सार्वजनिक राय को इस तरह जान-बूझ कर ग़लत समझाया जाता है, और जब कि अ. गुच्कोफ़ और प. रयाबुशिन्स्की की सक्रिय सहायता से सच्चे कमकर प्रतिनिधियों को सामने नहीं आने दिया जाता, इस तरह की एक सच्ची मजूर पत्रिका को देखना और पढ़ना आनन्द की बात है।"

स्तालिन इसको बड़ा आवश्यक समझते थे कि मैदान खाली देख कर मेन्शेविक अपने झूठे समाजवाद की आड़ में कमकरों को बहकाने में सफल न हो सकें।

स्तालिन का कूरेइका का जीवन किस तरह का था, यह एक दूसरी निर्वासिता वेरा श्वाइजेर के संस्मरणों से मालूम होता है। वेरा ने लिखा था:

"जाड़ों (सन् १९१३) के दिनों में, पुलिस को जानने का मौका दिये बिना सूरेन स्पन्दयोन के साथ मैंने कूरेइका गांव में स्तालिन से मिलने के लिये यात्रा की। दूमा के बोल्शेविक सदस्यों पर उस समय मुकदमा चल रहा था और कई दूसरी भी पार्टी-सम्बन्धी बातें थीं, जिनके बारे में फ़ैसला करने के लिये हमने स्तालिन से मिलना आवश्यक समझा था। जाड़े के दिनों में यहां कितने ही हफ़्तों तक रात और दिन एक हो जाते थे, और हद दर्जे की जाड़े-पाले वाली रात में यह सफ़र करना था। हम बिना पहियेवाली, कुत्ते की गाड़ी लेकर रास्ते में बिना रुके, जमी हुई येनिसेइ नदी पर नीचे की ओर चलते हुये मोनास्तिर्स्कोये और कूरेइका के बीच के दो सौ किलोमीटर की हिमाच्छादित निर्जन भूमि को ऐसे समय पार कर रहे थे, जब कि भेड़ियों की गुर्राहट बराबर हमारा पीछा कर रही थी।

"हम कूरेइका में पहुंचे और उस झोंपड़ी को खोजने लगे, जिसमें साथी स्तालिन रहते थे। गांव में पन्द्रह झोपड़े थे, जिनमें वह सबसे अधिक ग़रीबी का था—एक बाहरी कोठरी, एक रसोईघर, जिसमें अपने परिवार के साथ घर का मालिक रहता था।—इन दोनों के अतिरिक्त एक और कोठरी थी, जिसमें साथी स्तालिन रहते थे। और बस!

"हमारे अप्रत्याशित आगमन से साथी स्तालिन बहुत प्रसन्न हुये और ध्रुवकक्षीय यात्रियों को आराम देने के लिये जो कुछ हो सकता था, वह उन्होंने किया। पहला काम जो उन्होंने किया, वह था येनिसइ की ओर दौड़ जाना, जहां पर कि उन्होंने बर्फ़ में छेद करके मछलियों के लिये बंसी लगा रखी थी। कुछ ही मिनटों के बाद, अपने कन्धे पर एक विशाल मछली उठाये हुये वह लौट आये। उस 'सिद्धहस्त मछुए' की देख-रेख में, हमने बहुत जल्दी मछली काट-कूटकर तैयार की और उसके कुछ भाग को निकाल कर शोरवा तैयार किया। जिस वक्त यह पाकशास्त्र का चमत्कार दिखलाया जा रहा था, उसी समय हम पार्टी के कामों के बारे में गम्भीरतापूर्वक वार्तालाप करते रहे। स्तालिन के कर्मठ दिमाग़ की गन्ध उस कोठरी के सारे वातावरण से आ रही थी। साथ ही, अपने चारों ओर की वास्तविकता से उस दिमाग़ को क्षण भर के लिये भी अलग नहीं किया जा सकता था। उनकी मेज़ पर पुस्तकों और अख़बारों के बड़े-बड़े बंडलों का ढेर लगा हुआ था। एक कोने में मछुवे और शिकारी के सामान रखे थे, जिन्हें स्तालिन ने स्वयं बनाया था।"

महायुद्ध के समय लेनिन और स्तालिन एक दूसरे से हज़ारों मील दूर थे और दुनिया के एक छोर पर बसे, इस गांव में अख़बार मुश्किल से पहुंचते थे। डाक कभी-कभी दो-तीन महीनों की एक ही साथ आती थी। लेनिन के पास पत्रों के जाने में

इतना पेचीदा रास्ता और साधन इस्तेमाल करना पड़ता था कि स्तालिन के बहुत कम पत्र पहुँच पाते थे। सन् १९१४ के अन्त में ही, स्तालिन को महायुद्ध के बारे में लेनिन के निबंध के पहले मसौदे से परिचय प्राप्त करने का मौका मिल सका। वेरा ने अपने संस्मरण में लिखा है :

> "हमारे निर्वासित जीवन में यह बड़ा ही उत्तेजक क्षण था, जब कि लेनिन की हिदायतें हमारे पास पहुँचीं। तुरुखान्स्क के लिये निर्वासित होकर जाते समय क्रास्नोयार्स्क में, युद्ध पर लेनिन के निबंध का पहला मसौदा मुझे मिला। वह एक गुप्त पते पर पहुँच कर मेरे पास आया था, जिस पते पर कि नादेज़्दा कान्स्तन्तिनोवा (क्रुप्सकाया) लेनिन के पत्रों को भेजा करती थी। मैंने इन निबंधों को साथी स्तालिन को दिया, जो उस समय सूरेन स्पन्दर्यान के साथ मोनास्तिर्स्कोये गांव में रहते थे। लेनिन के युद्ध पर लिखे सात निबंधों ने हमें बतलाया कि साथी स्तालिन इस जटिल ऐतिहासिक स्थिति के मूल्यांकन में ठीक लेनिनीय निर्णय पर पहुँचे थे। साथी स्तालिन लेनिन के निबंधों को पढ़ते समय जिस आनन्द, दृढ़ विश्वास और सफलता की भावना का अनुभव कर रहे थे, उसका वर्णन करना मुश्किल है।"

स्तालिन और स्पन्दयोन ने उस समय जो पत्र लेनिन के पास भेजे थे, उनमें से एक अब भी सुरक्षित है। इस पत्र में उन्होंने प्लेखानोफ़, क्रोपतिकन और फ्रेंच समाजवादी मंत्री सवंत को उनके रवैये पर बहुत फटकारा है। तुरुखान्स्क इलाक़े में ही याकोब स्वेर्दलोफ़ को भी निर्वासित किया गया था और वहां के सभी बोल्शेविक निर्वासित बहुधा आपस में मिला करते थे। यहां स्तालिन का जीवन अधिकतर पुस्तकों के अध्ययन तथा पार्टी के कामों पर विचार-विनिमय करने आदि में ही बीतता था। इसके अतिरिक्त, जीविका को थोड़ा और बहुविध बनाने के लिये वह मछली मारने और शिकार करने भी जाया करते थे।

लड़ाई चलते दो साल से अधिक हो गये थे। सन् १९१६ के दिसम्बर में, ज़ारशाही ने अनिवार्य सैनिक सेवा का नियम सैनिक आयु के निर्वासितों पर भी लागू किया और उसके लिये स्तालिन को क्रास्नोयार्स्क भेज दिया गया। लेकिन, ऊपर के अधिकारियों को अपनी ग़लती तुरन्त मालूम हो गई कि ऐसे ख़तरनाक क्रांतिकारियों को सेना में भेजना भारी मूढ़ता होगी। इसीलिये, उन्होंने स्तालिन को सेना में न लेकर अपने बाकी निर्वासन के समय को काटने के लिये अचिन्स्क में भेज दिया।

जब युद्ध घोषित हुआ उस समय लेनिन गलीसिया में थे। पकड़े जाने के डर से, वह वहां से तटस्थ देश स्विट्ज़लैंड में चले गये, जहां से उन्होंने 'सोत्सियल देमोक्रात' (समाजवादी जनतंत्री) के नाम से रूसी बोल्शेविक पार्टी का मुख पत्र

निकालना शुरू किया। इसी पत्र में लेनिन ने 'धारा के विरुद्ध' नाम से कई लेख लिखे, जिनमें युद्ध के बारे में अपने विचार रखे थे और हासे, कॉत्स्की, प्लेखानोव जैसे युद्ध-समर्थक नामधारी समाजवादियों की खूब खबर ली थी। आस्ट्रिया और जर्मनी में भी प्रथम विश्व युद्ध के समय समाजवादी क्रांति के लिये वैसा ही अवसर मिला था जैसा रूस में, लेकिन नक़ली समाजवादी क्रांति लाने के लिये थोड़े ही हैं, उनका काम तो क्रांति के साथ विश्वासघात करके गाढ़े वक्त में पूंजीवाद के लिये ढाल बनना ही है। कगानोविच ने स्तालिन के बारे में कहा था :

> "वह पुराने बोल्शेविकों में एक विशेष धातु के बने हैं। स्तालिन के सभी राजनीतिक कार्यकलापों में एक अत्यन्त उल्लेखनीय तथा बहुत ही महत्वपूर्ण बात जो पाई जाती है, वह यही है कि वह कभी लेनिन से दूर नहीं गये —न दक्षिण और न चरम बाम पंथ की ओर।"

अध्याय ५.

क्रांति और प्रतिक्रांति

(सन् १९१७-२१)

१. फरवरी-क्रांति

सन् १९१७ में क्रान्ति का आरम्भ हुआ। औद्योगिक तौर से बहुत ही पिछड़े तथा जर्मन आक्रमणों के मुख्य लक्ष्य बने हुये रूस की हालत तीन वर्षों से ज़्यादा लगातार लड़ते-लड़ते बहुत बुरी हो गई थी। युद्ध-क्षेत्र में हार पर हार हो रही थी इस्तेमाल के लिये काफ़ी हथियार न पाने और अपने नालायक अफ़सरों के कारण सैनिक दुर्गति में पड़े हुये थे। उनमें ज़ारशाही के प्रति भारी असंतोष पैदा होना स्वाभाविक था। दूसरी ओर, देश में चारों ओर अभाव ही अभाव दिखाई पड़ता था। जनवरी से ही, इसके विरोध में हड़तालें होने लगीं। ६ जनवरी, १९०५ को ज़ारशाही ने गोलियों की वर्षा करके इतवार के दिन खून की होली खेली थी। उसी की स्मृति में जनवरी के प्रथम हफ़्ते में ज़बर्दस्त हड़तालें हुईं; जो कम होने की जगह, बढ़तीं और फैलतीं ही गईं। मज़दूरों के प्रदर्शनों में अब सैनिक और नौसैनिक भी भाग लेने लगे। २७ फरवरी को जब ज़ारशाही ने गोली चलाने का हुक़्म दिया, तो सैनिकों ने मज़दूरों पर गोली छोड़ने से इन्कार कर दिया और वह सरकार का साथ छोड़ कर जनता की ओर जाने लगे। आख़िर बन्दूकें ही तो शासकों की रक्षा करती हैं। जब वही विरोधियों का साथ देने लगीं, तो ज़ारशाही के भले दिनों की क्या आशा हो सकती थी? ज़ारशाही के हाथ से एक-एक करके रक्षा के सभी साधन निकलने लगे। फिर धोखे-धड़ी से काम लेते हुये, ज़ार और उसके पिट्ठुओं ने अपने को बचाने की कोशिश की, लेकिन अब तो चिड़ियां खेत चुग चुकीं थीं! मज़दूर ज़ारशाही को उखाड़ फेंकने में सबसे आगे थे। वर्दीधारी किसान सैनिक तथा दूसरे शोषित-उत्पीड़ित उनका साथ देने के लिये तैयार थे। ज़ार की नैया डांवाडोल देखकर, मध्यमवर्ग ने अपना काम बनाना चाहा। फरवरी में ज़ार को इस्तीफ़ा देकर, रोमनोफ़ वंश का ख़ात्मा करने के लिये मजबूर होना पड़ा। सरकार की बागडोर पहले राजुल ल्वोफ़ और फिर वकील केरेन्स्की ने संभाली। नई सरकार भी समाजवादी क्रांति के लिये तैयार नहीं थी, लेकिन उसे ज़ार की जगह पर बैठाने वाली तो साधारण मजूर-किसान जनता ही थी, इसलिये ज़ारशाही की तरह, हर बात में वह मनमानी कैसे कर सकती थी? मध्यमवर्गीय जनतांत्रिक क्रांति के होने का फल यह हुआ कि राजबन्दियों के लिये कैदख़ानों के दरवाजे खुल गये। राजनीतिक निर्वासित मुक्त हो

गये। अब तक गुप्त रह कर काम करने वाली बोल्शेविक पार्टी खुलेआम काम करने लगी। चारों तरफ़ अखबारों और भाषण की स्वतंत्रता की बाढ़ आ गई।

मध्यवर्ग ने शासन की बागडोर हाथ में संभालते हुये निश्चय किया था कि पीतर के अनुवांशिक शासन को हटाकर, उसकी जगह जनतांत्रिकता की दम भरने वाले मध्यमवर्ग की सरकार स्थापित कर दी जाय; और दूसरे पूंजीवादी देशों की तरह, रूस में भी उनके ही वर्ग के दो-तीन दल हों, जो मतदाताओं को बारी-बारी से बेवक़ूफ़ बनाकर, जनतंत्रता के नाम पर जनता-विरोधी कामों के लिये शासन संभालते रहें। सम्राट कैसर या ज़ार की जगह एक प्रेसीडेंट और सिंहासन की जगह एक आरामकुर्सी रख दी जाय। राज-लांछनों को कहीं-कहीं इमारतों, वर्दियों और तमग़ों से मिटा देने, झंडे और डाकखाने के टिकटों में हलके से परिवर्तन करने; कुछ थोड़े से व्यक्तियों की अदला-बदली के सिवाय, वह उसी पुराने आर्थिक-सामाजिक ढांचे को बनाये रखना चाहते थे। स्तालिन के शब्दों में :

> "संक्षेप में मध्यवर्गीय क्रांति का मुख्य काम शक्ति को हथियाना और उसे विद्यमान मध्यवर्गीय-आर्थिक-व्यवस्था के अनुसार बनाना था; जबकि सर्वहारा क्रांति का मुख्य काम अधिकार हाथ में करने के बाद, एक नयी समाजवादी आर्थिक व्यवस्था का निर्माण करना है।"

और जगहों की तरह, रूस में भी मध्यवर्गीय क्रांति ने चाहा था कि सर्वहारा की सभी कुर्बानियों और आशाओं पर पानी फेर दे।

अचिन्स्क में स्तालिन को भेजने वाले खतम हो चुके थे, इसलिये उन्हें साइबेरिया में रोक रखने वाला कौन था? १२ मार्च, १९१७ को स्तालिन चुपचाप पेत्रोग्राद पहुंच गये। जर्मनों के आक्रमण के कारण, उनके प्रति अपनी घृणा को व्यक्त करने के लिये इसी लड़ाई के दौरान में पीतरबुर्ग का नाम जर्मन शब्द बुर्ग हटा कर, रूसी शब्द ग्राद जोड़ कर पेत्रोग्राद कर दिया गया था। स्तालिन को स्वागत और प्रदर्शन की अवश्यकता नहीं थी। उन्हें सदा से चुपचाप ठोस काम करने की आदत रही है। पेत्रोग्राद पहुंचते ही, वह पार्टी के काम में लग गये। उस समय की असाधारण स्थिति में क्षण-क्षण जो नई समस्यायें सामने आती थीं, उनका हल ढूंढ निकालना स्तालिन के ही ज़िम्मे था। रोमनोफ़ वंश के खतम होने के बाद, जो शासन उसका स्थान लेने वाला था उसका क्या रूप होना चाहिये, यह सबसे अहम बात थी। कौनसा वर्ग अपने हाथ में सरकार की बागडोर ले? समाजवादी क्रांतिकारियों और मेन्शेविकों ने मध्यवर्ग का साथ दिया था, इसलिये अस्थायी सरकार में पूंजीवादियों का बोलबाला था। लेकिन, दूसरी ओर ज़ारशाही के खिलाफ़ जो असंतोष के ज़बर्दस्त प्रदर्शन हो रहे थे और जिनमें देश के सर्वहारा तथा पीड़ित जनता विद्रोह के लिये खड़ी हो गई थी, वह कोई असंगठित अव्यवस्थित भीड़ नहीं थी। सन् १९०५ की क्रांति

के तर्जबे से फ़ायदा उठा कर, मज़दूरों और कमकरों के देपुतियों की सोवियतें जगह-जगह संगठित होकर, सभी कामों को सुव्यवस्थित रूप से कर रही थीं। यह बोल्शेविकों की ही दूरदर्शिता का परिणाम था कि उन्होंने बारह वर्ष पहले ही पुराने शासन-यंत्र का स्थान लेने वाले एक नये शासन-यंत्र का आविष्कार कर लिया था। यह सोवियतें अब हर जगह तुरन्त संगठित हो रही थीं। दाल-भात में मूसरचन्द की कहावत के अनुसार, सर्वहारा और ज़ारशाही के संघर्ष के भीतर घुस कर, मध्यवर्गीय क्रांति-विरोधियों को लाभ उठाने का मौका बोल्शेविक कैसे दे सकते थे? स्तालिन ने १४ मार्च, १९१७ के 'प्राव्दा' में 'मजूर-सैनिक देपुतियों की सोवियतें' के नाम से एक लेख लिखा, जिसमें उन्होंने फ़ौरी कामों के बारे में बतलाया था: "पुरानी शक्तियों को खतम कर डालने के लिये, जीते हुये अधिकारों को हाथ में रखना तथा प्रदेशों से मिल कर रूसी क्रांति को और आगे बढ़ाना... ।" स्तालिन ने क्रांति की आधारभूत शक्ति के बारे में भी यह बतलाया था: "रूसी क्रांति का बल मज़दूरों और वर्दी पहने सैनिकों के रूप में किसानों की मैत्री पर निर्भर करता है।" स्तालिन ने मज़दूरों और सैनिकों की सोवियतों (पंचायतों) को और भी व्यापक बनाने तथा मज़दूर और सैनिक देपुतियों की केन्द्रीय सोवियत के तत्त्वावधान में जनता की क्रांतिकारी शक्ति के स्वरूप को बनाने के लिये कहा; और यह भी कि "क्रांतिकारी समाजवादी जनतंत्रियों को इसी दिशा में काम करना होगा।"

इस समय, जनता के सामने सबसे बड़ा प्रश्न था-युद्ध के सम्बन्ध में दो टूक फ़ैसला करना, उसे बंद करना। १६ मार्च, १९१७ के 'प्राव्दा' में 'युद्ध' के नाम से एक लेख में स्तालिन ने कहा:

"हमारे लिये यह ज़रूरी है कि साम्राज्यवादियों का नक़ाब फाड़ दिया जाय। जनता को बतलाया जाय कि इस युद्ध के पीछे असल बात क्या है। इसका अर्थ है—युद्ध के खिलाफ़ वास्तविक युद्ध घोषित करना; इसका अर्थ है—वर्तमान युद्ध के और आगे चलाने को असम्भव कर देना।"

रूस बहुजातीय राज्य था। क्रांति की देहरी पर पहुँच कर, स्तालिन सभी जातियों को एकताबद्ध रखने का ख़्याल कैसे छोड़ सकते थे? इसीलिये २५ मार्च, १९१७ के 'प्राव्दा' में उन्होंने 'जातीय अयोग्यताओं को ख़तम करना' लेख लिखते हुये कहा कि यह अत्यावश्यक है कि आज उत्पीड़न से मुक्त हुई जातियों के अधिकारों को तुरन्त स्थापित किया जाय; इस अधिकार को क़ानून की शक्ति प्रदान की जाय। उन्होंने इस लेख में ज़ोर देकर कहा कि जातियों को आत्म-निर्णय का अधिकार मिलना चाहिये, जिसमें उनको अपने अलग राज्य बनाने का हक़ भी होना चाहिये।

स्तालिन के नेतृत्व में जिस वक्त बोल्शेविक इस तरह क्रांति को आगे बढ़ाने की कोशिश कर रहे थे, उसी समय मेन्शेविक और समाजवादी-क्रांतिकारी पूंजीपतियों

और जमींदारों के पुराने शोषण को अक्षुण्ण रखने की कोशिश कर रहे थे। सर्वहारा को धोखा देने के लिये दुनिया के सभी प्रतिगामियों का बड़ा हथियार है-सुधारों की भूल-भुलैया में डाल कर समय गुज़ारना। रूसी मेन्शेविक और समाजवादी-क्रांतिकारी भी किसानों को समझाने-बुझाने की कोशिश कर रहे थे कि तुम अपनी समस्याओं को तुरन्त हल करने की मांग न करो, संविधान-सभा के बनने की प्रतीक्षा करो। वह जानते ही थे कि संविधान-सभा को कब बुलाना चाहिये, या नहीं ही बुलाना चाहिये, यह उन्हीं के हाथ है; जब प्रतीक्षा करते-करते जनता का जोश धीमा पड़ जायेगा, तो फिर वह जैसा चाहेंगे वैसा करने लगेंगे। लेकिन, जनता के हित-समर्थक बोल्शेविक इतने भोले नहीं थे। वह जनता के अधिकार की मांग को खटाई में पड़ने देने के लिये तैयार नहीं थे। लेनिन ने पेत्रोग्राद पहुँचने के ग्यारह दिन बाद, १४ अप्रैल, १९१७ के 'प्राव्दा' में 'ज़मीन किसानों को' के नाम से स्तालिन ने एक लेख लिखा कि इस धोखे में नहीं पड़ना चाहिये। उन्होंने समाजवादी क्रांतिकारी, मेन्शेविक और कादेत (प्रतिगामी सुधारवादियों) का भंडाफोड़ करते हुये बतलाया :

> "उन्हें तब तक किसानों की क्या परवाह है, जब तक कि ज़मींदार मौज उड़ा रहे हैं। इसीलिये, हम रूस के किसानों, सभी गरीब किसानों को पुकार कर कहते हैं कि लक्ष्य को अपने हाथ में लो; उसे आगे बढ़ाओ।
>
> "हम उनसे पुकार कर कहते हैं कि ज़िलों, देहाती इलाकों आदि की क्रांतिकारी किसान-कमेटियां संगठित करो। इन कमेटियों द्वारा ज़मींदारियों पर अधिकार करो और किसी हुक्म इन्तज़ार किये बिना, संगठित ढंग से उन्हें जोतना-बोना शुरु करो।
>
> "हम उनसे पुकार कर कहते हैं कि ज़रा भी देर किये बिना, संविधान-सभा की प्रतीक्षा किये बिना, और प्रतिगामी मंत्रियों की मंसूखी की आज्ञा की ओर बिलकुल ध्यान दिये बिना, देर किये बिना इस काम को करें, क्योंकि यह चीज़ें क्रांति के चक्के के रास्ते में बाधाओं के सिवा और कुछ नहीं हैं।"

लेनिन के रूस में आने के पहले, किसानों और मज़दूरों के सामने जो सबसे जबर्दस्त समस्यायें खड़ी हुईं, स्तालिन ने ठीक समय पर उनका हल सामने रख दिया था। मेन्शेविकों, समाजवादी-क्रांतिकारियों और कादेतों की छीछालेदर हो रही थी। अपनी लीडरी को हाथ से जाते देखकर, वह दांत पीस रहे थे। पार्टी में भी कामेनेफ़ जैसे कुछ बुज़दिल थे। लेकिन, स्तालिन के सामने उनकी क्या चल सकती थी?

२. *लेनिन की वापसी*

अन्त में, ३ अप्रैल का दिन आया। पश्चिमी साम्राज्यवादियों ने लेनिन के स्विट्ज़रलैंड से लौटने में हर तरह की रुकावटें डालीं। फ्रांस और इंग्लैंड लेनिन की शक्ति

और प्रभाव को जानते थे और यह भी जानते थे कि वह साम्राज्यवादी युद्ध के बिलकुल विरुद्ध हैं। अब तक उन्हें लाखों की संख्या में बहुत आसानी से रूसी किसान, युद्ध की बलि के बकरे मिल जाते थे। और, ज़ार की जगह पर जो सरकार आई थी उसने भी पूरा विश्वास दिया था कि ज़ार का सिंहासन च्युत होना तो एक घरू काम था, जहां तक लड़ाई का सवाल है, उसमें वह तब भी पश्चिमी मित्रों के साथ थे। जर्मनी भी लेनिन के क्रांतिकारी विचारों के साथ सहानुभूति नहीं रख सकता था, लेकिन वह जानता था कि लेनिन के रूस में पहुँच जाने पर उनके दुश्मनों को रूसी मदद नहीं मिलेगी। रूस और दूसरे देशों में लड़ाई के कारण जो असंतोष फैला हुआ था, उसका प्रभाव जर्मनी में भी मौजूद था, इसलिये जर्मन यह पसन्द नहीं करते थे कि लेनिन उनके देश से खुल्लमखुल्ला गुज़रते हुये रूस जायें, इसलिये उन्होंने लेनिन के सामने यह शर्त रखी कि एक बन्द डिब्बे में बिना किसी से मिले-जुले या उतरे, रूस जाने के लिये तैयार हों, तभी जर्मनी से जाने की इजाज़त दे सकते हैं। लेनिन कोई हवाई क्रांतिकारी नहीं थे। उन्हें क्रांति के लिये पैर रखने की एक उपयुक्त जगह चाहिये थी, और वह था—अपना देश रूस। उन्हें वहां पहुँचने की जल्दी थी, इसलिये जर्मनों की शर्त मान कर, वह ट्रेन में बैठ रूस के लिये रवाना हो गये।

एक लम्बे अर्से के निर्वासन के बाद, ३ अप्रैल, १९१७ को लेनिन रूस पहुँचे। लेनिन के आने की ख़बर पेत्रोग्राद के अग्रगामी कमकरों को तुरन्त मिल गई और स्तालिन के साथ, उनके नेता लेनिन का स्वागत करने के लिये राजधानी से बाहर वेलो ओस्त्रोफ़ पहुँचे। क्रांति के दो महान् नेता, गुरु और शिष्य, आज एक दूसरे से ऐसे समय मिल रहे थे, जब उनके जीवन का ध्येय पूरा होने वाला था। पेत्रोग्राद के रास्ते में, ट्रेन पर बैठे-बैठे स्तालिन ने लेनिन को देश और पार्टी की सारी अवस्था तथा क्रांति की प्रगति बतलाई। लेनिन अद्भुत प्रतिभा के धनी पुरुष थे। स्वीटज़रलैंड में रहते हुये भी, वह रूस की ख़बरों से अपने को वंचित नहीं रखते थे, और थोड़ी-थोड़ी बातों से भी असली तत्व को पकड़ लेना उनके बांये हाथ का खेल था। मॉस्को के फिनलैन्ड स्टेशन पर, जनता की अपार भीड़ ने अपने प्रिय नेता का स्वागत किया और उनके व्याख्यान के एक-एक शब्द को ध्यान से सुना। अगले ही दिन, (४ अप्रैल) को एक कान्फ्रेंस हुई, जिसमें उन्होंने अपने प्रसिद्ध 'अप्रैल-निबंध' को रखा, जिसका भाव था—सोवियतों द्वारा राज-शक्ति पर अधिकार करने की योजना। बुज़दिल, ढुलमुलयक़ीन, नामनिहादी क्रांतिकारी इससे घबरा उठे। वह कब क्रांति के लिये सर्वस्व की बाज़ी लगाने को लिये तैयार हो सकते थे? लेकिन, लेनिन वह लक्ष्य-वेधी धनुर्धर थे, जो अच्छी तरह समझते थे कि समय का महत्व भी भारी होता है। एक बार चूक जाने पर फिर मौका बार-बार हाथ नहीं आता। स्तालिन और दूसरे बोल्शेविक लेनिन के साथ थे। स्तालिन ने बाद में ८ जून, १९२६ को तिफ़्लिस में रेलवे कमकरों की सभा में इसके बारे में बतलाया था :

"अन्त में, मुझे सन् १९१७ याद आता है, जब कि पार्टी की इच्छानुसार एक जेल से दूसरे जेल में बन्दी होते हुये, एक जगह से दूसरी जगह निर्वासित होकर घूमते हुए, मैं लेनिनग्राद भेजा गया। वहां रूसी कमकरों के बीच, सभी देशों के सर्वहारा के महान् गुरु, साथी लेनिन की समीपता में सर्वहारों और बूर्ज्वा वर्ग के बीच होते भयंकर संघर्ष के बीच, साम्राज्यवादी युद्ध के मध्य, मैंने पहली बार यह सीखा कि मजूर वर्ग की एक महान् पार्टी का नेता होना क्या अर्थ रखता है। वहां उत्पीड़ित जनता के मुक्तिदाता और सभी जातियों के सर्वहारों के संघर्ष की हरावल सेना—रूसी कमकरों—के बीच मुझे तीसरा क्रांतिकारी अग्नि-अभिषेक मिला। वहां लेनिन के पथ-प्रदर्शन में मैं क्रांति की कला में सिद्धहस्त हुआ।"

लेनिन के साथ, स्तालिन ने पेत्रोग्राद सोवियत की कार्यकारिणी कमिटी की बैठक में भाग लिया। अखिल रूसी मजूर-सैनिक-देपुती-सोवियत कान्फ्रेंस के संचालन में स्तालिन ने लेनिन का हाथ बंटाया। केन्द्रीय कमिटी के सदस्य के तौर पर, लेनिन के दाहिने हाथ की तरह, स्तालिन ने पार्टी के केन्द्रीय मुख पत्र 'प्राव्दा' का संचालन किया। अब से 'प्राव्दा' में बारी-बारी से लेनिन और स्तालिन के लेख निकलने लगे, जिन्होंने क्रांति के मार्ग को प्रशस्त किया। बोल्शेविकों की अप्रैल कान्फ्रेंस में, स्तालिन ने जातीय समस्या पर अपनी रिपोर्ट दी और जातियों के आत्म-निर्णय के अधिकार को स्वीकार करने पर ज़ोर दिया। इस कान्फ्रेंस में जातियों को अधिकार देने के विरोधी सदस्यों को मुहतोड़ जवाब देते हुये, स्तालिन ने यह भी कहा था :

"इस प्रकार, जातीय प्रश्न के बारे में हमारे विचारों को निम्न रूपों में रखा जा सकता है—१. जातियों के राज्य से अलग होने के अधिकार को स्वीकार करना। २. किसी राज्य के भीतर रहने के लिये तैयार जातियों को स्थानीय स्वायत्त-शासन देना। ३. अल्पसंख्यक जातियों के विकास को उन्मुक्त रखने की गारंटी देते हुये, विशेष क़ानून बनाना। ४. किसी राज्य की सभी जातियों के सर्वहारों के लिये एक अकेली, अभिभाज्य सर्वहारा जमात, एक अकेली पार्टी का होना।"

मई सन् १९१७ में, केन्द्रीय कमिटी का एक राजनीतिक ब्यूरो संगठित किया गया। स्तालिन इसके सदस्य निर्वाचित हुये। स्तालिन सन् १९१७ से १९५३, अपने निधन के समय, छियालीस वर्षों तक पोलिट (राजनीतिक) ब्यूरो के सदस्य बने रहे।

अब दोनों महान् गुरु और शिष्य बोल्शेविक पार्टी का नेतृत्व और सर्वहारों की अपार शक्ति का संचालन करते हुए, सर्वहारा क्रांति की तैयारी करने लगे। उस समय ज़रूरी था कि बूर्ज्वा सरकार यह न समझे कि वह ज़ारों की तरह ही मनमानी

करने के लिये स्वतंत्र है। इसीलिये, हर अवसर पर कमकरों के विराट प्रदर्शन किये जाने लगे, जिनकी अपार शक्ति देख कर प्रतिगामियों का दिल दहल जाता था। अप्रैल में कई प्रदर्शन हुये। मई दिवस का जुलूस भी अपूर्व रहा, पर १८ जून के ऐतिहासिक प्रदर्शन ने तो कमाल कर दिया। इस प्रदर्शन के लिये स्तालिन ने एक घोषणा—' पेत्रोग्राद के सभी मेहनतकशों, सभी कमकरों और सैनिकों के लिये'— लिखी, जिसमें उनसे कहा गया था कि इस दिन को उत्पीड़न और अत्याचार के फिर से चालू करने के विरुद्ध क्रांतिकारी पेत्रोग्राद द्वारा एक जबर्दस्त विरोध-प्रदर्शन करने के दिवस में परिणित कर दो। घोषणा में आगे कहा गया था:

" स्वतंत्रता और समाजवाद के शत्रुओं में बौखलाहट पैदा करने के लिये, कल हमारी विजयी ध्वजाएँ लहरायें !

" तुम्हारी पुकार, क्रांति के योद्धाओं की पुकार, सभी उत्पीड़ितों और बंधुओं के आनन्द के लिये सारी दुनिया में गूंज उठे !

" कमकरो ! सैनिको ! अपने हाथों को बंधुता से एक दूसरे से मिलाये, समाजवाद के झंडे के नीचे आगे बढ़ो !

" साथियो, सभी सड़कों पर आजाओ !

" अपने झंडों के चारों ओर, घनिष्ठता के साथ घेरा बांध कर इकट्ठे हो जाओ !

" राजधानी की सड़कों पर अटूट पंतियों के रूप में मार्च करो ! "

१८ जून के प्रदर्शन में बोल्शेविक दल के झंडे के नीचे पांच लाख मजूर और किसानों ने भाग लिया था। बोल्शेविकों की शक्ति को इस तरह बढ़ते देख कर, अस्थायी सरकार कैसे चुपचाप रह सकती थी? उसने बोल्शेविक पार्टी पर प्रहार कर, उसे फिर भूमिगत बनाने का निश्चय किया। लेकिन, राजधानी के उद्बुद्ध कमकर और सैनिक बनियों की बंदरघुड़की मानने के लिये कब तैयार थे? उनके इस प्रयत्न का फल यही हुआ कि ३ और ४ जुलाई को फिर जबर्दस्त प्रदर्शन हुये। सड़कों पर मजदूरों और सैनिकों पर गोली चलाकर 'प्राव्दा' के कार्यालय को नष्ट-भ्रष्ट करने के बाद, अस्थायी सरकार ने लेनिन पर झूठा आरोप लगा कर उन्हें गिरफ़्तार करने के लिये वारन्ट निकाला। पार्टी के भीतर अभी भी ऐसे विश्वासघाती थे, जो अदालत में प्रतिगामी सरकार के न्याय का झंडा फाड़ने के बहाने लेनिन का बलिदान देने के लिये तैयार थे। लेनिन उस वक्त क्रांति की एक सबसे बड़ी शक्ति थे, इसे अस्थायी सरकार खूब जानती थी। यह निश्चय ही था कि लेनिन पर बाक़ायदा मुकदमा चलाने की जगह, वह अपने किसी गुंडे से उन पर गोली चलवा कर क्रांति के एक शक्तिशाली ज्वालामुखी को दबा सकती थी। लेकिन, स्तालिन और दूसरे बोल्शेविक ऐसी कच्ची गोली नहीं खेले थे, और न लेनिन ही उनकी बात के महत्व से इन्क़ार कर सकते थे।

इसलिये, यही निश्चय किया गया कि लेनिन को छिपा दिया जाय। यदि उस दिन कामनेफ़, रुइकोफ़ और त्रॉत्स्की की बातों को माना गया होता, तो कौन जानता है कि लेनिन को खो देने पर क्रांति का रास्ता किस ओर जाता। यह बुज़दिल, नेतृत्व के लिये अन्धे क्या उस समय क्रांति की धारा को ठीक रास्ते पर चला सकते थे ? लेनिन अब पेत्रोग्राद से कुछ दूर रज़लिफ़ के जंगल की एक कुटिया में शिकारी बन कर रहते थे। स्तालिन उस गुप्त स्थान में दो बार गये। पत्र-व्यवहार द्वारा तो वह उनसे बराबर सम्बन्ध रखते थे। दोनों की राय एक ही थी—हथियारबन्द विद्रोह द्वारा अस्थायी सरकार को उलट कर, सर्वहारों की सरकार स्थापित करना। त्रॉत्स्की और दूसरे ढुलमुलयक़ीन सदस्य दलीलें देते हुये कहते थे कि सर्वहारा क्रांति पश्चिम के देशों में ही हो सकती है। इस पर स्तालिन का जवाब था :

> "यह सम्भावना भी हो सकती है कि रूस ही ऐसा देश बने, जो समाजवाद का रास्ता बनाने में सफल हो। हमें इस पुराने, सड़े विचार को छोड़ देना चाहिये कि केवल युरोप ही हमको रास्ता दिखा सकता है। मार्क्सवाद रूढ़यात्मक और सृजनात्मक दोनों तरह का होता है। मैं सृजनात्मक मार्क्सवाद का समर्थक हूँ।"

इसे कहने की आवश्यकता नहीं कि त्रॉत्स्की, कामनेफ़ जैसे आदमियों को पुस्तकी ज्ञान का अजीर्ण हो गया था। उनकी आंखों पर उसका ऐसा पर्दा पड़ गया था कि तत्कालीन परिस्थिति को देख कर, उनके पास पुस्तक की पंक्तियां उद्धृत करने के सिवा कोई रास्ता ही नहीं था। हर परिस्थिति में जो घटनायें घटित होती हैं, वह चाहे किसी पुरानी परिस्थिति में घटी घटनाओं से समानता रखती हों, लेकिन वह सामूहिक रूप से अपना बिल्कुल ही नया स्वरूप प्राप्त कर लेती हैं। ऐसे समय, ठीक रास्ता खोज निकालना लेनिन और स्तालिन जैसी प्रतिभाओं का ही काम था। सौभाग्य से लेनिन के फ़रार होने के बाद, स्तालिन सभी कामों को संभालने के लिये तैयार थे। हथियारबन्द विद्रोह के लिये शक्ति-संचय का काम निर्बाध रूप से चलता रहा। १० जुलाई, १९१७ को 'रबोची सोल्दात' (कमकर और सिपाही) का प्रथम अंक निकला। अस्थायी सरकार ने 'प्राव्दा' को बन्द कर दिया था, इसीलिये वह इस नये रूप में निकला था। इसमें स्तालिन ने 'क्रांति-विरोध की विजय' के नाम से एक लेख लिखते हुये, कहा था :

> "कमकर इसे कभी नहीं भूलेंगे कि जुलाई के भीषण अवसर पर, जबकि गुस्से से पागल क्रांति-विरोधियों ने क्रांति के ऊपर गोली-वर्षा आरम्भ की तो बोल्शेविक पार्टी ही एकमात्र ऐसी पार्टी थी, जिसने मज़ूरवर्गीय मुहल्लों को नहीं छोड़ा।

"कमकर इसे कभी नहीं भूलेंगे कि उन भयंकर क्षणों में समाजवादी-क्रांतिकारी और मेन्शेविक जैसी 'शासनारूढ़' पार्टियां उस कैम्प में थीं, जो कि कमकरों, सैनिकों और नौसैनिकों पर आक्रमण करने तथा उनसे हथियार छीनने में लगा हुआ था।

"कमकर इस सबको याद रखेंगे और उसका ठीक निष्कर्ष निकालेंगे।"

इसमें क्या सन्देह है कि क्रांति की तैयारी के इन स्मरणीय दिनों में स्तालिन का एक-एक शब्द, एक-एक भयंकर बम का काम दे रहा था।

क्रांति-विरोधी अपनी क्षणिक सफलता पर फूले नहीं समाते थे। उन्होंने लेनिन को फ़रार करवा दिया था। इसी समय २६ जुलाई, १९१७ को छटी पार्टी कांग्रेस हुई। लेनिन का अभाव खटकना था। लेकिन, वहां उप-लेनिन मौजूद थे। स्तालिन ने कांग्रेस में रिपोर्ट पेश की, जिसमें उन्होंने बतलाया कि उनके सामने मुख्य काम है—बूर्ज्वा सरकार को हथियारों द्वारा पदच्युत करने और सर्वहारा तथा ग़रीब किसानों का राज्य स्थापित करने की आवश्यकता को जनता को समझाना! बस एक ही बात बाकी रहती है, अर्थात् बलपूर्वक अस्थायी सरकार को हटा कर शासन अपने हाथों में लेना। और ग़रीब किसानों की सहायता से, केवल सर्वहारा ही में वह शक्ति है, जिससे कि वह बलपूर्वक शासन को अपने हाथों में ले सकता है। त्रॉत्स्की और दूसरे किताबी पंडित और अदूरदर्शी यही राग अलापते रहे कि रूस जैसा पिछड़ा देश हथियार के सहारे समाजवादी क्रांति नहीं कर सकता, यह काम उद्योग–धंधों में बढ़े हुये पश्चिमी राष्ट्रों में ही हो सकता है। हमें तो जनतांत्रिक तरीक़े से आगे बढ़ना चाहिये। इसमें शक नहीं कि जनतांत्रिकता की पुकार कायर और धोखेबाज़ समाजवादियों के लिये हमेशा से एक ढाल का काम करती आ रही है।

इस सारे समय, लेनिन जंगल में अपनी पर्णकुटी के भीतर छिपे हुये सो नहीं रहे थे। वह बड़ी सतर्कता के साथ, क्षण-क्षण की घटनाओं की देख-भाल करते रहते थे। सेर्गो ओरयोनिकिद्ज़े गुरु और शिष्य के बीच बातों और सूचनाओं के लाने-लेजाने का काम करता था। इस समय, साथी स्तालिन बाकू में ही अपने घनिष्ट सहकारी तथा मित्र स० अलीलुयैफ़ के घर में छिप कर रहते थे, जिसने अपने संस्मरणों में लिखा है :

"जुलाई के दिनों में, गुस्से से पागल बूर्ज्वा वर्ग के प्रहार के कारण फ़रार होने से पहले, लेनिन ६ से ११ जुलाई तक मेरे साथ रहे। साथी स्तालिन लेनिन से मिलने मेरे घर आया करते थे। जब साथी लेनिन ११ जुलाई की रात को सेस्त्रोरेत्स्क में छिपने के लिये रवाना हुये, तो मैं और साथी स्तालिन सेस्त्रोरेत्स्क स्टेशन तक उनके साथ गये। उस समय, यह स्टेशन बोलशयानेव्वा बांध पर नोवयादेरेव्न्या में अवस्थित था। हम दशम रोज़्देसवेन्स्कया सड़क से उक्त स्टेशन तक पैदल ही गये।

"रज़लिफ़ और बाद में फिनलैंड की झोपड़ी में रहते समय, साथी लेनिन समय-समय पर स्तालिन को देने के लिये मेरे पास पत्र भेजा करते थे। चिट्ठियां मेरे घर आती थीं। चूंकि उनका जवाब तुरन्त देना होता था, इसलिये अगस्त में साथी स्तालिन रोज़थ रोज़्देस्तेंन्स्कया सड़क वाले मेरे घर में चले आये और उसी कमरे में रहने लगे, जिसमें जुलाई के दिनों में साथी लेनिन छिप कर रहते थे।"

पुराने क्रांतिकारी साथी और बहुत दिनों तक सोवियत संघ के राष्ट्रपति, कालिनिन ने इस समय के बारे में लिखा था : "अक्तूबर के तुरन्त ही पहले स्तालिन उन चन्द आदमियों में से थे, जिनको साथ लेकर लेनिन ने विद्रोह का निश्चय किया था। ज़िनोवियेफ़ और कामेनेफ़ भी उस समय केन्द्रीय कमिटी के मेम्बर थे, लेकिन लेनिन ने उन्हें इसका पता भी नहीं दिया था।" यह दोनों अपने को दूरदर्शी समझने वाले कायर बराबर सशस्त्र विद्रोह का विरोध करते रहे, और संविधान सभा के ऊपर सब-कुछ छोड़ कर बैठे रहना चाहते थे। लेकिन, जब विद्रोह शुरू ही हो गया, तो कोई दूसरा चारा नहीं रहा था। इसलिये, लेनिन ने मानो लाठी के हाथों उन्हें भी क्रांति के भीतर ढकेल दिया। त्रॉत्स्की यद्यपि स्वेच्छापूर्वक शामिल हो गया था, लेकिन पूरे मन से नहीं; क्योंकि उसके मत के अनुसार सर्वहारा क्रांति का स्थान पश्चिम युरोप के उद्योग-प्रधान देश थे, न कि पिछड़ा हुआ कृषि-प्रधान रूस। इन तीनों को छोड़, बाकी सभी बोल्शेविक सर्वस्व की बाजी लगाने के लिये तैयार थे। लेनिन ने क्रांति आरम्भ करने के समय को बिलकुल गुपचुप रखना चाहा था, लेकिन ज़िनोवियेफ़ ने इस निर्णय के विरोध में पत्र में लिखना शुरू किया, जिससे केरेन्स्की की सरकार को सजग होने का मौका मिल गया।

अगस्त सन् १९१७ में जनरल कोर्निलोफ़ ने अस्थायी सरकार से विद्रोह करके, फिर से ज़ारशाही स्थापित करना चाही। केरेन्स्की उस समय किंकर्त्तव्यविमूढ़ हो गया था, लेकिन क्रांति करेन्स्की के बल पर नहीं हुई थी। जिन सर्वहारों और सैनिकों ने ज़ार का तख़्त उलट दिया था, वह अब भी अपने नव-प्राप्त अधिकारों की रक्षा के लिये तैयार थे। सचमुच ही, 'जो शालिग्राम को भून कर खा गया, उसे बेंगन भून कर खाने में क्या देर लगेगी?' की कहावत को चरितार्थ किया। और, ज़ारशाही तीसमार खां के मनसूबे को उन्होंने बिलकुल विफल कर दिया। सारे कमकर हथियार-बन्द हो, क्रांतिकारी सैनिकों के साथ लड़ने के लिये आगे बढ़े और इनके शौर्य के सामने कोर्निलोफ़ की सेना धुन्ध की तरह विलीन हो गई।

'रबोची सोल्दात' को भी जब केरेन्स्की की सरकार ने बन्द कर दिया, तो बोल्शेविकों ने 'प्रोलेतारी' के नाम से अपना पत्र निकालना शुरू किया। अगस्त सन् १९१७ के पहले अंक में स्तालिन ने क्रांति को स्थगित करने के विचार से

मॉस्को में की गई कौन्सिल की बैठक के खिलाफ़ लिखते हुये, मॉस्को-कौन्सिल की इस कार्रवाई के विरोध में संगठित हुई कमकरों की हड़ताल का स्वागत किया।

कोर्निलोफ़ को करारी हार देकर, बोल्शेविक पार्टी ने कमकर जनता में अपने प्रति पूरा विश्वास स्थापित कर लिया था। जनता अब इसी पार्टी को अपनी रक्षक और अजेय वाहिनी समझती थी। इसलिये, जब सोवियतों का नया चुनाव हुआ, तो उनमें बोल्शेविक सबसे अधिक संख्या में आये और अब फिर से 'सभी शक्ति-सोवियतों को'-का नारा चारों ओर गूंज उठा। लेनिन सारी परिस्थिति को अपने गुप्त स्थान से देख और सभी शक्तियों को आंक रहे थे। वह समझ गये कि यही वह दुर्लभ क्षण है, जिसकी वर्षों से प्रतीक्षा करते रहे हैं। उन्होंने अपने एक पत्र में विद्रोह की तैयारी करने पर ज़ोर देते हुये लिखा था: "अब बोल्शेविकों को अपने हाथ में शक्ति लेनी होगी।" स्तालिन अपने गुरु के एक-एक आदेश और परामर्श को कार्य रूप में परिणित करने में लगे थे। अब उनका सारा समय सशस्त्र विद्रोह की तैयारी, लाल गारद और कमकरों की सेना के संगठन में लग रहा था। १० अक्तूबर, १९१७ को केन्द्रीय कमिटी ने स्तालिन को विद्रोह का संचालक नियुक्त किया। यह बैठक १० से १६ अक्तूबर तक चलती रही, जिसमें ज़िनोवियेफ़ आदि बराबर संविधान-सभा की प्रतीक्षा करने की बात करके, संघर्ष को रोकना चाहते थे। १६ अक्तूबर को बोल्शेविक केन्द्रीय कमिटी की एक परिवर्द्धित मीटिंग हुई, जिसमें विद्रोह का संचालन करने के लिये स्तालिन को पार्टी केन्द्र का नेता बनाया गया। इसी पार्टी-केन्द्र को महान् क्रांति का संचालन करना था।

३. *महान् क्रांति*

आखिर २४ अक्तूबर का दिन आया, जो कि नये पंचांग के अनुसार ६ नवम्बर का था। उस दिन, ११ बजे सबेरे 'रबोची पुत' (कमकर पथ) पत्र अस्थाई सरकार को हटा फेंकने के नारे के साथ निकला। पत्र के बाहर निकलते ही, पार्टी केन्द्र ने विद्रोह के बारे में हिदायत देते हुए हुक़्म निकाला और उसके सुनते ही क्रांतिकारी सैनिकों और लाल गारदों की टुकड़ियां जल्दी-जल्दी आकर स्मोल्नी में जमा होने लगीं। यहीं पार्टी केन्द्र था। विद्रोह शुरू हो गया। उसी दिन लेनिन ने 'केन्द्रीय कमिटी के मेम्बरों को पत्र' में लिखा था:

> "चाहे जो भी हो, आज ही इसी रात को सरकार को गिरफ़्तार करना होगा, पहले युंकरों (ज़ारशाही के अफ़सरों) को निशस्त्र करना होगा। अगर वह प्रतिरोध करें, तो हराकर, इत्यादि।
>
> "हमें इन्तज़ार नहीं करना होगा। नहीं तो हम सब कुछ खो देंगे।...

"इस बात का बिना चूके, आज ही शाम को या आज ही रात को निश्चय करना होगा; निर्णय करना होगा।...

"सरकार आगा-पीछा कर रही है, चाहे जो भी हो उसे नष्ट करना होगा।

"कार्रवाई में देर करना ख़तरनाक होगा"

ये वाक्य कैसे दृढ़ निश्चयी और पारदर्शी पुरुष की लेखनी से निकले थे? वस्तुतः यदि किसी को अन्तर्प्रत्यक्ष (इन्ट्यूशन) वाला कहा जा सकता है, तो वह लेनिन ही थे। उस समय जो शक्तियां एक दूसरे के मुक़ाबले में खड़ी थीं, लेनिन उनके बलाबल को गणित के किसी प्रश्न के तौर पर साफ़-साफ़ देख रहे थे। वह अन्तर्दृष्टि कामेनेफ़, ज़िनोवियेफ़ और त्रॉत्स्की के पास नहीं थी, न वह तत्वदर्शी थे, और न दाव में सर्वस्व की बाज़ी लगाने की हिम्मत रखते थे। यशपाल ने अपने क्रांतिकारी जीवन के संस्मरणों में एक साथी को इसीलिये अयोग्य बतलाया है कि वह प्राण जाने की ९९ प्रतिशत संभावना वाले काम के लिये तैयार होते समय, सबसे पहले जान बचाने की फ़िक्र करता था। लेनिन अपनी गुप्त झोपड़ी में कितने तड़फड़ा रहे होंगे, लेकिन उनको स्तालिन जैसा सहायक मिला था, जो सभी बातों को अपने गुरू की दृष्टि से देख सकता था। उसी दिन स्तालिन ने 'रबोची पुत' में 'हमें क्या चाहिये?' के नाम से एक लेख लिखा:

"वह समय आ गया है, जबकि और भी देर करना क्रांति के सारे उद्देश्य के लिये ख़तरनाक होगा।

"ज़मींदारों और पूंजीपतियों की वर्तमान सरकार की जगह, मजदूरों और किसानों की एक नई सरकार स्थापित करनी होगी।"

२४ अक्तूबर (६ नवम्बर) की रात को लेनिन ने अपनी झोपड़ी छोड़ कर, संचालक-केन्द्र के स्थान स्मोलनी में आकर क्रांति-युद्ध की बाग़डोर अपने हाथों में संभाल ली। सामन्ती-पूंजीपतियों की अन्तिम सरकार सचमुच ही सड़ी हुई लाश साबित हुई। उसको जनसाधारण का न कोई विश्वास और न कुछ सहायता प्राप्त थी। २४ अक्तूबर के सबेरे केरेन्स्की ने शक्ति-परीक्षा करनी चाही, जब कि हाथियारबन्द मोटरों के साथ उसने 'रबोची पुत' को दबाना तथा पत्र के सम्पादन कार्यालय एवं छापाख़ाने को नष्ट कर डालना चाहा था। लेकिन, स्तालिन पक्के खिलाड़ी थे, वह दुश्मन की एक-एक हरकत से पहले ही वाकिफ़ हो जाते थे। इसलिये, उस दिन १० बजे सबेरे ही लाल गारद और क्रांतिकारी सैनिक अपने मुख पत्र की रक्षा के लिये वहां मौजूद थे। उन्होंने हथियारबन्द गाड़ी को वहां से भगा कर, आफिसों की रक्षा के लिये जबर्दस्त सैनिक गारद बैठा दी। उसी दिन, ११ बजे अख़बार में स्तालिन का मशहूर लेख 'हमें क्या चाहिये?' छपकर निकला। उसी दिन सशस्त्र क्रांति आरम्भ हो गई। यह वह नक़ली क्रांति नहीं थी, जिसमें एक सामन्तवंश दूसरे का स्थान लेता है,

अथवा एक बूर्ज्वा दल दूसरे की जगह सरकार का संचालन करने लगता है, जिसका मतलब है—सिर्फ़ ऊपरी, मामूली सा परिवर्तन तथा शोषण-उत्पीड़न का पूर्ववत् ही जारी रहना। यह वह क्रांति थी, जिसके द्वारा दुनिया के छठे भाग पर शोषकों की शासन-व्यवस्था समाप्त हुई और उसकी जगह समाजवादी शासन आरम्भ हुआ। अब तक निठल्ली जोंकें भाग्य का निपटारा करती थीं। अब मजूर-किसान रूस के ही नहीं, विश्व के भाग्य-विधाता बनने वाले थे।

जिस आसानी से और सबसे पहले नगर के शक्ति-केन्द्रों—तारघर, बिजली-कारखाना, बैंक आदि पर कब्ज़ा किया गया, उससे मालूम होता है कि लेनिन ने सन् १९०५ के एक-एक तजर्बे से फ़ायदा उठाया था। राजनीतिक और सेना सम्बंधी दाव-पेंच का सारा नेतृत्व लेनिन ने किया था। इसमें सन्देह नही कि लेनिन के दिमाग के बिना अक्तूबर की क्रांति सफल न होती।

क्रांति की बल-परीक्षा ७ नवम्बर को हुई। पुराने रूसी पंचांग के अनुसार उस दिन २५ अक्तूबर था, इसीलिये 'लाल क्रांति' को अक्तूबर-क्रांति भी कहते हैं। (३ महीने के बाद, १ फरवरी, १९१८ से पुराने पंचांग को छोड़कर, युरोप में सर्वत्र प्रचलित पंचांग को स्वीकार किया गया, उस दिन पेत्रोग्राद के चौरस्ते और सड़कें युद्ध-क्षेत्र बन गई थीं। कहीं बाल्तिक् के नौसैनिक लड़ रहे थे और कहीं कारखानों के मजदूर—जिनमें औरतें भी थीं--अपने रोजमर्रा के कपड़ों में रायफ़िलें लेकर दुश्मनों पर धावा बोल रहे थे। उसी दिन शाम को सोवियत की दूसरी कांग्रेस के उद्घाटन के समय, नयी सरकार के शासनारूढ़ होने की घोषणा की गई। कांग्रेस में बोल्शेविकों का बहुत बहुमत था। घोषणा के समय तक शरद्प्रासाद को छोड़ कर सारी राजधानी सैनिक-क्रांतिकारिणी-समिति के हाथ में आ गई थी। केरेन्स्की संयुक्त राष्ट्र-अमरीका के दूतावास की मोटर में बैठ कर भाग गया। उस समय हेमन्त प्रासाद में अस्थायी सरकार के मंत्रिमंडल की बैठक हो रही थी। कुछ ही घंटों में हेमन्त प्रासाद बोल्शेविकों के हाथों में था और अस्थायी सरकार के सदस्य बन्दी थे। लेनिन ने खुद कांग्रेस में आकर इस विजय की घोषणा की थी। पिछली जुलाई से यह पहला अवसर था, जबकि वह जनता के सामने आये थे। उत्साह और आनंद के साथ, लोगों ने उनका स्वागत किया।

दूसरे दिन, नई सरकार स्थापित हुई। लेनिन अध्यक्ष हुये। सरकार का नाम रखा गया—सोवियत-जनता-कमीसार (सोवेत नरोद्निक कामिसरोफ़), संक्षिप्त में सोव्-नर्-कोम्। अस्थायी मंत्रिमंडल के सदस्यों को मन्त्री कहा जाता था, उनसे भेद करने के लिये 'कमीसार' नाम रखा गया। प्रथम सोव्-नर्-कोम् के सभी सदस्य बोल्शेविक थे। कामेनेफ़, जिनोवियेफ़, सिकोफ़, लूनाचार्स्की, रियाज़नोफ़ जैसे सर्वोच्च शिक्षित बोल्शेविकों ने लेनिन को धमकी दी कि यदि वह दूसरी समाजवादी पार्टियों को नहीं लेंगे,

तो वे सहयोग नहीं देंगे। लेकिन, लेनिन जानते थे कि गंगा-जमुनी मंत्रिमंडल हानिकारक सिद्ध होगा। उन्होंने उनकी बात मानने इन्कार कर दिया और कहा—" जो हमारी योजना नहीं मानते, हम उन्हें नहीं ले सकते। " उनका प्रोग्राम था—सभी शक्ति सोवियतों के हाथ में देना, लड़ाई को तुरन्त बन्द करना, रूस में बसने वाली सभी जातियों को आत्म-निर्णय का अधिकार देना, भूमि और उद्योग-धंधों को व्यक्तियों के हाथ से छीन कर राष्ट्र के हाथ में दे देना।

अधिकार संभालने के बाद लेनिन ने जो पहला काम किया, वह भूमि-सम्बन्धी घोषणा का था। कांग्रेस की दूसरे दिन (८ नवम्बर) की बैठक में प्रस्ताव पास हुआ कि " सभी जमींदारियां तथा उनके साथ के पशु और कृषि सम्बन्धी यंत्र आदि ज़ब्त किये जाते हैं और उनको संभालने का भार किसानों द्वारा निर्वाचित स्थानीय भूमि-समितियों के हाथ में दिया जाता है।"

इस प्रस्ताव ने किसान-सोवियतों की कांग्रेस—जो कि कुछ ही दिन बाद बैठी—को लेनिन के पक्ष में कर दिया और इस प्रकार उन समाजवादियों को निराश होना पड़ा, जो किसान-सोवियतों से बोल्शेविकों के कड़े विरोध की आशा रखते थे।

सोव-नर-कोम ने अपने बोल्शेविक-प्रोग्राम को बड़ी ईमानदारी से पूरा किया। एक सप्ताह के भीतर ही उसने बैंक और उद्योग-धंधों को राष्ट्रीय बना दिया। काफ़ी समय तक, नई सरकार ने पूंजीवादियों के साथ नरमी का बर्ताव किया। इस नरमी का उन्होंने फ़ायदा उठाना चाहा। कलम-जीवी श्रेणी बड़ी कायर साबित हुई, वह देर तक विरोध पर न टिक सकी। हर पूंजीवादी को दिल में सोवियत-शासन से घृणा थी, लेकिन सामने आने की हिम्मत न थी। विरोध करने वाले थे-सेना के बड़े-बड़े अफ़सर तथा शासन—विभाग के कुछ अफ़सर। उनके साथ सैनिक स्कूल के तरुण विद्यार्थी थे, जो कि प्रायः सभी धनिकों के लड़के थे। पत्रोग्राद् से बाहर भी सोवियत-शासन के फैलने में उतनी दिक़्क़त नहीं हुई।

इतनी आसानी से क्रान्ति को सफल बनाना लेनिन का ही काम था। इसके बारे में स्तालिन ने कहा है: " लेनिन सचमुच ही क्रांतिकारी विस्फोटों की एक अद्भुत प्रतिभा थे। बेढंगे से कोनों में भी वह आगे ही से उस दिशा को जान लेते थे, जिसकी ओर भिन्न-भिन्न वर्ग चलेंगे और जिन रास्तों पर जाने से क्रांति सफल होगी। इन सब बातों को मानो वह अपनी हथेली पर रख कर देख रहे हों। क्रांति में घंटों का नहीं, बल्कि मिनटों का भी बहुत मूल्य है, और लेनिन की प्रतिभा सेकिंडों का भी उपयोग करती थी।" राज्य की बागडोर संभालते ही, नई सरकार के लिये यह ज़रूरी था कि युद्ध बन्द किया जाय। उन्होंने मित्र-शक्तियों को भी इसके लिये कहा कि बिना किसी भूभाग को दबाये 'सुलह कर लेनी चाहिये,' लेकिन वे मानने के लिये तैयार नहीं थीं। अब जर्मनी के साथ इसके लिये बात करनी ज़रूरी थी। सोवियत सरकार

ने प्रधान-सेनापति दुखोनिन को आदेश दिया कि युद्ध की कार्रवाई बन्द करो। लेकिन ज़ारशाही जेनरल दुखोनिन यह मानने के लिये कब तैयार था? उस समय की घटना स्तालिन के शब्दों में सुनिये :

"...मुझे वह दिन याद है, जब लेनिन, किलेंको (भावी मुख्य सेनापति) और मैं पेत्रोग्राद में जनरल स्टाफ के हेडक्वार्टर में एक ख़ास तार पर दुखोनिन से बातें करने गये थे।...दुखोनिन और हेडक्वार्टर के स्टाफ ने लोक कमीसार-परिषद (मंत्रिमंडल) के आदेशों को मानने से साफ़ इन्कार कर दिया। सेना के कमांडर पूरी तौर से हेडक्वार्टर स्टाफ के हाथ में थे। और, सैनिक?—कोई नहीं जानता था कि सेना क्या कहेगी; क्योंकि वह ऐसे संगठनों के आधीन थी, जो बिलकुल सोवियत सरकार के विरुद्ध थे। हम जानते थे कि पेत्रोग्राद में युंकर विद्रोह करने के लिये तैयार हो रहे हैं और केरेन्स्की राजधानी पर आक्रमण करने के लिये प्रयाण कर रहा है।...मुझे याद है, किस तरह टेलीफोन के सामने एक क्षण तक चुप रहने के बाद, एकाएक लेनिन का चेहरा अत्यन्त असाधारण रूप से चमक उठा। देखने वाला समझ सकता था कि वह किसी निर्णय पर पहुंचे हैं। उन्होंने कहा 'हम बेतार के स्टेशन पर चलेंगे, वह हमारे मतलब को अच्छी तरह पूरा कर देगा। हम एक विशेष आदेश से जेनरल दुखोनिन को उसके पद से हटा कर, उसके स्थान पर साथी किलेंको को मुख्य सेनापति (कमांडर-इन-चीफ़) नियुक्त करेंगे, और अफ़सरों को छोड़ कर सीधे सिपाहियों से अपील करेंगे कि अपने जनरलों को गिरफ़्तार कर लें, सभी सैनिक कार्रवाइयों को बन्द कर दें, आस्ट्रिया और जर्मनी के सैनिकों के साथ मेल-जोल करें और सुलह-शांति के काम को आगे बढ़ाना अपने हाथों में ले लें।"

लेनिन परिणाम समझते थे और वही हुआ भी।

४. ब्रेस्त-लितोव्स्क संधि

पश्चिमी शक्तियां बोल्शेविकों की संधि की बातों को मानने के लिये तैयार नहीं थीं। वह चाहती थीं कि युद्ध तब तक चलता रहे, जब तक कि जर्मनी चारों खाने चित न हो जाये और उसके उपनिवेशों तथा कितने ही भागों को इंगलैंड और फ्रान्स अपने हाथों में न कर लें। इसीलिये, बोल्शेविकों को जर्मनी के साथ सुलह करके काम को आगे बढ़ाना था। जर्मनी के साथ सुलह की बात चलने लगी। जर्मन रूस की सैनिक अवस्था से फ़ायदा उठाना चाहते थे। वह कड़ी से कड़ी शर्तें रख रहे थे। बातचीत के लिये त्रॉत्स्की को भेजा गया था। जर्मनी की कड़ी शर्तों को देख कर त्रॉत्स्की ने लेनिन के पास एक तार भेजा। जवाब में, लेनिन ने १५ फरवरी, १९१८

को निम्न तार दिया : 'त्रॉत्स्की को जवाब। उसके प्रश्न का जवाब देने से पहले मुझे स्तालिन से सलाह लेनी होगी।' और, १८ फरवरी को लेनिन ने त्रॉत्स्की को तार दियाः 'स्तालिन अभी-अभी यहां पहुंचा। हम दोनों मिल कर स्थिति का अध्ययन करेंगे, फिर जितनी जल्दी हो सकेगा तुम्हारे पास संयुक्त उत्तर भेजेंगे। लेनिन।' जर्मनों की शर्तों को देख कर, त्रॉत्स्की इस संधि के ख़िलाफ़ था और हर गम्भीर बात में कोई भी निश्चय करने में असमर्थ, वह 'न शांति, न युद्ध' का मंत्र जप रहा था। लेकिन, लेनिन और स्तालिन को मालूम था कि वे इस समय ऐसा करने की स्थिति में नहीं थे। स्तालिन का समर्थन पाकर, लेनिन ने जर्मनों की सर्वथा अन्यायोचित शर्तों के साथ ब्रेस्त-लितोव्स्क संधि कर ली। क्रांति के बाद, घर के शत्रुओं और बाहर के सबल दुश्मनों-दोनों ही से लड़ना शक्ति से बाहर था, इसीलिये इस समय बाहर के शत्रु से अपने को बचाकर क्रांति की रक्षा करना सबसे पहला काम था। लेनिन जानते थे कि बाद में वे ऐसी स्थिति में होंगे, जब बाहरी शत्रुओं के मनसूबे विफल कर सकेंगे। इस संधि को लेकर, पार्टी के भीतर भयंकर झगड़ा पैदा हो गया। वामपक्षी उसका जबर्दस्त विरोध कर रहे थे। २३ फरवरी, १९१८ को केन्द्रीय कमिटी की मीटिंग में वामपक्षीयों को मुँहतोड़ जवाब देते हुए, लेनिन ने कहा था :

> "कुछ विश्राम मिलना चाहिये, नहीं तो. क्रांति का अन्त हो जायेगा। हमारे सामने प्रश्न है—या तो हमारे देश में क्रांति पराजित होती है, और युरोप में भी क्रांति के मार्ग में बाधायें होती हैं, नहीं तो हमें कुछ समय मिले जिसमें हम अपनी स्थिति को मज़बूत कर सकें।"

स्तालिन, स्वेर्दलोफ़ और दूसरे बोल्शेविकों के साथ, लेनिन अपनी बात पर दृढ़ रहे और कमिटी के बहुमत ने उनकी बात को स्वीकार किया। लेनिन ने इस संधि को 'शोकजनक संधि' कहा था और अगले दिन लिखा था : "संधि की शर्तें असह्य हैं। तो भी, इतिहास का निर्णय दूसरा ही होगा।...आओ, हम काम में लगें, संगठन करें, संगठन करें और संगठन करें; चाहे कितनी ही परीक्षाओं में पड़ना पड़े, भविष्य हमारा है।"

५. *उक्रइनी रादा*

उक्रइन में, वहां के राष्ट्रवादियों ने इस नाम से अपनी सरकार स्थापित कर ली थी, जिसमें विदेशी सेनाओं, मेनशेविकों और समाजवादी क्रांतिकारियों ने उनकी सहायता की थी। इसका फल सोवियत सरकार और उक्रइनी रादा के बीच संघर्ष के रूप में हुआ था। ऐसे पेचीदा काम के लिये, लेनिन की नज़र स्तालिन को छोड़ कर और किस पर पड़ती? स्तालिन ही भेजे गये। वहां उन्होंने रादा के राजनीतिक रूप को देखा—वह दावपेंच चलाकर सर्वहारों और किसानों को अधिकार से वंचित

कर सामन्तों-पूंजीपतियों का शोषण जारी रखना चाहते थे। अक्तूबर-क्रांति ने मजदूरों और किसानों को भी सजग कर दिया था। इस प्रकार, वहां रादा और सर्वहारा—दो शक्तियों का मुक़ाबला था। स्तालिन की नीति के आगे रादा कैसे ठहरता? उन्होंने उक्रइन की जनता का नेतृत्व किया और रादा को मुंह की खानी पड़ी। बेलोरुसिया में भी, सोवियत-प्रभाव को बढ़ाने में स्तालिन का जबर्दस्त हाथ था। जातियों की समस्या और उसका हल स्तालिन का अपना विषय था, जिस पर वह पिछले बारह वर्षों से मनन कर रहे थे। स्वयं भी एशियाई जाति के होने के कारण, वह उनकी मनोवृत्ति से पूरी तौर से वाक़िफ़ थे। रूसियों की तरह, दूसरे लोगों में भी सर्वहारा, ग़रीब किसान और शोषक सामन्त, पूंजीपति दो वर्ग थे। जातीय शक्ति को क्रांति के विरुद्ध न जाने देने के लिये, दोनों वर्गों के इस रूप को सर्वहारा के सामने स्पष्टता से रखना जरूरी था। कोई भी स्तालिन को कल की प्रभु जाति का, रूसी कह कर सन्देह नहीं कर सकता था।

काकेशस में वर्षों क्रांति का काम करते हुये, स्तालिन ने अपने प्रति रूस की भिन्न-भिन्न जातियों का पूरा विश्वास पैदा कर लिया था। स्तालिन तातार-बाश्किर गणराज्य की संविधान कांग्रेस के अध्यक्ष हुये थे। यह भी स्तालिन के प्रति ग़ैर-रूसी जातियों के विश्वास को प्रकट करता था। उन्होंने इस कांग्रेस में अध्यक्ष-पद से जो भाषण दिया था, वह १० मई, १९१८ के 'प्राव्दा' में छपा था। उन्होंने इस भाषण द्वारा तातार-बाश्किर के मुसलमानों से ही नहीं, बल्कि पूर्व की सभी मुसलमान जातियों से अपील की थी। आगे हम देखते हैं कि पूर्व की इन मुसलमान जातियों ने युगों के अत्याचारों से मुक्ति दिलाने वाले संघर्षों में बहुत महत्वपूर्ण भाग लिया है। काकेशस के ग़रीबों को मेन्शेविकों, दशनकों (अर्मनी राष्ट्रवादियों) और मोसावातियों (काकेशीय मुस्लिम राष्ट्रवादियों) के फन्दे से निकालने में, स्तालिन का बहुत बड़ा हाथ था। एशियाई जातियों में भी, सोवियत शासन ने इस तरह आसानी से जो विजय-यात्रा की, उसमें स्तालिन के प्रयत्नों और दूरदर्शिता ने भारी काम किया है।

रूस में क्रांति हो जाने के बाद, यह जरूरी था कि विश्व के सर्वहारा वर्ग की सहानुभूति को भी एक संगठित रूप दिया जाय, जिससे और देशों में भी क्रांति होने में आसानी हो। केन्द्रीय कमिटी के आदेश के अनुसार, जनवरी सन् १९१८ में युरोप और अमरीका की समाजवादी पार्टियों के क्रांतिकारी तत्वों के प्रतिनिधियों की एक कान्फ्रेंस बुलाई गई। यह कान्फ्रेंस तृतीय कम्युनिस्ट इन्टर्नेशनल की स्थापना में बड़ी सहायक हुई।

६. *आहार समस्या (सन् १९१८)*

जिस समय बोल्शेविकों ने राज्य-शासन अपने हाथों में लिया था, उस समय पेत्रोग्राद (आधुनिक लेनिनग्राद)—राजधानी में केवल दो दिन का खाद्य मौजूद

था। स्तालिन ने सभी गोदामों और अनाज के ढेरों की खोज-पड़ताल करके, किसी तरह दस दिन की रोटी का प्रबन्ध किया। रयाबुशिन्स्की और दूसरे क्रांति-विरोधियों की यह धमकी केवल बन्दरघुड़की नहीं थी कि वे अकाल के हाथों क्रांति का गला घुटवा देंगे। यदि लड़ाई के कारण चारों ओर फैली हुई भुखमरी ने क्रांतिकारियों की शक्ति को बढ़ाया था, तो भुखमरी से बचाने के लिये कोई रास्ता न निकालने पर क्रांति को भी खतरा पैदा हो सकता था। आहार की समस्या का हल त्रॉत्स्की जैसे हवाई नेता क्या कर सकते थे? इसलिये, इस समस्या का भार सौंपते हुये, २९ मई, १९१८ को लोक-कमीसार-परिषद ने निश्चय किया :

"लोक-कमीसार-परिषद (मंत्रिमंडल) लोक-कमीसार-परिषद के सदस्य, लोक कमीसार—योसेफ़ विसारियोनोविच स्तालिन को दक्षिणी रूस में खाद्य-विभाग का डाइरेक्टर जनरल (प्रधान संचालक) नियुक्त करती है।"

लेकिन, रोटी प्राप्त करना आसान नहीं था। देश में अन्न के भंडार–दक्षिणी रूस–को सफ़ेद गारदों (क्रांति-विरोधियों) ने अलग काट दिया था। इस काम में हाथ लगाते ही, स्तालिन ने समझ लिया कि वह हथियार के बल पर ही अन्न पा सकते हैं। मंत्रिमंडल के निश्चय से पहले ही, स्तालिन ने लेनिन की राय से दक्षिण की ओर प्रस्थान कर दिया था। स्तालिन ने लेनिन से बात करते हुये, वहां से टेलीफोन पर कहा था :

"उत्तरी काकेशस में अनाज का बहुत भारी जखीरा मौजूद है। लेकिन, रेलवे लाइनों के कट जाने से उसे उत्तर की ओर नहीं भेजा जा सकता। जब तक कि लाइन को ठीक नहीं कर दिया जाता, तब तक अनाज के यातायात की बात ही नहीं उठ सकती। समारा और सरातोफ़ के प्रदेशों में अभियान भेजा गया है। लेकिन, अगले कुछ दिनों तक अनाज भेजना सम्भव नहीं होगा। हम आशा करते हैं कि क़रीब दस दिनों में रेलवे लाइन ठीक हो जायेगी। सारी शक्ति लगाकर डटे रहिये। मछली और मांस का राशन चलवाइये। हम उसे खूब अच्छे परिमाण में भेज सकते हैं। एक सप्ताह के भीतर अवस्था अनुकूल हो जायेगी।"

स्तालिन ने इस नये क्षेत्र में कितनी जल्दी सफलता पाई, यह चन्द दिनों बाद ही लेनिन के पास भेजे हुये उनके इस तार से मालूम होता है :

"इस रास्ते से आपको १६० गाड़ी अनाज और ६४ गाड़ी मछली पहुंच जायेगी। बाकी चीज़ें सरातोफ़ के रास्ते से भेजी जायेंगी।"

७. ज़ारित्सीन

स्तालिन को दक्षिण में अन्न बटोर कर भेजने के लिये रवाना किया गया था। स्तालिन ने देखा कि अन्न पाने का रास्ता भी लड़ाई के द्वारा ही है। उस समय,

दोन-क्षेत्र में क्रांति-विरोधी बड़े ज़ोर-शोर से काम कर रहे थे, जिनके कारण वोल्गा के किनारे का नगर ज़ारित्सीन (वर्तमान स्तालिनग्राद) एक सैनिक महत्व का स्थान बन चुका था। जमींदारों को हटा कर, जमीन पर किसानों का अधिकार स्थापित किया गया। इसे कुलक (धनी किसान) बर्दाश्त करने के लिये तैयार नहीं थे। सर्वहारों के ये क्रूर शत्रु हर जगह सोवियत सरकार के ख़िलाफ़ विद्रोह करवा रहे थे। अन्न का रास्ता रोक कर, वह सचमुच ही क्रांति का गला घोंटना चाहते थे।

क्रांति और गृह-युद्ध के समय, हम अनेक बार देखेंगे कि लेनिन सबसे ख़तरनाक मोर्चे और दुष्कर कार्य पर स्तालिन ही को भेजते थे। वह जानते थे कि वही ऐसी कठिनाइयों में रास्ता ढूंढ़ सकते हैं। स्तालिन को आहार के संचय के लिये उधर भेज कर, मंत्रिमंडल (द्वितीय महायुद्ध के बाद तक सोवियत सरकार के मंत्रिमंडल को लोक-कमीसार-परिषद् कहा जाता था, जिसे हम आसानी से समझने के लिये मंत्रिमंडल कहेंगे। मंत्रियों को उस समय लोक कमीसार के नाम से पुकारा जाता था।) ने उसी समय 'सभी मेहनतकश लोगों को' के नाम से एक घोषणा निकाल कर, कहा :

> "साइबेरियन रेलवे के कुछ केन्द्रों पर क्रांति-विरोधियों का अधिकार हो जाने से कुछ समय के लिये भूखों मरते हुये देश के लिये अन्न की प्राप्ति कठिन हो जायेगी। लेकिन, रूसी, फ्रैंच, अंग्रेज और चैकोस्लोवाकी साम्राज्यवादी क्रांति को भूखों मार कर मजबूर करने में, नत-मस्तक करने में सफल नहीं हो सकेंगे। भूखे उत्तर की सहायता के लिये, दक्षिण–पूर्व आगे आ रहा है। लोक कमीसार स्तालिन इस समय ज़ारित्सीन में हैं, जहां वह दोन तथा कूबान के इलाक़ों से खाद्य-संचय के काम का संचालन कर रहे हैं। वह तार द्वारा हमें सूचित कर रहे हैं कि वहां पर अन्न का भारी जख़ीरा है, जिसे वह एक सप्ताह के भीतर ही उत्तर की ओर भेजने की आशा करते हैं।"

नई सरकार में सेना-मंत्री का पद त्रॉत्स्की को दिया गया था। त्रॉत्स्की कभी भी लेनिन का विश्वासपात्र नहीं रहा था। क्रांति के पहले, बहुत वर्षों तक तो वह लेनिन-विरोधियों का अगुवा था। पर, क्रांति के पहले दिनों में यह जरूरी था कि जितनों को भी क्रांति के विरुद्ध न जाने दिया जाय, उतना ही अच्छा हो। लेकिन, अब उसके कारण सैनिक मोर्चों में तत्परता और अनुशासन की कमी दिखाई पड़ती थी। ज़ारित्सीन वोल्गा के किनारे ऐसे मुक़ाम पर था, जहां से दक्षिण में काकेशस और उक्रइन की सैनिक परिस्थिति को भी देखा जा सकता था और साइबेरिया के क्रांति-विरोधी क्या कर रहे हैं इसका पता भी वहीं से पाया जा सकता था। स्तालिन को अन्न जमा करने के लिये भेजा गया था, लेकिन उनके अपने शब्दों में ही : "मैं युद्ध–विभाग के गन्दे तबेलों को साफ़ करने का विशेषज्ञ बन गया।" सचमुच ही, त्रॉत्स्की ने

युद्धविभाग को गन्दा तबेला बना रखा था। स्तालिन को वहां दो वर्ष रह कर 'तबेले को साफ़ करके, शत्रुओं के मनसूबों को चूर-चूर करना पड़ा। इसमें उन्हें बोरोशिलोफ़ और मीनिन जैसे योग्य सहायक मिले थे। देश में हर जगह क्रांति को खतरा पैदा हो गया था। मॉस्को में यदि समाजवादी क्रांतिकारी विद्रोह करने पर उतारू थे, तो पश्चिम में मुरावियेफ़ शत्रुओं के सामने क्रांति के पक्ष को कमजोर बना रहा था। युद्ध के समय बन्दी बना कर साइबेरिया भेजे गये, चैक क्रांति-विरोधी उराल प्रदेश में सोवियत के खिलाफ़ अपनी शक्ति मज़बूत कर रहे थे। बाकू के तेल-क्षेत्र को देख कर, अंग्रेजों के मुंह में पानी क्यों न भर आता? इसलिये, वह अपने दाव-पेंच चला रहे थे। यह क्रांति का सौभाग्य था कि स्तालिन ऐसे ही समय में ज़ारित्सीन पहुंचे। वह जानते थे कि दोन प्रदेश के विद्रोह की सफलता और ज़ारित्सीन के हाथ से निकल जाने पर, सारे उत्तरी काकेशस के गेहूं का प्रदेश हाथ से निकल जायगा। ज़ारित्सीन में रहते समय, स्तालिन का लेनिन के साथ लगातार पत्र-व्यवहार और तार द्वारा विचार-विमर्ष होता रहता था। ज़ारित्सीन में पहुंचने के साथ ही, स्तालिन के शब्दों में :

"मैं उन सभी को धमकाता और बुरा-भला कहता हूं, जिनको इसकी जरूरत है। साथी लेनिन, आप निश्चिंत रहें, मैं किसी को भी दम नहीं लेने दूंगा, न खुद दम लूंगा। चाहे कुछ भी हो, हम आपके पास गेहूं भेजेंगे। अगर हमारे सैनिक विशेषज्ञ-जिनके—दिमागों में गोबर भरा हुआ है—सोये न रहते तो हमारी लाइन कभी न कटी होती; और अगर हम उसे फिर से ठीक कर लेते हैं, तो यह उनकी सहायता से नहीं, बल्कि उनकी कार्रवाइयों के बावजूद ही।"

स्तालिन ने इस सारे प्रदेश को भयंकर अस्त–व्यस्त रूप में पाया। कम्युनिस्ट मज़दूर सभा ही नहीं, सैनिक संगठन भी बिलकुल टूटे–फूटे थे। ऊपर से क्रांति–विरोधी कसाकों के साथ टक्कर का भारी डर पैदा हो गया था, जिन्हें उक्रइन पर दखल जमाये बैठी जर्मन सेना पूरी मदद दे रही थी। एक के बाद एक, ज़ारित्सीन के सभी इलाकों को सफ़ेद गारदों ने अपने अधिकार में कर लिया था; मॉस्को तथा पेत्रोग्राद की ओर भेजे जाने वाले अन्न के यातायात को बिलकुल रोक को दिया था। अब स्वयं ज़ारित्सीन भी खतरे में पड़ गया था।

ऐसी अवस्था में, स्तालिन के लिये सिवाय इसके और कोई चारा नहीं था कि सैनिक कमांड को भी अपने हाथ में ले लें। ११ जुलाई के तार में, उन्होंने लेनिन को लिखा :

"अवस्था इसलिये और भीषण हो गई है कि उत्तरी काकेशस का हेडक्वार्टर–स्टाफ़ क्रांति-विरोधियों से लड़ने में बिलकुल असमर्थ है। जनरल हेडक्वार्टर

के आधीन रहना तथा अभियान की योजनायें तैयार करना ही अपना काम समझ कर, और बातों से बिलकुल अलग-थलग, वह अपने को केवल तमाशा देखने वाले ही समझते हैं। और इसीलिये, कार्रवाइयों में कुछ भी दिलचस्पी नहीं लेते।"

स्तालिन ने बीमारी पहचान ली, लेकिन वह इतने ही से चुप रहने वाले नहीं थे। उन्होंने आवश्यक कार्रवाई भी शुरू की :

"जब मैं देख रहा हूं कि उत्तरी काकेशस के मोर्चे की रसद का रास्ता कट गया है और सारे उत्तरी रूस का सम्बन्ध अपने गेहूं-क्षेत्र से टूट चुका है, तो मैं कैसे चुपचाप रह सकता हूं? मैं इस कमज़ोरी को, और दूसरी भी कितनी ही स्थानीय कमज़ोरियों को दूर करूँगा। मैं इसके लिये ठीक उपाय कर रहा हूं। हमारे काम को बिगाड़ने वाली रेजीमेन्ट तथा स्टाफ़ के अफ़सरों को अगर हटाना पड़ेगा, तो भी किसी तरह की क़ायदे आदि की कठिनाइयों की परवाह न कर, ज़रूरत पड़ने पर उनकी उपेक्षा भी करते हुये, इस काम को करूँगा। इसके लिये स्वाभावतः, ऊपर की सारी ज़िम्मेवारी मैं अपने ही ऊपर लेता हूं।"

सारे लाल संगठन को ठीक से अपने पैरों पर खड़ा करने के लिये, मॉस्को से जवाब आया : "फिर से व्यवस्था क़ायम करो। सैनिक टुकड़ियों को बाक़ायदे सेना के रूप में बनाओ। एक ठीक कमांड की नियुक्ति करो। जो आज्ञा-पालन के लिये तैयार नहीं हैं, उन्हें हटा दो।"—यह आदेश क्रांतिकारी युद्ध-परिषद की ओर से आया था, जिसमें लिखा हुआ था : 'यह तार लेनिन की सम्मति से भेजा जा रहा है।'

जारित्सीन में भयंकर स्थिति थी। वहां व्यवस्था क़ायम करना असम्भव सा मालूम होता था : "लेकिन स्तालिन झूठे ही फ़ौलादी नहीं कहे जाते थे। उन्होंने उसी अव्यवस्था में, छूमंतर की तरह, सुव्यवस्था स्थापित की। एक क्रांतिकारी युद्ध-परिषद क़ायम हो गई, जिसने उसी वक्त बाक़ायदा एक सेना का संगठन कर डाला। जल्दी-जल्दी सैनिक कोरें बनायी गईं, और उनको डिवीजनों, ब्रिगेडों और रेजीमेंटों में विभक्त कर दिया गया। सैनिक स्टाफ़, रसद-व्यवस्था और मोर्चे से पीछे स्तालिन के हाथों के सैनिक संगठनों से सभी क्रांति-विरोधी आदमियों को निकाल बाहर किया गया। वही बात सोवियत तथा कम्युनिस्ट पार्टी के संगठनों की हुई। वहां पक्के बोल्शेविकों की कमी नहीं थी, जब ऊपर से लादे गये अविश्वसनीय आदमियों को हटा कर उन्हें रखा गया, तो क्रांति एक दूसरे ही रूप में दिखलाई देने लगी। दोन का क्षेत्र जारित्सीन से बहुत दूर नहीं है, जहां पर क्रांति-विरोधी अपने को

बड़ा शक्तिशाली समझते थे; लेकिन स्तालिन ने उन्हीं की नाक के नीचे एक ज़बर्दस्त मोर्चा क़ायम कर लिया।

पार्टी और सैनिक संगठनों में ही विश्वासघाती नहीं घुस गये थे, बल्कि सारे ज़ारित्सीन नगर में क्रांति-विरोधी अपना जाल बिछाये हुये थे। समाजवादी क्रांतिकारी, आतंकवादी और राजवादी—सभी मिलकर क्रांति को विफल करने के लिये तैयार थे। लेकिन, स्तालिन ने बहुत मज़बूत हाथों से झाड़ू फेरनी शुरू की। मध्यवर्गीय शरणार्थियों का समूह यहां आकर डेरा डाले हुये था, और वह खुल कर सफ़ेद अफ़सरों के साथ मिले हुये थे। फ़ुटपाथों, सड़कों, सार्वजनिक उद्यानों और विनोद-शालाओं में, जहां भी देखो, वहीं ज़ारित्सीन खुले षडयंत्र के केन्द्र का रूप धारण किये हुये था। स्तालिन जानते थे कि यह सब बाहरी दिखावा है, और इसको तभी तक शक्ति प्राप्त है, जब तक कि शासन का सूत्र अयोग्य कर्मचारियों के हाथों में है। स्तालिन ने वहां बात की बात में एक नया वातावरण पैदा कर दिया। स्तालिन के संचालन में, स्थानीय क्रांतिकारी युद्ध-परिषद ने एक विशेष कार्यकारिणी कमिटी क़ायम करके, उस पर इन आदमियों का ध्यान से परीक्षण करने का काम सौंपा। इसने शत्रुओं की हर एक ख़तरनाक योजना और दुरभिसंधि का पता लगाया। नासोविच सैनिक कार्रवाई का मुख्य अफ़सर था, जो विरोधी बनकर क्रास्नोफ़ की सफ़ेद सेना में चला गया था। उसने बाद में ज़ारित्सीन की स्थिति का विवरण एक सफ़ेद अख़बार 'दोन-संघर्ष' (३ फरवरी, १९१९) में दिया था। उसने इस बात को क़बूल किया कि स्तालिन किसी काम को हाथ में लेकर अधूरा नहीं छोड़ते। उन्होंने सैनिक और असैनिक—सारे शासन-प्रबन्ध को अपने हाथ में लेकर, क्रांति के शत्रुओं के सारे प्रयत्नों और चालों को एक-एक करके व्यर्थ कर दिया। उस समय स्थानीय क्रांति-विरोधी संगठन बहुत शक्तिशाली हो गये थे। मॉस्को से आये हुये पैसे की सहायता से, वह सैनिक दख़लंदाज़ी की तैयारी करते और दोन के कसाकों की मदद से, ज़ारित्सीन को बोल्शेविकों से मुक्त करना चाहते थे। उनके दुर्भाग्य से इन संगठनों के मुखिया—जिनमें इंजीनियर अलेक्सियेफ़ और उसके दो पुत्र भी थे—को वास्तविक स्थिति का बहुत कम पता था। उनके एक ग़लत क़दम उठाने के कारण संगठन का पता लग गया। अलेक्सियेफ़ अपने दो पुत्रों तथा काफ़ी संख्या में सहयोगियों के साथ गोली से मार दिया गया।

जुलाई सन् १९१८ में मॉस्को में विद्रोह करके, वाम पक्षीय समाजवादी क्रांतिकारी अब ज़ारित्सीन पर भी आक्रमण करने वाले थे। लेनिन को भी इस ख़तरे का पता लग गया था, जिसके लिये स्तालिन को टेलीफ़ोन करने पर, उन्हें जवाब मिला: "जहां तक इन ख़ब्तियों का सवाल है, आपको निश्चिंत रहना चाहिये। हम दृढ़ता के साथ तैयार हैं। शत्रुओं के साथ, हम शत्रुओं जैसा ही बर्ताव करेंगे।"

स्तालिन ने लोगों में एक नई स्फ़ूर्ति, एक नया उत्साह पैदा कर दिया। सैनिक और राजनीतिक नेता तथा पलटन के साधारण सिपाही भी अनुभव करने लगे कि

एक सच्चे और मज़बूत नेता से काम पड़ा है, जो उन लोगों के साथ ज़रा भी दया दिखाने के लिये तैयार नहीं है जो फिर से पुरानी दासता में ले जाना चाहते हैं। नसोविच ने त्रॉत्स्की की बौखलाहट को भी अपने उसी लेख में बतलाते हुये कहा है : "इतनी मेहनत से तैयार किये हुये सैनिक कमांड को नष्ट होते देख कर, त्रॉत्स्की घबड़ा गया और उसने तार भेज कर कहा कि हेडक्वार्टर-स्टाफ़ और कमीसारों को फिर से उनके पदों पर स्थापित करके उन्हें अपना काम करने देना चाहिये। स्तालिन ने उस तार पर लिख दिया : 'इसकी ओर कोई ध्यान नहीं देना चाहिये।' और, उस तार की ओर बिलकुल ध्यान नहीं दिया गया। ज़ारित्सीन में सारा तोपखाना-कमांड और हेडक्वार्टर-स्टाफ़ का भी एक भाग एक स्टीमर के ऊपर वैसे ही बेकार बैठा रहा।

स्तालिन किसी काम को आधे मन से करना नहीं जानते थे। वह नया संगठन करने में ही अपने काम को समाप्त नहीं समझते थे। ज़ारित्सीन के चार सौ मील के मोर्चे पर, उन्होंने स्वयं जगह-जगह जाकर बोल्शेविक-शासन को मज़बूत किया। स्तालिन ने कभी सेना में काम नहीं किया था। युद्ध ने ज़बर्दस्ती भरती होने का एक मौका दिया था, लेकिन ज़ारशाही डर गई थी। अब यहां ज़ारित्सीन में आकर, उन्होंने पहले-पहल अपनी सैनिक प्रतिभा का परिचय दिया। उस समय भी, नज़दीक से जानकारी रखने वाले नहीं कह सकते थे कि स्तालिन में इस काम के करने की कोई अपनी मौलिकता नहीं है। दूसरे महायुद्ध में तो दोस्त और दुश्मन—दोनों को ही मानना पड़ा है कि सैनिक दाव-पेंच में भी यह पुरुष उतना ही निष्णात था, जितना राजनीतिक और अर्थनीतिक क्षेत्रों में। कगानोविच ने इस बारे में लिखा है :

> "मुझे जैसे वह बात कल की ही मालूम होती है। सन् १९१८ के आरम्भ में, क्रास्नोफ़ की कसाक सेना ने ज़ारित्सीन पर आक्रमण किया और उसे चारों ओर से घेर कर, लाल सेना को वोल्गा पर ढकेलने की कोशिश की। एक कम्युनिस्ट डिवीज़न के आधीन, दौनेत्स्क के कमकरों से बनी हुई इस लाल सेना ने कई दिनों तक, पूरी तौर से शिक्षित और संगठित कसाकों के आक्रमण को अद्‌भुत दृढ़ता के साथ रोका, वह सचमुच ही भयंकर दिन थे। तुम उस समय स्तालिन को देख सकते थे। वह हमेशा की तरह शान्त और अपने विचारों में लीन रहते थे। वस्तुतः, वह बिलकुल नींद न लेते थे। वह अपने अनथक काम को युद्ध-पंक्ति और सैनिक हेडक्वार्टर में बांटे हुये थे। मोर्चे पर हालत प्रायः निराशाजनक थी। फिज़खलोरोफ़, मामोन्तोफ़ और दूसरे अफ़सरों के नेतृत्व में, क्रास्नोफ़ की सेनायें हमारी थकी-मांदी पलटनों का भीषण संहार कर रहीं थीं। शत्रु का व्यूह अर्धगोलाकार था, जिसके दोनों छोर वोल्गा पर थे। वह दिन-प्रतिदिन और अधिक भूमि घेरता जा रहा था, निकलने का कोई रास्ता नहीं

था। लेकिन, स्तालिन ने इसकी चिंता नहीं की। उनके दिमाग में सिर्फ़ एक ही विचार था—हमें जीतना है। स्तालिन की यह अदम्य इच्छाशक्ति ही थी, जिसने उनके नज़दीकी सहायकों में जान फूंक दी। यद्यपि हम ऐसी स्थिति में थे, जहां बचाव का कोई रास्ता नहीं रह गया था, तो भी किसी को एक क्षण के लिये भी विजय में सन्देह नहीं था; और हम विजयी हुये! पराजित शत्रु-सेना को दोन नदी के उस पार भगा दिया गया।"

ज़ारित्सीन के वे दिन कितने भयंकर थे, कितने निराशापूर्ण थे, और स्तालिन ने उनमें किस तरह सफलता प्राप्त की, यह बतलाता है कि बाद में, स्तालिनग्राद के नाम से मशहूर इसी ज़ारित्सीन में हिटलर की विजयोन्मत्त सेना को क्यों भयंकर हार खानी पड़ी।

ज़ारित्सीन को बचा कर और क्रांति-विरोधियों की शक्ति को छिन्न-भिन्न करके, स्तालिन ने सोवियत जनता को अकाल और भुखमरी से बचा लिया, साथ ही वहां सैनिक महत्व का एक ऐसा ज़बर्दस्त गढ़ तैयार किया, जिसने उत्तरी काकेशस, दक्षिणी उक्रइन और साइबेरिया से आने वाले क्रांति-विरोधियों के तूफ़ान को बेकार बना दिया।

स्तालिन ने जिस समय ज़ारित्सीन में यह सफलता प्राप्त की थी, उसी समय उक्रइन में जर्मनों ने भयंकर स्थिति पैदा कर दी थी।

८. *उक्रइनी मोर्चा*

ज़ारित्सीन के विजेता को अब केन्द्रीय कमिटी ने उक्रइन के मोर्चे पर भेजा। उनके साथ वोरोशिलोफ़ आदि, बारह पार्टी कार्यकर्त्ता भेजे गये। नवम्बर के अन्त में, क्रांति की सेनायें पेतलुरा और जर्मनों के विरुद्ध आगे बढ़ीं और उन्होंने उक्रइन के महान् नगर रकोफ़ को मुक्त कर लिया। उक्रइन ही नहीं, पश्चिम में मिन्स्क को भी लाल सैनिकों ने दुश्मनों के हाथ से आज़ाद किया।

३० नवम्बर, १९१८ को लेनिन की अध्यक्षता में कमकर-किसान-परिषद क़ायम की गई, जिसका काम था—मोर्चे और युद्ध-पंक्तियों के पीछे भी प्रतिरक्षा के सारे काम का संचालन करना, तथा उद्योग-धंधों, यातायात-व्यवस्था या देश के सभी सम्पत्ति-स्रोतों को इसी काम में लगाना।

९. *गृह-युद्ध*

बोल्शेविक अच्छी तरह से जानते थे कि गृह-युद्ध को ख़तम किये बिना समाजवादी राज्य ढंग से क़ायम नहीं किया जा सकता। जिन जोंकों को उन्होंने पदच्युत किया था; पीढ़ियों और सहस्राब्दियों से जो 'परमुंडे फलाहार' करते थे, दुख और चिन्ता

के दिन नहीं देखे थे, वह अपने पैरों के नीचे से धरती खिसती देख कर शान्त नहीं बैठे रह सकते थे। सामंत और पूंजीपति अपनी पशुता और बर्बरता को चरम रूप में दिखाये बिना, ऐसे ही हथियार नहीं डाल देंगे। इसलिये, रूस के साम्राज्यवादी युद्ध से छुट्टी पाने का मतलब यह नहीं था कि वह गृह-युद्ध से बच जायेगा। पूंजीवादी राष्ट्र इसीलिये तो उस महायुद्ध को चला रहे थे कि विश्व में अपनी-अपनी शक्ति को मजबूत करते हुये, देशों को परतंत्र बनाते हुये, जन साधारण का शोषण और दोहन करें। समाजवाद चुपके से दुनिया के छठे हिस्से को अपने हाथ में कर ले, यह भला वह कैसे पसन्द कर सकते थे? जर्मनी से छुट्टी पाते ही, उनका ध्यान इस तरफ़ गया। इंगलैंड और फ्रांस के साम्राज्यवादियों ने चैकोस्लोवाकी सेनाओं को बड़े यत्नपूर्वक विद्रोह के लिये उकसाया; रूसी क्रांति-विरोधी—कादतों, मेनशेविकों और समाजवादी क्रांतिकारियों—की पीठ पर हाथ रखा। सन् १९१८ के पूर्वार्ध में ही, दो निश्चित शक्तियां सोवियत शासन को उठा फेंकने के लिये तैयार हो रहीं थीं। वह थीं—विदेशी साम्राज्यवादी मित्र शक्तियां और घर में क्रांति-विरोधी। सोवियत के विरुद्ध संघर्ष शुरू कर लेने पर, यह दोनों विरोधी शक्तियाँ एक होने के लिये मजबूर हुईं। यह एकता सन् १९१८ के पूर्वार्ध में स्थापित हो गई थी। इस प्रकार, जर्मनी से फुर्सत पाने पर, क्रांति के बाद के कुछ महीनों का जो विश्राम मिला था, उसे साम्राज्यवादियों ने खतम कर दिया और गृह-युद्ध शुरू हो गया। रूस के कमकरों-किसानों का यह युद्ध विदेशी-स्वदेशी शत्रुओं के विरुद्ध हुआ। शत्रुओं ने पांच मुख्य मोर्चे स्थापित किये थे, जहां से वह रूस के भिन्न-भिन्न भागों पर भयंकर प्रहार कर रहे थे। ये मोर्चे थे: (१) पूर्वी मोर्चा, जिसका नेता कोलचक था; (२) दक्षिणी (काकेशस) मोर्चा, जिसका नेता देनीकिन था; (३) उत्तर-पश्चिमी मोर्चा, जिसका नेतृत्व रोदजेंको और यूदेनिच के हाथों में था; (४) पोल-मोर्चा और (५) रेंगल-मोर्चा। गृह-युद्ध के समय, सोवियत सरकार की प्रायः सारी शक्ति इन भीषण शत्रुओं का मुक़ाबला करने में लगी हुई थी। कम्युनिस्ट पार्टी और तरुण कम्युनिस्ट लीग के ५० प्रतिशत सदस्य हथियार लेकर लड़ रहे थे, और शत-प्रतिशत को शत्रुओं से लड़ने के लिये सेना में भरती होना पड़ा था। इस युद्ध में स्तालिन ने क्या पार्ट अदा किया, इसे वर्तमान सोवियत-राष्ट्रपति बोरशिलोफ़ के शब्दों में सुनिये:

"सन् १९१८ से १९२० के समय में, सम्भवतः साथी स्तालिन अकेले ही ऐसे आदमी थे, जिसे केन्द्रीय कमिटी एक मोर्चे से दूसरे मोर्चे पर भेजती रही। क्रांति के लिये जिस जगह सबसे ज़्यादा खतरा होता, वह उन्हें ही भेजती थी।"

४ अगस्त, १९१८ में जारित्सीन से स्तालिन ने लेनिन को लिखा था: "अब फिर उन्हीं बातों को आरम्भ करना पड़ा है। हमने रसद का इन्तज़ाम किया, सैनिक-कार्रवाई के विभाग को क़ायम किया, मोर्चे के सभी भागों के साथ संचार-

सम्बन्ध स्थापित किया, पुरानी व्यवस्था—जो कि अपराधपूर्ण व्यवस्था थी—को हटाया, और यह सब करने के बाद ही, तिखोरेत्स्क के दक्षिण तथा कलाच पर आक्रमण किया है।"

१०. पेर्म का मोर्चा

वस्तुतः, क्रांति अभी तक अपना कोई सुव्यवस्थित सैनिक संगठन नहीं कर सकी थी। पुरानी सेना ज़ारशाही के खतम होने के साथ ही विलीन होगई थी। नई सेना का अभी-अभी निर्माण किया गया था। सेना-संचालन का काम त्रॉत्स्की जैसे को दिया गया था, जिसे न सेना का ज्ञान था, और न जिसमें सैनिक संगठन की प्रतिभा ही थी। इस पद पर त्रॉत्स्की का होना सैनिक संगठन के लिये एक बहुत भारी बाधा थी; हम यह ज़ारित्सीन के पहले संघर्ष में ही देख चुके हैं। जहां तक सैनिकों की संख्या का सवाल था, कोई कमी नहीं थी। गोरिल्ला ढंग की लड़ाई सफलतापूर्वक की जा सकती थी। लेकिन, क़ायदे-नियम की पाबंद, एक संगठित और अनुशासित सेना तैयार करने में बड़ी बधायें थीं। क्रांति की रक्षा के लिये, ऐसी सेना का निर्माण करना अत्यंत ज़रूरी था। यह सौभाग्य की बात थी कि पार्टी हर एक खतरनाक मोर्चे पर स्तालिन को ही भेजती थी। सन् १९१८ के अन्त में, पूर्वी मोर्चे की अवस्था बड़ी भयंकर हो गई, कोलचक ने पेर्म पर अधिकार कर लिया था। उत्तर की ओर से पश्चिमी साम्राज्यवादियों की सेनायें बढ़ रहीं थीं। कोलचक ने चाहा था कि उनसे सम्बन्ध स्थापित करके, नई सरकार को खतरे में डाल दे। बोल्शेविक तृतीय सेना हार कर, भारी नुक़सान के साथ पीछे हट रही थी, जिसका एक बड़ा कारण था—कमान्डरों की अयोग्यता। केन्द्रीय कमिटी ने इस हार के कारण की जांच करने के लिये, स्तालिन और ज़ेर्ज़िन्स्की की एक जांच-समिति 'पेर्म के आत्म-समर्पण और उराल के मोर्चे पर हाल की पराजय के कारणों की पूरी तौर से जांच करने के लिये, और सभी परिस्थितियों का पता लगाने के लिये' नियुक्त की। नवम्बर के अन्त में, इस मोर्चे पर स्थिति सचमुच ही बड़ी निराशापूर्ण हो गयी थी। न सेना में अनुशासन था, न उसके राशन का कोई प्रबन्ध था। २९ वीं डिवीज़न को पांच दिनों तक एक रोटी का टुकड़ा भी नहीं मिल पाया था; इस पर हिमबिन्दु से भी ३५ डिग्री नीचे की भयंकर सर्दी पड़ रही थी। इस ढाई सौ मील लम्बे मोर्चे के सारे रास्ते दुर्गम होगये थे। ऊपर से, ज़ार के जिन अफ़सरों को त्रॉत्स्की ने अपने पदों पर बहाल रखा था, वह पूरी तौर से विश्वासघात करके दुश्मन से मिल गये थे। बीस दिनों के अन्दर क़रीब दो सौ मील पीछे हटना, अठारह हज़ार आदमियों को खोना, दर्जनों तोपों और सैकड़ों मशीनगनों से हाथ धोना—कितनी भयंकर बात थी। शत्रु इतने नज़दीक आ गया था कि व्यात्का और सारे पूर्वी मोर्चे को खतरा पैदा हो गया था। लेनिन ने क्रांतिकारी युद्ध-परिषद को तार दिया :

"पेर्म के आस-पास से हमें कई रिपोर्टें मिली हैं, जिनमें तृतीय सेना के शराब पीकर मतवाले होने और खतरनाक स्थिति की बातें बतलाई गई हैं। मैं स्तालिन को भेजने की सोच रहा हूं।"

जैसा कि ऊपर कहा गया है, केन्द्रीय कमिटी ने पेर्म की पराजय के कारणों का पता लगाने के लिये, स्तालिन और ज़ेर्जिन्स्की को भेजा था। सचमुच, वहां की स्थिति प्राप्त हुई सूचना से भी कहीं अधिक भयंकर थी। स्तालिन ने वहां पहुंच कर राष्ट्रीय प्रतिरक्षा-परिषद् के अध्यक्ष (लेनिन) को तार देकर, तुरन्त कुमुक भेजने के लिये लिखा। फिर एक सप्ताह बाद, पेर्म की पराजय के भिन्न-भिन्न कारणों को लिख भेजा और लड़ने की क्षमता बढ़ाने के लिये कुछ उपायों को काम में लाने का प्रस्ताव रखा। ज़ारित्सीन की तरह, यहां भी स्तालिन ने सैनिक और राजनीतिक संगठन के लिये ऐसे असाधारण क़दम उठाये कि उसी महीने (जनवरी सन् १९१९) में पूर्वी मोर्चे पर शत्रु की प्रगति रोक दी गई। यही नहीं, बल्कि सेना के दाहिने पक्ष ने आगे बढ़ कर, आक्रमण करके उराल्स्क पर अधिकार कर लिया। दखल देने के लिये आई हुई, चैक सेनाओं से कोलचक की सेना के मिलने की संभावना खतम हो गई। दक्षिण और उत्तर—दोनों ओर से इतने जबर्दस्त प्रहार किये गये कि कोलचक के पैर उखड़ गये।

पूर्वी मोर्चे से लौटने के बाद, स्तालिन पर राज्य-नियंत्रण के संगठन का काम पड़ा। मार्च सन् १९१९ में लेनिन के कहने पर, उन्हें राज्य-नियंत्रण का जन कमीसार नियुक्त किया गया। स्तालिन ने अपनी स्वाभाविक तत्परता के साथ मजूर-किसान-निरीक्षण-जन-कमीसारियत का संगठन किया। उन्हें इस काम में अप्रैल सन् १९२२ तक लगा रहना पड़ा। सेना के लिये इस कमीसारियत की कितनी ज़रूरत थी, इसे कहने की आवश्यकता नहीं।

स्तालिन की पहली शादी उनके फ़रारी क्रांतिकारी जीवन के समय एकातेरीना से हुई थी। उससे एक लड़का हुआ था। एकातेरिना सन् १९१७ में निमोनिया से मर गई थी। बाकू में काम करते समय, स्तालिन के सहकारियों में अलीलुयेफ़ भी था। एक बार स्तालिन पीतरबुर्ग में इन्हीं के घर में गिरफ़्तार हुये थे। क्रांति के समय, लेनिन और स्तालिन अलीलुयेफ़-परिवार में छिप कर रहे थे। यहीं रहते समय, अलीलुयेफ़ की छोटी लड़की नादेज़्दा से स्तालिन का परिचय हुआ था। उसकी बड़ी बहिन ओल्गा प्रधान कार्यालय में काम करती थी। नादेज़्दा सन् १९०१ में बाकू में पैदा हुई थी और घर के कामों में निपुण होने के साथ, पार्टी के काम में भी बड़े उत्साह से योग देती थी। सन् १९१८ में स्तालिन ने नादेज़्दा से शादी की। स्तालिन के लिये वैयक्तिक जीवन का बहुत कम महत्व था, इसीलिये उसके बारे में बहुत कम लिखा गया है। स्तालिन के जीवन की महत्ता और बहुमूल्यता जिस काम के लिये थी, लेखकों का ध्यान उसी तरफ़ ज़्यादा गया।

११. पेत्रोग्राद पर ख़तरा (सन् १९१९)

कोलचक को मार भगाने में बोल्शेविकों ने सफलता पाई। लेकिन, पश्चिमी साम्राज्यवाद और उसके सैनिक नेता—चर्चिल को अपने सहकारियों को नष्ट होने देना कब पसन्द आ सकता था? उन्होंने पूर्वी मोर्चे से बोल्शेविकों का ध्यान हटाने के लिये, उत्तर से पेत्रोग्राद पर आक्रमण करना चाहा। इसके लिये, एस्तोनिया में जनरल यूदेनिच के नेतृत्व में सफ़ेद गारदों की सेना तैयार की गयी, जो बड़ी तेज़ी से पेत्रोग्राद की ओर बढ़ने लगी। स्वयं राजधानी के नौसैनिक अड्डे क्रोन्स्तात के बाल्तिक बेड़े में पुराने अफ़सरों के रूप में दुश्मन के आदमी मौजूद थे, जिसके कारण क्रास्नयागोर्का और सेरयालोशद् जैसे कुछ महत्वपूर्ण सैनिक दुर्ग बोल्शेविकों के हाथ से निकल गये। उधर पश्चिम में जनरल बुलक-बलखोविच की सेनायें प्स्कोफ़ के सैनिक महत्व के स्थान तथा पेत्रोग्राद के पश्चिमी दरवाज़े की ओर बढ़ने लगीं। इस आक्रमण में अंग्रेज़ी नौसैनिक बेड़ा भी भाग ले रहा था। इसी समय, पेत्रोग्राद में षडयंत्र का पता लगा और मालूम हुआ कि इसमें सेना और नौसैना के सैनिक अफ़सरों का भारी हाथ है। यूदेनिच के पेत्रोग्राद के नज़दीक पहुँचने पर प्स्कोफ़ को ख़तरा हो जाने और साथ ही भीतरी शत्रुओं के बिछे हुये जाल को देख कर, ऐसा मालूम होने लगा कि क्रांति ख़तम होने जा रही है। कम से कम चर्चिल और उसके सहायक ऐसी ही आशा करने लगे थे। सफ़ेद सेनाओं और पेत्रोग्राद के बीच का फ़ासला क्षण-क्षण कम होता जा रहा था; लाल सैनिक पीछे हट रहे थे। लेकिन, लेनिन के पास एक ऐसा आदमी था जो ऐसे भयंकर ख़तरों का दो बार सफलतापूर्वक मुक़ाबला कर चुका था। केन्द्रीय कमिटी ने तुरंत स्तालिन को इस काम पर नियुक्त किया। तीन सप्ताहों में ही, स्तालिन ने पाँसा पलट दिया। बीस दिन बीतते-बीतते सेना की भीतरी ख़राबियां, झिझक और किंकर्त्तव्यविमूढ़ता दूर हो गई। पेत्रोग्राद के कमकर और कम्युनिस्ट भारी संख्या में युद्ध में भाग लेने लगे। भीतरी शत्रुओं को पकड़ कर, उनका सफ़ाया कर दिया गया। दुश्मन के क़दम रुक गये। इस लड़ाई में स्तालिन ने शुद्ध सैनिक कार्रवाइयों में भी भाग लिया था। उन्होंने लेनिन को एक तार में लिखा था :

> "...क्रास्नयागोर्का और सेरेयालोशद् का काम ठीक कर देने के बाद, सभी किलों और क़िलेबंदियों में बड़ी तेज़ी से व्यवस्था क़ायम कर दी गई है। नौसैनिक विशेषज्ञ मुझे विश्वास दिला रहे हैं कि क्रास्नयागोर्का (लाल गिरि) पर अधिकार करने में, मैंने नौसैनिक-विज्ञान के सभी सिद्धांतों को उलट-पुलट दिया है। मुझे सिर्फ़ इसका अफ़सोस है कि वह विज्ञान न जाने किसको कहते हैं। गोर्का पर इतनी जल्दी अधिकार करने का कारण था—मेरी ओर से बड़ी ज़बर्दस्त दख़लंदाज़ी और सैनिक कार्रवाइयों में नागरिकों का भी आम तौर से

तत्परता से भाग लेना। इस कार्रवाई को करने के लिये जल और स्थल पर निकाली हुई दूसरी आज्ञाओं को रोक कर, उनकी जगह हमारी अपनी आज्ञाओं को कार्यरूप में परिणत किया गया था। मैं आपको यह सूचित करना अपना कर्त्तव्य समझता हूं कि विज्ञान के लिये मेरे दिल में भारी सम्मान रहते हुये भी, मैं आगे भी इसी तरह करूंगा।"

किताबी ज्ञान-विज्ञान और स्तालिन जैसे प्रतिभा के धनी तथा व्यवहार में निपुण व्यक्ति के ज्ञान में कितना अन्तर है, यह स्तालिन की इस कार्रवाई से मालूम होता है। यह कोई आकस्मिक घटना नहीं थी। द्वितीय महायुद्ध में भी हिटलर और उसके सैनिक पंडितों को स्तालिन के सामने मुंह की खानी पड़ी। मॉस्को और स्तालिन-ग्राद की भावी विजयों की तैयारी स्तालिन ने इसी समय, पेत्रोग्राद को बचा कर की थी। ६ दिन बाद के तार में, इस युद्ध के बारे में स्तालिन ने फिर लिखा था :

"हमारी सेनाओं का कायाकल्प होना शुरू हो गया है। इस सारे सप्ताह में वैयक्तिक या सामूहिक पलायन या आत्म-समर्पण की एक भी घटना नहीं घटी। हजारों की संख्या में भगोड़े सेना में लौट आये। दुश्मन की सेना से भाग कर, हमारी ओर आ मिलने वालों को और अधिक संख्या में देखा गया। एक सप्ताह में अपने सारे हथियारों को लिये क़रीब-क़रीब चार सौ आदमी हमारी सेना में आकर शामिल हो गये हैं। कल से हमने अपना आक्रमण शुरू किया है। यद्यपि ऊपर से जिस कुमक का वचन दिया गया था वह अभी तक हमारे पास नहीं आई है, लेकिन तब भी हम आगे बढ़ने में सफल हुए हैं। हमारे लिये अपनी पुरानी पांत में रहना असम्भव था; क्योंकि वह पेत्रोग्राद के बहुत नजदीक थी। इस बार का हमारा आक्रमण सफल रहा। शत्रु सिर पर पैर रख कर भाग रहा है। आज हमारी पांत केनीवो, वरानिनो, स्लेपिवो और कस्कोवो पर है। हमने बहुत से बन्दियों, तोपों, मशीनगनों और गोला-बारूद पर अधिकार कर लिया है। शत्रु—अंग्रेजों के युद्ध-पोतों ने मुंह नहीं दिखाया। यह साफ़ है कि वह क्रास्नयागोर्का से डरते हैं, जो अब पूर्णतया हमारे हाथ में हैं।"

इस प्रकार, स्तालिन ने चर्चिल के मंसूबों को विफल कर दिया। यूदेनिच को भाग कर एस्तोनिया में शरण लेनी पड़ी थी। लेकिन, सबसे बड़ा खतरा सन् १९१९ की शरद में दिखाई पड़ा, जिसके बारे में मानूइल्स्की ने लिखा है : "यह सारे गृह-युद्ध का निर्णायक और बहुत ही खतरनाक समय था।"

१२. दक्षिणी मोर्चा (सन् १९१९-२०)

जिस तरह पूर्व से कोलचक ने और उत्तर से युदेनिच ने बोल्शेविकों के लिये खतरा पैदा कर दिया था, अब वही काम दक्षिण से देनीकिन करने लगा। अब तक

जर्मनी हथियार डाल चुका था। इंगलैंड तथा फ्रांस को युद्ध से छुट्टी मिल चुकी थी। अब विश्व पूंजीवाद को काल-स्वरूप दिखाई देने वाले, बोल्शेविकों के पीछे पड़ना जरूरी मालूम हुआ। देनीकिन को रुपयों और हथियारों से ही मदद नहीं मिल रही थी, बल्कि अंग्रेज और फ्रेंच जनरल स्टाफ़ उसकी पूरी तौर से सहायता कर रहा था। सफ़ेद सेना ओरेल की ओर बढ़ रही थी; और सारी दक्षिणी युद्ध-पंक्ति खतरे में पड़ गई थी। एक ओर लाल सैनिक पीछे हट रहे थे और दूसरी ओर युद्ध-पंक्ति के पीछे स्थिति भयंकर हो गई थी। एक-एक क्षण में अवस्था संगीन होती जा रही थी। ऐसी समस्यायें सामने आ रही थीं, जिनके हल करने का एकाएक कोई उपाय नहीं सूझता था। युद्ध और गृह-युद्ध के कारण, रूस के तीन-चौथाई उद्योग-धंधे नष्ट हो चुके थे। न कच्चा माल था, न ईंधन, न काम करने वाले। इसके कारण, बचे-खुचे कल-कारखाने भी बन्द थे। सारे देश में, यहां तक कि मॉस्को में भी—जो कि अब सोवियत की राजधानी बन चुका था—क्रांति-विरोधी अपने कामों में बड़े ज़ोर-शोर से लगे हुये थे। हथियारों और लोहे के कारखानों वाला नगर तुला खतरे में पड़ गया था। उसके निकल जाने पर, राजधानी मॉस्को को भी बचाना मुश्किल होता। एक बार फिर केन्द्रीय कमिटी की नज़र स्तालिन की ओर गई और उसने उन्हें दक्षिणी मोर्चे पर जाने के लिये कहा। सितम्बर सन् १९१९ में क्रांतिकारी युद्ध-परिषद के सदस्य—स्तालिन ने दक्षिण का रास्ता लिया। मानूइलस्की ने लिखा है:

> "आज इस बात को छिपाने की कोई जरूरत नहीं है कि स्तालिन ने प्रस्थान करने से पहले (पार्टी) केन्द्रीय कमिटी पर तीन शर्तों को मानने के लिये ज़ोर दिया था—(१) ट्रॉटस्की को दक्षिणी मोर्चे में कोई दखल नहीं देना होगा और उसे अपनी जगह पर ही रहना पड़ेगा; (२) उन सैनिक नेताओं को, जिन्हें स्तालिन सैनिक स्थिति ठीक करने के लिये अयोग्य समझते हों, तुरन्त वापिस बुला लेना होगा; और, (३) इस काम के करने में स्तालिन द्वारा चुने गये सक्षम नेताओं को तुरन्त ही दक्षिणी मोर्चे पर भेज देना होगा। कमिटी ने इन शर्तों को पूरी तौर से मान लिया था।"

सैकड़ों मील लम्बा दक्षिणी मोर्चा वोल्गा से पोलैंड-उक्रइन की सीमा तक फैला हुआ था, जहां लाखों की संख्या में सैनिक जमा थे। अस्त-व्यस्तता और शिथिलता को दूर करके, इतनी भारी सेना का सुव्यवस्थित रूप से संचालन करना आसान काम नहीं था। इसके लिये एक निश्चित योजना बना कर चलना जरूरी था, जिससे कि सेना के हर एक भाग को मुस्तैदी के साथ अपने सामने के काम के लिये आगे बढ़ाया जा सके। स्तालिन ने मोर्चे पर जाकर देखा कि सभी जगह भयंकर विश्रृंखलता और अनुत्साह फैला हुआ है। कुर्स्क-ओरेल-तुला की मुख्य रक्षा-पंक्ति पर लाल सेना को

हार खानी पड़ी थी। उसका पूर्वी पक्ष भी किसी ही तरह क़ायम था। दक्षिणी मोर्चे के लिये उच्चतर युद्ध-कमिटी ने पिछले सितम्बर में एक योजना बनाई थी, जिसके द्वारा लाल सेना के वामपक्ष को ज़ारित्सीन से और दोन के मैदानों से नवोरोसिस्क तक की शत्रु-सेना पर आक्रमण करना था। स्तालिन को यह देख कर बड़ा आश्चर्य हुआ कि सितम्बर की बनाई हुई योजना आज भी ज़रा परिवर्तन किये बिना उसी तरह बनी हुई थी। 'कोरिन की सैनिक टुकड़ी को आक्रमण करना है। उसका काम है—दोन और कूबान नदियों पर जाकर, शत्रु को नष्ट करना।'—स्तालिन ने इस योजना को बड़े ध्यान से देखा, फिर निश्चय किया कि वह ठीक नहीं थी। कम से कम उस समय के लिये तो बिलकुल उपयुक्त नहीं थी। दो महीने पहले के लिये भले ही अच्छी रही हो, लेकिन तब से परिस्थितियाँ बदल चुकी थीं। उस योजना से काम नहीं चलेगा, यह सोच कर स्तालिन ने लेनिन के पास नये सुझाव लिख भेजे। इस भाग्य-निर्णायक अवसर पर, लेनिन के पास भेजे हुये इस पत्र की कुछ पंक्तियां थीं :

"दो महीने पहले उच्चतर कमिटी ने सिद्धांत के रूप में स्वीकार किया था कि मुख्य आक्रमण पश्चिम से पूर्व की ओर दोनेत्स्क की घाटी के भीतर से होना चाहिये। यह कार्रवाई नहीं की गई, क्योंकि गर्मियों में दक्षिण से सेना के पीछे हटने के कारण पैदा हुई स्थिति उसके अनुकूल नहीं थी—अर्थात् दक्षिण-पूर्वी मोर्चे पर सेना के पुनर्विभाजन में जो समय लगा, उससे देनीकिन ने फ़ायदा उठाया। लेकिन, सेनाओं के पुनर्विभाजन के साथ मिल कर अब स्थिति बिलकुल बदल गई है। पूर्वी अष्टम सेना (पुराने दक्षिणी मोर्चे की एक प्रधान सेना) आगे बढ़ी है, और दोनेत्स्क की घाटी उसके सामने है। बुदयन्नी-रिसाला जैसी दूसरी महत्वपूर्ण सेना भी आगे बढ़ी है। लेत डिवीज़न नामक एक नयी सेना की हमारी सेना में और वृद्धि हुई है। एक महीने के भीतर, जब वह पुनः संगठित हो जायगी, तो वह देनीकिन को ख़तरा पैदा कर देगी।...ऐसी स्थिति में उच्चतर कमिटी को पुरानी योजना को क़ायम रखने के लिये क्या मजबूरी है? इसका कारण स्पष्ट ही ऐसी हठधर्मी है जो कि हमारे गणराज्य के लिये बहुत ही ख़तरनाक और अदूरदर्शितापूर्ण हो सकती है, और जिसे सैनिक दावपेंच के महान् विशेषज्ञ (त्रॉत्स्की) उच्चतर कमिटी द्वारा लालित-पालित कर रहे हैं।"

"कुछ समय पहले उच्चतर कमिटी ने कोरिन को दोन के कान्तार को पार करके, नवोरोसिस्क पर आगे बढ़ने का आदेश दिया था। यह ऐसा रास्ता है, जो कि हमारे वैमानिकों के लिये ही व्यवहार्य हो सकता है। हमारी सेना और तोपख़ाने का दोन कान्तार होते हुए आगे बढ़ना असंभव है। यह निपट लड़कपन है। यह बतलाना बिलकुल आसान है कि शत्रु-देश में एक असम्भव प्रांत के ऊपर होते हुये बढ़ाव की यह योजना बिलकुल निर्बुद्धितापूर्ण है, और

सत्यानाश का कारण बन जायेगी। यह बतलाना बिलकुल आसान है कि इस प्रकार कसाक गाँवों के ऊपर से बढ़ने का एक ही फल होगा—जो कि कुछ ही समय पहले हो भी चुका है-अपने गांवों की प्रतिरक्षा के लिये कसाकों का देनीकिन के साथ मिल जाना, और देनीकिन को दोन का त्राता बनने का मौका देना अर्थात् देनीकिन को इस प्रकार अपने हाथों को मजबूत करने में सफल होने देना। इसलिये, पुरानी योजना एक क्षण की भी देर किये बिना बदलनी होगी और उसकी जगह खरकोफ़ और दोनेत्स-घाटी के बीच से रस्तोफ़ के ऊपर केन्द्रीय आक्रमणवाली योजना स्वीकार करनी पड़ेगी। इस प्रकार, (१) शत्रु-देश के बीच से नहीं, बल्कि हमें मित्रतापूर्ण इलाकों से गुज़रना पड़ेगा, जिससे आगे बढ़ने में आसानी होगी; (२) हम दोनेत्स जैसी एक महत्वपूर्ण रेलवे लाइन—देनीकिन की सेना के संचार की मुख्य लाइन—वोरोनेज़-रस्तोफ़-लाइन पर अधिकार कर सकेंगे; (३) हम देनीकिन की सेना को दो भागों में काट देंगे जिनमें से एक भाग (स्वयंसेवकों) को मखनो ठीक कर देगा, और हम कसाक सेना को पीछे से ख़तरा पैदा कर देंगे; (४) यह भी हो सकता है कि हम देनीकिन से कसाकों को नाराज़ करा दें, क्योंकि यदि हमारा बढ़ाव क़ामयाब रहा तो देनीकिन कसाकों को पश्चिम की ओर हटाने की कोशिश करेगा, जिसे अधिकांश कसाक मानने से इन्क़ार कर देंगे; और (५) हमें कोयला मिल जायेगा, जब कि देनीकिन को कुछ भी कोयला नहीं मिल सकेगा। अभियान की इस योजना को स्वीकार करने में ज़रा भी देर नहीं करनी चाहिये। ...संक्षेपत:, हाल की घटनाओं के कारण अब समय से पिछड़ी हुई पुरानी योजना किसी भी हालत में काम में नहीं लानी चाहिये, क्योंकि यह गणराज्य के लिये ख़तरा पैदा करते हुये, देनीकिन की स्थिति को बेहतर बनाने का कारण अवश्य होगी। उसकी जगह एक नई योजना स्वीकार करनी होगी। उसके लिये परिस्थितियां और अनुकूलतायें भी पूरी मात्रा में मौजूद हैं, बल्कि इस तरह के परिवर्तन की भारी आवश्यकता है। अन्यथा, दक्षिणी मोर्चे पर मेरा काम व्यर्थ, अपराधपूर्ण और बेकार हो जायेगा; जो मुझे अधिकार देता या मजबूर करता है कि मैं यहां न रह कर चाहे जहां, शैतान के पास भी, चला जाऊं।—आपका, स्तालिन।"

केन्द्रीय कमिटी ने स्तालिन की योजना मानने में ज़रा भी आनाकानी नहीं की। लेनिन ने अपने हाथों दक्षिणी मोर्चे के जनरल स्टाफ़ को लिख कर, उन्हें अपनी आज्ञाओं को बदलने का हुक्म दिया। लाल सेना ने दोनेत्स-रस्तोफ़ घाटी में खरकोफ़ के ऊपर मुख्य आक्रमण किया और इसका फल हुआ—सन् १९२० के आरंभ में देनीकिन की सेना को कालासागर के किनारे तक ढकेल देना। उक्रइन और उत्तरी काकेशस सफ़ेद गारदों के हाथ से छीन लिये गये और गृह-युद्ध की निर्णायक विजय

बोल्शेविकों के ही हाथ रही। इस युद्ध में स्तालिन के सहायक थे—वोरोशिलोफ़, ओर्योनिकिद्ज़े, किरोफ़, बुदयोन्नी, श्वादेंको और मेखली।

सितम्बर सन् १९१९ में केन्द्रीय कमिटी ने स्तालिन को दक्षिणी मोर्चे की ओर भेज, 'देनीकिन के विरुद्ध लड़ने के लिये सभी चलो'—का नारा दिया था। इसी समय बुदयोन्नी के नेतृत्व में प्रथम सवार-सेना संगठित हुई।

देनीकिन की पराजय के बाद, सोवियत गणराज्य को जो थोड़ा सा समय मिला, उसी में लेनिन ने स्तालिन को युद्ध से नष्टप्राय उक्रइन की अवस्था सुधारने के लिये भेजा। सन् १९२० की फरवरी और मार्च में स्तालिन इस काम पर जुट पड़े। उद्योगों को फिर से चालू करने के लिये कोयला बहुत जरूरी था। कल-कारख़ानों को चालू किये बिना, देश को न सैनिक तौर से और न आर्थिक तौर से ही सबल बनाया जा सकता था। स्तालिन ने 'रूस के लिये कोयला उतना ही महत्वपूर्ण है, जितनी कि देनीकिन पर विजय थी'— कहते हुये, मार्च सन् १९२० में कमकर सेना को उत्साहित किया और थोड़े ही दिनों में कोयले की पैदावार तथा रेलों का काम बहुत कुछ सुधर गया।

१२. रेंगल की पराजय (सन् १९२०)

देनीकिन के हारने के बाद, चर्चिल और उसके साथियों ने अब बैरन रेंगल की पीठ ठोकी और अगस्त सन् १९२० में फिर उसी जगह भयंकर लड़ाई छिड़ गई, जहां से देनीकिन को भागना पड़ा था। २ अगस्त, १९२० को केन्द्रीय कमिटी ने निश्चय किया :

> "रेंगल की सफलताओं और कूबान के ख़तरे को देखते हुये, रेंगल-मोर्चे को जबर्दस्त महत्व वाला एक बिलकुल स्वतंत्र मोर्चा मान कर, उसकी अलग व्यवस्था करनी होगी। साथी स्तालिन को आदेश दिया जाता है कि वह एक क्रांतिकारी सैनिक-परिषद बना कर, अपना सारा प्रयत्न रेंगल-केन्द्र पर लगायें।"

जिस समय (अप्रैल सन् १९२० में) रेंगल ने दक्षिण में आक्रमण शुरू किया, उसी समय साम्राज्यवादियों की शह पर पोल सरकार ने भी सोवियत-भूमि पर आक्रमण करके, उक्रइन की राजधानी कियेफ़ पर अधिकार कर लिया। स्तालिन ने जाकर रेंगल के विरुद्ध प्रतिरक्षा की तैयारी की और लड़ाई की योजना बनाई। ३ अगस्त, १९२० को केन्द्रीय कमिटी ने निम्न प्रस्ताव पास किया :

> "स्तालिन को क्रांतिकारी सैनिक-परिषद बनाने का काम देना होगा। सभी उपलब्ध सेनाओं को इसी मोर्चे पर लगाना होगा। इगोरोफ़ या फ़ुंजे को इसी मोर्चे की कमांड देनी होगी, जैसा कि स्तालिन के साथ सलाह करके उच्चतर परिषद ने तय किया है।"

स्तालिन ने नये मोर्चे का संगठन किया, लेकिन इसी समय बीमार पड़ जाने से उन्हें वहां से हटना पड़ा। तो भी, उन्हीं की बनाई हुई योजना के अनुसार फुंजे ने रैंगल को भगाने में सफलता पाई।

१३. *पोलिश मोर्चा (सन् १९२०)*

रैंगल के खिलाफ़ लड़ाई होते समय, बीमारी के कारण स्तालिन को वहां से चला आना पड़ा था, लेकिन पोलैंड के क्रांति-विरोधियों से लोहा लेने के समय वह फिर मैदान में आ गये थे। स्तालिन का अर्थ ही अब विजय हो गया था और, पुराने श्लोक को ज़रा सा बदल कर, हम कह सकते हैं: 'यत्र युक्तीश्वरो लेनिन, यत्र स्तालिन धनुर्धर:। तत्र श्री र्विजयो भूतिर्ध्रुवा नीतिर्मतिर्मम।' पोलिश सेना पछाड़ी गई। कियेफ़ और उक्रइन मुक्त कर लिये गये। लाल सेना गलीसिया के बहुत भीतर तक घुस गई। कियेफ़, बेदीचेफ़ और जितोमिर में तृतीय पोलिश सेना के प्राय: पूर्णतया नष्ट हो जाने के बाद, पोलिश-मोर्चा खतम हो गया। एक ओर लाल रिसाला ल्वोफ़सर पर आक्रमण करने की तैयारी कर रहा था, और दूसरी ओर लाल सेना पोलैन्ड की राजधानी वारसा के पास पहुंच गई थी। इस पर पोलों ने सर्वस्व की बाज़ी लगा कर, बोल्शेविक सेना को हराया। इसका कारण था, कुछ सफलता दिखलाने के लिये लालायित युद्ध-मंत्री त्रॉत्स्की को अपनी बेवकूफ़ी दिखलाने का मौका मिल जाना। विजय की सफलता से फूले न समाते हुए, गोला-बारूद और सर्दी का इन्तज़ाम किये बिना ही, त्रॉत्स्की ने एक सेना को वारसा पर अधिकार करने के लिये भेज दिया था, जिसके कारण ही यह पराजय हुई और जिसका परिणाम हुआ—पश्चिमी उक्रइन और पश्चिमी बेलोरुसिया का सन् १९१९ से बीस वर्षों के लिये पोलों के हाथ में चला जाना।

लेनिन की प्रेरणा से २७ नवम्बर, १९१९ को अखिल रूसी केन्द्रीय कार्यकारिणी समिति ने गृह-युद्ध की विजयों के उपलक्ष में, स्तालिन को लाल झंडे का तमग़ा प्रदान किया। इंग्लैंड, फ्रांस तथा दूसरे साम्राज्यवादी देशों ने गृह-युद्ध में क्रांति-विरोधियों को धन और सामान से सहायता देकर ही संतोष नहीं किया, बल्कि हार के बाद जब जर्मनी की सेनायें रूस से हटीं तो फ्रैंच और अंग्रेज़ी सेनायें जल और स्थल—दोनों मार्गों से रूस के भीतर घुस कर लूट मार करने तथा वहां के निवासियों के खून से हाथ रंगने लगीं। जो भी हाथ आये, कल-कारखाने आदि सबको उन्होंने बेदर्दी से नष्ट कर दिया। जर्मन सेना ने रूस से बाल्तिक तक के प्रदेश (लिथुवानिया, लेत्विया और एस्तोनियां) और फिनलैंड छीन लिये थे। फ्रेंच-ब्रिटिश साम्राज्यवादियों ने पश्चिमी उक्रइन और बेलोरुसिया के कितने ही भाग को देकर, पोलैंड में एक नया राज्य क़ायम

कर दिया; उन्होंने कालासागर के तटवर्ती बेसराबिया को छीन कर रूमानिया को दे दिया। यह स्मरण रखने की बात है कि जिस समय यह काम किया जा रहा था, उस समय फ्रांस या इंगलैंड की रूस से कोई लड़ाई नहीं थी। फ्रांस के एक बड़े नेता–रेने पिनो के अनुसार : " यह दखल देना, एक विदेशी राज्य के भीतरी कामों में दखल देना भर नहीं था, बल्कि साथ ही एक देश तथा उसके साथ सारी दुनिया को, एक (खतरनाक) सामाजिक और सामान्य व्यवस्था (बोल्शेविज़्म) के खतरे से मुक्ति दिलाने का प्रयत्न भी था (!)... " सारी दुनिया के प्रतिगामियों की पीठ ठोकने और हर तरह की मदद देने के लिये, जिस तरह द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद अमरीका तैयार हुआ है, वही काम प्रथम विश्वयुद्ध के बाद इंगलैंड और फ्रांस ने किया था। इस काम में उस समय इंगलैंड का अगुवा वही चार्चिल था, जिसने द्वितीय युद्ध की समाप्ति के समय अमरीका को शह देकर, हिरोशिमा और नागासाकी पर अणुबम गिरवा कर नृशंस नरसंहार कराया है।

गृह-युद्ध की इन घटनाओं से मालूम होगा कि स्तालिन एक तिकड़मी आदमी या केवल लेनिन की रबड़-मुहर नहीं थे। उनके पास मौलिक प्रतिभा थी, जिसका चमत्कार उन्होंने पद-पद पर दिखलाया है।

पूंजीवादी अखबार और उनके भरमाये हुये दूसरे आदमी, स्तालिन और बोल्शेविकों पर यह दोष लगाते हैं कि उन्होंने अपने शत्रुओं के साथ हद से अधिक कठोरता का बर्ताव किया है। स्तालिन ने इसके बारे में सन् १९३१ के अन्त में, एक वार्तालाप के दौरान में कहा था :

> " जिस समय बोल्शेविकों ने अधिकार संभाला, उस समय उन्होंने अपने शत्रुओं के प्रति बड़ी नर्मी दिखानी चाही थी। मेन्शेविक काफ़ी समय तक क़ानूनी तौर से रहते और अपना पत्र भी निकालते थे। यही बात समाजवादी क्रांतिकारियों की थी। यहां तक कि कादेत भी अपना पत्र निकालते थे। जनरल क्रास्नोफ़ क्रांति-विरोधी सेना लेकर पेत्रोग्राद पर कूच करते हुए, हमारे हाथ में पड़ गया था। युद्ध के नियमों के अनुसार, उसके साथ हम चाहे कुछ भी कर सकते थे या कम से कम क़ैदी बना कर तो रख सकते थे, उसे गोली से भी मरवा सकते थे, लेकिन हमने उसे पैरोल (वचन बंदी) पर छोड़ दिया था। लेकिन, उसका फल क्या हुआ? हमने जल्दी ही देख लिया कि इस तरह की नर्मी सोवियत शक्ति की स्थिरता को कमज़ोर बनाती है और कमकर वर्ग के शत्रुओं के प्रति इस तरह की सहिष्णुता का परिचय दे कर हम ग़लती कर रहे हैं। अगर हम आगे भी इस तरह की नर्मी जारी रखते, तो यह कमकर वर्ग के प्रति हमारा अपराध होता, उनके हितों के प्रति विश्वासघात होता। जल्दी ही हमारे सामने यह बात स्पष्ट हो गई। हमने जल्दी ही मालूम कर लिया कि अपने शत्रुओं के प्रति हम जितनी ही अधिक

उदारता दिखलाते हैं, वह उतनी ही अधिक मजबूती के साथ हमारा प्रतिरोध करते हैं। थोड़े ही समय बाद, समाजवादी क्रांतिकारी गोत्ज आदि और दक्षिण पंथी मेन्शेविकों ने पेत्रोग्राद के सैनिक-स्कूल में विद्रोह संगठित किया, जिसके कारण हमारे बहुत से क्रांतिकारी नौ-सैनिकों की जानें गईं। जिस कास्नोफ़ को हमने पैरोल पर छोड़ दिया था, उसने हमारे विरुद्ध सफ़ेद कसाकों को संगठित किया, ममन्तोफ़ से मिल कर दो साल तक सोवियत सरकार के विरुद्ध हथियारबन्द लड़ाई की।...यह आसानी से समझा और देखा जा सकता है कि अधिक नर्मी दिखला कर हमने ग़लती की थी।"

प्रसिद्ध फ्रेंच लेखक आँरी बारबुस ने उक्त उद्धरण देते हुये, यह भी कहा था :

"इसके अतिरिक्त, मैं स्तालिन की उस बात को भी जोड़ता हूं, जो कि उन्होंने मुझसे सात वर्ष पहले (सन् १९२७ में) प्रसिद्ध 'लाल-आतंक' के सम्बन्ध में कही थी। वह मृत्यु-दंड के बारे में बातें कर रहे थे: 'हम सभी मृत्यु-दंड बन्द करने के पक्ष में हैं। सचमुच हमारा विश्वास है कि सोवियत संघ के शासन-प्रबन्ध में इसको रखने की आवश्यकता नहीं है। हम ने मृत्यु-दंड को कभी का ख़तम कर दिया होता, यदि बाहरी दुनिया, बड़े साम्राज्यवादी राज्य, हमें अपने अस्तित्व को बचाये रखने के लिये, उसे क़ायम रखने पर मजबूर न किये होते।"

अध्याय—६

उपनेता

(सन् १९२१-२३)

गृह-युद्ध में भीतरी और बाहरी शत्रुओं को करारी हार देने के बाद, यद्यपि लड़ाई से छुट्टी मिल गई थी, लेकिन सोवियत नेताओं के सामने पुर्ननिर्माण का भारी काम था। सन् १९१४ के महायुद्ध ने रूस को चालीस अरब सुवर्ण रूबल की सम्पत्ति का नुकसान पहुंचाया था। कमकर जनता के एक-तिहाई का खून हो चुका था। सन् १९१३ की अपेक्षा, सन् १९२१ में उद्योग-धंधों, उपज और यातायात का पांचवां या छठवां हिस्सा ही शेष रह गया था। गृह-युद्ध के समय पचास अरब रूबल की सम्पत्ति और भी नष्ट हो गई थी। सभी कारखाने ध्वस्त हो गये थे। सारे देश में युद्ध की आग भड़कने के कारण, आधे खेत परती पड़ गये थे। शासन-व्यवस्था, शिक्षा-व्यवस्था, सभी अस्त-व्यस्त थीं। लाल सेना के पास राइफ़िलों और बूटों की ही नहीं, बल्कि रोटियों की भी कमी थी। ऊपर से बड़े-बड़े साम्राजी राज्य देश पर क़हर ढा रहे थे। फ्रांस के क्लेमेन्सो और प्वानकारे तथा इंगलैंड के लायड जार्ज और चर्चिल, चौदह राष्ट्रों को लेकर सोवियत शक्ति को नेस्तनाबूद करने पर तुले हुये थे। कोलचक की सेना को 'फ्रेंच सरकार ने सत्रह सौ मशीनगनें, तीस टैंक और दर्जनों बड़ी-बड़ी तोपें दी थीं। कोलचक के साथ मिल कर, आक्रमण करने वालों में हजारों अंग्रेज़ और अमरीकन सिपाही, सत्तर हज़ार जापानी और क़रीब साठ हज़ार चेकोस्लावाकी सिपाही भी थे। देनीकिन की सेना के साठ हज़ार आदमियों को इंगलैंड ने अपने हथियारों और गोला-बारुद से लैस करते हुये, उसे दो लाख राइफ़िलें, दो हज़ार बन्दूकें और तीस टैंक दिये थे, साथ ही सेना को सलाह और शिक्षा देने के लिये सैकड़ों अंग्रेज़ अफ़सर भेजे थे। साइबेरिया को रूस से छीनने के लिये, साम्राज्यवादियों ने व्लादीवोस्तोक पर अपनी सेना उतारी, जिसमें दो जापानी डिवीज़न, दो अंग्रेज़ी बटालियनें ६ हज़ार अमरीकी और तीन हज़ार फ्रेंच तथा इटालियन थे। रूस के गृह-युद्ध में इंगलैंड ने चौदह करोड़ पौंड और पचास हज़ार सिपाहियों की जानें होमी थीं। पश्चिमी साम्राज्यवादियों ने खूनी दख़लंदाज़ी करके, रूस में जो सत्यानाश मचाया, उसमें चौवालीस अरब सुवर्ण रूबल की सम्पत्ति का सत्यानाश हुआ था। सन् १९२१ में रूस में एक फ्रेंच एडमिरल अपनी सरकार का प्रतिनिधि बन कर भी, सोवियत सरकार के शत्रुओं को खुले आम संरक्षण दे रहा था। फ्रांस ने बहुत बाद तक वह काम किया, जिसे करने की हिम्मत तब इंगलैंड और तुर्की भी नहीं करते थे। गुर्जी से भागे हुये

क्रांति-विरोधी योरदानिया और चेकेली को फ्रैंच सरकार गुर्जी के मुखिया और राज-दूत के तौर पर स्वीकार करती थी। उसने कोलचक को शासक स्वीकार किया था, और रेंगल के बारे में भी वही करने जा रही थी।

गृह-युद्ध के बाद, एक और भारी खतरा पार्टी के भीतर पैदा हो गया था। बोल्शेविकों ने त्रॉत्स्की जैसे बहुत से छोटे-बड़े ढुलमुलयक़ीनों को खुल्लमखुल्ला विरोधी न होने देने के लिये अपने भीतर ले लिया था। उन्होंने अपनी बेवकूफ़ी से गृह-युद्ध के समय भारी हानि पहुंचाई ही थी। अब पुर्ननिर्माण के समय, वह उससे भी ज़्यादा विरोध करने के लिये तैयार थे। सन् १९२० में लेनिन की सिफ़ारिश पर, राज्य बिजलीकरण–कमीशन (गो-एल-रो) स्थापित किया गया था, जिसने देश के बिजलीकरण के लिये दस वर्षों की एक योजना तैयार की योजना का काम पहले–पहल यहीं से शुरू हुआ। त्रॉत्स्की और रुइकोफ़ ने इस योजना का विरोध करना शुरू किया; जब कि योजना की एक कापी के साथ लेनिन का पत्र पाकर स्तालिन ने तुरन्त जवाब दिया था कि यह एक सच्ची आर्थिक योजना है, और उनके विचार में 'आज के समय में आर्थिक तौर से पिछड़े हुये रूस के सोवियत वाले ऊपरी ढांचे को वस्तुतः व्यवहारिक टेकनीक तथा उत्पादन के आधार पर आधारित करने का एक मात्र मार्क्सवादी प्रयत्न है।'—स्तालिन ने ज़ोर देकर कहा कि उसे काम में लाने में देर नहीं करनी चाहिये और सारे काम का कम से कम एक-तिहाई इसी योजना में लगना चाहिये। लेकिन, त्रॉत्स्की और उसके अनुयायियों का कहना था कि युद्धकालीन साम्यवादी नीति को, अब भी शांतिकालीन आर्थिक क्षेत्र और पार्टी के काम में बर्ता जाय तथा फंदे को ढीला करने की जगह और भी कस दिया जाय।

१. दशम कांग्रेस (मार्च सन् १९२१)

यह बोल्शेविक पार्टी की वही कांग्रेस थी, जिसमें युद्धकालीन साम्यवाद नीति की जगह लेनिन द्वारा प्रस्तावित नवीन आर्थिक नीति के प्रोग्राम को स्वीकार किया गया था। इसी कांग्रेस में स्तालिन ने जातीय समस्या के सम्बंध में पार्टी के सामने फ़ौरी विषयों पर अपनी रिपोर्ट दी थी, जिसमें कांग्रेस ने स्पष्ट माना था कि गो जातीय उत्पीड़न मिटा दिया गया है लेकिन वह काफ़ी नहीं है। उन्हें अतीत के बुरे दायभाग को भी खतम करना है, जिसका अर्थ है—भूतपूर्व दलित जातियों के आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक पिछड़ेपन को खतम करना, इन सभी बातों में उन्हें रूस के लोगों के बराबर लाना। नवीन आर्थिक नीति का जबर्दस्त समर्थन करते हुए, स्तालिन ने उसकी व्याख्या की थी : "नवीन आर्थिक नीति सर्वहारा राज्य की एक विशेष नीति है, जो पूँजीवाद को सहन करते हुये, लेकिन अहम स्थानों को सर्वहारा राज्य के हाथों में रखते हुये, पूँजी-वादी और समाजवादी तत्वों के संघर्ष में समाजवादी तत्वों के महत्वपूर्ण विकास के लिये पूँजीवादी तत्वों के मत्थे, पूँजीवादी तत्वों के ऊपर समाजवादी तत्वों की विजय और

वर्गों के खतम करने तथा समाजवादी आर्थिक व्यवस्था की नींव रखने के उद्देश्य से बनाई गई है।" स्तालिन ने जातीय प्रश्न पर कहा था : "उन जातियों को आर्थिक और सांस्कृतिक सहायता देने की ओर बहुत ध्यान देना चाहिये, जो कि ज़ारशाही शासन में उपेक्षित और पद-दलित रहीं थीं, जिससे क्रांति-विरोधियों को उन्हें भड़काने का मौका न मिले। स्तालिन ने सबसे पहले जातीय समस्या को हल करने के महत्व को समझा, उसकी तरफ़ बोल्शेविकों का ध्यान आकृष्ट किया था। प्रथम युद्ध से एक साल पहले, उन्होंने अपने विचारों को एक पुस्तक के रूप में पेश किया था, लेनिन ने भी जिसकी दूरदर्शिता की दाद दी थी। इसमें शक नहीं कि शांति, किसानों को खेत और मज़दूरों को कारखानों पर अधिकार देने के साथ-साथ जातियों की स्वतंत्रता की अभिलाषा को प्रोत्साहन देना भी अक्तूबर-क्रांति की सफलता का एक कारण था स्तालिन ने लिखा था : 'कोलचक और देनीकिन को मार भगाने में हम इसी लिये सफल हुये कि दलित जातियों की सहानुभूति हमारे साथ थी।" सन् १९१७ में राज्य के सभी मुसलिम कमकरों को सम्बोधित करते हुये, लेनिन और स्तालिन ने अपने हस्ताक्षरों से एक घोषणा निकाली थी, जिसमें कहा गया था :

> "तुर्किस्तान, साइबेरिया, काकेशिया और वोल्गा के प्रदेशों में जगह-जगह बिखरे हुये करोड़ों लोगों को दूसरों के बराबर लाना हमारा पहला कर्तव्य होगा।"

और, यह कर्त्तव्य उन्होंने जनता को मुग़ालते में रखने के लिये पेश नहीं किया था। सोवियत के भाग्य-विधाताओं ने उस पर सच्चे दिल से अमल करने का निश्चय किया था। जातियों की अपनी विशेषताओं—समष्टिगत नैतिक और बौद्धिक राष्ट्रीय संस्कृति, राष्ट्रीय परम्परा, जन कथाओं में प्रकट होने वाली प्रत्येक वस्तु, कला और कला-सम्बन्धी सृजन, मानसिक उत्पादन तथा पारिवारिक भावना और पूर्वजों के अभिमान, मातृभाषा द्वारा किये जाने वाले हर एक काम—इन सभी चीज़ों को सिर्फ़ सुरक्षित ही नहीं रखने, बल्कि बोल्शेविकों ने उन्हें और भी समृद्ध करने का भार अपने ऊपर लिया। उन्होंने जातीय समस्याओं को केवल राष्ट्रीय दृष्टिकोण से ही नहीं, बल्कि प्रादेशिक दृष्टिकोण से भी सुलझाने का प्रयत्न किया। जहां तक जातीय धर्मों का सम्बन्ध था, वह कहीं भी स्थानीय उपज नहीं थे। ईसाई धर्म ज़ारों के साथ बाहर से आया था; इस्लाम को अरब ग़ाजियों ने बड़ी खून-खराबी के बाद मध्य-एशिया में फैलाया था;—तो भी, सोवियत-अधिकारियों ने उनको छेड़ा नहीं, और सिर्फ़ बहुपत्नी-विवाह तथा मठों की सम्पत्ति जैसे सामाजिक और आर्थिक क्षेत्रों में ही उनके अनुचित दखल को बन्द किया। जातियों के सम्बंध में स्तालिन का नुस्खा बहुत ठीक साबित हुआ। द्वितीय विश्व-युद्ध ने भी उसकी पुष्टि की। इस सम्बन्ध में स्तालिन ने एक बार कहा था :

"सोवियत देश-भक्ति की शक्ति इस बात पर आधारित है कि वह नस्ली या राष्ट्रीय पक्षपातों पर आधारित न होकर, सोवियत-मातृभूमि के प्रति जनता की पूर्ण भक्ति और विश्वास पर, हमारे देश में रहने वाली सभी जातियों के कमकरों के भाईचारे वाले सहयोग पर निर्भर है। लोगों की राष्ट्रीय परम्पराओं तथा सोवियत संघ की सभी कमकर जनता के मुख्य एकसमान हितों के साथ सोवियत देश-भक्ति का बड़ा ही सुन्दर सम्मिश्रण है। यह देश-भक्ति बिना भेद-भाव के, बिना बिलगाव के सभी जातियों को एक भ्रातृभावपूर्ण परिवार में एकताबद्ध करती है।"

सन् १९२१ की गर्मियों में स्तालिन बीमार पड़ गये थे। लेनिन को अपने इस इकलौते बेटे जैसे शिष्य के लिये बड़ी चिन्ता हुई। उन्होंने सेर्गो ओर्योनिकिद्जे को तुरन्त तार दिया :

"कृपया मुझे बतलाओ कि स्तालिन का स्वास्थ कैसा है और डाक्टरों की क्या राय है?"

जवाब पाकर, लेनिन ने फिर तार दिया :

"स्तालिन की चिकित्सा करने वाले डाक्टर का नाम और पता भेजो। वह कितने समय से बीमार है?"

सन् १९२१ की शरद् में, लेनिन ने क्रेमलिन के अधिकारी को लिखा था : "रसोई घर के पास सोने में बाधा होती है, इसलिये स्तालिन को किसी और आरामदेह मकान में ले जाना चाहिये।" लेनिन ने इस काम को तुरन्त करने के लिये हुक्म देते हुये, यह भी पूछा था : "मुझे सूचित करो कि तुम इसे कर सकते हो या नहीं और कर सकते हो, तो कब?" लेनिन ने दिसम्बर में अपने सेक्रेटरी के पास नोट लिखा रखा था कि वह रोज सबेरे इस बात की याद दिलाया करे कि स्तालिन को देखना है, और उससे पहले स्तालिन के डाक्टर के साथ टेलीफोन का सम्बन्ध भी जोड़ दे। यह समझना बिलकुल आसान है कि अप्रतिम स्तालिन में लेनिन ने अपनी भविष्य की सारी आशाओं को केन्द्रित देखा था। उनकी अपनी कोई संतान नहीं थी। स्तालिन में उनका अपने पुत्र जैसा ही वात्सल्य निहित था।

बीमार पड़ने से पहले ६ जुलाई, १९२१ को स्तालिन ने तिफ़लिस के पार्टी संगठनों की एक सभा में भाषण दिया था। वहां पर भी राष्ट्रवादी मध्यमवर्ग अपना दूसरा ही रास्ता पकड़ना चाहता था और सारे काकेशिया का फैडरल सोवियत गणराज्य बनाने में सहमत नहीं था। लेनिन ने इस बात को पसन्द किया और स्तालिन ने वहाँ फैडरल गणराज्य क़ायम कर दिया था।

२. ग्यारहवीं कांग्रेस (सन् १९२२)

नवीन अर्थनीति का एक साल बीत गया था, जब कि सन् १९२२ की मार्च-अप्रैल में पार्टी ने इस कांग्रेस में नई नीति के परिणामों पर विचार किया। इसी समय, लेनिन ने घोषित किया था :

"एक साल तक हम पीछे हटते रहे, लेकिन अब पार्टी के नाम पर हमें, 'ठहरो'—कहना है। पीछे हटने का जो उद्देश्य था, वह पूरा हो गया है। वह काल खतम हो रहा है, या हो चुका है। अब हमारा उद्देश्य दूसरा है, वह है—अपनी शक्तियों को एकत्रित करना।" इसी कांग्रेस में ३ अप्रैल को लेनिन के प्रस्ताव पर, केन्द्रीय कमिटी के प्लेनम (बड़ी बैठक) में केन्द्रीय कमिटी ने स्तालिन को महामंत्री निर्वाचित किया। पार्टी में यह नया और बड़ा महत्वपूर्ण पद था, जो अंतिम समय तक स्तालिन के हाथ में रहा। भविष्य ने लेनिन के इस काम को सर्वथा उचित सिद्ध किया। स्तालिन-विरोधी प्रेओब्रजेन्स्की ने इसकी आलोचना करते हुये कहा था कि स्तालिन पहले ही से दो विभागों—जातीय विभाग और कमकर-किसान-निरीक्षण-विभाग के जन-कमीसार हैं। इस तरह, उनके हाथ में और शक्तियों को देना अच्छा नहीं है। इस पर लेनिन ने कड़ा जवाब देते हुये कहा था :

> "प्रेओब्रजेन्स्की ने हल्कापन दिखलाते हुये शिकायत की है कि स्तालिन के हाथ में दो विभाग दे दिये गये हैं। . . . लेकिन, जातीय विभाग के जन-कमीसार के पद की वर्तमान स्थिति को क़ायम रखने और तुर्किस्तान, काकेशिया तथा दूसरे सभी प्रश्नों की गहराई तक पहुंचने के लिये हम और क्या कर सकते हैं ? आखिर यह राजनीतिक समस्याएँ हैं, और इन समस्याओं को हल करना होगा। यह ऐसी समस्याएँ हैं जो कि युरोपीय राज्यों को सैकड़ों वर्षों से परेशान किये हुए हैं; और जो जनतांत्रिक गणराज्यों में भी बहुत थोड़े ही परिणामों के साथ हल की गई हैं। हम इन समस्याओं को हल कर रहे हैं, जिसके लिये हमारे पास एक ऐसा आदमी होना चाहिये जिसके पास जातियों का कोई भी प्रतिनिधि आकर सम्बंधित विषयों पर सविस्तार बातचीत कर सके। हम ऐसा आदमी कहां से पायेंगे ? मैं समझता हूँ कि इस काम के लिये प्रेओब्रजेन्स्की भी साथी स्तालिन को छोड़ कर किसी दूसरे आदमी का नाम नहीं दे सकते। यही बात कमकर-किसान निरीक्षणालय के बारे में भी है। यह बहुत जबर्दस्त काम है। लेकिन, जांच-पड़ताल के काम को ठीक से करने के लिये, हमें एक अधिकारयुक्त आदमी की आवश्यकता है, नहीं तो हम छोटी-छोटी तिकड़मों में ही डूब जायेंगे।"

३. लेनिन का निधन (सन् १९२४)

सन् १९१८ में क्रांति विरोधियों द्वारा बहकाई हुई, एक स्त्री ने लेनिन पर मरणान्तक आक्रमण किया था। यद्यपि उससे उसी वक्त उनकी जान नहीं गई, लेकिन छाती में मर्मस्थान पर गोली लगने से लेनिन का स्वास्थ हमेशा के लिये बिगड़ गया था; और सन् १९२१ के अन्त से ही उन्हें काम से अक्सर अलग रहना पड़ता था। तभी से पार्टी की सारी ज़िम्मेवारी स्तालिन के कन्धों पर थी। इसी समय, स्तालिन ने जातीय सोवियत गणराज्यों का निर्माण तथा सारे सोवियत गणराज्यों को मिला कर एक संघ-राज्य—सोवियत समाजवादी गणसंघ—का निर्माण किया। सन् १९२२ की गर्मियों में लेनिन की बीमारी भयंकर हो उठी। उस समय स्तालिन बराबर अपने गुरु को देखने जाया करते थे और डाक्टरों की आज्ञा होने पर राजकाज की बातों को भी बतलाते थे। जैसे ही लेनिन का स्वास्थ कुछ ठीक हुआ, वैसे ही उन्होंने स्तालिन को मिलने के लिये बुलाया। स्तालिन ने अपने संस्मरणों में बतलाया है कि लेनिन सभी राजनीतिक परिस्थितियों में कितनी दिलचस्पी लेते थे।

अक्तूबर सन् १९२२ में लेनिन का स्वास्थ इतना अच्छा हो गया था कि उनके डाक्टरों ने काम पर जाने के लिये इजाज़त दे दी थी। वह जन-कमीसार-परिषद् (मंत्रिमण्डल) की बैठकों में जाने लगे। उसी महीने में, केन्द्रीय कमिटी की एक प्लेनरी (बड़ी) मीटिंग में भी शामिल हुये। वह सोवियतों की अखिल रूसी केन्द्रीय कार्यकारिणी कमिटी की चतुर्थ कांग्रेस में भी बोले, और उन्होंने कम्युनिस्ट इन्टर्नेशनल की चतुर्थ कांग्रेस में नवीन आर्थिक नीति और विश्व-क्रांति की सम्भावना के बारे में एक रिपोर्ट भी दी। २० नवम्बर, सन् १९२२ को मॉस्को सोवियत (नगर पालिका) की एक प्लेनरी बैठक में, गृह और विदेश-सम्बन्धी नीति पर भाषण देते हुये लेनिन ने अपना दृढ़ विश्वास प्रकट किया था कि नवीन अर्थनीति पर चलने वाला रूस एक दिन अवश्य ही समाजवादी रूस बनेगा। लेनिन का यह अंतिम सार्वजनिक भाषण था। वह अखिल रूसी सोवियत कांग्रेस में भाषण देने की तैयारी कर रहे थे। उन्होंने उसकी योजना भी बना ली थी, लेकिन उनका स्वास्थ तेज़ी से ख़राब होने लगा। उन्होंने स्तालिन को एक चिट्ठी भी पार्टी की केन्द्रीय कमिटी की विस्तारित मीटिंग में पढ़ने के लिये लिखी, जिसमें राज्य इजारेदारी के विरोधियों बुख़ारिन आदि की कड़ी आलोचना करते हुये, उन पर कुलक-नीति के समर्थन करने का दोष लगाया था।

दिसम्बर सन् १९२२ को सोवियत समाजवादी गणसंघ की स्थापना हुई। लेनिन बीमार थे। यह कहने की आवश्यकता नहीं कि इस काम में स्तालिन का ही सबसे अधिक हाथ था। संघ के संधि-पत्र को उन्होंने ही तैयार किया और उन्हीं की रिपोर्ट पर सोवियत संघ की प्रथम कांग्रेस ने ३० दिसम्बर, १९२२ को उस संधि-पत्र को स्वीकार किया था। स्तालिन ने ही सोवियत समाजवादी गणसंघ के संविधान को

तैयार किया, जिसे संघ की द्वितीय कांग्रेस ने सन् १९२४ में पास किया था। स्तालिन ने इस समय प्रथम कांग्रेस के सामने भाषण देते हुये कहा था :

"आज का दिन सोवियत सरकार के इतिहास में एक नये युग का परिचायक है। यह पुराने युग और नये युग की विभाजन-सीमा को बनाता है। पुराना युग, जो अतीत हो गया है—जबकि सभी सोवियत गणराज्य यद्यपि एक होकर काम करते थे, लेकिन तो भी उनमें से हरएक अपने-अपने रास्ते जाता और अपनी ही रक्षा के साथ अपना मुख्य सम्बन्ध रखता था। नया युग, जो अब आरम्भ हो रहा है—इसमें भिन्न-भिन्न सोवियत गणराज्यों के अलग-थलग अस्तित्व को खतम किया जा रहा है और आर्थिक अस्त-व्यस्तता को सफलतापूर्वक हटाने के लिये, उसे एक अकेले फैडरल राज्य के रूप में परिणत किया जा रहा है। अब से सोवियत सरकार सिर्फ़ अपने ही अस्तित्व को क़ायम रखने का ध्यान न रखकर, अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति पर प्रभाव डालने और मेहनतकशों के हितों में सुधार करने में सक्षम होने के लिये एक महत्वपूर्ण अन्तर्राष्ट्रीय शक्ति के रूप में विकसित हो रही है।"

बोल्शेविकों की, विशेष कर स्तालिन की, जबर्दस्त सूझ का ही फल था कि जातीय गणराज्यों ने मिल कर एक राज्य हो जाने में कोई हिचकिचाहट महसूस नहीं की। उन्होंने क्रांति के बाद के पांच वर्षों में देख लिया था कि बोल्शेविकों के हृदय में किसी तरह का जातीय पक्षपात नहीं है और रूसी जैसी सबसे आगे बढ़ी हुई जाति भी पिछड़ी जातियों के साथ सच्चा भाई-चारा दिखाती हुई, उन्हें हर तरह से अपने बराबर लाने की कोशिश कर रही है। इसीलिये, जब तातार और बाशकिर बूर्ज्वा-राष्ट्रवादियों ने सुलतान हलीयैफ़ (गलीयैफ़) के नेतृत्व में कुछ गड़बड़ी मचानी चाही, तो उन्हें अपनी जनता की सहायता न पाकर विफल-मनोरथ होना पड़ा।

सन् १९२२ के बाद, बीमारी के कारण लेनिन मॉस्को के पास गोर्की गांव में रहते थे। वह अब इस स्थिति में नहीं रह गये थे कि राजकाज में भाग लेते। एक वर्ष से ऊपर का उनका जीवन अपने पुराने कर्मठ जीवन से बिलकुल भिन्न था। वस्तुतः, इस सारे समय वह जीवन और मृत्यु के बीच में लटके हुये थे, लेकिन उनको इस बात का संतोष था कि सोवियत राज्य का भार बड़े ही योग्य कंधों पर पड़ा है। सन् १९२३ का पूरा साल सारे देश, लेनिन और उनकी पार्टी के लिये भारी परीक्षा का समय था। लेनिन की बीमारी से फ़ायदा उठा कर, त्रोत्स्की और उसके अनुयायी हर तरह से पार्टी और सरकार पर आक्रमण करके उसे कमजोर करने की कोशिशें करते रहे। उनके प्रहार के मुख्य लक्ष्य थे—केन्द्रीय कमिटी के महामंत्री स्तालिन। उन्होंने पार्टी के सम्बन्ध में वाद-विवाद खड़ा कर दिया और एक दूसरी पार्टी बनाने का भी मनसूबा बांधा, लेकिन स्तालिन कई क्षेत्रों में अपनी अद्भुत प्रतिभा दिखला चुके

थे। वह राजनीतिक शतरंज में भी कच्चे गोइयाँ नहीं निकले। पार्टी के लोग उन पर अपार विश्वास रखते थे। वह पिछड़ी जातियों के हिमायती और श्रद्धेय बन चुके थे। २ दिसम्बर, १९२३ को क्रास्नयाप्रेस्न्या (मॉस्को) जिला कमिटी की एक बैठक में स्तालिन ने पार्टी को मजबूत करने और बोल्शेविक संगठन तथा बोल्शेविक नीति के शत्रुओं के मनसूबों को विफल करने के लिये केन्द्रीय कमिटी ने क्या काम किया था, इसे बतलाया। १५ दिसम्बर, १९२३ को स्तालिन के हस्ताक्षर से केन्द्रीय कमिटी की एक घोषणा ' प्राव्दा ' में प्रकाशित हुई, जिसमें अवसरवादियों के विरुद्ध एक होकर संघर्ष करने के लिये कहा गया था। जनवरी सन् १९२४ में पार्टी की एक कान्फ्रेंस हुई, जिसमें स्तालिन ने रिपोर्ट दी। कान्फ्रेंस में त्रॉत्स्की और उसके अनुयायियों को निम्न बूर्ज्वा पथभ्रष्ट कहते हुये, उनकी निंदा की गई।

अन्त में २१ जनवरी, १९२४ का वह मनहूस दिन आया, जब मॉस्को के पास गोर्की गांव में महान् लेनिन ने संसार से अंतिम विदाई ली। साम्यवाद और सोवियत राष्ट्र के लिये यह भयंकर क्षति थी, इसमें शक नहीं; लेकिन, पिछले एक साल के तूफ़ानों का मुक़ाबला करते हुये, स्तालिन ने किस तरह राष्ट्र-नौका को आगे बढ़ाया था, इसे देख कर लोगों को आगे के लिये किसी भय की सम्भावना नहीं थी।

स्तालिन की अपने गुरू में अपार श्रद्धा थी, लेकिन उस श्रद्धा का कारण मूढ़ भक्ति नहीं थी, बल्कि लेनिन की चमत्कारपूर्ण प्रतिभा और अद्वितीय सूझ की करामात को बार-बार देख कर सचाई के सामने सिर झुकाने जैसी भावना थी। स्तालिन को इस बात का बहुत अभिमान और संतोष था कि वह ऐसे गुरू के शिष्य हैं। जब स्तालिन का स्वरूप आगे की सफलताओं के कारण विराट हो गया, तब भी वह अपने को लेनिन का विनम्र शिष्य समझने में गौरव का अनुभव करते थे। लेनिन के शव को २६ जनवरी को अंतिम विश्राम के लिये ले गये थे। उसी दिन, स्तालिन ने अपने गुरू की अर्थी के सामने पार्टी तथा राष्ट्र की ओर से शपथ ली थी।

४. स्तालिन की शपथ (२६ जनवरी, १९२४)

"हम कम्युनिस्ट एक विशेष सांचे में ढले हुये आदमी हैं; हम एक विशेष धातु के बने हैं। हम सर्वहारा युद्ध-विद्या-विशारद, महान् साथी लेनिन की सेना के सिपाही हैं। दुनिया में इस सेना के अंग होने से बढ़ कर और कोई सम्मान नहीं है। उस पार्टी के सदस्य की उपाधि से बढ़ कर कोई बड़ी चीज़ नहीं हो सकती, जिसके संस्थापक और नेता साथी लेनिन हैं।...

"हमसे विदा होते हुये, साथी लेनिन ने हमारे ऊपर जिम्मेवारी रखी है कि पार्टी के सदस्य की महान् उपाधि को ऊंचा, शुद्ध और सुरक्षित रखने के लिये

प्रयत्न करें। साथी लेनिन, हम तुम्हारे सामने शपथ लेते हैं कि हम तुम्हारी इच्छा को भली भांति पूरा करेंगे।

"हमसे विदा होते हुये, साथी लेनिन ने हमारे ऊपर ज़िम्मेवारी रखी है कि हम अपनी पार्टी की एकता को अपनी आंखों की पुतली की तरह जोगा कर रखें। साथी लेनिन, हम तुम्हारे सामने शपथ लेते हैं कि हम तुम्हारी इच्छा को भली भांति पूरा करेंगे।

"हमसे विदा होते हुये, साथी लेनिन ने हमारे ऊपर ज़िम्मेवारी रखी है कि हम सर्वहारा के नेतृत्व को सुरक्षित और मज़बूत करें। साथी लेनिन, हम तुम्हारे सामने शपथ लेते हैं कि हम तुम्हारी इच्छा को भली भांति पूरा करेंगे।

"हमसे विदा होते हुये, साथी लेनिन ने हमारे ऊपर ज़िम्मेवारी रखी है कि हम कमकरों और किसानों की दोस्ती को अपनी सारी शक्ति से मज़बूत करें। साथी लेनिन, हम तुम्हारे सामने शपथ लेते हैं कि हम तुम्हारी इच्छा को भली-भांति पूरा करेंगे।...

"साथी लेनिन बराबर हम पर अपने देश की जातियों के स्वेच्छापूर्वक संघ को क़ायम रखने की आवश्यकता, गणसंघ के ढांचे के भीतर उनमें भाई चारे के सहयोग की आवश्यकता पर जोर देते थे।

"हमसे विदा होते हुये, साथी लेनिन ने हमारे ऊपर ज़िम्मेवारी रखी है कि हम गणों के संघ को मज़बूत और विस्तृत करें। साथी लेनिन, हम तुम्हारे सामने शपथ लेते हैं कि हम तुम्हारी इच्छा को भली भांति पूरा करेंगे।

"अनेक बार लेनिन ने हमको बतलाया था कि हम लाल सेना को मज़बूत करें, और उसकी स्थिति में सुधार करना हमारी पार्टी का एक बहुत महत्वपूर्ण काम है।... साथियो, आओ हम शपथ लें कि अपनी लाल सेना और लाल नौसेना को मज़बूत करने में किसी भी बात को उठा नहीं रखेंगे।...

"हमसे विदा होते हुये, साथी लेनिन ने हमारे ऊपर ज़िम्मेवारी रखी है कि हम कम्युनिस्ट इन्टर्नेशनल के सिद्धांतों के विश्वासपात्र रहें। साथी लेनिन, हम तुम्हारे सामने शपथ लेते हैं कि सारी दुनिया के मेहनतकशों के संघ—कम्युनिस्ट इन्टर्नेशनल—को मज़बूत और विस्तृत करने में हम अपने प्राणों की भी परवाह नहीं करेंगे।..."

इस शपथ के बाद, स्तालिन उन्तीस वर्ष तक जिये और उन्होंने लेनिन के सामने ली हुई अपनी शपथ की एक-एक बात को किस तरह पूरा किया है, इसे सारी दुनिया जानती है।

लेनिन की अन्त्येष्टि—क्रिया के दो दिन बाद २८ जनवरी, १९२४ को उस महान् नेता के प्रति श्रद्धांजलि भेंट करते हुये, उनके योग्य उत्तराधिकारी ने एक महत्वपूर्ण भाषण दिया था।

प्रथम बरसी के समय 'रबोचया गजेता' (मजदूर अखबार) में स्तालिन ने एक पत्र लिखा था, जिसके कुछ अंश हैं :

"अपने गुरू और नेता—लेनिन का स्मरण रखो, उनसे प्रेम करो और उनका अध्ययन करो।

"हमें लेनिन ने जैसे सिखलाया है, वैसे ही भीतरी-घरेलू और विदेशी शत्रुओं के साथ लड़ो और उनको मार भगाओ।

"हमें लेनिन ने जैसे सिखलाया है, उसी तरह एक नये जीवन और अस्तित्व के एक नये रास्ते और नई संस्कृति का निर्माण करो।

"छोटी-छोटी चीजों के करने से इन्कार न करो, क्योंकि छोटी-छोटी चीजों से ही मिल कर बड़ी चीजें बनती हैं—यह लेनिन की एक महत्वपूर्ण वसीयत है।"

त्रॉत्स्की व्यवहारिक राजनीति या अर्थनीति में चाहे कितना ही कच्चा हो, लेकिन उसकी महत्वाकांक्षायें बहुत बढ़ी-चढ़ी थीं। लेनिन जानते थे कि वह कितना क्षुद्र अविश्वसनीय और निकम्मा आदमी है; इसीलिये उन्होंने त्रॉत्स्की को आगे नहीं बढ़ाया और पार्टी तथा सरकार की सारी जिम्मेवारी स्तालिन ही के ऊपर रखी। लेनिन के मरने के बाद, अब त्रॉत्स्की और उसके साथियों ने फिर सिर उठाया। स्तालिन अपने गुरु की बीज रूप में छोड़ी हुई योजनाओं को एक बड़े आकार में पूरा करने के लिये बहुत सी कल्पनायें कर रहे थे, लेकिन वह देख रहे थे कि मुट्ठीभर त्रॉत्स्कीवादियों के विरोध के कारण एक मन से, दृढ़ संकल्प के साथ देश के लिये कुछ भी करना मुश्किल होगा। इसीलिये, उन्होंने घोषित किया : "जब तक त्रॉत्स्कीवाद को हराया नहीं जाता, तब तक नई अर्थनीति की स्थितियों में विजय प्राप्त करना और आज के रूस को एक समाजवादी रूस के रूप में परिवर्तित करना भी असम्भव होगा।"—त्रॉत्स्कीवादियों के कुतर्कों का जवाब देते हुये, उन्होंने पार्टी के मुख पत्र 'प्राव्दा' में पहले कई लेख लिखे थे। इसी साल (अप्रैल सन् १९२६) उन्होंने स्वेर्दलोफ़ युनिवर्सिटी में 'लेनिनवाद की आधारशिलायें' के नाम से कई व्याख्यान दिये थे। यह भाषण, तथा इस सम्बन्ध में लिखे उनके हुये दूसरे लेख 'लेनिनवाद की समस्यायें' के नाम से प्रकाशित हुये थे। लेनिनवाद की व्याख्या करते हुये स्तालिन ने कहा :

"लेनिनवाद साम्राज्यवाद और सर्वहारा क्रांति के युग का मार्क्सवाद है। ठीक तौर से कहना होगा कि लेनिनवाद साधारण तौर से सर्वहारा क्रांति का सिद्धांत और दाव-पेंच, विशेष तौर से वह सर्वहारा अधिनायकत्व का सिद्धांत और दाव-पेंच है।"

अध्याय ७.

पुनर्निर्माण

(सन् १९२४-२७)

मार्क्स और एंगेल्स ने सन् १८४८ में 'कम्युनिस्ट घोषणा' प्रकाशित करते हुये, बतलाया था कि सर्वहारा अपनी विजय के बाद किस प्रकार पूंजीवादी समाज को समाजवादी समाज के रूप में परिणत कर सकता है। 'कम्युनिस्ट घोषणा' के बाद, सन् १८७३ में फ्रांस के मजूरों ने पेरिस कम्यून के रूप में सर्वहारा राज्य स्थापित करके, उसे थोड़े से समय के लिये चलाया था। लेकिन, उसे गृह-युद्ध के बीच ही खतम हो जाना पड़ा था। जिसमें वह थोड़े से ही मौलिक परिवर्तन, सो भी कुछ ही समय के लिये कर पाये थे। इसमें शक नहीं कि बोल्शेविकों ने पेरिस कम्यून के तर्जबों से काफ़ी फ़ायदा उठाया था और उन्होंने क्रांति के सफल होते ही कई कार्यक्रम कार्यरूप में परिणत कर दिये थे। भूमि का राष्ट्रीकरण कर, ज़मींदार वर्ग को खतम कर—खेत किसानों के हाथों में दे दिये; पूंजीपतियों को खतम कर—मिलों, फैक्टरियों, रेलों तथा दूसरे यातायात के साधनों और खानों के साथ, बैंकों का भी राष्ट्रीकरण कर दिया गया। उन्होंने यह क़दम उठा कर, पूंजीवाद की दाढ़ों और विषदंतों को निकाल फेंका और देश के किसानों को सर्वहारों के साथ एक कर दिया। यदि गृह-युद्ध में न फँसना पड़ता, तो पुनर्निर्माण और नव-निर्माण का काम बहुत पहले से ही शुरू हो गया होता। बीमारी के समय ही, सन् १९२३ की जनवरी और मार्च में लेनिन का दिमाग़ देश के पुनर्निर्माण और उद्योगीकरण पर ही केन्द्रित रहता था। चाहे अनुशासन को मानते हुये, उन्हें अखबार पढ़ने की इच्छा न होती हो, लेकिन उनका दिमाग़ कैसे मूर्छित लेनिन को रह सकता था। तीन महीनों में उन्होंने कई महत्वपूर्ण लेख लिखवाये थे, जिनमें उन्होंने सहयोगी-योजना, समाजवादी पुनर्निर्माण, देश के उद्योगीकरण तथा कृषि के सामूहीकरण के बारे में लिखा था। उन्होंने यह दिखलाया था कि सर्वहारा के अधिनायकत्व के साथ, जब उत्पादन के सभी बड़े पैमाने के साधन सोवियत-राज्य के हाथ में हैं, जब सर्वहारा किसानों का पथ-प्रदर्शन कर रहे हैं, तब एक पूर्ण समाजवादी समाज के निर्माण करने के लिये सभी आवश्यक चीज़ें मौजूद हैं। उन्होंने लिखा था :

> "हमें एक ऐसा राज्य बनाने की कोशिश करनी है, जिसमें किसानों का नेतृत्व कमकर अपने हाथ में रखें; अपने में किसानों का विश्वास क़ायम रखते हुये, अत्यंत मितव्ययिता का परिचय दें और हमारे सामाजिक सम्बन्धों से हरएक तरह की फ़िज़ूलखर्ची के चिन्हों को भी मिटा दें। दुनिया में कहीं कोई

ऐसा स्थान नहीं है, जहां से हमें मदद मिल सकेगी। देश के उद्योगीकरण और बिजलीकरण के लिये, सभी साधनों को देश के भीतर से ही बड़ी मितव्ययिता और खर्च की कमी करके जुटाना होगा। देखना होगा कि एक-एक पैसा जो हम बचाते हैं; वह हमारे बड़े पैमाने के मशीन-उद्योग, बिजलीकरण आदि के विकास, वोल्खोफ़ पन-बिजली स्टेशन आदि के निर्माण में ही लगे। इसी, और केवल इसी में हमारी आशा निहित है।"

ऊपर के उद्धरणों से मालूम होगा कि लेनिन ने उन सभी बातों पर संक्षेप में प्रकाश डाल दिया था, जिन पर ले जाकर देश को एक शक्तिशाली राष्ट्र में परिणत करना था। लेनिन की मृत्यु के समय तक, यह एक परिवर्तन अवश्य हुआ था कि अब साम्राज्यवादी सब कुछ करके हार चुके थे और उनमें से एक-एक करके कितनों ही ने बोल्शेविकों की सरकार को स्वीकार भी कर लिया था।

१. चौदहवीं पार्टी कांग्रेस (सन् १९२५)

त्रॉत्स्की और उसके अनुयायी पहले ही, लेनिन के सामने से ही, हल्ला मचा रहे थे कि देश में तब तक समाजवादी समाज की स्थापना नहीं हो सकती, जब तक कि समाजवाद दूसरे देशों में भी विजयी न हो जाय। त्रॉत्स्की के अनुसार, सारे विश्व में क्रांति हो जाने पर ही समाजवाद क़ायम किया जा सकता था। वह एक देश में समाजवाद के विजयी होने की सम्भावना न समझ कर, उसका विरोध करता था। स्तालिन ने त्रॉत्स्की की बड़ी-बड़ी बातों को कोरा गाल बजाना बतलाते हुये, कहा कि एक देश में भी समाजवाद का निर्माण हो सकता है; एक देश में वैसा प्रयत्न न करने का मतलब केवल हवाई किले बनाना है। उन्होंने साफ़ कहा कि समाजवाद की अंतिम विजय, साम्राज्यवादियों के सोवियन संघ में दख़ल देने तथा पूंजीवाद की पुनः स्थापना के प्रयत्नों को सर्वदा के लिये ख़तम करने के लिये यह ज़रूरी है कि दूसरे देशों में भी पूंजीवाद का ख़ात्मा हो, अर्थात् पूंजीवादी घेरा टूट जाये। लेकिन, जहां तक भीतरी बातों का सवाल है, समाजवाद की विजय और वर्गहीन समाजवादी समाज के निर्माण के लिये आवश्यक सारी चीज़ें सोवियत समाजवादी गणसंघ में मौजूद हैं।

चौदहवीं पार्टी कांग्रेस (अप्रैल सन् १९२५) ने स्तालिन के इन विचारों का समर्थन किया। इस कान्फ्रेंस ने सभी पार्टी सदस्यों के लिये अनिवार्य कर दिया कि वह सोवियत संघ में समाजवाद की विजय के लिये काम करें। फ़ौरी काम की व्याख्या करते हुये, स्तालिन ने इसी कान्फ्रेंस में कहा था :

"आज हमारे सामने मुख्य काम है—मझोले किसानों को सर्वहारा के साथ करके, उन्हें अपने पक्ष में लाना। आज मुख्य काम है—किसानों के मुख्य समूह के साथ सम्बन्ध स्थापित करना, उनके भौतिक और सांस्कृतिक तल को

ऊंचा करना और इन मुख्य समूहों के साथ मिल कर, समाजवाद के पथ पर आगे बढ़ना। मुख्य काम है—किसानों के साथ, और मजूर-वर्ग के पूर्ण नेतृत्व में समाजवाद का निर्माण करना। मजूर-वर्ग का नेतृत्व इस बात की मौलिक गारंटी है कि हमारा निर्माण का काम समाजवाद के पथ पर होते हुये आगे बढ़ेगा।

दिसम्बर सन् १९२५ में पार्टी की यह कांग्रेस हुई, जिसके सामने स्तालिन ने केन्द्रीय कमिटी की ओर से राजनीतिक रिपोर्ट दी थी। तेरहवीं कांग्रेस के बाद देश में जो कुछ हुआ था, उसके बारे में बतलाते हुये उन्होंने कहा कि जो कुछ भी हम कर पाये हैं, वह एक पिछड़े हुये कृषि-प्रधान देश के लिये असंतोषजनक नहीं है। साथ ही, यह भी बतलाया कि हमारा लक्ष्य है :

> "अपने देश को एक किसानी देश से औद्योगिक देश के रूप में परिवर्तित करना, जिसमें वह अपने प्रयत्नों से सभी आवश्यक साधनों को पैदा कर सके।"

जिनोवियेफ़ और कामनेफ़ ने स्तालिन की योजना का विरोध किया और उसकी जगह ऐसी योजना रखी, जिसका मतलब था—देश को कृषि-प्रधान बनाये रखना। स्तालिन भारतीय नेताओं की तरह दुर्बल-बुद्धि, अदूरदर्शी या लोगों को धोखे में रखने वाले नहीं थे, उन्हें जल्द से जल्द देश को स्वावलम्बी बना कर राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक और सैनिक दृष्टि से मजबूत बना डालना था; जो उद्योगीकरण के बिना हो ही नहीं सकता था। भारत में जो तथाकथित पंचवर्षीय योजना बनायी गयी है, उसमें उद्योगीकरण के लिये समुद्र में बूंद जितनी पूंजी भी सरकार ने नहीं रखी है। वह चाहती है, पूंजीपति घड़ियालों के बल पर देश का उद्योगीकरण करना! लेनिन की मृत्यु के बाद, अब सारे ही ढुलमुल यक़ीन अवसरवादी एक होकर, विरोध पर तुले हुये थे। त्रॉत्स्की, जिनोवियेफ़, बुखारिन, कामनेफ़ और उनके अनुयायी मिल कर, स्तालिन की योजना के विरुद्ध सारी शक्ति लगा रहे थे; लेकिन उनके अनुयायियों की संख्या बहुत कम थी। और, दूसरी ओर क्रांति तथा गृह-युद्ध की आग में तपे हुये मोलोतोफ़, कालिनिन, बोरोशिलोफ़, कुइबिशेफ़, फ़ुंजे, जैर्जिन्स्की, ओर्योनिकिदूजे, किरोफ़, यारोस्लाव्स्की, मिकोयान, अन्द्रेयेफ, श्वेर्निक, ज़्दानोफ़, शूकिर्यातोफ़ आदि स्तालिन के साथ थे। लेनिन ने पहले ही कह दिया था :

> "अगर हम अपने देश में उद्योग-धंधे खड़े करके उसे मजबूत नहीं कर सकते, तो इसका मतलब होगा अपने देश को एक सभ्य देश, एक समाजवादी देश के रूप में खतम करना।"

लेनिन के इस वाक्य की सत्यता को स्तालिन अच्छी तरह से जानते थे। वह समझते थे कि देश की सुरक्षा उद्योग-धंधों पर ही निर्भर है। उद्योग-धन्धों की मजबूत नींव रखने के लिये, किसानों और मजदूरों के सहयोग की

बड़ी जरूरत है। किसानों को शिक्षित करके समाजवाद के निर्माण में हाथ बंटाने के लिये, यह जरूरी है कि खेतों का सामूहीकरण हो, बड़े पैमाने पर उत्पादन का संगठन किया जाय। इन सबके लिये, नये उपायों और नये साधनों की आवश्यकता होगी, जिन्हें हम कल-कारखानों से ही पा सकते हैं।

स्तालिन के नेतृत्व में फिर बोल्शेविकों की विजय हुई और अवसरवादियों को हरा कर, उन्होंने उद्योगीकरण के लिये पहला क़दम उठाया।

२. *समाजवादी उद्योगीकरण*

देश का उद्योगीकरण अनिवार्यतया आवश्यक था। बाहर से पूँजी मिलने की कोई संभावना नहीं थी और न इंगलैंड की तरह, अपनी आधीन जातियों को लूट-खसोट कर ही पूंजी जमा की जा सकती थी। पूंजी के अतिरिक्त, आवश्यक विशेषज्ञों की भी बहुत कमी थी। ज़ारशाही के समय में जो इंजीनियर, टेक्नीशियन आदि थे भी, उनमें से कितने ही क्रांति-विरोधियों के पक्ष में होकर बाद में देश से बाहर चले गये थे। लेकिन, स्तालिन ने अच्छी तरह समझ लिया था कि अपने ही बूते पर उद्योगीकरण करना असम्भव नहीं है। उन्होंने इस विषय पर अपने विचारों को प्रकट करते हुये, समाजवादी उद्योगीकरण के ये सिद्धांत बताये थे :

(१) उद्योगीकरण का अर्थ केवल औद्योगिक उपज का बढ़ाना ही नहीं है, बल्कि भारी उद्योग, और सबसे बढ़ कर उसके मूल-स्रोत—मशीन-निर्माण का विकास करना है, क्योंकि मशीन-निर्माण-उद्योग के साथ स्वदेशी भारी उद्योग ही केवल वह चीज़ है, जो समाजवाद के लिये भौतिक आधार बन सकता है।

(२) अक्तूबर-समाजवादी-क्रांति के परिणाम स्वरूप, हमारे देश में जमींदारों और पूंजीपतियों का उच्छेद, भूमि, कारखानों, बैंकों आदि में वैयक्तिक सम्पत्ति का खात्मा और इन सबका सारी जनता की सम्मिलित सम्पत्ति के रूप में परिणत होना, —इन सबने उद्योगों के विकास के लिये, समाजवादी पूंजी-संचय के लिये एक बहुत जबर्दस्त स्रोत पैदा कर दिया है।

(३) समाजवादी उद्योगीकरण पूंजीवादी उद्योगीकरण से मौलिक भेद रखता है। पूंजीवादी उद्योगीकरण का आधार है—आधीन देशों की लूट-खसोट, सैनिक विजय और सूद पर लगाये भारी-भारी कर्ज़ तथा आधीनस्थ लोगों का निष्ठुर शोषण। समाजवादी उद्योगीकरण का आधार है—उत्पादन के साधनों का सामाजिक स्वामित्व, मजूरों और किसानों के जांगर से उत्पादित धन का संचयन और प्रबन्ध, जिसके साथ कमकर-वर्ग के जीवन-तल का ऊपर उठना आवश्यक रूप से लगातार होता जाता है।

(४) इसलिये, उद्योगीकरण के संघर्ष के लिये मुख्य काम है—श्रम की उत्पादकता को बढ़ाना, उत्पादन के ख़र्च को कम करना, कमकरी अनुशासन तथा कड़ी मितव्ययिता आदि को आगे बढ़ाना।

(५) सोवियत संघ में समाजवाद के निर्माण के लिये जो स्थितियां मौजूद हैं और कमकर वर्ग में काम के लिये जो उत्साह है, उसके कारण उद्योगीकरण में तीव्र गति से सफलता प्राप्त करना बिलकुल सम्भव है।

(६) समाजवादी ढंग पर कृषि के पुनर्निर्माण करने के पहले, देश का उद्योगीकरण ज़रूरी है, जिसमें कृषि के पुनर्निर्माण के लिये आवश्यक यांत्रिक साधन तैयार हो जायें।

स्तालिन की सूझ के सुपरिणाम को हम पहले देख चुके हैं। स्तालिन के तिकड़म से नेता बन जाने की बात कहने वाले केवल अपने को ही धोखा देते हैं, अथवा कम्युनिज़्म के ख़िलाफ़ हर तरह की झूठ को पुण्य समझ कर, वह दुनिया के सदिच्छुक सीधे-सादे आदमियों को सचाई के पास पहुंचने से रोकना चाहते हैं। सचमुच, अगर कोई समझदार आदमी भी इस तरह की ऊल-जलूल बातें करे, तो हमें समझ लेना चाहिये कि उस आदमी में कोई नैतिक बल नहीं है, वह गंदगी का कीड़ा है और वह अवसर मिलते ही, जघन्य से जघन्य काम कर सकता है। साथ ही, यह निश्चय है कि ऐसे पामर आदमी में इतिहास के प्रवाह को बदलने की क्षमता बिलकुल नहीं हो सकती। वस्तुतः, क्नोरिन के अनुसार :

> "केवल सिद्धांतवादी और व्यवहारिक आदमी के तौर पर, अपनी श्रेष्ठता से ही स्तालिन हमारे नेता बन गये हैं।"

और, इन्हीं गुणों के न रहने के कारण त्रॉत्स्की सबसे निचले गड्ढे में गिर कर, अंत में क्रांति-विरोधी और आदर्श—द्रोही बन गया। उसके काले हृदय को परखने के बाद, उसे अपने चेले द्वारा ही प्राण गँवाने पड़े। स्तालिन ने नेता बनने की योग्यता के बारे में लिखा है :

> "बागडोर हाथ में लेकर आंखें बन्द करके तब तक आगे ताकना, जब तक कि दुर्घटना न घट जाये, यह नेतृत्व का अर्थ नहीं है। बोल्शेविक नेतृत्व के काम को इस तरह नहीं समझते। नेतृत्व करने के लिये, आदमी को दूरदर्शी होना चाहिये।... तुम अगर अलग-थलग हो, चाहे दूसरे उन साथियों से भी जो कि नेतृत्व कर रहे हैं, तो तुम हरएक चीज़ को केवल ऐसे रूप में देखोगे, मानो एक ही समय लाखों-करोड़ों कमकर कमज़ोरियों को ढूंढ रहे हैं, ग़लतियों का पता लगा रहे हैं और सम्मिलित काम को पूरा करने में अपने को खपा रहे हैं।"

कल-कारखानों और बिजली-स्टेशनों के निर्माण का काम बड़े जोर-शोर से होने लगा। इसमें जो सफलता प्राप्त हुई, उसके कारण स्तालिन को विश्वासपूर्वक यह कहते हुये हिचकिचाहट नहीं हुई कि "हमें अत्यंत आगे बढ़े हुये पूंजीवादी देशों के स्तर तक पहुंचना और कम से कम समय में, उनसे आगे बढ़ना है।" लेकिन, हम दिसम्बर सन् १९२५ की चौदहवीं कांग्रेस में देख चुके हैं कि ज़िनोवियेफ़ और कामनेफ़ के गुट ने एड़ी-चोटी का ज़ोर लगा कर, किस तरह विरोध किया था। उन्होंने 'नवीन विरोधी दल' के नाम से अपना एक गुट क़ायम किया, जिसका अगुवा ज़िनोवियेफ़ था। इस गुट ने सन् १९२६-२७ में बड़ी तत्परता से काम किया। इस प्रकार समाजवादी निर्माण का काम, साथ ही इस गुट की साजिशों और तोड़-फोड़ की कार्यवाइयों के खिलाफ़ निर्मम संघर्ष चलाने का काम भी था। सन् १९२६ की फरवरी में कम्युनिस्ट इन्टर्नेशनल की कार्यकारिणी कमिटी के छठे परिवर्धित प्लेनम में, स्तालिन ने 'दक्षिण पंथी' और 'चरम वामपंथी' विरोधियों की कड़ी आलोचना की और विरोध के कारण देश की प्रगति ही नहीं, उसके अस्तित्व के लिये भी जो ख़तरा पैदा हो गया था, उसको साफ़ शब्दों में बतलाया। उसके कारण, विरोधियों का प्रभाव और भी कम हो गया।

इसी साल (३० नवम्बर, १९२८ में), स्तालिन ने 'चीनी क्रांति की समस्यायें' नामक एक अत्यंत महत्वपूर्ण निबन्ध लिखा था, जिसने आगे चल कर चीनी क्रांति की सफलता में भारी पथ-प्रदर्शन किया। अगले साल १३ मई, १९२७ को उन्होंने सन-यात्-सेन युनिवर्सिटी के विद्यार्थियों के सामने भाषण दिया और २४ मई, १९१७ को चीनी क्रांति के सम्बन्ध में कम्युनिस्ट इन्टर्नेशनल के कर्त्तव्य का निर्देश किया। यह सब देखने से मालूम होता है कि देश के पुनर्निर्माण में लगे रहते हुये भी, दुनिया के दूसरे भागों के पथ-प्रदर्शन से स्तालिन ने आंखें नहीं मूद ली थीं। उनकी नज़र बराबर दूसरे देशों पर भी रहती थी। सन् १९२६ में इंगलैंड के मज़दूरों ने जब सार्वजनिक हड़ताल की, तो उसी साल जून में तिफ़लिस के रेलवे कमकरों के सामने स्तालिन ने उसके महत्व पर भाषण दिया था।

नवम्बर सन् १९२६ में पार्टी की पंद्रहवीं कान्फ्रेंस हुई। स्तालिन ने पुनर्निर्माण के तजर्बों के आधार पर अब बड़ी योजना की ओर बढ़ने की आवश्यकता समझ कर, इसके बारे में कहा :

"यह बिना जाने कि हमें किस दिशा में जाना चाहिये, बिना जाने कि हमारी गति का लक्ष्य क्या है, हम आगे नहीं बढ़ सकते। हम तब तक निर्माण नहीं कर सकते, जब तक कि इस बात की सम्भावना और निश्चय न हो कि हम समाजवादी आर्थिक व्यवस्था के निर्माण का आरम्भ करके उसे पूरा कर सकेंगे। पार्टी बिना स्पष्ट सम्भावना, बिना स्पष्ट लक्ष्य के निर्माण के काम का पथ-प्रदर्शन

नहीं कर सकती। हम बर्नेस्टाइन के विचारों के अनुसार नहीं कह सकते कि 'गति सब कुछ है, और लक्ष्य कुछ नहीं।' इसके विरुद्ध क्रांतिकारियों की तरह हमें अपनी प्रगति, अपने व्यवहारिक काम को सर्वहारा-निर्माण के मौलिक वर्ग-लक्ष्य के आधीन करना होगा। नहीं तो, निस्सन्देह और अवश्य ही हम अवसरवाद के दल-दल में जा गिरेंगे।" इसी कान्फ्रेंस ने बड़े पैमाने पर समाजवादी उद्योग के निर्माण करने के लिये, देशव्यापी योजना को कार्यरूप में परिणत करने का निश्चय किया।

सन् १९२७ के दिसम्बर में जब पन्द्रहवीं पार्टी कांग्रेस हुई, तब तक पुन-र्निर्माण का काम पूर्ण हो चुका था। प्रथम महायुद्ध और गृह-युद्ध के बाद, संपत्ति का भीषण ध्वंस हुआ था और कृषि तथा उद्योग के हरएक क्षेत्र में उपज बहुत घट गई थी। सन् १९२७ के खतम होते-होते, अब सोवियत रूस के उत्पादन के आकड़े हर बात में सन् १९१२ के रूस की अपेक्षा बहुत आगे बढ़ चुके थे। ज़ारशाही रूस के उत्पादन का चरम विकास सन् १९१३ में हुआ था, यह ध्यान रखना चाहिये। सन् १९२७ में, १९१३ की अपेक्षा कृषि की उपज ८ फ़ी सैकड़ा अथवा एक अरब रूबल अधिक हुई। उद्योग-धंधों में यह वृद्धि १२ फ़ी सैकड़ा या बीस करोड़ रूबल अधिक थी। ज़ारशाही रूस में जहां उतने ही भूभाग में, सन् १९१३ में साढ़े छत्तीस हजार मील रेलें थीं, अब वह बढ़ कर अड़तालीस हजार दो सौ मील हो गईं थीं, कमकरों के वेतन में भी १६ फ़ी सैकड़ा की वृद्धि हुई थी। शिक्षा-क्षेत्र में तो यह वृद्धि और भी आश्चर्यजनक हुई थी। सन् १९१३ में जितने विद्यार्थी प्राइमरी स्कूलों में पढ़ते थे, उनकी संख्या बढ़ कर सन् १९२५ में साढ़े बाईस लाख हो गई थी। टेक्नीकल स्कूलों में तो उनकी संख्या दूनी हो गई थी, शिक्षा पर दूना पैसा खर्च किया जा रहा था और वैज्ञानिक प्रतिष्ठानों पर तो वह दस गुना हो रहा था। राष्ट्रीय आय अब बढ़ कर, साढ़े बाईस अरब रूबल हो गई थी और सोवियत संघ का नम्बर अब इस क्षेत्र में कनाडा, इंगलैंड, जर्मनी और फ्रांस के बराबर और केवल युक्त राष्ट्र अमरीका से पीछे था। अब ७७ फ़ी सैकड़ा उद्योग-धंधे सामूहिक थे, केवल १४ फ़ी सैकड़ा निजी और सब सहकारी प्रबन्ध में थे। कृषि-उत्पादन में समाजवादी भाग अभी केवल २.७ फ़ी सैकड़ा था और निजी खेती ९७.३ फ़ी सैकड़ा। व्यापार में, समाजवादी कारबार ८१.९ फ़ी सैकड़ा और निजी १८.१ फ़ी सैकड़ा रह गया था।

२. त्रॉत्स्की का पतन

इस प्रकार, इन सफलताओं के बाद अगला बड़ा क़दम उठाना स्वाभाविक ही था। लेकिन, अब विरोधी अपने पैर के नीचे से धरती खिसकती देख कर जबर्दस्त संघर्ष के लिये तैयार थे। त्रॉत्स्की और उसके अनुयायी सन् १९२७ की शरद में अब खुले आम प्रहार करके, पूंजीवाद की पुनः स्थापना में हाथ बंटाने के लिये एक स्वतंत्र दल बनाने का प्रयत्न

करने लगे। सोवियत रूस की इस हालत को देखकर, पूंजीवादी देश बड़े प्रसन्न थे और वह इस दल को हर तरह की मदद देने के लिये तैयार थे। पंद्रहवीं कांग्रेस के बाद, त्रॉत्स्कीवादियों का विरोध अब पुराने मेन्शेविकों के रास्ते पर चलने लगा। विश्व के और बहुत से देशों में क्रांति के हुये बिना किसी देश में समाजवाद प्रतिष्ठापित नहीं किया जा सकता—वह इन बातों की आड़ में, देश में पूंजीवाद के लिये रास्ता साफ़ करना चाहते थे। त्रॉत्स्की और उसके अनुयायी पुनर्निर्माण के समय से ही जिस तरह का सक्रिय विरोध कर रहे थे, यदि उसमें सफलता होती, तो क्या सोवियत रूस कभी सबल हो सकता था? और, उसे निर्बल रखना क्या शक्तिशाली साम्राज्यवादियों को फिर से आक्रमण के लिये निमंत्रण देना नहीं था? पंद्रहवीं कांग्रेस के निश्चय के अनुसार प्रथम पंचवार्षिक योजना तैयार की गई। और, इसी कांग्रेस ने त्रॉत्स्की और उसके अनुयायियों को पार्टी से निकाल बाहर किया। त्रॉत्स्की के निकलने के बाद, अब वही हथियार इकोफ़, बुख़ारिन, तोम्स्की आदि ने उठाया और अब वामपक्ष के स्थान पर दक्षिणपक्ष की ओर से प्रहार होने लगा। मई सन् १९२८ में, इन अवसरवादियों की ओर ध्यान देना ज़रूरी होगया। प्रथम पंचवार्षिक योजना का मुख्य उद्देश्य था—भारी उद्योग-धंधों को दृढ़ नींव पर स्थापित कर, देश को आर्थिक तौर से स्वावलम्बी और सामरिक तौर से मज़बूत बनाना। लेकिन, दक्षिणपक्षी विरोधी यह कह कर उसका विरोध कर रहे थे कि इसके कारण जो भारी पूंजी की आवश्यकता होगी, उसे लगाने पर लोगों का जीवन-तल बहुत गिर जायेगा। इसमें शक नहीं कि अपने परिश्रम से ही बचा कर भारी परिणाम में पूंजी लगाने का प्रभाव लोगों के लिये कष्टदायक होता, लेकिन और क्या रास्ता था? पूंजीवादी देश फिर सोवियत के विरुद्ध कड़ा रुख़ करने लगे थे और वह किसी वक्त भी आक्रमण कर सकते थे। इसीलिये, स्तालिन ने अपने भाषण में कहा कि "भारी उद्योगों के विकास को रोकने का मतलब हमारे देश के लिये आत्महत्या होगी;" और, "इसका मतलब होगा—देश के उद्योगीकरण के नारे को त्यागना तथा अपने देश को पूंजीवादी आर्थिक व्यवस्था की पूंछ बना देना।"

त्रॉत्स्की के निकाल बाहर किये जाने पर, वह दुनिया के पूंजीवादियों का एक बड़ा पैगम्बर बन गया। पूंजीवादी उसको क्रांति का अप्रतिम योद्धा और पारदर्शी राजनीतिक नेता कह कर, स्तालिन और सोवियत रूस के ख़िलाफ़ आग उगलने लगे। मालूम होता था कि यही थैलीशाह बोल्शेविक क्रांति के सबसे बड़े पक्षपाती हैं। त्रॉत्स्की के बारे में लेनिन पहले ही लिख चुके थे!—"वह कभी अपनी महत्वाकांक्षा पर होने वाले किसी आक्रमण को क्षमा नहीं कर सकता।" और, वही महत्वाकांक्षा उसे डुबोने का कारण बनी। लेकिन, बोल्शेविकों को बदनाम करने के लिये उनके शत्रुओं को कोई बात तो मिलनी चाहिये थी। उन्होंने त्रॉत्स्की-कांड को खूब बढ़ा-चढ़ा कर फैलाया, और इसको लेकर तटस्थ लोगों में नवीन रूस के प्रति घृणा पैदा करने की

पूरी कोशिश की। पूंजीवादियों ने वास्तविक स्थिति के साथ परिचय प्राप्त करने के सभी रास्ते भी बन्द कर दिये थे और सब जगह एकतरफ़ा प्रचार हो रहा था। त्रॉत्स्की वर्षों से लेनिन का जबर्दस्त विरोधी रह चुका था; गृह-युद्ध में भी हम उसके रवैये को चुके देख हैं; सन् १९२१ में लेनिन के समय भी उसने पार्टी का जबर्दस्त विरोध किया था; सन् १९२२-२३ में भी वह वैसी ही कोशिशें कर रहा था। लेनिन ने कहा था : "त्रॉत्स्की एक मानव गेंद है।" त्रॉत्स्की कभी किसी व्यावहारिक कार्य के लिये निर्णय करने की शक्ति नहीं रखता था; लेकिन शायद उसमें बातें बघारने का रोग भारत के हमारे महान् नेता जितना ही दिखाई देता था। अपनी आवाज़ को सुन कर, वह मस्त हो जाता था। उसके एक पुराने साथी ने लिखा है : "किसी अकेले आदमी से गुप्त रीति से बातें करते समय भी, वह वक्ता बन जाता था।"

फ्रेंच लेखक बारबूस के अनुसार : "त्रॉत्स्की के पास वकीलवादी कला—आलोचक और पत्रकार—के लिये आवश्यक बहुत ऊंचे दर्जे के गुण मौजूद थे, लेकिन उसमें नई भूमि तैयार करने के लिये एक राजनीतिज्ञ की योग्यता नहीं थी। उसमें वास्तविकता और जीवन के परखने-समझने की क्षमता बिलकुल नहीं थी। कर्मठ आदमी के लिये जो बड़ी लगन और निष्ठुरता की आवश्यकता होती है, उसमें उसका नितांत अभाव था। वस्तुतः, उसमें मार्क्सीय धारणाओं के प्रति दृढ़ विश्वास नहीं था। वह हमेशा से डरता आया था। वह इसी भय के कारण, मेनशेविक रहा था और इस समय भय के कारण उसके भीतर संतुलन नहीं रह गया था। कोई भी आदमी तब तक त्रॉत्स्की को नहीं समझ सकता था, जब तक कि उसके क्रोध में पागल होते समय भीतर से उसकी कमजोरी को न पहचान ले। 'दूसरे देशों में क्रांति का विकास और समर्थन अपनी विजयी क्रांति के लिये अत्यन्त आवश्यक है!'—यह रटन लगाते हुये, वह चाहता था कि रूस की नवीन जनता को अनिश्चित काल तक अकर्मण्यता की मरुभूमि में घुमाता रहे। यदि उसमें इतना धैर्य नहीं था, तो यह अच्छी ही बात थी।"

स्तालिन का जवाब बिल्कुल साफ़ था :

"क्रांति की विजय को सिर्फ़ एक देश में, एक शुद्ध राजनीतिक घटना नहीं समझना चाहिये। साथ ही, यह भी नहीं समझना चाहिये कि रूसी-क्रांति एक निष्क्रिय वस्तु है, जिसे बाहरी सहायता ही आगे बढ़ा सकती है।"

स्तालिन ने कहा था :

"साथी त्रॉत्स्की ने अपने व्याख्यान के दौरान में कहा था : 'हम वस्तुतः अपने को लगातार विश्व-अर्थनीति के नियंत्रण में पाते हैं।' लेकिन, क्या यह ठीक है? नहीं। यह पूंजीवादी घड़ियालों का स्वप्न है, लेकिन सच नहीं है।"

बारबूस के अनुसार: "स्तालिन और त्रॉत्स्की एक दूसरे के बिलकुल विपरीत हैं; मानवता के दो परस्पर विरोधी बिंदुओं पर विद्यमान, दो प्रकार के आदमी हैं। स्तालिन व्यवहारिक तर्क और व्यवहारिक बुद्धि पर विश्वास रखते हैं। वह निश्चल, अडिग और व्यवस्थित कार्य-प्रणाली को मानने वाले हैं। वह लेनिनवाद को अच्छी तरह समझते और जानते हैं और कमकर—वर्ग तथा पार्टी को सरकार में जो पार्ट अदा करना है, उसे भली भांति जानते हैं। वह दिखावा पसन्द नहीं करते, न मौलिक होने की इच्छा उन्हें परेशान करती है। जो कुछ वह कर सकते हैं, उस सभी को करने की कोशिश करते हैं। वक्तृत्व कला पर, अथवा सनसनी पैदा करने पर उनका विश्वास नहीं है। जब वह बोलते हैं, तो उसमें सादगी के साथ स्पष्टता का समावेश करने की कोशिश करते हैं। लेनिन की तरह, सदा उन्हीं विषयों को हृदयंगत कराने की कोशिश करते हैं। वह बहुत प्रश्नों को उठाना चाहते हैं, क्योंकि उन प्रश्नों से सुनने वाली जनता के भावों का पता लगता है और पुराने युग के किसी बड़े उपदेशक की तरह, एक से ही शब्दों में जवाब देते हैं। वह आपके सामने बिना भूल किये, सारे सबल और निर्बल पहलुओं को रखने का ढंग जानते हैं।"

पार्टी ने त्रॉत्स्की को बिना मौका दिये हुये ही निकाल बाहर नहीं किया था। दिसम्बर सन् १९२७ में कांग्रेस के अधिवेशन से एक महीना पहले ही, केन्द्रीय कमिटी ने पोलित ब्यूरो से अपने पक्ष के समर्थन में वक्तव्य दिलवाया था। इस प्रकार विरोधियों को जवाब देने के लिये, एक महीने का समय दिया गया था। विरोधी पक्ष ने ३ सितम्बर, १९२७ को ही १२० पृष्ठों का अपना वक्तव्य निकाल कर ज़ोर दिया था कि इसको तुरन्त छापा जाय और सभी स्थानीय कमिटियों और संगठनों के पास भेजा जाये। चार महीने पहले से दंगल खड़ा करने के लिये पार्टी तैयार नहीं थी, लेकिन एक महीने का समय उन्हें दिया गया था। पार्टी के लोगों ने बहुत कोशिश की कि त्रॉत्स्की और ज़िनोवियेफ़ अपने अंड़गों को छोड़ दें और फिर साथ काम करने लगें। लेकिन, वह तो लड़ने के लिये तैयार थे। लेनिनग्राद में ज़िनोवियेफ़ का उस समय काफ़ी प्रभाव था, वह वहां की सोवियतों की परिषद का अध्यक्ष था। दोनों ने पार्टी के खिलाफ़ तरुण कम्युनिस्टों को भड़काने की कोशिश की; खूब उनकी गुप्त बैठकें होती रहीं; उन्होंने गुप्त छापखाना भी क़ायम कर लिया था। सभा-स्थानों पर भी ज़बर्दस्ती अधिकार किया था। उन्होंने ७ नवम्बर, १९२७ को सड़कों पर प्रदर्शन कराया। केन्द्रीय कमिटी के मेम्बरों को मीटिंग में आने से ज़बर्दस्ती रोका। यारोस्लाव्स्की तथा दूसरों को मॉस्को की एक मीटिंग से ज़बर्दस्ती निकाल दिया। बोल्शेविकों के लिये, अब और बर्दाश्त करना असंभव था।

पन्द्रहवीं कांग्रेस ने कड़ा रुख अख़्तियार किया और त्रॉत्स्की से कहा कि वह अपने संगठनों को बन्द करे, और मॉस्को में हुई हाल की हरकतों को छोड़े तथा पार्टी के

बहुमत को स्वीकार करे। त्रॉत्स्की ने १२१ आदमियों के हस्ताक्षरों से एक दूसरा प्रस्ताव रखा और किसी भी तरह अपने को समझौते के लिये तैयार नहीं किया। अब पंचवार्षिक योजनाओं का काल शुरू हो रहा था, इसलिये और अधिक सहन करने का मतलब था—लोगों में दुविधा पैदा करके, योजनाओं को कार्यरूप में परिणत करने में शिथिलता लाना। स्तालिन ने घोषित किया :

"यह विरोध हटाओ, क्रांतिकारी शब्दाडंबरों को दूर फेंकने पर देखोगे कि इन सबके नीचे आत्मसमर्पण की भावना काम कर रही है।..."

त्रॉत्स्कीवाद क्रांति की शक्तियों में अविश्वास पैदा करना चाहता था। ओर्जोनिकिद्ज़े ने ठीक ही लिखा था :

"त्रॉत्स्कीवाद की विजय का अर्थ होता—सोवियत की सारी सृजनात्मक योजनाओं का विध्वंस। त्रॉत्स्की और दक्षिण पक्षियों पर स्तालिन की विजय, क्रांति की एक नई सफलता थी।"

३. *कृषि की समस्या*

कांग्रेस में स्तालिन ने औद्योगिक पुनर्निर्माण की सफलता का विवरण देते हुये, यह भी बतलाया कि खेती पिछड़ रही है; और :

"इससे निकलने का एक ही रास्ता है—छोटी-छोटी तथा बिखरी हुई किसान-खेतियों को विशाल संयुक्त फार्मों के रूप में साझे की खेती करते हुये, आधुनिक और उच्च टेक्नीक के अनुसार भूमि का सामूहीकरण। रास्ता यही है कि छोटे-छोटे बौने किसान-फार्मों को धीरे-धीरे किन्तु दृढ़तापूर्वक, पर दबाव से नहीं, बल्कि उदाहरण देकर और समझा कर सम्मिलित, सहयोगी, सामूहिक खेती के आधार पर खेती की मशीनों, ट्रैक्टरों और वैज्ञानिक ढंग की खेती करने पर सहमत किया जाय। इसे छोड़ कर और कोई रास्ता नहीं है।"

यद्यपि इस समय तक खेती की उपज महायुद्ध से पहले की स्थिति में पहुंच रही थी। लेकिन, जो अन्न बाजार के लिये प्राप्य था, वह युद्ध के पहले से एक तिहाई (३७ फ़ी सैकड़ा) ही था। देश में ढाई करोड़ के करीब छोटे-छोटे किसान थे। इन छोटे किसानों की स्थिति ऐसी नहीं थी, कि वह किसी भी आधुनिक खेती के तरीक़े का इस्तेमाल कर सकें। उनके छोटे-छोटे ख़ित्तों में ट्रैक्टर और खेती की दूसरी मशीनें नहीं चल सकती थीं। यह खेत और भी टुकड़ों में बंटते जा रहे थे। इसमें कोई सन्देह नहीं कि अगर अनाज पैदा करने की यही अवस्था जारी रहती, तो सेना और नगर की जनता को बराबर अकाल का सामना करना पड़ता।

पूंजीवादी फार्मों के संगठित करने से भी उपज में वृद्धि की जा सकती थी, किन्तु उस समय भारी संख्या में बेकार हुये किसानों की क्या हालत होती? पहले तो

उनको समझा-बुझाकर नहीं, बल्कि उनसे जबर्दस्ती खेतों को छीन कर ऐसे फार्मों के रूप में परिणत करना पड़ता, फिर मशीनों के इस्तेमाल के कारण भारी संख्या में किसान बेकार हो जाते और कमकरों और किसानों की मैत्री, जो क्रांति की सफलता के लिये एक मात्र गारंटी थी, वह खतम हो जाती। कुलकों (धनी किसानों) को भी इससे सहायता मिलती। इन सबका नतीजा होता—देहात में समाजवाद की पूर्ण पराजय। यही योजना थी, जिसे दक्षिण-पंथी सामने रख रहे थे। स्तालिन के सुझाव पर, पार्टी ने दूसरे ही तरीक़े—समाजवादी खेती अर्थात् कोलखोज़ी (सामूहिक) खेती को अपनाया। इसमें बिखरे हुए खेतों को बड़े-बड़े फार्मों के रूप में परिणत करने की गुंजाइश थी और साथ ही हर एक गांव के किसान अपनी खेती और उपज के मालिक तथा काम के साझीदार थे, इसलिये उनके बेकार होकर क्रांति-विरोधी बनने की सम्भावना नहीं थी। वैज्ञानिक ढंग की मशीनों से खेती करने के कारण उपज बढ़नी निश्चित थी, जिसका अर्थ था—किसानों के पास अधिक धन का आना और उसका मतलब समाजवाद और सर्वहारा के नेतृत्व में उनके विश्वास का अधिक बढ़ना था। लेनिन ने छोटे-छोटे किसानों की जगह, मशीनों द्वारा सामूहिक विशाल खेती का सुझाव रखते हुये कहा था : "छोटी-छोटी खेती करने पर, ग़रीबी से बचने का कोई उपाय नहीं है।"

पंद्रहवीं कांग्रेस ने सामूहिक (कोलखोज़ी) खेती के पूर्ण विकास के लिये प्रस्ताव पास किया था। इसी कांग्रेस ने प्रथम पंचवार्षिक योजना तैयार करने के लिये भी आदेश दिया था, यह हम बतला चुके हैं। इस प्रकार, हम यह भी देखते हैं कि स्तालिन अच्छी तरह समझते थे कि केवल उद्योग-धंधों के विकास पर ज़ोर देना और खेती को छोड़ रखना ठीक नहीं है; भारतीय पंचवार्षिक योजना की तरह, केवल खेती की टुटपुंजिया योजना बनाना भी आगे बढ़ने का रास्ता नहीं है। योजना को कार्यरूप में परिणत करने के लिये जिन भौतिक और मानवी साधनों की आवश्यकता थी, उनके जुटाने की भी तैयारी की गई। पार्टी के सबसे योग्य सदस्यों और उत्साही कमकरों को सामूहिक खेती को बढ़ावा देने के लिये नियुक्त किया गया, जो कोलखोज़ पहले से ही मौजूद थे, उन्हें मशीन, बीज और वैज्ञानिक परामर्शदाता जुटा कर मज़बूत किया गया। मशीनों से सहायता देने के लिये मशीन-ट्रैक्टर-स्टेशन स्थापित किये गये। सारे देश में एक उत्साह आ गया, क्योंकि वहां जनता न चोर बाज़ारी पूंजीपति घड़ियालों को देखती थी, न घूस से नाक तक डूबे छोटे से बड़े तक सरकारी कर्मचारियों और उनके आक़ाओं को। वहां कामचोरी की कोई गुंजाइश नहीं थी। सभी कमकर कमर कस कर शारीरिक और बौद्धिक सभी तरह का श्रम करने को तैयार थे। अमरीकी संचालन में भारत की सामूहिक ग्राम-योजनाओं की तरह, बाबुओं की पलटन तैयार करके देश के रुपये को बरबाद करना और किसानों को भड़काना उनका ध्येय नहीं था और न कम्युनिस्ट वहां के

गांवों में कुर्सी पर बैठ कर, कलम घिसाई करने गये थे। किसी हलवाहे को पीछे रहते देख कर, वह स्वयं हल की मुठिया अपने हाथ में पकड़ लेते; किसानों की तरह ही ऐड़ी से चोटी तक का पसीना एक करते। ऐसी अवस्था में, बोल्शेविकों की पंच-वार्षिक योजना और उसके प्रणेता के प्रति लोगों की भारी आस्था क्यों न होती और वह सामने के प्रोग्राम को दिलोजान से पूरा करने के लिये तैयार क्यों न होते?

सन् १९२७ में, अमरीकी मजदूरों का एक प्रतिनिधि-मंडल रूस गया था। उन्होंने स्तालिन से मुलाक़ात की थी। पिछले दस वर्षों में अमरीकी पूंजीवादी पत्रों ने जिस झूठ का प्रचार किया था, यद्यपि उसका प्रभाव इन मजदूरों पर कम ही हो सकता था, तो भी उन्होंने स्तालिन से चार घंटे तक तरह-तरह के प्रश्न किये। स्तालिन ने सभी का जवाब मुंहजबानी दिया था, जो ११,८०० शब्दों में समाप्त हुआ। सभी जवाब परस्पर संबद्ध थे। जब प्रतिनिधि-मंडल प्रश्न करते-करते थक गया, तो स्तालिन ने उनसे पूछा—"क्या मैं भी अमरीका के बारे में कुछ प्रश्न कर सकता हूं?" फिर, उन्होंने दो घंटे तक और वार्तालाप किया, जिससे पता लगा कि वह अमरीकी जीवन के हरएक पहलू का कितना ज्ञान रखते थे। स्तालिन ने अकेले ही जितनी खूबी के साथ चार घंटे तक जवाब दिये, प्रतिनिधि-मंडल वैसा करने में असमर्थ रहा। इस पूरे ६ घंटे की बातचीत में न कोई टेलीफोन की घंटी बजी और न बीच में कोई सेक्रेटरी आया। इससे मालूम होता है कि स्तालिन सामने आये काम पर कितनी एकाग्रता से जुट जाते थे।

अध्याय ८

पंचवार्षिक योजनायें

(सन् १९२७-४१)

पंचवार्षिक योजनाओं के बारे में बारबूस ने लिखा है :

"योजनीकरण की प्रकांड प्रक्रिया, जिसका जाल सारे देश में एक लम्बे समय से बिछा हुआ है, सोवियत की बिलकुल अपनी कल्पना है। लेकिन, इसकी छाप सारी दुनिया पर भी पड़ी है। इसने सोवियत संघ में ठोस प्रगति की है। दूसरी जगहों में भी विचार और कल्पना के रूप में यह आगे बढ़ी है। सोवियत संघ बड़े राष्ट्रों से पैसा उधार लेने में कभी सफल नहीं हुआ, लेकिन बड़े राष्ट्रों ने सोवियत संघ से कुछ महत्वपूर्ण चीजें अवश्य उधार लीं हैं। उन्होंने सोवियत से नियंत्रित आर्थिक व्यवस्था उधार ली है। 'नियंत्रित अर्थनीति' के रूप में, पूंजीवाद ने समाजवाद का झिझकते हुये अभिनंदन किया है।

"नियंत्रित अर्थनीति,—हां, कठिनाइयों से बाहर निकलने के लिये मानवजाति के सामने इसके अलावा दूसरा रास्ता नहीं है। सचमुच, हमारे सामने एक रामबाण औषधि मौजूद है। लेकिन, नियंत्रण का अर्थ है—एकीकरण; और पूंजीवाद का अर्थ है—अराजकता, राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय दोनों ही दृष्टिकोणों से। अगर 'नियंत्रित' शब्द का अर्थ पूरा राष्ट्रीय नहीं है, और न वास्तविक अन्तर्राष्ट्रीय अर्थ ही है, तो देश में हो या बाहर इसका कोई अर्थ नहीं, कोई भी मूल्य नहीं है।...

"आर्थिक योजना की कल्पना, यह केवल सोवियत-कल्पना इसलिये नहीं है कि इसमें किसी से बाजी मारने का विचार नहीं था; सोवियत के लिये तो यह प्रकृत वस्तु थी। पूंजीवादी देशों में, जहां पर निजी व्यवसाय के कारण आर्थिक प्रश्नों में विशेष सुविधा, स्वार्थों की विभिन्नता और बहुतायत काम करती है, तत्परता के साथ कोई एक सामान्य आर्थिक योजना को कार्यरूप में परिणत करना असम्भव है ...। लेकिन, यह बात समाजवादी राज्य के लिये नहीं है, समाजवादी राज्य के लिये एक निश्चित, तर्कसम्मत, निर्माणात्मक योजना को जनता के हितों के लिये, गणित की तरह, बिलकुल नपे-तुले रूप में पूरा करना कठिन नहीं है; क्योंकि वहां संचालन-संस्था ही विधान-निर्मात्री, कार्यकारिणी, स्वामिनी और व्यय करने वाली संस्था भी है।"

पहली पंचवार्षिक योजना (१९२८-३२)

(१) उद्योग-क्षेत्र

यह योजना १ अक्तूबर, १९२८ को शुरू हुई थी। ३१ दिसम्बर, १९३१ तक अर्थात् पांच वर्षों का काम इसने चार वर्षों में पूरा कर लिया था। इसके कारण कितनी औद्योगिक उन्नति हुई, यह इसी से मालूम होगा कि जहां सन् १९२८ में राष्ट्रीय आय १५.६६ अरब रूबल थी, वहां सन् १९३२ में ४१.९० अरब हो गई। उससे पहले, रूस में न ट्रैक्टर बनते थे, न विमान। जारशाही रूस अपनी अधिकांश मशीनें युरोप और अमरीका से मंगाता था, लेकिन प्रथम पंचवार्षिक योजना ने ही सोवियत को इन चीजों में स्वावलम्बी बना दिया। इसी समय, पेट्रोल और कोयले की उपज में सोवियत रूस दुनिया के दूसरे देशों को पीछे छोड़ कर, प्रथम हो गया। मध्य एशिया और काकेशस में पहले कल-कारखाने नाम को थे, अब वहां उनकी दृढ़ नींव पड़ गई। कपास की उपज इन चार वर्षों में दूनी हो गई और कपड़े की बड़ी-बड़ी तेरह नई मीलें खुलीं। पहले, कारखानों में कुल मिलाकर ४.६० अरब रूबल पूंजी लगी हुई थी, किन्तु इन चार वर्षों के भीतर ही, अब २४ अरब रूबल की नई पूंजी लगाई गई। सन् १९२८ में जहां ७·२३ लाख आदमी कारखानों में काम करते थे, वहां सन् १९३२ में उनकी संख्या सवा ३१ लाख, अर्थात चौगुने से भी अधिक हो गई। १५०० नये कल-कारखाने बने। इसी समय दो-तिहाई खेती पंचायती बन गई।

ये सफलतायें वैसे ही आश्चर्यजनक थीं; तब भी पूंजीवादी दुनिया समाजवाद की किसी भी सफलता को स्वीकार करने के लिये तैयार ही नहीं थी। इसलिये, वह क्यों मानती ? जब सारे आंकड़ों और विवरणों के साथ प्रथम पंचवार्षिक योजना घोषित की गई, तो पश्चिमी साम्राज्यवादी देशों ने उसे देख कर मुसकरा दिया। वह तरह-तरह की भीषण भविष्यवाणियां करने लगे और योजना को बोल्शेविकों का स्वप्न या झूठा प्रोपेगेंडा कहने से भी बाज नहीं आये। किसी ने कहा : " इन आंकड़ों को मानने के लिये आदमी को अन्धविश्वासी होना चाहिये। "--दूसरे ने कहा : " पंचवार्षिक योजना के आंकड़े निश्चय ही ग़लत हैं, क्योंकि वह बहुत बड़े हैं। राष्ट्रीय सम्पत्ति-स्रोतों का इतने बड़े परिमाण में स्थानांतरित करना केवल युद्ध के समय, गोलों के डर के मारे ही सम्भव है। "

सन् १९२८ में ही, बारबूस ने लिखा था :

" जो पंचवार्षिक योजना इस वक्त चल रही है, वह कोई नौकरशाहों और साहित्यिकों के आंकड़ों और शब्दों की कल्पनाओं का रूप नहीं है, बल्कि एक नपा-तुला कार्यक्रम है। राज्य-योजना के आंकड़ों को सूचनाओं के रूप में नहीं, बल्कि प्राप्त—विजयों के रूप में देखना चाहिये। हमसे जब बोल्शेविक कहते हैं कि

सन् १९३१ तक सोवियत-उद्योग में ८ फ़ी सैकड़ा की वृद्धि होगी, आर्थिक पुनरुज्जीवन के काम में ७ अरब रुपया लगाया जायगा और पन-बिजली स्टेशनों की शक्ति ३५ लाख किलोवात तक पहुंच जायेगी।... तो हमें मानना चाहिये कि वस्तुतः ये चीज़ें अस्तित्व में भी आ चुकी हैं।"

"सोवियत योजना १०९ फ़ी सैकड़ा सफल हुई। पूंजीवादी दुनिया केवल पंचवार्षिक योजनाओं के आंकड़ों पर ही अविश्वास नहीं करती थी, बल्कि वह चाहती थी कि वह किसी भी तरह से सफल न हो। 'न्यूयार्क टाइम्स' (नवम्बर सन् १९३२) नेलिखा था: "यह योजना नहीं है, मन के लड्डू हैं। घोर पराजय है!"—अंग्रेज़ी 'डेली टेलीग्राफ़' ने घोषित किया था: "पूरा दिवालियापन है!"—पोलैण्ड का पूंजीवादी पत्र 'गज़ेता पोलस्का' कह रहा था: "गतिरोध, भारी गतिरोध!"—इटालियन 'पोलितिचा' का फ़तवा था: "सर्वनाश स्पष्ट है!"—लंदन का बूढ़ा 'फाइनैन्शियल टाइम्स' गम्भीरतापूर्वक आगाही दे रहा था: "सारी व्यवस्था का विश्रृंखलन, खंड-खंड होना!"—अमरीकन 'करेंट हिस्ट्री' ने लिखा था: "अपने उद्देश्य में खंड-खंड, अपने सिद्धांतों में खंड-खंड!"—पार्टी से निकाले गये एक रूसी ने लिखा था: "सोवियत समाजवादी गणसंघ में पंचवार्षिक योजना केवल काग़ज पर होती है, वह कभी सफल नहीं होती।" इसी लेखक ने सन् १९३१ में अपनी पुस्तक में लिखा था: "सोवियत समाजवादी गणसंघ में जेल ही ऐसी जगह है, जहां पर आदमी भूख से नहीं मरता!... हर एक सोवियत नागरिक के जूतों में छेद हैं और उसके चेहरे पर निराशा।"—एक ने तो यहां तक भी लिख दिया था: "मॉस्को के होटलों में वह बच्चों को पका कर खाते हैं!"

लेकिन, प्रथम पंचवार्षिक योजना कितनी सफल रही, इसके आंकड़े हम बतला चुके हैं। न भीषण गतिरोध हुआ, न सर्वनाश; न दिवाला पिटा, न खंड-खंड हुआ। उपज और उद्योग-धंधों की वृद्धि के साथ-साथ, सोवियत में साक्षरों की संख्या जो सन् १९३० में ६७ फ़ी सैकड़ा थी, १९३३ में ९० फ़ी सैकड़ा हो गई। योजना की समाप्ति के समय, बारबूस ने रूस में जाकर देखा था: "एक विशाल हवाई-जहाज़—जिसके भीतर जाने पर आदमी समझता था, मानो वह किसी कारखाने के मशीन रूम में हो—जिसके निर्माण में कोई भी चीज़ बाहर से लाकर नहीं लगाई गई थी, सिवाय पहियों की रबर के टायरों के। द्नियेप्रोज, मग्नितोगोर्स्क, चेलियाबिन्स्क, बोगरिती, उराल्माशस्त्रोय, क्रामाशस्त्रोय आदि नये औद्योगिक नगर पैदा हो गये। अंग्रेज़ी पत्र 'नेशन' ने लिखा था: "चार वर्षों में पृथ्वी पर पचास नये नगर उठ खड़े हुये, जिनमें से हर एक की जनसंख्या पचास हज़ार से ढाई लाख की है। कुज़नेत्स्क-उपत्यका में ६ नये शहर तैयार हुये, जिनकी जनसंख्या ६ लाख थी। ध्रुवकक्षीय प्रदेश में फ़ासफेट निकल आने से, वहां ५० हज़ार की आबादी का एक नगर (किरोवग्राद) तैयार हो गया। स्तालिन ने जहां प्रथम पंचवार्षिक योजना में भारी उद्योगों

की दृढ़ नींव रखकर, सोवियत भूमि को औद्यागिक तौर से स्वावलम्बी बनाने का निश्चय किया था, वहीं वह यह भी समझते थे कि पूंजीवादी शक्तियां एक अकेले समाजवादी राज्य के खिलाफ़ जिस महायुद्ध की साजिशें कर रही हैं, उसे छेड़ कर ही रहेंगी और उसमें पड़ने के लिये सोवियत को मजबूर करेंगी ही। ऐसी अवस्था में, अपने बड़े-बड़े उद्योग-धंधों को मजबूत करना जरूरी है। इसीलिये, मग्नितोगोर्स्क, स्वेर्दलोव्स्क, चेलियाविन्स्क, नवोसिबिर्स्क, कूज़नेत्स्क, अंगरास्त्रोय आदि नये विशाल औद्यागिक-केन्द्र बनाये गये।

उद्योग-धंधों में जिस तरह काम हुआ, खेती में भी वही बात हुई। और इस प्रकार, स्तालिन की योजना ने सोवियत रूस को सर्वांगीण सफलता प्रदान की। साम्राज्यवादियों ने औद्यागिक योजनाओं का केवल उपहास करके ही संतोष नहीं किया, बल्कि उन्होंने तोड़-फोड़ के काम कराने की भी पूरी कोशिशें कीं—शाख़्ती की खानों में ऐसा ही हुआ था। जहां भी अवसर मिला, पुराने मध्यवर्ग के प्रतिगामी विशेषज्ञ तोड़-फोड़ का काम किये बिना नहीं रहे। स्तालिन ने देखा कि देश जब तक विरोधी-वर्ग के विशेषज्ञों पर निर्भर रहेगा, तब तक इस तरह के खतरे बराबर बने ही रहेंगे। इसीलिये, योजना के दौरान में ही, उन्होंने मज़दूरवर्गीय विशेषज्ञों, प्रबन्धकों, और बुद्धिजीवियों को भारी संख्या में शिक्षित करने की ओर ध्यान दिया। होनहार तरुणों को पांच वर्ष की शिक्षा देने की जगह, उन्होंने डेढ़-डेढ़ वर्ष की फ़ौरी तथा आंशिक शिक्षा देकर, काम पर लगाया और काम करते हुये उनकी शिक्षा और ज्ञान को बढ़ाने का भी प्रबन्ध किया। इसी वक्त, स्तालिन ने यह भी कहा था :

> "हमें अपने बारे में आत्म-आलोचना करते रहने की जरूरत है। इसके बिना, हम अपने व्यवसाय, मजूर-संघ और पार्टी संगठन को नहीं सुधार सकते। समाजवाद के निर्माण में बूर्ज़्वा तोड़-फोड़ की कार्रवाई को तब तक कम नहीं कर सकते, जब तक कि हम आत्म-आलोचना को पूरी तौर से विकसित नहीं करते, जब तक कि हम अपने संगठनों के काम को जनता के नियंत्रण के आधीन नहीं रखते।"

सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी के इतिहास के अनुसार : "नये विकास के लिये इतने विराट पैमाने पर, इतने उत्साह के साथ और करोड़ों कमकरों द्वारा श्रम में वीरता दिखलाते हुये, यह विकास और औद्योगिक-निर्माण इतिहास में कभी नहीं देखा गया था।"—स्तालिन ने स्वयं निर्माण के स्थानों का दौरा किया था। वह सन् १९२८ के जाड़ों में साइबेरिया के बरनोल आदि स्थानों तथा अल्ताई के इलाक़े में गये थे। क्रांति के बारहवें वार्षिकोत्सव के समय (सन् १९२९), स्तालिन ने 'महान् परिवर्तन का एक वर्ष' के नाम से एक लेख में बतलाया था कि समाजवाद ने शहर और देहात में किस तरह पूंजीवादी तत्वों के खिलाफ़ जबर्दस्त आक्रमण किया था।

२. कोलखोज़ (सामूहिक खेती)

समाजवादी दृष्टि से सामूहिक खेती, कोलखोज़ी व्यवस्था पर पहुंचना बिलकुल स्वाभाविक है। सन् १९२२–२३ में, मुझे न मार्क्सवाद का उतना ज्ञान था और न सोवियत-भूमि में होने वाली बातों का परिचय ही था। जब मैंने हिन्दी में 'उटोपिया' (कल्पना) के रूप में अपनी 'बाईसवीं सदी' लिखनी शुरू की, तो सामुदायिक खेती के रूप में ही गांव के जीवन को चित्रित करने का ख़्याल आया था। इसलिये, यदि मार्क्स जैसे क्रांतिदर्शी ने इस तरह की खेती को पहले ही देख लिया, तो इसमें आश्चर्य की क्या बात थी? मार्च सन् १८८१ में, मार्क्स ने वेरा ज़ासुलिच को एक चिट्ठी लिखते हुये कहा था कि रूस एक ऐसा देश है, जिसको प्रकृति ने वह सभी साधन प्रदान किये हैं, जो समाजवादी क्रांति हो जाने पर, समाजवादी यांत्रिक खेती के अनुकूल होंगे। उस वक्त, मार्क्स ने राय दी थी कि रूस सामूहिक-यांत्रिक खेती के लिये आवश्यक यंत्र-साधन पूंजीवादी देशों से प्राप्त कर सकता है। लेनिन भी लाखों ट्रैक्टर और ट्रैक्टर–ड्राइवरों वाली खेती का स्वप्न देख रहे थे। सामूहिक खेती के महत्व पर उनका बहुत ज़ोर था। लेनिन का यह स्वप्न, उनके योग्य शिष्य ने सत्य करके दिखला दिया। स्तालिन ने ट्रैक्टरों और कृषि की मशीनों के लिये, बड़े-बड़े कारख़ाने बनाने की ओर पूरा ध्यान दिया। छोटी से छोटी बातों पर भी, उन्होंने स्वयं विचार किया। नई मशीनों के परीक्षण में भाग लिया; कारख़ानों के मैनेजरों, आविष्कारकों और डिज़ाइनरों को स्वयं सलाह दी। इस प्रकार थोड़े ही दिनों में, यंत्र–निर्माण में बहुत पिछड़े हुये रूस ने ट्रैक्टरों, कटाई की कम्बाइनों, आलू बोने वाले यंत्रों, मंगेला, चुकन्दर, कपास की फ़सलों के जमा करने की मशीनों को बड़े परिमाण में बनाना शुरू कर दिया।

कोलखोज़ीकरण का काम आसानी से आगे नहीं बढ़ा; क्योंकि ज़मीदारों के ख़तम हो जाने के बाद, कुलक (सूदख़ोर धनी किसान) कोलखोज़ों को बड़ी शनि–दृष्टि से देख रहे थे। जब तक किसान जनसाधारण भारी अभाव और ग़रीबी में रहें, तभी तक कुलकों की पांचों घी में रहतीं हैं। सामूहिक खेती का मतलब था—किसानों का अभाव और ग़रीबी से मुक्त होकर, अपने पैरों पर खड़ा होना, जिसका अर्थ था—कुलकों के फलने-फूलने के रास्तों का रुक जाना। उन्होंने हर तरह से छोटे और मझोले किसानों को भड़काना शुरू किया। लेकिन, स्तालिन की आंखें सिर्फ़ कल-कारख़ानों को ही नहीं, बल्कि रोटी के बारे में गांवों में क्या हो रहा है, इसे भी देख रही थीं। एक साल के अन्दर, कोलखोज़ी आन्दोलन काफ़ी आगे बढ़ा। स्तालिन ने लिखा था : "वर्तमान कोलखोज़ी आन्दोलन का नया और निर्णायक रूप यह है कि किसान कोलखोज़ों में अलग-अलग गुटों में आकर शामिल नहीं हो रहे हैं, जैसा कि उन्होंने पहले किया था, बल्कि अब गांव के गांव,

तहसीलें की तहसीलें और जिले के जिले ही नहीं, सारे प्रदेश कोलखोज़ में शामिल हो रहे हैं। इसका क्या अर्थ है? इसका अर्थ है—मझोले किसान कोलखोज-आन्दोलन में शामिल हो रहे हैं।"—लेकिन, जिस तरह कोलखोज़ में शामिल होने के लिये किसान जन साधारण उत्साह दिखला रहा था, उसी तरह कुलक भी उसमें बाधा डालने के लिये तैयार थे। उन्होंने साधारण किसानों को भड़काया। कभी प्रलोभन देकर कोलखोज़ के जानवरों को मरवाया, कभी मशीनों को ख़राब किया और कभी मुल्लों और पादरियों से मिल कर धर्म के नाम पर सीधे-सादे किसानों को फुसलाया। यही समय था, जब बाहरी दुनिया में युद्ध का नया ख़तरा पैदा हो गया था। सन् १९३१ में, जापान ने मंचूरिया पर अधिकार कर लिया और सामुराई पूर्वी साइबेरिया पर अपनी गृद्ध-दृष्टि डाल रहे थे। ऐसी अवस्था में, कुलकों के अस्तित्व को और बर्दाश्त करते रहना युक्तियुक्त न समझा गया। उन्हें ग़ैरक़ानूनी बना दिया गया। २७ दिसम्बर, १९२९ को कृषि के विद्यार्थियों की कान्फ्रेंस में भाषण देते हुये, स्तालिन ने बतलाया :

> "चाहे पूंजीवाद की ओर पीछे हटो, या आगे समाजवाद की ओर बढ़ो—दो ही रास्ते हैं। तीसरा रास्ता न है, न हो सकता है। जहां छोटे-छोटे किसानों की बहुतायत है, समाजवादी नगरों को देहातों का नेतृत्व करना होगा। देहाती इलाक़ों में कोलखोज़ी और सोविखोज़ी खेती क़ायम करो। देहाती इलाकों को एक नये समाजवादी आधार पर संगठित करना होगा।"

अभी तक, अधिक खेतों के मालिक और अधिक उपज हाथ में होने के कारण अनाज और पशुओं की सम्पत्ति की कुंजी कुलकों के हाथ में ही थी, लेकिन अब पांसा पलट गया। स्तालिन के कथनानुसार : "कुलकों के उत्पादन की जगह, कोलखोज़ और सोविखोज़ के उत्पादन के भौतिक आधार हमारे पास हैं। इसीलिये, हमने कुलकों के शोषण पर नियंत्रण करने की जगह, उन्हें एक वर्ग के तौर पर ख़तम कर देने की नीति अख़्तियार की है।"

कोलखोज़ का प्रसार और भी ज़ोरों से होने लगा। कितने ही अदूरदर्शी कार्यकर्त्ता उत्साह के मारे चरमपंथी बन कर, किसानों को भी कुलक बना कर बाहर करने तथा दबाव डाल कर सारे इलाक़े को कोलखोजों में परिवर्तित करने लगे, जिसके कारण देहातों में असंतोष बढ़ने लगा। समय रहते ही, स्तालिन की सावधान आंखों ने ख़तरे को देख लिया और उसी समय उन्होंने 'सफलता से चकाचौंध' के नाम से एक लेख लिख कर खूब फटकारते हुये, बतलाया कि कोलखोज़ (सामूहिक खेती) का निर्माण केवल किसानों की स्वेच्छा पर निर्भर होना चाहिये। और, यह भी कि सामूहिक खेती का रूप सहकारी (अर्तेल) होना चाहिये। स्तालिन ने इसी लेख में नेतृत्व के बारे में कहा था :

"नेतृत्व की कला एक गम्भीर विषय है। आदमी को आन्दोलन से पीछे नहीं रहना चाहिये, क्योंकि ऐसा करने पर वह जन साधारण से अलग हो जायेगा। लेकिन, साथ ही आदमी को आगे भी नहीं दौड़ जाना चाहिये, क्योंकि आगे दौड़ जाने का मतलब है—जन साधारण के सम्पर्क से वंचित होना। जो भी आदमी किसी आन्दोलन का नेतृत्व करना चाहता है और साथ ही विशाल जनता के साथ सम्पर्क भी बनाये रखना चाहता है, उसे दो मोर्चों पर लड़ाई लड़नी होती है—उनके साथ भी, जो पीछे पड़ रहे हैं और उनके साथ भी जो आगे दौड़ जाना चाहते हैं। हमारी पार्टी इसीलिए मज़बूत और अजेय है कि आन्दोलन का नेतृत्व करते समय, वह जानती है कि कैसे कमकरों और किसानों के विशाल समूह के साथ सम्पर्क स्थापित करके आगे बढ़ना चाहिये।"

१५ मार्च, १९३० को स्तालिन के इसी लेख को केन्द्रीय कमिटी ने एक प्रस्ताव के रूप में स्वीकार किया।

इसके बाद, किसानों ने स्तालिन को पत्र भेजने शुरू किये। इन प्रश्नों का उत्तर 'कोलखोज़ी साथियों को जवाब' ३ अप्रैल, १९३० को प्रकाशित हुआ, जिसमें स्तालिन ने बतलाया कि जो ग़लतियां कोलखोज़ों के बनाने में की गईं थीं, उनका कारण था—मझोले किसानों के महत्व को न समझना और लेनिन के इस आदेश को भूल जाना था कि किसानों को कोलखोज़ में शामिल करने के लिये ज़बर्दस्ती नहीं करनी चाहिये, कोलखोज़ों का निर्माण स्वेच्छापूर्वक होना चाहिये। स्तालिन ने यह भी बतलाया था: "कोलखोज़ी खेत की अंतिम परिणति साम्यवादी खेती में होगी। किन्तु, ऐसा होना तभी सम्भव होगा, जब उपज इतनी अधिक हो कि कम्यून के सदस्यों की सभी आवश्यकताओं को पूरा किया जा सके। सहकारी (या अर्तेल) वह खेती है, जिसमें उत्पादन के मुख्य साधन समाजीकृत किये जाते हैं; लेकिन, घर, साग-सब्ज़ी की क्यारियां, कुछ ढोर, भेड़-बकरियां, मुर्गियां आदि समाजीकृत नहीं होतीं। साम्यवादी (कम्यून) व्यवस्था में केवल उत्पादन ही नहीं, बल्कि वितरण भी समाजीकृत या सम्मिलित हो जाता है।"

कोलखोज़-आंदोलन पूर्णतया सफल रहा। पार्टी इतिहास के शब्दों में:

"इस क्रांति की एक बड़ी विशेषता यह है कि यह ऊपर से, राज्य की प्रेरणा से कार्य रूप में परिणत की गयी है, किंतु उसका समर्थन सीधे नीचे की ओर से उन करोड़ों किसानों द्वारा हुआ है, जो कुलकों की गुलामी को उखाड़ फेंकने के लिये लड़ते हुये कोलखोज़ों में स्वतंत्र जीवन बिताना चाहते थे।"

इस सफलता में जिस पुरुष का सबसे बड़ा हाथ था, उसे (स्तालिन को) फरवरी, सन् १९३० में सोवियत संघ की केन्द्रीय कार्यकारिणी कमिटी ने 'लाल झंडे' का दूसरा तमगा प्रदान किया।

३. सोलहवीं कांग्रेस (सन् १९३०)

२६ जून, १९३० को पार्टी की सोलहवीं कांग्रेस शुरू हुई। तब तक कृषि और उद्योग-धंधों—दोनों ही में भारी सफलता प्राप्त हो चुकी थी और समाजवाद चारों ओर विजयी हो रहा था। कुलक-वर्ग देहात से खतम कर दिया गया था और कोलखोजी-करण बड़े व्यापक और ठोस रूप से आगे बढ़ चुका था। इसी कांग्रेस में नारा बुलन्द किया गया —'पांच वर्षों की योजना चार वर्षों में पूरी की जाय। उसके बाद, द्वितीय पंचवार्षिक योजना की तैयारी हो।' उद्योग-धंधों और कोलखोजी खेती के इतने विशाल रूप में संगठित होने पर, उनके प्रबन्ध की ओर भी ध्यान जाना जरूरी था। इसके लिये, समाजवादी उद्योगों के प्रबंधकों की प्रथम कान्फ्रेंस हुई, जिसमें ४ फरवरी, १९३१ को स्तालिन ने 'व्यवसाय-प्रबंधकों के कर्त्तव्य' के नाम से एक भाषण देते हुये कहा :

> "हम दुनिया के आगे बढ़े हुये देशों से पचास या सौ वर्ष पीछे हैं। हमें यह मंज़िल दस वर्षों में पूरी करनी है। या तो हम इसे पूरा करें, या वह हमें पीस देंगे।"

इस प्रकार, स्तालिन ने व्यवसायिक प्रबन्ध की आवश्यकता को भी आंखों से ओझल नहीं होने दिया। उद्योग-धंधों की टेक्नीक पर तो उन्होंने और भी ज़ोर दिया। साथ ही, सोवियत की नई जनता अन्तर्राष्ट्रीय कमकरों की मैत्री का मूल्य न भूल जाये, इसलिये उन्होंने कहा :

> "सोवियत समाजवादी गणसंघ दुनिया के मजूर-वर्ग का एक अंग है। हमें केवल सोवियत समाजवादी गणसंघ के मजूर-वर्ग के प्रयत्नों के कारण ही विजय नहीं मिली, बल्कि दुनिया के मजूर-वग की सहायता भी उसमें सहायक हुई थी। बिना इस समर्थन के, बहुत पहले ही हमारे टुकड़े-टुकड़े कर दिये गये होते। कहा जाता है, हमारा देश सभी देशों के सर्वहारों का हरावल दस्ता है, जो ठीक ही कहा जाता है। लेकिन, इससे हमारी जिम्मेवारियां बढ़ जाती हैं। अन्तर्राष्ट्रीय सर्वहारों ने क्यों हमारा समर्थन किया? कैसे हम उस समर्थन के पात्र बने? इसीलिये कि पूँजीवाद के खिलाफ़ लड़ी जाने वाली लड़ाई में हमने अपने आपको सबसे पहले झोंका; मजूर-वर्ग के राज्य की स्थापना करने में हम सबसे पहले आगे बढ़े और समाजवाद के प्रथम निर्माण के आरम्भ करने वाले भी हम ही हुये। इसी कारण, हम वह काम कर रहे हैं, जिसमें यदि सफलता मिली तो वह सारी दुनिया को बदल देगा और सम्पूर्ण मजूर-वर्ग को मुक्त करेगा। लेकिन, सफलता के लिये किस चीज की जरूरत है? अपने पिछड़ेपन को हटाना और निर्माण के लिये बोल्शेविकों की जबर्दस्त कार्य-गति को विकसित करना। हमें इस तरह आगे बढ़ना चाहिये कि सारी दुनिया का मजदूर-वर्ग हमारी ओर देख कर कहने लगे : 'यह हमारा हरावल है, यह

हमारा तूफ़ानी दस्ता है, यह हमारा मजूर-वर्ग का राज्य है, यह हमारी पितृभूमि है; यह जिस काम को आगे बढ़ा रहे हैं, वह हमारा काम है और यह उसे अच्छी तरह से कर रहे हैं। आओ, हम पूंजीपतियों के विरुद्ध उनका समर्थन करें और विश्व-क्रांति के काम को फैलायें।'"

इस भारी काम की जबर्दस्त कठिनाइयों की बात करने वालों को स्तालिन का जवाब था :

"दुनिया में कोई भी ऐसा किला नहीं है, जिस पर बोल्शेविक अधिकार नहीं कर सकते। हमने कितनी ही अत्यंत कठिन समस्याओं को हल किया है। हमने पूंजीवाद को उखाड़ फेंका है। हमने राज्य-शक्ति हाथ में ले ली है। हमने एक विशाल समाजवादी उद्योग का निर्माण किया है। हमने मझोले किसानों को समाजवाद के पथ पर चलाया है। निर्माण के दृष्टिकोण से बहुत ही महत्वपूर्ण कितने ही कामों को हम पूरा कर चुके हैं; अब जो करने को बाकी रह गया है, वह बहुत नहीं है। वह है—टेक्नीक का अध्ययन और विज्ञान पर अधिकर प्राप्त करना। जब हम इसको भी कर लेंगे, तो हमारे कार्य की गति इतनी विकसित हो जायेगी कि आज उसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती। और, हम यह कर सकते हैं, अगर वस्तुतः करना चाहें।"

जून सन् १९३१ की व्यवसाय-प्रबन्धकों की सभा में 'नई स्थितियां, नये आर्थिक कर्त्तव्य' पर भाषण देते हुये, स्तालिन ने उद्योग के विकास के लिये आवश्यक ६ बातों पर जोर दिया था :

(१) कोलखोजों के साथ संगठित ढंग से शर्तनामा करके, मजदूरों की भर्ती करना और नये कमकरों की मेहनत को यंत्रों द्वारा हल्का करना। (२) सब मजूरी को बराबर करने के ख़्याल को छोड़ना, ठीक तरह से मजूरी का नियमन करना और कमकरों की जीवन-स्थितियों को सुधारना। (३) वैयक्तिक जवाबदेही के अभाव को खतम करना, श्रम-संगठन को बेहतर बनाना और उद्योग-धंधों में श्रम की शक्तियों का ठीक तौर से वितरण करना। (४) ऐसा प्रबन्ध करना, जिसमें सोवियत समाजवादी गणसंघ के मजूर-वर्ग के पास अपने निजी औद्योगिक और टेक्नीकल बुद्धिजीवी हों। (५) पुराने ढंग के इंजीनियरों और टेक्नीशियनों के प्रति अपने भाव को बदलना, उनकी ओर अधिक ध्यान और सहानुभूति रखना और उनका सहयोग प्राप्त करने के लिये अधिक निर्भीकता से काम लेना। (६) व्यवसाय के हिसाब-किताब को ठीक तरह से रखने का प्रबन्ध करना, प्रचार करना और उद्योग-धंधों में पूंजी जमा करने के काम को अधिक बढ़ाना।"

स्तालिन सन् १९२९ में ५० वर्ष के हुये थे। उनकी महिमा सोवियत राष्ट्र के कोने-कोने में फैल चुकी थी। उनकी ५० वीं वर्षगांठ के दिन व्यक्तियों और संस्थाओं ने बहुत से अभिनंदन भेजे थे, जिनका जवाब देते हुए स्तालिन ने कहा था : "मैं आपके अभिनंदनों और अभिवादनों को मजूर-वर्ग की महान् पार्टी के नाम पर मानता हूँ, जिसने मुझे पैदा किया और पाल-पोष कर इस रूप में बनाया है।"

स्तालिन यह भली प्रकार जानते थे कि उनकी सारी योजनायें केवल दिमाग़ी कल्पना मात्र रह जातीं, यदि कमकर-वर्ग और कम्युनिस्ट पार्टी उन्हें कार्य रूप में परिणत न करती।

४. *स्त्रियां*

समाजवादी उद्योग-धंधे और खेती ने स्त्रियों को आर्थिक स्वतंत्रता दी, जो सभी स्वतंत्रताओं की जननी है। वह आर्थिक तौर से अपने पैरों पर खड़ी हुई। स्तालिन ने स्त्रियों की अतीत और वर्तमान की अवस्था के बारे में कहा था :

> "इतिहास में उत्पीड़ितों का कोई भी ऐसा महान् आंदोलन नहीं है, जिसमें कमकर स्त्रियों ने भाग न लिया हो। कमकर स्त्रियां सभी उत्पीड़ितों में भी अत्यन्त उत्पीड़ित हैं, लेकिन तो भी वह कभी ऐसे समय में मुक्ति के महान् अभियान से अलग-थलग नहीं रहीं और न रह सकती थीं। हम जानते हैं, दास-मुक्ति-आन्दोलन में लाखों स्त्रियां शहीद हुई थीं, उन्होंने वीरतापूर्वक काम किया था। किसान अर्ध-दासों की मुक्ति के लिये जब लड़ाई हुई, तो हजारों की संख्या में स्त्रियों ने उसमें सीधे भाग लिया था। यह आश्चर्य की बात नहीं है कि मजूर-वर्ग के क्रांतिकारी आंदोलन—पीड़ित जनता की मुक्ति के आंदोलनों में सबसे अधिक शक्तिशाली, मजूर-वर्ग के क्रांतिकारी आंदोलन में, उसके झंडे के नीचे करोड़ों कमकर स्त्रियां आकर खड़ी हुई।...कमकर स्त्रियां—औद्योगिक कमकर और किसान स्त्रियां—मजूर वर्ग की सबसे बड़ी रिजर्व सेना है, ऐसी रिजर्व, जो कि संख्या में सारी जनता की आधी है। यह स्त्रियों की रिजर्व सेना मजूर-वर्ग के साथ होगी या उसके ख़िलाफ़, इसी पर सर्वहारा आन्दोलन के भाग्य का सर्वहारा-क्रांति की विजय और पराजय, सर्वहारा सरकार की विजय या पराजय का निपटारा है। इसीलिये, सर्वहारा और उसकी हरावल कम्युनिस्ट पार्टी का यह प्रथम कर्त्तव्य है कि बूर्ज्वाजी के प्रभाव से कमकर और किसान स्त्रियों को निकालने के लिये, सर्वहारा के झंडे के नीचे कमकर-किसान स्त्रियों को राजनीतिक तौर से शिक्षित और संगठित करने के लिये ज़बर्दस्त संघर्ष करें।... लेकिन, कमकर-स्त्रियां रिजर्व सेना ही नहीं कुछ और

अधिक भी हैं। यदि मजदूर वर्ग ठीक नीति अख़्तियार करे, तो वह बूर्ज़्वाज़ी के विरुद्ध लड़ने वाले मजदूर वर्ग की बाक़ायदा फ़ौज बन सकती हैं। स्त्रियों की श्रम-सेना को सर्वहारा की महान् सेना के साथ कंधे से कंधा मिला कर, कमकर किसान स्त्री-सेना के रूप में ढालना मजूर-वर्ग का द्वितीय और निर्णायक कर्त्तव्य है।"

कोलखोज़ी-तूफ़ानी-कमकरों की प्रथम कांग्रेस में, कोलखोज़ी औरतों के बारे में, स्तालिन ने कहा था :

"साथियो! कोलखोज़ों में स्त्रियों का प्रश्न एक बड़ा प्रश्न है। मैं जानता हूं, आपमें से बहुत से लोग स्त्रियों के मूल्य को कम समझते या उनका उपहास भी करते हैं। यह ग़लत है। सवाल यही नहीं है कि स्त्रियां हमारी जनसंख्या की आधी हैं, बल्कि ख़ास बात यह है कि कोलखोज़-आंदोलन ने उल्लेखनीय तथा योग्य कितनी ही स्त्रियों को ऊंचे पदों पर पहुंचाया है। इसी कांग्रेस की प्रतिनिधियों की ओर देखो, तो तुम्हें मालूम होगा कि स्त्रियां पिछड़े हुओं की पंक्ति से आगे बढ़ने वालों की पंक्ति में काफ़ी पहले पहुंच गई हैं। कोलखोज़ों में स्त्रियां एक भारी शक्ति हैं। इस शक्ति को दबा रखना भयंकर अपराध होगा। हमारा कर्त्तव्य है कि स्त्रियों को कोलखोज़ में लायें, आगे बढ़ायें और इस महान् शक्ति का उपयोग करें।

"और, जहां तक कोलखोज़ी स्त्रियों का अपना सम्बन्ध है, उन्हें कोलखोज़ के महत्व और शक्ति का ध्यान रखना चाहिये। उन्हें याद रखना चाहिये कि केवल कोलखोज़ में आकर ही उन्हें पुरुषों के बराबर होने का अवसर मिला है। बिना कोलखोज़ के असमानता है; और कोलखोज़ में समान अधिकार प्राप्त है। हमारी कोलखोज़ी स्त्री साथिनों को इसे याद रखना चाहिये और कोलखोज़ी व्यवस्था को अपनी आंखों की पुतली जैसा प्रिय मानना चाहिये।"

सोलहवीं कांग्रेस ने अपने एक प्रस्ताव में कहा: "ज़मींदारी ज़ब्त करना देहात में अक्तूबर क्रांति का पहला क़दम था, कोलखोज़ी खेती का स्वीकार करना दूसरा और अत्यंत निर्णायक क़दम है, जिसका कि सोवियत समाजवादी गणसंघ में समाजवादी समाज की नींव रखने में बहुत महत्वपूर्ण स्थान है।"

५. *विज्ञान*

स्तालिनग्राद (पुराने ज़ारीत्सीन) में सोवियत का सबसे बड़ा ट्रैक्टर का कारख़ाना बना। उसके उद्घाटन के दिन (१७ जून, १९३०) स्तालिन ने कहा था:

"सोवियत समाजवादी गणसंघ के प्रथम विशाल 'लालध्वज ट्रैक्टर कारख़ाने' के कमकरों और प्रबन्धकों का, उनकी विजय के उपलक्ष में अभिवादन और

अभिनंदन! पचास हज़ार ट्रैक्टर, जो तुम हर साल हमारे देश के लिये पैदा करने वाले हो, वह पचास हज़ार भीषण गोले होकर पुराने व बूर्ज्वा जगत को चूर-चूर कर देंगे और देहात में नवीन समाजवादी व्यवस्था का रास्ता साफ़ करेंगे। "

स्तालिन वैयक्तिक तौर से, हर एक नये आविष्कर्त्ता को प्रोत्साहन और सम्मान प्रदान करते थे। वह विज्ञान और वैज्ञानिकों के हमेशा पृष्ट-पोषक रहे और लेनिन की तरह ही, उनके सात खून माफ़ करने के लिये तैयार रहते थे। सोवियत-नेताओं और उनके कामों को गाली देते रहने पर भी, लेनिन और स्तालिन ने पावलोफ़ को अपनी खोजों में इतनी सहायता दी, जो ज़ारशाही क्या किसी पूँजीवादी देश में भी सम्भव नहीं हो सकती। स्तालिन ने च्योल्कोव्स्की, पावलोफ़, चीचिन, लीस्सेंको जैसे महान् वैज्ञानिकों का भारी सम्मान और समर्थन किया। कम्युनिस्ट एकेडमी का अलग रखना बेकार समझ कर, उनकी सलाह से ही उसे विज्ञान एकेडमी में मिला दिया गया था।

द्वितीय पंचवार्षिक योजना (१९३३-३७)

प्रथम पंचवार्षिक योजना की सफलताओं को देखते हुये, द्वितीय पंचवार्षिक योजना की तैयारी शुरू की गई—" सोवियत संघ छोटे-छोटे किसानों की खेती के देश से कोलखोज, सोविखोज के विकास और यंत्रों के अधिकाधिक उपयोग के आधार पर दुनिया के एक बड़े पैमाने के कृषि वाले देश के रूप में परिणत हो गया है।...देश ने राष्ट्रीय आर्थिक जीवन के पुनर्निर्माण के काम को पूरा करने के लिये अपने सारे आधार तैयार कर लिये हैं। " ऐसी अवस्था में द्वितीय पंचवार्षिक योजना तैयार की गई।

इसी साल (सन् १९३२ में), स्तालिन की पत्नी—नादेज़्दा का देहान्त हुआ। उसकी अर्थी की यात्रा में स्तालिन उसके साथ-साथ रहे। उसे बड़े सम्मानपूर्वक दफ़नाया गया। वह अपने एक पुत्र वासिली और पुत्री स्वेतलाना को छोड़ कर मरी थी; जिन्हें स्तालिन बहुत प्रेम करते थे।

प्रथम पंचवार्षिक योजना कितनी सफल हुई, इसके बारे में हम कह चुके हैं। सोवियत के साम्राज्यवादी शत्रुओं और उनके पत्रों को भारी सिर-दर्द पैदा होगया, जब उन्होंने देखा कि समाजवाद की सार्वत्रिक और सार्वजनीन मुक्ति के वातावरण में कोई चीज़ असम्भव नहीं है। फ्रांस के साम्राज्यवादी पत्र ' लताँ ' (२७ जनवरी, १९३२) ने स्वीकार किया : " सोवियत संघ ने बिना विदेशी पूंजी की सहायता के, अपने को उद्योग प्रधान बना कर पहली बाजी जीत ली।" कुछ ही महीनों बाद अप्रैल में, फिर उसी पत्र ने लिखा : " जान पड़ता है, साम्यवाद एक सांस में निर्माण की उन सारी अवस्थाओं को लांघ गया

है, जिनसे पूंजीवादी शासन को अत्यन्त धीरे-धीरे पार होना पड़ा था। सभी बात देखने पर यह साफ़ है कि बोल्शेविकों ने हमें इस सम्बन्ध में हरा दिया है।"—अंग्रेजी साम्राज्यवादी पत्रिका 'राउंड टेबिल' ने लिखा : "पंचवर्षीय योजना की सफलता एक आश्चर्यजनक घटना है।"—'फाइनैन्शियल टाइम्स' ने लिखा : "उनकी सफलता के बारे में कोई सन्देह नहीं किया जा सकता। अपने पत्रों और व्याख्यानों में कम्युनिस्ट जो फूले नहीं समाते देखे जाते हैं, वह बेबुनियाद ही नहीं है।"—आस्ट्रियन पत्र 'नोये फ्राई प्रेस' ने लिखा था : "आधुनिक पंचवार्षिक योजना विराट है।"—यूनाइटेड डोमिनियन ट्रस्ट के प्रेसीडेंट गिब्सन जार्वी का विचार था : "रूस आगे बढ़ता जा रहा है, जबकि हम पीछे हट रहे हैं। पंचवार्षिक योजना ने हमें पीछे छोड़ दिया है! ...रूस के तरुणों और कमकरों के पास एक चीज़ है, जिसका हमारे पास अभाव है, वह है—आशा।"—संयुक्त राष्ट्र अमरीका के पत्र 'नेशन' ने लिखा था : "पंचवार्षिक योजना के पांच वर्ष वस्तुतः उल्लेखनीय सफलताओं को दिखलाने में सफल हुये हैं। सोवियत संघ ने एक नवीन जीवन की नींव निर्माण करने में जिस तरह अपने को लगाया, वह युद्ध-काल के ज़्यादा अनुरूप है।"—स्काटलैंड के पत्र 'फार्वर्ड' का कहना था : "युद्ध के दर्मियान इंगलैंड ने जो कुछ किया, वह इस पंचवार्षिक योजना के सामने नगण्य है। अमरीकन स्वीकार करते हैं कि पश्चिमी राज्यों में अत्यंत ज़ोर के निर्माण का भूत सिर पर चढ़े होने के समय की भी, इससे कोई तुलना नहीं है। ... इतनी मात्रा में शक्ति लगाई गई है, जिसका दुनिया के इतिहास में उदाहरण नहीं मिलता। प्रतिद्वंदी पूंजीवादी जगत के लिये यह चमत्कारपूर्ण ललकार है।"

इन उदाहरणों से, इसका अंदाज़ा लगाया जा सकता है कि सोवियत संघ ने क्या किया था। प्रथम पंचवार्षिक योजना के द्वारा स्तालिन के नेतृत्व में सोवियत के लोग सर्वस्व की बाज़ी भी लगा सकते थे, क्योंकि उनके यहां न चोरबाज़ारी नफ़ाख़ोर सेठों के हित का ख़्याल करना था, न मुट्ठी भर सामन्ती ज़मींदारों का; और न भाई-भतीजे-भांजों को नौकरियां बांट-बांट कर शासन के व्यय-भार को पांच-छै गुना बढ़ाने और ऊपर से नीचे तक घूस-रिश्वत के बाज़ार को गरम करने की गुंजाइश थी। महीने में तीन-चौथाई दिनों में बेकार रहने वाले करोड़ों नर-नारियों का श्रम निर्माण के काम में लगा दिया गया, प्रतिभाओं को ढूंढ़-ढूंढ़ कर आगे बढ़ाया गया। वहाँ राष्ट्रीय धन की एक-एक कौड़ी को विदेशी दूतावासों, कमीशनों, मंत्रियों तथा उनके कृपापात्रों के सैर-सपाटे तथा ऐश में ख़र्च नहीं किया जा रहा था। उनको अपनी ग़रीब जनता के पसीने की कमाई की एक-एक कौड़ी के लिये दर्द था; स्तालिन से लेकर गांव की साधारण किसान औरत तक ने दृढ़ संकल्प कर लिया था कि चाहे जो भी हो, अपनी योजना पूरी करनी है और इसमें कुलक, पुराने बूर्ज़्वा वर्ग या किसी दूसरे की बाधा को सहन नहीं करना है। जहां इस तरह का दृढ़ संकल्प काम कर रहा हो, वहां क्यों न 'श्रीर्विजयो मूर्ति:' पैर तोड़ कर बैठी रहे?

जनवरी सन् १९३३ में केन्द्रीय कमिटी और केन्द्रीय नियंत्रण-कमीशन का संयुक्त विशेष अधिवेशन (प्लेनम) हुआ, जिसमें प्रथम पंचवार्षिक योजना के परिणाम के बारे में स्तालिन ने रिपोर्ट दी और घोषित किया :

"प्रथम पंचवार्षिक योजना के तजर्बे से, हम इस निर्णय पर पहुंचे हैं कि एक देश के भीतर समाजवादी समाज का निर्माण करना बिलकुल सम्भव है और सोवियत संघ में ऐसे समाज की आर्थिक नींव डाली जा चुकी है। अब हमारे यहां राष्ट्रीय अर्थनीति का ७० फ़ी सैकड़ा समाजवादी उद्योग पर निर्भर करता है। समाजवादी आर्थिक ढांचा ही हमारे उद्योग का एक मात्र ढांचा है। कृषि-क्षेत्र में कोलखोज़ी खेती ने अपना पक्का स्थान क़ायम कर लिया है। राष्ट्रीय अर्थनीति की सभी शाखाओं में समाजवादी विजय ने मनुष्य द्वारा मनुष्य के शोषण को समाप्त कर दिया है। पंचवार्षिक योजना की सफलताओं ने सभी देशों में मज़दूर वर्ग की क्रांतिकारी शक्तियों को पूंजीवाद के ख़िलाफ़ सक्रिय कर दिया है।... कोलखोज़ी खेती आर्थिक संगठन का एक समाजवादी रूप है; ठीक वैसे ही जैसे सोवियतें (पंचायतें) राजनीतिक संगठन के समाजवादी रूप हैं।"

६. *कोलखोज़ी कांग्रेस (सन् १९३३)*

स्तालिन की प्रेरणा से फरवरी १९३३ में कोलखोज़ी तूफ़ानी दस्तों की प्रथम कांग्रेस हुई, जिसमें कोलखोज़-आंदोलन के प्रथम परिणामों पर प्रकाश डालते हुये स्तालिन ने कहा :

> "यह हमारी ऐसी सफलता है, जिसके द्वारा हमने करोड़ों ग़रीब किसानों को कोलखोज़ों में सम्मिलित होने में सहायता की है। यह हमारी ऐसी सफलता है कि कोलखोज़ी खेती में सम्मिलित होकर उनके पास सबसे अच्छी भूमि है, उत्पादन के सबसे अच्छे हथियार हैं, और जिसके द्वारा करोड़ों ग़रीब किसान उठ कर मझोले दर्जे के किसानों के तल तक पहुंचे हैं। यह हमारी ऐसी सफलता है, जिससे कि पहले के कौड़ी-कौड़ी के लिये मुहताज करोड़ों किसान अब कोलखोज़ी खेती से मध्यवित्त किसान बन गये हैं और उनके लिये आर्थिक सुरक्षा निश्चित हो गई है। ... अब हमें अगला दूसरा क़दम उठाना है और सभी कोलखोज़ी किसानों—पुराने समय के ग़रीब और मध्यवित्त, दोनों ही प्रकार के किसानों—को समृद्ध किसानों के तल पर पहुंचाने में सहायता करनी है।"

प्रथम पंचवार्षिक योजना में देश की ७० फ़ी सैकड़ा खेती कोलखोज़ी हो गई थी। कोलखोज़ और सोविखोज़ (सोवियत खेती) दोनों मिल कर देश के लिये ८५ फ़ी सैकड़ा अन्न पैदा करने लगे थे। कोलखोज़ का औसत आकार-प्रकार १,०७० एकड़ था और सोविखोज़ का ५०,०० एकड़। कोलखोज़ी किसानों की मदद सरकार ने निम्न प्रकार से की थी :

(१) दो अरब रूबल खर्च करके २,८६० मशीन-ट्रैक्टर-स्टेशन क़ायम किये, जहां से कोलखोज़ों को ट्रैक्टर और दूसरी मशीनें सस्ते भाड़े पर मिलने लगीं।

(२) कोलखोज़ों को १.६० अरब रूबल उधार दिया गया।

(३) ४० लाख टन बीज उधार दिया गया।

(४) करों की कमी और फ़सलों के बीमों के द्वारा ३७ करोड़ रूबल की सहायता पहुँचाई गई।

और, इसके बदले में किसानों ने क्या किया? राज्य को वैयक्तिक किसानों ने ७८ करोड़ पूद (१ पूद=प्रायः आधा मन) और कोलखोज़ी किसानों ने १२ करोड़ पूद अनाज सन् १९२९--३० में दिया था, जबकि सन् १९३३ में कोलखोज़ों ने १ अरब पूद और वैयक्तिक किसानों ने १३ करोड़ पूद अनाज प्रदान किया। यह देखने से स्पष्ट हो जाता है कि अब सोवियत संघ अन्न के बारे में उसी तरह निश्चिंत था, जिस तरह कि औद्योगिक उपजों में। सन् १९३४ में मौसिम अच्छा नहीं रहा, तब भी उपज सन् १९३३ की अपेक्षा अच्छी हुई थी। बात यह थी कि भारत से सात गुने बड़े देश सोवियत रूस में सभी जगह तो एक साथ मौसिम ख़राब नहीं होता। इस लिये, यदि आधुनिक ढंग से तत्परता के साथ खेती की जाय, तो जहां तक सारे देश का सम्बन्ध है, उपज की कमी नहीं हो सकती। यदि ऐसी निश्चिंतता न होती, तो दिसम्बर सन् १९३४ में सोवियत सरकार अपने यहां राशन की व्यवस्था ख़तम करने की हिम्मत न करती। इसी सफलता को देख कर, मोलोतोफ़ ने अपने एक भाषण में कहा था : "तैयार माल और रोटी के सम्बन्ध में राज्य के प्रांत इतने बढ़ गये हैं, जितना कभी सुना नहीं गया था, जबकि सोवियत नीति की नयी महान् विजय के परिणाम स्वरूप अब वह समय आ गया है कि रोटी और आटे को आम तौर से बिना दाम के बेचने के बारे में सोचा जा सकता है।"

हां, द्वितीय युद्ध के पहले अन्न की इतनी बहुतायत हो गई थी कि सोवियत नेता बड़ी गम्भीरता पूर्वक विचार करने लगे थे कि रोटी और अन्न की बिक्री तथा उसका हिसाब-किताब रखने में हज़ारों आदमियों और हज़ारों टन लिखने-पढ़ने के लिये काग़ज तथा दूसरे सामान के व्यय और परेशानी को हटा कर, हवा-पानी की तरह, रोटी और अनाज का वितरण भी विना क़ीमत हो। आज भी सोवियत रूस इस स्थिति में है, लेकिन जब दुनिया के और देशों में अन्न का इतना अभाव है और अमरीकन साम्राज्यवादियों द्वारा अन्न जबर्दस्त राजनीतिक हथियार के तौर पर इस्तेमाल किया जा रहा है, ऐसी अवस्था में वह इस शौक़ीनी को पूरा करने के लिये तैयार नहीं हैं और वह अपने साथी देशों और दुनिया के दूसरे लोगों को भी अनाज से मदद पहुँचाना चाहते हैं। प्रथम पंचवार्षिक योजना के समाप्त होने के साथ-साथ, उसी पहले की

ज़ारशाही की खेती की भूमि में २५ हज़ार कोलखोज़ और ५,००० सोविखोज़ तैयार हो गये थे, जिन्होंने पहले की जोती हुई ज़मीन में ८० हज़ार वर्ग मील खेतों की और वृद्धि की। जिस तरह कारखाने की मशीनें अपने वेग के कारण मज़दूरों को शिथिल नहीं रहने देतीं, वही बात अब देहात में कोलखोज़ों और सोविखोज़ों ने किसानों के साथ कर दी थी, इसलिये वहां किसान सुस्त नहीं रह सकते थे। काम के अनुसार, ऊपर से उपज में हिस्सा तय होने का नियम होने के कारण शिथिल काम करने वाला किसान फ़सल की बंटाई के समय अपने पैसों और अनाज की कमी को देख कर झींखने के लिये मजबूर था।

स्तालिन को हरएक काम सुव्यवस्थित रूप से करने की आदत है। यह हो ही नहीं सकता था कि वह कोलखोज़ों की सुव्यवस्था के लिये स्पष्ट मार्ग-निर्देशन न करते। इसके लिये उन्होंने कृषि के 'कोलखोज़ीकरण का सिद्धांत' लिखा, जिसमें निम्न बातें बतलायीं :

(१) कोलखोज़ी खेती समाजवादी देहाती अर्थनीति का एक रूप है।

(२) उन्होंने बतलाया कि वर्तमान अवस्था में जिस कोलखोज़ी खेती का विकास करना है, उसका रूप खेती का अर्तेल (सहकारिता) है, क्योंकि यह किसानों के लिये समझने में बहुत आसान है, तथा कोलखोज़ी किसानों के वैयक्तिक और सामूहिक—दोनों प्रकार के स्वार्थ इससे पूरे होते हैं, जिसके कारण वह अपने वैयक्तिक स्वार्थों द्वारा सार्वजनिक स्वार्थों के लिये भी काम करने को तैयार होते हैं।

(३) उन्होंने अपनी इस कृति में यह भी बतलाया कि कुलकों के ऊपर नियंत्रण या उनके 'निचोड़ने की नीति' को छोड़ कर ठोस कोलखोज़ीकरण के आधार पर, उन्हें एक वर्ग के तौर पर उखाड़-फेंकना ही अच्छा है।

(४) उन्होंने मशीन-ट्रैक्टर-स्टेशनों के महत्व को दिखलाते हुये कहा कि यह कृषि के समाजवादी पुनःसंगठन के सहायक तथा ऐसे साधन हैं, जिनके द्वारा समाजवादी राज्य कृषि और किसानों-दोनों को उचित सहायता दे सकता है।

स्तालिन ने पंचवार्षिक योजना की सफलता द्वारा अपने जिस विराट रूप को दिखलाया, उस पर गद्गद् हो उनके शिष्य और सहकारी सेर्गेई किरोफ़ ने सत्रहवीं कांग्रेस से कुछ पहले, लेनिनग्राद में कहा था :

> "साथियो, जिस समय हम अपनी पार्टी की सेवाओं और उसकी सफलताओं के बारे में कहते हैं, उस समय जिस विराट विजय को हमने प्राप्त किया है, हम उसके महान् संगठक को नहीं भूल सकते:-मेरा मतलब साथी

स्तालिन से है। मुझे कहना होगा कि सचमुच ही वह हमारी पार्टी के महान् संस्थापक के—जिनसे कि हम दस वर्ष पहले वंचित हो गये—सच्चे तौर से योग्य और पूर्ण उत्तराधिकारी हैं।

"स्तालिन को उनके विशाल रूप में हृदयंगत करना आसान नहीं है। इन पिछले वर्षों में, जबकि हमें लेनिन के बिना ही अपने काम को करना पड़ा, हमारे श्रम-मोर्चे पर, या नये कामों के सम्बन्ध में, किसी भी महत्वपूर्ण नीति का कोई भी नारा या झुकाव ऐसा नहीं आया, जिसके रचयिता साथी स्तालिन न रहे हों। पार्टी को यह जानना चाहिये कि सभी महत्वपूर्ण काम साथी स्तालिन की सम्मति, उनकी हिदायतों, उनकी प्रेरणा और उनके पथ-प्रदर्शन में होता है। उनकी सिफ़ारिशों के अनुसार ही अन्तर्राष्ट्रीय नीति के महत्वपूर्ण प्रश्नों पर निर्णय किया जाता है। केवल महत्वपूर्ण ही नहीं, बल्कि तृतीय क्या दशम श्रेणी के भी जो प्रश्न हैं, यदि वह कमकरों, किसानों, हमारे देश की आम मेहनतकश जनता से सम्बंध रखते हैं, तो उनमें भी स्तालिन की दिलचस्पी रहती है।

"मुझे यह भी कहना पड़ेगा कि यह बात समाजवाद के पूरी तौर से निर्माण के बारे में ही नहीं है, बल्कि हमारे काम के भिन्न-भिन्न पहलुओं के सम्बन्ध में भी है। उदाहरणार्थ, हमारे देश की प्रतिरक्षा को ले लीजिये। इसे स्पष्टता और जोर के साथ कहना पड़ेगा कि इस क्षेत्र की सभी सफलतायें, जो हमें मिली हैं, उनका श्रेय स्तालिन को ही है; और इसके लिये हम स्तालिन के ऋणी हैं।"

७. *स्तालिन का स्वाभाव*

जर्मन लेखक एमिल लुडविग ने सन् १९३३ में स्तालिन से मुलाक़ात की थी। इस महान् लेखक द्वारा लिखे हुये, मुलाक़ात के वर्णन से स्तालिन के व्यक्तित्व पर काफ़ी प्रकाश पड़ता है। वह लिखता है:

"जैसी उनकी तसवीर मैंने कल्पित की थी, जो कहानियां मैंने सुनीं और पढ़ीं थीं और जैसा फ़ौलादी उनका स्तालिन नाम है, वह सब उनके लिये उपयुक्त नहीं है। मैंने ख़याल किया था कि मुझे पुरानी ज़ारशाही का कोई रोबीला, गम्भीर, कठोर ग्रांड-ड्यूक मिलेगा, लेकिन उसकी जगह, मुझे एक ऐसा अधिनायक देखने को मिला, जिसके हाथ में मैं अपने बच्चों को खुशी से छोड़ सकता हूँ। मैंने पढ़ा था, वह जनता में नहीं आते, क्योंकि चेचक ने उनके चेहरे को बड़ा कुरूप बना दिया है। लेकिन, यहां उसका कोई चिन्ह या दाग़ दिखना मुश्किल था। मैंने यह भी पढ़ा था कि जब वह शहर से अपने प्रासाद जैसे देहात के निवास-स्थान गोर्की—जिसमें बीमारी के समय लेनिन रहे और मरे थे—को प्रतिदिन जाते हैं, तो उनके आस-पास ५ मोटर कारें रहती हैं। गोर्की के बारे में कहा जाता था कि वहां रात-दिन हथियारबन्द कसाक पहरा देते हैं। यह

भी कहा गया था कि स्तालिन प्रतिदिन क्रेमलिन के एक दरवाज़े से भीतर जाते और दूसरे से बाहर आते हैं। खाने के वक्त ज़ार के खाने के सोने के बर्तनों में भोजन परोसा जाता है। यहां तक कहा गया है कि वह अपनी तरुण स्त्री को तुर्की के सुलतान की तरह घर में ताला बन्द करके रखते हैं।

"लेकिन, सच्चाई इससे बिलकुल उल्टी है। लेनिन की मृत्यु के बाद, वह कभी गोर्की के प्रासाद में नहीं गये। जब मैं मॉस्को में उनसे मिला, उस वक्त वह अपनी स्त्री और बच्चों के साथ शहर के बाहर एक सीधे-सादे घर में रहते थे। वह अपने आफिस में अपनी अकेली कार में जाते हैं और प्रतिदिन उसी द्वार से जाते हैं। दरवाज़े पर संतरी कोई विशेष सलाम नहीं देता। उनका खाना, रहन-सहन साधारण आदमी सा है। वह सुव्यवस्था को बहुत पसन्द करते हैं और अपने काम के समय को ठीक से बांटने में बड़ा ध्यान रखते हैं। उनकी रुचि बहुत सीधी-सादी है।...

"जब मैं स्तालिन से मिला, मैंने उन्हें एकान्त-प्रिय आदमी पाया। धन, सुख और महत्वाकांक्षा का उन पर कोई प्रभाव नहीं है। यद्यपि उनके हाथों में अपार शक्ति है, लेकिन उन्हें उसके लिये अभिमान नहीं ...मैं कहूँगा कि स्तालिन के स्वभाव में दो बातें अधिकता से पाई जाती हैं। पहली बात है—धैर्य, और इसको उन्होंने चरम सीमा तक पहुंचा दिया है, और दूसरी बात है--दूसरों पर बिना अवलम्ब किये, पूर्णतया आत्मावलंबी होना।...

"वह अब (सन् १९३३ में) ५० के क़रीब पहुंच रहे हैं। एक वर्ष में वह ३, ४ से अधिक युरोपियनों से भेंट नहीं करते, इसलिये जब कोई पाश्चात्य आदमी पहले उनसे मिलने आता है, तो उन्हें 'अनकुस' सा मालूम होता है। मुझे इससे आश्चर्य हो रहा था, क्योंकि मैं अच्छी तरह जानता था कि मैं संसार के छठे हिस्से के वास्तविक शासक के सामने हूं। अगर मेरा दिल ठीक कहता है, तो मैं कहूंगा कि स्तालिन स्वभाव से ही अच्छे दिल के आदमी हैं। उनमें कल्पना का अभाव नहीं है, लेकिन उसकी उड़ान की शौक़ीनी से वह इन्कार करते हैं। वह महत्वाकांक्षी नहीं हैं, लेकिन अपने प्रतिद्वंदियों से नर्मी नहीं बरतना चाहते हैं। पिछले ३५ वर्षों से उनके दिमाग़ में सिर्फ़ एक ही बात है, जिसके लिये उन्होंने अपना यौवन, अपना स्वास्थ, अपनी सुरक्षा और जीवन के सभी दूसरे आनंद क़ुर्बान कर दिये हैं। इसलिये नहीं कि वह खुद शासन करें, बल्कि इसलिये कि शासन उन सिद्धान्तों के अनुसार हो, जिनके लिये उन्होंने शपथ ली थी। उन्होंने मुझसे कहा 'मेरे जीवन का यही उद्देश्य है कि जांगर चलाने वाली श्रेणी को और ऊपर उठाया जाय। मुझे जातीय राज्य बनाने का ख़याल नहीं है, बल्कि मैं एक समाजवादी राज्य चाहता हूँ, जो संसार के सभी कमकरों के स्वार्थों की रक्षा करे। अगर मेरे जीवन का हरएक क़दम उसी राज्य की स्थापना की ओर

नहीं बढ़ा, तब मैं समझूंगा कि व्यर्थ ही जिया।'—वह बड़ी नर्मी से बोल रहे थे। और, धीमी आवाज़ ऐसे निकल रही थी, मानो वह अपने आप से बात कर रहे हों।...

"मेरे एक प्रश्न के उत्तर में उन्होंने कहा—'मेरे माता-पिता अशिक्षित थे। लेकिन, उन्होंने मेरे लिये बहुत किया। मसारिक (चैकोस्लाविया के राष्ट्र-निर्माता) को जैसे धुन हुई थी, वैसे ही मैं १० या १२ वर्ष में समाजवादी नहीं हो गया था। जब तक मैं पादरियों की पाठशाला में रहा, मैं समाजवादी नहीं बना था। फिर, प्रचलित शासन-प्रथा का विरोधी हुआ। शासन-प्रथा क्या थी? खुफ़ियों का पीछे पड़े रहना और धोखा देना। मैं ६ बजे सबेरे चाय के लिये बुलाया गया। जब कोठरी में लौटा, तो देखा कि सभी दराज़ों की एक-एक करके छान-बीन हुई है। वह हमारे कागजों की छान-बीन नहीं कर रहे थे, बल्कि हमारे दिलों के एक-एक कोने की छान-बीन कर रहे थे। यह असह्य था। मैं किसी भी हद तक और किसी भी प्रथा के पक्ष में जाने के लिये तैयार होजाता, यदि समझता कि मैं उसके द्वारा उस शासन-व्यवस्था का विरोध कर सकता हूं। उसी समय, रूसी समाजवादियों की एक क़ानून-विरोधी टोली काकेशस की पहाड़ी में आयी। उन्होंने मुझ पर बहुत प्रभाव डाला और उसी समय से मुझे निषिद्ध साहित्य का चस्का लगा।'

"स्तालिन और मुस्तफ़ा कमाल—दो ही ऐसे आदमी हैं, जिनसे बातें करते समय मुझे दुभाषिया की ज़रूरत पड़ी। जिस कमरे में हम प्रविष्ट हुये, वह लम्बा था। उसके एक छोर पर, एक मझोले कद का आदमी भूरे रंग का बन्द गले का कोट पहिने कुर्सी के पास खड़ा था। उसकी पोशाक उतनी ही साफ़ थी, जैसा कि वह कमरा।... बीच में एक लम्बी मेज़ रखी थी, जिस पर पानी की झारी, गिलास और राखदानी पड़ी थी। हरएक चीज़ से सुव्यवस्था टपक रही थी। दीवारें गहरे हरे रंग से रंगी थीं; उन पर लेनिन, मार्क्स तथा कुछ मेरे अपरिचित व्यक्तियों के फोटो टंगे हुये थे। स्तालिन की लिखने की मेज़ भी सुव्यवस्थित तौर से रखी थी। उस पर लेनिन का एक फोटो था। बगल में ४-५ टेलीफोन के यंत्र वैसे ही रखे थे, जैसे कि सरकारी आफिसों में होते हैं। लड़खड़ाती रूसी में, मैंने कहा—'दोब्रे उत्रा' (सुप्रभातम्)। उन्होंने कुछ संकोच से मुसकरा दिया, लेकिन वह बड़े ही विनम्र थे। उन्होंने मुझे देने के लिये एक सिगरेट उठायी। उन्होंने विश्वास दिलाया कि मैं जो भी प्रश्न पूछना चाहूँ, पूछ सकता हूँ और मेरे पास डेढ़ घंटा समय है। जब समय खतम होते वक्त मैंने अपनी घड़ी निकाली, तो उन्होंने मना करने का संकेत किया और मुझे आधा घंटा और पास रखा। एक शक्तिशाली पुरुष के लिये कुछ मात्रा तक संकोच उतनी ही अच्छी बात है, जितनी कि एक सुन्दर स्त्री में।

"चूंकि वह दुभाषिया के सहारे मुझसे बातें कर रहे थे, इसलिये प्रायः बराबर उनका मुँह दूसरी ओर रहता था। वह दोनों घंटे कागज के टुकड़ों पर लकीरें खींचते रहे। एक लाल पेंसिल से वृत्त और दूसरी शकलें खींचते तथा अंक लिखते

जाते थे। हमारे बात करने के समय, उन्होंने कागज के कई टुकड़े लाल रेखाओं से भरे और समय-समय पर उनको मोड़ कर फाड़ दिया।...स्तालिन का स्वभाव है, बिना हिले-डुले बैठने का। वह बोलते वक्त किसी शब्द पर जोर देना या हाथ-मुंह हिलाना नहीं जानते।... उनके बारे में यह मुख्य बात मेरे दिल में धंसी कि वह संयत हैं। स्तालिन वह आदमी हैं, जिनके नाम से कितने नर-नारी रोब में पड़ जाते हैं। लेकिन, एक बच्चा या पशु वैसा नहीं कर सकता। पुराने युग में ऐसे पुरुष को लोग देश का पिता कहते थे।...

"यद्यपि मेरे सभी प्रश्नों के लिये उन्होंने तैयारी नहीं की थी और उन्हें हमारी युरोपीय सरकारों के मंत्रियों—जिनसे कि वही प्रश्न हफ़्ता-दर—हफ़्ता पूछे जाते हैं—जैसा अनुभव भी नहीं था। वह यह भी जानते थे कि यह उत्तर को सारे संसार के लिये प्रकाशित करेगा। सभी ऐतिहासिक घटनायें और नाम उनको कंठाग्र थे। मेरे दुभाषिया ने सारे वार्तालाप को लिखा था, लेकिन उन्होंने उसकी कापी नहीं मांगी और न किसी संशोधन की इच्छा प्रकट की। इस प्रकार का आत्मविश्वास मैंने कहीं नहीं देखा। दुनिया के और जितने नेताओं से मैंने वार्तालाप किया है, उनके कहने को मैंने उसी वक्त कागज पर नहीं उतारा, बल्कि पीछे उतार कर उनकी स्वीकृति के लिये भेजा है। लेकिन यहां मैंने दूसरे आदमी द्वारा त्वरित लिपि में लिखे हुये लेख को लिया और जब मैंने उसे गौर से मिलाया, तो उसमें जरा भी कोई बात छूटी नहीं देखी, तो भी वाक्यावलि बिलकुल दुरुस्त थी। जब मैं मन में अपने बेचारे मंत्रियों की आदत को ख़याल में लाता हूं, जो कि अपने पार्लियामेंट में देने वाले व्याख्यान या संवाद को देते वक्त अपने प्रेस-विभाग के अध्यक्ष द्वारा उसका संशोधन करा लेते हैं, तो इस काकेशस के चर्मकार के लड़के के लिये मेरा दिल सम्मान से भर जाता है।...स्तालिन नियमपूर्वक ४ बजे भुनसारे चारपाई पर सोने जाते हैं। लायड जार्ज की तरह, उनके पास ३२ सेक्रेटरी नहीं हैं; बल्कि सिर्फ़ एक साथी प्रोस्कोविचेफ़ हैं। दूसरों के लिखे हुये कागजों पर वह दस्तख़त नहीं करते। उनके पास लेखन-सामग्री भेज दी जाती है और वह सब काम अपने-आप करते हैं। हर-एक चीज उनके हाथ से गुज़रती है; लेकिन इससे क्या? वह प्रत्येक पत्र का जवाब दियें या भेजे बिना नहीं रहते। मुलाक़ात के समय वह बड़े दिल खोल कर, बिना किसी नियंत्रण के मिलते हैं।... वह बच्चों की तरह ठठाकर हंसते हैं।

"मॉस्को के महान् ओपेरा भवन में गोर्की की जुबली हो रही थी। बीच के अवकाश में, पुराने सम्राट या सम्राटकुमारों के बैठने के स्थान के पीछे के कमरों में कुछ सरकारी अधिकारी जमा थे। आवाज़ कान के पर्दे फाड़ रही थी और हरएक आदमी कहकहा लगा कर हंस रहा था। इनमें स्तालिन, ओर्योनीकिद्ज़े, रुइकोफ़, बुगनोफ़, मोलोतोफ़, वोरोशिलोफ़, कगानोविच और प्यातिन्स्की भी थे। गृह-युद्ध की घटनाओं की बातें

बड़े मनोरंजक ढंग से कर रहे थे : 'तुम्हें याद है, जब तुम अपने घोड़े से लुढ़क पड़े थे ? '—'हां, गंदा पशु ! मुझे नहीं मालूम हुआ, क्या बात थी...।'—लेनिन में भी जोर से ठठाकर हंसने की आदत थी। गोर्की ने कहा था : 'मैं ऐसे किसी भी आदमी से नहीं मिला, जिसकी हंसी ब्लादिमिर इलिच जैसी, छूत की बीमारी की तरह, लगती हो। गोर्की ने निष्कर्ष निकाला था : 'इस तरह की हंसी वाले आदमी के पास बड़ा ठोस मानसिक स्वास्थ होना आवश्यक है।' जो लोग इस तरह की हंसी हंसते हैं, वह बच्चों से बड़ा प्रेम करते हैं। स्तालिन के पास तीन बच्चे हैं—सबसे बड़ा यश्चेका और दो छोटे-छोटे—चौदह वर्ष का वासिली और आठ वर्ष की स्वेतलाना। उनकी बीबी नादेज़्दा अलीलुइयेवा पिछले ही साल मरी है। उसका भौतिक शरीर अब नहीं है, लेकिन उसका एक सुन्दर सम्भ्रांत साधारण जन जैसा चेहरा और बड़ी कब्र के भीतर से निकलती सुन्दर संगमरमर की बांह नवोदेवीची के कब्रिस्तान में देखी जा सकती है। स्तालिन ने अर्तियोम सेर्गियेफ़ को क़रीब-क़रीब अपना बेटा बना लिया है, जिसका बाप सन् १९२१ की एक दुर्घटना में मारा गया था। बाकू में अंग्रेजों द्वारा गोली मारे गये-जापरित्ज़े की दो लड़कियों और कितनों ही दूसरों से भी स्तालिन का व्यवहार अपने बच्चों जैसा ही है। अर्नाल्द कपलान और बोरिस गोल्दस्ताइन—पियानो और वाइलिन के अद्भुत प्रतिभाशाली बालकों का संगीत—समाज में उनकी विजय के बाद स्तालिन ने जिस तरह स्वागत किया, उसका वर्णन करते समय उनके चेहरे पर जो प्रसन्नता दीख पड़ती थी, वह मुझे अब भी याद है। स्तालिन ने उन्हें तीन हज़ार रूबल देते हुये, यह भी कहा था : 'अब तुम पूंजीपति हो गये, क्या सड़क में देख कर मुझे पहचानोगे ?'"

स्तालिन की मुक्त हंसी और उनके खुले दिल का परिचय बहुत कम लोगों को है। इसका एक कारण यह भी था कि उस पुरुष के कंधे पर जितनी अधिक ज़िम्मेवारी और काम थे, उतने शायद ही इतिहास में किसी पुरुष पर रहे होंगे। उन्होंने अपने ७३ वर्ष के जीवन को, बचपन के थोड़े से वर्षों को छोड़ कर बाकी सारे समय के एक-एक क्षण को, किस तरह इस्तेमाल किया है, इसकी बानगी हमें मिल चुकी है। व्यंग और ज़िंदादिली में स्तालिन अद्वितीय थे। उनके पुराने सहकारी दामियन बेद्नी ने स्तालिन के जीवन की एक मनोरंजक कहानी बतलाई थी :

"सन् १९२७ की जुलाई के आरंभिक दिनों में, एक शाम को मैं और स्तालिन 'प्राव्दा' के सम्पादन के काम में लगे हुये थे। इसी समय टेलीफोन की घंटी बजी। क्रौन्सतात के नौसैनिकों ने स्तालिन से पूछा—' प्रदर्शन में हमें अपनी राइफ़िलों के साथ आना चाहिये, या उनके बिना ही ?'—मैं सोच रहा था, देखूं तो वह टेलीफोन पर क्या जवाब देते हैं ? और, जवाब सुन कर मुझे आश्चर्य हुआ—" राइफ़िलें ? साथियो, यह निश्चय करना तुम्हारा अपना काम है। साथियो ! हम लेखक तो अपनी पेंसिलें बराबर अपने साथ रखते हैं। और,

सचमुच ही, सभी नौसैनिक अपनी-अपनी पेंसिलें लिये हुये ही प्रदर्शन में आये थे।"

इतने महान् होने पर भी, स्तालिन कितने विनम्र थे। लुडविग से बातें करते समय, उन्होंने अपने अन्तस्तल से कहा था : "मैं केवल लेनिन का एक शिष्य हूं।"

८. सत्रहवीं कांग्रेस (सन् १९३४)

यह कांग्रेस 'विजेताओं की कांग्रेस' के नाम से प्रसिद्ध है। पांच वर्षों की योजनाओं को सन् १९३४ तक, चार वर्षों के भीतर पूरा करके यदि सोवियत के नर-नारियों ने विजेता की उपाधि प्राप्त की, तो इसमें आश्चर्य ही क्या है ? इस कांग्रेस में भी उन्होंने, अपने जीवन के अंतिम वर्षों की तरह, सोवियत की वैदेशिक नीति के बारे में कहा था :

> "हमारी वैदेशिक नीति स्पष्ट है, वह है—शांति की रक्षा और सभी देशों के साथ व्यापारिक सम्बन्धों को मज़बूत करना। सोवियत समाजवादी गणसंघ आक्रमण करने की बात तो अलग, किसी को धमकाने की भी बात नहीं सोचता। हम शांति चाहते हैं और शांति के कामों के समर्थक हैं। लेकिन, हम धमकी से नहीं डरते और लड़ाई भड़काने वालों को मुक्के का जवाब मुक्के से देने के लिये तैयार हैं।... जो हमारे देश पर आक्रमण करने की कोशिश करेंगे, उन्हें हमारी ओर से चूर-चूर कर देने वाला जबर्दस्त प्रहार मिलेगा, जिससे वह सीख जायेंगे कि हमारे सोवियत के बगीचे में अपना थूथुन डालना ठीक नहीं है।"

इसी समय सन् १९३४ में, स्तालिन ने अमरीकी संवाददाता वॉल्टर डुरेंटी से ४ जनवरी को मुलाक़ात की और २३ जुलाई को अंग्रेज़ ग्रंथकार एच. जी. वैल्स से भेंट की। एच. जी. वैल्स के साथ स्तालिन की मुलाक़ात बड़ी मनोरंजक और ज्ञान-वर्द्धक थी। इस वार्तालाप के बारे में टिप्पणी करते हुये, बर्नार्ड शा ने लिखा था :

> "इसे दो असाधारण पुरुषों के बीच वार्तालाप या भिड़न्त कह लीजिये, यद्यपि इसमें ऐसी कोई भी बात नहीं हुई, जिससे दोनों के विचारों के बारे में हम कोई नई जानकारी पायें।...स्तालिन बड़े ही मज़ाकपसन्द आदमी हैं। हर वक्त कोमल हंसी उनके पास मौजूद रहती है।...वैल्स ने जो कुछ कहा, स्तालिन ने बड़े ध्यान से और गम्भीरतापूर्वक सुना और अपनी बारी में, उन्होंने जवाब के रूप में कांटी के बिलकुल सिर पर प्रहार किया। वैल्स स्तालिन की बातें नहीं सुनते थे, वह बड़ी अधीरतापूर्वक फिर से बात आरम्भ करने के लिये, स्तालिन के चुप होने की प्रतीक्षा करते रहते थे। वह समझते थे कि वह उससे कहीं ज़्यादा जानते हैं, जितना कि स्तालिन जानते हैं। वह स्तालिन से शिक्षा लेने नहीं गये थे, बल्कि उन्हें शिक्षा देने गये थे।"

वैल्स और स्तालिन के वार्तालाप के मनोरंजक पहलुओं को देने के लिये यहाँ स्थान नहीं है, लेकिन इस वार्तालाप में स्तालिन ने कितने ही गम्भीर तत्वों का प्रकाशन और स्पष्टीकरण किया था।

९. *किरोफ़ की हत्या (सन् १९३४)*

दिसम्बर सन् १९३४ में लेनिनग्राद में त्रॉत्स्कीवादियों का मनोरथ सफल हुआ, जबकि लेनिनग्राद में उनके एक आदमी ने सेर्गेई किरोफ़ को गोली मार दी। किरोफ़ स्तालिन का बहुत ही योग्य शिष्य और सहायक था। राजधानी के मॉस्को में पहुंच जाने पर, स्तालिन-विरोधियों ने लेनिनग्राद में अपना मजबूत अड्डा जमा लिया था। वहां ज़िनोवियेफ़ और कामनेफ़ की बहुत चलती थी। ऐसे समय, किरोफ़ ने लेनिनग्राद को ठीक करने का बीड़ा उठाया था और उसने अपने काम को बड़ी सफलता के साथ पूरा किया था। वह स्तालिन का दाहिना हाथ था और आम तौर से आशा की जाती थी कि वही स्तालिन का उत्तराधिकारी होगा। लेकिन, देश के भाग्य का संचालन अभी स्तालिन को ही करना था। किरोफ़ की हत्या के बाद भी वह उन्नीस वर्षों तक और काम करके, द्वितीय महायुद्ध और उसके बाद के जबर्दस्त पुनर्निर्माण के काम को समाप्त करके ही, दुनिया से विदा हुये हैं। सोवियत के लोगों के दिलों में इतनी अधिक शंका क्यों रहती है, इसका एक ज़बर्दस्त कारण किरोफ़ की हत्या भी है। लेकिन किरोफ़ पर गोली मार कर, क्रांति-विरोधियों ने अपनी अंतिम गोली खतम कर दी; उसके साथ ही उनका भी खात्मा हो गया। अब त्रॉत्स्कीवादी और दूसरे क्रांति विरोधियों का नाम अपार घृणा के साथ लेने के लिये ही सोवियत-भूमि में शेप रह गया है। किरोफ़ की हत्या लेनिनग्राद के स्मोल्नी प्रतिष्ठान में हुई थी, जहां रह कर लेनिन ने अक्तूबर-क्रांति का सफलतापूर्वक संचालन किया था।

सत्रहवीं पार्टी कांग्रेस की रिपोर्ट से पता लगा कि द्वितीय पंचवार्षिक योजना में भी उसी तरह की सफलता मिल रही थी, जिस तरह कि प्रथम पंचवार्षिक योजना में मिली थी। और, आशा बंधने लगी कि इसको भी समय से पहले पूरा कर लिया जायगा। स्तालिन ने इसी समय कहा था :

> "हम विघ्न-बाधाओं को हटा कर, लेनिनवादी मार्ग पर आगे बढ़ रहे हैं।...पार्टी के भीतर केन्द्रीय कमिटी के विरुद्ध, विरोधी विद्रोह खड़ा करना चाहते हैं। इतना ही नहीं, वह हम में से कुछ को गोलियों की धमकी भी दे रहे हैं। शायद वह इस तरह हमें डरा कर, लेनिनवादी पथ से विमुख करना चाहते हैं। इन लोगों को पता नहीं, वह लोग भूल जाते हैं कि हम बोल्शेविक एक खास धातु के आदमी हैं। वह भूल जाते हैं कि न कठिनाइयां और न धमकियां ही, बोल्शेविकों को भयभीत कर सकती हैं। वह भूल जाते

हैं कि हम उस महान् लेनिन—हमारे नेता, हमारे गुरु, हमारे पिता—द्वारा शिक्षित और फ़ौलादी बनाये गये हैं, जो लड़ाई में न भय को जानता, न उसे मानता था।"

इसी भाषण में, स्तालिन ने जोर देकर कहा था : "टेक्नीक (तैयार यंत्र तथा वैज्ञानिक कौशल) सब चीजों का फ़ैसला करती है। जब टेक्नीक तैयार कर ली गई, तो हमें ऐसे आदमियों की आवश्यकता पड़ती है, जो उस टेक्नीक पर पूरा अधिकार रखते हैं, हमें ऐसे 'कादर' (कर्मियों) की आवश्यकता होती है, जो कला के सभी नियमों के अनुसार टेक्नीक में दक्ष हों और उसको काम में लायें। ऐसे अधिकार-प्राप्त आदमियों के बिना, टेक्नीक मरी हुई है। अधिकार-प्राप्त आदमियों के हाथ में पड़ कर टेक्नीक जादू सा काम कर सकती है।...इसीलिये, अब हमें उन आदमियों, कर्मियों, कमकरों पर जोर देना है, जो टेक्नीक के आचार्य हैं। इसीलिये, पुराने नारे 'टेक्नीक हर बात का फ़ैसला करती है'—की जगह, हमें नारा देना चाहिये—'कर्मी सब चीजों का फ़ैसला करते हैं।'"—स्तालिन ने यह भाषण मई सन् १९३५ में लाल सैनिक एकेडमी के ग्रेज्युएटों के सामने दिया था।

और सचमुच ही, उस समय टेक्नीक के आचार्य आश्चर्यजनक गति से पैदा हुये। जब माध्यमिक शिक्षा अनिवार्य हो, शिक्षा भी जीवन के हर पहलू के उपयोग की दृष्टि से दी जाती हो; जन सरकार कमकरों की हर तरह से सहायता करने तथा प्रोत्साहन देने के लिये तैयार हो और शोषण तथा भ्रष्टाचार रहित देश दिलोजान से नव-निर्माण में लगा हो; तो फिर क्यों न अपना चमत्कार दिखाने के लिये नई-नई प्रतिभायें कार्य-क्षेत्र में उतरें। ऐसी ही बात हुई, जब कोयले की खान के एक साधारण कमकर—स्ताखानोफ़ ने अपनी पारी में तीन गुने से अधिक कोयला निकाल दिया। उसने यह काम काम के बंटवारे तथा खनन-यंत्र के अच्छे उपयोग की क्रिया के द्वारा किया था। स्तालिन को इस तरह की असाधारण घटना का पता लगने में देर नहीं लगी? यह खबर जैसे ही दोनबास से मॉस्को पहुंची, स्तालिन ने उसका अभिनंदन किया। स्ताखानोफ़ का सम्मान बढ़ाया गया। उसे खान-इंजीनियर बन कर और बड़ा काम करने, तथा महासोवियत के सदस्य बनने का सौभाग्य प्राप्त हुआ; साथ ही, स्ताखानोफ़ के नाम से एक विशाल आन्दोलन चल पड़ा। नवम्बर सन् १९३५ में प्रथम स्ताखानोफ़ी कान्फ्रेंस हुई, जिसमें स्तालिन ने कहा था : "यह आन्दोलन समाजवादी प्रेरणा की एक नई लहर तथा समाजवादी विकास की एक नई और ऊंची सीढ़ी है।...स्ताखानोफ़-आंदोलन की विशेषता इस बात में है कि यह टेक्नीक के पुराने मान को अपर्याप्त समझ कर, उसे तोड़ रहा है।"

स्तालिन का ध्यान टेक्नीक के विकास के साथ, सांस्कृतिक विकास की ओर भी बराबर था। शिक्षा, कला, साहित्य सभी क्षेत्रों में वह प्रोत्साहन देते थे। स्तालिन

जिनसे बड़े-बड़े विदेशी राजदूत भी वर्षों तक मिलने में सफल नहीं होते थे, वह इन अद्‌भुत कर्मियों, कमकरों और किसानों के लिये बिलकुल सुलभ थे। उनसे मिलने तथा उनकी बातें समझने और पथ-प्रदर्शन करने के लिये बराबर उनकी कान्फ्रेंसें कराते रहते थे। क्रैमलिन में स्ताखानोफ़ी कान्फ्रेंस हुई। उसी साल, ४ दिसम्बर को ताजिकिस्तान और तुर्कमानिस्तान के प्रमुख कोलखोज़ी किसानों की कान्फ्रेंस हुई। इसी समय के आस-पास, उज्बेकिस्तान, कज़ाकस्तान और कराकल्पक के कोलखोज़ी किसानों ने भी क्रैमलिन में अपनी कान्फ्रेंस करके, स्तालिन के दर्शन और प्रेरणादायक सीखों से लाभ उठाया। केवल दर्शन के लिये एक-एक आदमी को समय देना, स्तालिन जैसे सदा व्यस्त रहने वाले पुरुष के लिये मुश्किल था; लेकिन जनता के नवीन नायकों के घनिष्ठ सम्पर्क में आने की आवश्यकता वह अच्छी तरह महसूस करते थे, इसलिये ऐसी कान्फ्रेंसों में वह बराबर हिस्सा लेते थे और उनके सुभीते का ख़्याल करके यह कान्फ्रेंसें क्रैमलिन में ही हुआ करती थीं। स्तालिन ने सन् १९३५ के नवम्बर में, चुकन्दर की खेती वाले कोलखोज़ों की अग्रणी स्त्रियों का स्वागत किया और उन्हें बतलाया कि स्ताखानोफ़ी आन्दोलन मानवता के सबसे पिछड़े हुये अंग—स्त्रियों को आगे बढ़ाने में कितना सहायक हो सकता है।

जिस तरह उद्योग-धंधों और खेती में सोवियत रूस बहुत तेज़ी से आगे बढ़ रहा था, उसी तरह यातायात और संचार के नये-नये साधन भी विशाल रूप में प्रस्तुत किये जा रहे थे। इसका एक उदाहरण इसी साल श्वेत सागर की नहर का बनना है, जिसके द्वारा बाल्तिक समुद्र को ध्रुवीय समुद्र से मिला दिया गया है। यह मानव-निर्मित नवीन जल-पथ केवल सस्ते यातायात के लिये ही उपयोगी नहीं है, बल्कि देश की सुरक्षा के लिये इसका सैनिक महत्व भी बहुत जबर्दस्त था। इन पंचवार्षिक योजनाओं के समय, देश की सामरिक शक्ति को बढ़ाने में भी उतना ही काम हुआ था; यद्यपि आंकड़ों को गुप्त रखने के कारण, बाहर वालों को तब तक उसका पता नहीं लगा, जब तक लाल सेना ने द्वितीय महायुद्ध में हिटलरियों को भगाना शुरू नहीं किया।

सन् १९३६ में, स्तालिन का दिमाग़ फिर एक बार कलम की ओर गया और उन्होंने अपने सम्पादकत्व में सोवियत कम्युनिस्ट पार्टी का इतिहास तैयार किया। अधिकांशतः स्तालिन द्वारा लिखी गई, इस पुस्तक में सोवियत और उसके बाहर घटने वाली भिन्न-भिन्न महत्वपूर्ण घटनाओं का गहरा विवेचन और विश्लेषण है। यद्यपि इसके सम्पादक-मंडल में और भी कितने ही योग्य व्यक्ति थे, लेकिन उसके एक-एक शब्द का मूल्यांकन स्तालिन ने स्वयं किया था। इसीलिये, यह एक अमर कृति है। जब तक सारे विश्व में समाजवाद की विजय नहीं हो जाती, तब तक यह बराबर हर समय हमारा पथ-प्रदर्शन करती रहेगी।

स्तालिन सन् १९३६ में भी कितनी ही कान्फ्रेंसों में भाग लेते रहे। इसी साल, उन्होंने अमरीकन संवाददाता राय होवार्ड से १ मार्च, १९३६ को भेंट की थी।

पूंजीवादी पत्र सोवियत को गाली देने और झूठे लांछन लगाने में ही व्यस्त थे, सोवियत की क्षमताओं और सफलताओं की वह मौन रह कर उपेक्षा किया करते थे। स्तालिन अब अत्यंत मितभाषी होगये थे, इसका अर्थ यह नहीं था कि वह विशाल निर्माण के काम में लगे हुये लोगों के साथ भी मौन-व्रत रखते थे। जो भी हो, जब भी वर्षों बाद कोई विदेशी संवाददाता उनसे बातचीत करने में सफल होता, अथवा वह स्वयं किसी वैदेशिक या गृह-नीति पर कोई संक्षिप्त सा भी भाषण देते, तो उसे प्रकाशित करने के लिये विदेशी पत्रों में होड़ लग जाती थी।

१०. *स्तालिनीय संविधान*

सन् १९३६ की एक असाधारण घटना थी—नये संविधान की स्वीकृति। स्वीकृत करने से पहले, इसके मसौदे को एक साल तक आलोचना और राय देने के लिये प्रकाशित कर दिया गया था और संविधान के बारे में जो भी आवश्यक सुझाव आये थे उनको सम्मिलित करके, संविधान को स्वीकृत किया गया था। नये संविधान ने सन् १९२४ में स्वीकृत सोवियत संघ के संविधान का स्थान लिया। संविधान को पास कराने के समय, स्तालिन ने एक बहुत महत्वपूर्ण भाषण दिया था, जिसके उपसंहार में उन्होंने कहा था :

"सन् १९१९ में लेनिन ने कहा था : 'वह समय दूर नहीं है, जबकि सोवियत सरकार इसे लाभदायक समझेगी कि वह बिना प्रतिबन्ध के सार्वजनिक मताधिकार का आरंभ करे।' इस वाक्य पर कृपया ध्यान दीजिये—'बिना किसी प्रतिबन्ध के!' लेनिन ने यह ऐसे समय कहा थी, जबकि विदेशी सेना का नाजायज दखल अभी बन्द नहीं हुआ था और जब हमारे उद्योग और हमारी कृषि बहुत ही शोचनीय दशा में थी। तब से १७ वर्ष बीत चुके हैं। साथियो, क्या अब वह समय नहीं है कि हम लेनिन के वचन को पूरा करें? मैं समझता हूं कि समय आ गया है।

"यह एक ऐसा दस्तावेज होगा, जो उस घटना को सिद्ध करेगा, जिसका पूंजीवादी देशों के लाखों ईमानदार आदमी स्वप्न देखते थे और अब भी देख रहे हैं; जो सो० स० गणसंघ में प्राप्त भी किया जा चुका है। यह एक ऐसा दस्तावेज होगा, जो इस बात को सिद्ध करेगा कि जो बात सो० स० गणसंघ में प्राप्त की जा चुकी है, दूसरे देशों में भी उसका प्राप्त करना बिलकुल सम्भव है।

"इससे मालूम होगा कि सो० स० गणसंघ के नये विधान का अन्तर्राष्ट्रीय महत्व कितना अधिक है।

"आज, जबकि फ़ासिज़्म की भयंकर लहर श्रमिक श्रेणी के समाजवादी आंदोलन को छिन्न-भिन्न कर रही है, सभ्य जगत के श्रेष्ठ पुरुषों के जनतांत्रिक प्रयत्नों को विफल कर रही है, सो० स० गणसंघ का नया संविधान फ़ासिज़्म

के विरुद्ध 'समाजवाद और जनतांत्रिता का अटूट संबंध है'—इसे घोषित करते हुये, एक जबर्दस्त विरोधी आवाज उठा रहा है। सो० स० गणसंघ का नया विधान उन सभी लोगों की नैतिक सहायता और वास्तविक मदद का काम करेगा, जो आज फ़ासिस्ट बर्बरों से लड़ रहे हैं।

"यह जान कर आनन्द और खुशी होती है कि किस लिये हमारे लोग लड़े और किस तरह उन्होंने सारे संसार के इतिहास के लिये महत्वपूर्ण इस विजय को प्राप्त किया है। यह जानकर आनन्द और खुशी होती है कि हमारे लोगों का खून, जो इतनी अधिकता से बहा है, वह व्यर्थ नहीं गया, उसने सुन्दर फल दिये हैं।"

सोवियत संविधान ५ दिसम्बर, १९३६ को पास हुआ।

सोवियत को बालपन से ही पूतनाओं का सामना करना पड़ा था, यह हम अनेक बार देख चुके हैं। पुरानी व्यवस्था के समर्थकों ने बराबर यह कोशिश की थी कि हरएक काम में रोड़े अटकाये जांय और नेताओं को खतम कर दिया जाय। उन्होंने इसी उद्देश्य से लेनिन पर गोली चलाई थी, इसी उद्देश्य से किरोफ़ को मारा था और फिर भी जब कभी मौका मिला, वह षडयंत्र करने से बाज़ नहीं आये। फिर, एक बड़े षड्यंत्र का भंडाफोड़ सन् १९३७ में हुआ। मुकदमे की कार्रवाइयों से पता लगा कि इस षड्यंत्र में सिर्फ़ देश और विदेश के प्रतिगामी ही शामिल नहीं थे, बल्कि उसमें जापान और जर्मनी की फ़ासिस्ट सरकारों का भी हाथ था। ये प्रतिगामी समझते थे कि उनकी ही तरह, सोवियत रूस के भीतर भी सब कुछ एक ही आदमी का तमाशा है। उन्हें पता नहीं था कि व्यक्ति और नेता का महत्व सोवियत-व्यवस्था में भी है, लेकिन सोवियत नेतृत्व एक दूसरे ही प्रकार का है। स्तालिन ने इसके बारे में कहा था : "लेनिन ने हमें सिखाया है कि केवल ऐसे ही नेता वास्तविक बोल्शेविक नेता हो सकते हैं, जो कमकरों और किसानों को सिखाना ही नहीं जानते, बल्कि यह भी जानते हैं कि उनसे कैसे सीखना चाहिये।"—लेनिन को खोकर भी, सोवियत व्यवस्था किस तरह आगे बढ़ी, इसको दुनिया ने देखा है। स्तालिन के महान् नेतृत्व को देख कर भी, साम्राज्यवादी फिर समझने में ग़लती करने लगे, तभी तो वह आशा कर रहे थे कि स्तालिन के बाद फिर वहां गड़बड़ी होगी और उन्हें साजिशें करने का मौका मिलेगा; लेकिन उन्हें निराश होना पड़ा।

सन् १९३७ में, द्वितीय पंचवार्षिक योजना भी पहली योजना की तरह ही सफलता के साथ और समय से नौ मास पहले पूर्ण हुई। इसी साल, तृतीय पंचवार्षिक योजना भी अगले साल से चालू करने के लिये तैयार की गई। वर्ष के अन्त में नये संविधान के अनुसार, १२ दिसम्बर, १९३७ को महासोवियत का नया चुनाव हुआ। एक दिन पहले स्तालिन ने मॉस्को में चुनाव-भाषण करते हुये बतलाया था कि हमारे पार्लामेंट के सदस्यों को लेनिन की तरह योग्य और निर्भीक होना चाहिये।

तृतीय पंचवार्षिक योजना (१९३८-४१)

१ जनवरी, १९३८ को यह योजना शुरू हुई और ३१ दिसम्बर, १९४२ को समाप्त होने वाली थी, लेकिन इसके पहले ही हिटलर ने सोवियत-भूमि पर आक्रमण कर दिया, जिसके कारण यह योजना खटाई में पड़ गई। इसके आरम्भ होने के एक साल बाद ही, द्वितीय महायुद्ध के छिड़ जाने से सोवियत की अधिक शक्ति अपनी सैनिक-सुरक्षा में लगने लगी। तब भी उसमें कितनी सफलता हुई, यह इसी से पता लगेगा कि सन् १९३८ में पिछले साल की अपेक्षा कल-कारखानों की उपज में १० फ़ी सैकड़ा, लकड़ी की उपज में ९ फ़ी सैकड़ा और रेलवे में साढ़े ५ फ़ी सैकड़ा की वृद्धि हुई।

११. *अठारहवीं पार्टी कांग्रेस (सन् १९३९)*

यह महत्वपूर्ण कांग्रेस मार्च महीने में हुई। इसी कांग्रेस के आदेशानुसार, सोवियत राष्ट्र ने द्वितीय महायुद्ध में महान विजय प्राप्त की और फिर युद्धोपरान्त प्रथम पंचवार्षिक योजना (चतुर्थ पंचवार्षिक योजना) को सफलतापूर्वक समाप्त किया।

अभी द्वितीय महायुद्ध घोषित होने में ६ महीने की देर थी। इसी समय युरोप, अफ्रीका और एशिया में इटली, जर्मनी और जापान के फ़ासिस्टों का ज़बर्दस्त हस्तक्षेप शुरू हो गया था; और महायुद्ध केवल इसीलिये रुका हुआ था कि प्रतिद्वंदी साम्राज्यवादी उनके विरोध में उठने के लिये अपने को समर्थ नहीं पाते थे। इसी बीच में द्वितीय पंचवार्षिक योजना सफलतापूर्वक पूर्ण हुई थी। कांग्रेस में स्तालिन ने देश-विदेश की सारी परिस्थिति पर प्रकाश डालते हुये, बतलाया कि जर्मनी और जापान जैसे ज़बर्दस्त आक्रमणकारी नया साम्राज्यवादी युद्ध छेड़ चुके हैं। इस युद्ध में ५० करोड़ जनसंख्या वाले भूभाग पड़ भी चुके हैं, जिसका विस्तार तियान्-चिन्, शंघाई और कैन्टन होते हुये अबीसीनिया से जिब्राल्टर तक फैला हुआ है। युद्ध की भावना इंगलैंड, फ्रांस और अमरीका के साम्राज्यवादी हितों को अधिकाधिक दबाये जा रही है, लेकिन तब भी ये देश प्रतिरोध के लिये कोई प्रयत्न नहीं करते। साम्राज्यवादी समझते थे कि वह हिटलर को सोवियत की विशाल भूमि की तरफ़ बढ़वाने में सफल होंगे। प्रथम युद्ध के बाद से ही, बोल्शेविक हौवा उनके सिर पर इतना सवार था कि वह दूसरी सभी सम्भावनाओं को छोड़ कर, केवल इसी का स्वप्न देखा करते थे कि कोई ऐसा शक्तिशाली नेतृत्व पैदा हो, जिसे सोवियत को धर-दबाने के लिये उकसाया जा सके। वस्तुतः, इटली और जर्मनी में मुसोलिनी और हिटलर के फ़ासिस्तवाद को पैदा करके मज़बूत करने में सबसे बड़ा हाथ इन्हीं साम्राज्यवादियों का था।

उन्होंने जर्मनी के सैनिक तौर से मजबूत हो जाने के बाद, चैकोस्लोवाकिया को ही खतम करवाने का निश्चय नहीं कर लिया, बल्कि इसी समय चैम्बरलेन और दलादिये ने समझा कि अब हिटलर को सोवियत की तरफ़ निश्चित तौर से फेर दिया गया है। सोवियत के नेताओं ने बहुत कहा कि मिल कर फ़ासिस्ट शक्तियों से मुक़ाबला किया जाय, लेकिन इंगलैंड और फ्रांस के साम्राज्यवादी भला इसे मानने के लिये क्यों तैयार होते, जबकि वह जानते थे कि हिटलरी अभियान की कुंजी उन्हीं के हाथों में है। लेकिन, उनका समझना गलत था। हिटलर उनके हाथ की कठपुतली नहीं था। हिटलर को पूर्व की ओर अभियान करने से पहले, यह देख लेना जरूरी था कि उसका मुक़ाबला वहां कैसी शक्ति से पड़ेगा। प्रथम विश्व युद्ध के बाद, सोवियत सेना के शिक्षण में जर्मन सैनिक विशेषज्ञों से भी सहायता ली गई थी, जिन्हें पता था कि नये रूस की सामरिक शक्ति क्या है। इसीलिये हिटलर मुसकरा रहा था, जबकि पश्चिमी साम्राज्यवादी म्यूनिक की सफलता पर फूले नहीं समा रहे थे।

कांग्रेस में सोवियत की वैदेशिक नीति के सिद्धांतों को बतलाते हुये, स्तालिन ने कहा था :

"वैदेशिक नीति के क्षेत्र में, पार्टी को ये काम करना हैं :

"(१) शांति की नीति को जारी रखना और सभी देशों के साथ व्यापारिक-सम्बंध मजबूत करना;

"(२) सावधान रहना और जंगबाजों को हमारे देश को युद्ध में न खींचने देना। जंगबाजों की यह आदत है कि वह अपने लिये दूसरों से आग में से होलों को उठवाना चाहते हैं;

"(३) लाल सेना और लाल नौसेना की शक्ति को चरम रूप में मजबूत करना;

"(४) राष्ट्रों के बीच शांति और मित्रता की पक्षपातिनी—सभी देशों की कमकर जनता के साथ मित्रता के अन्तर्राष्ट्रीय सम्बंधों को मजबूत करना।"

स्तालिन ने इसी साल अपना साठवां वर्ष पूरा किया। अपने महान् नेता की इस महत्वपूर्ण वर्षगांठ को सारी जनता ने बड़े उत्साह के साथ मनाया और हृदय से कामना की कि स्तालिन दीर्घजीवी हों; देश और मानवता के ऊपर घिर आई भयंकर काली घटाओं को चीरते हुये, हमारा पथ-प्रदर्शन करें।

इसी साल, मध्य एशिया में सोवियत की जनता ने एक बड़ी सफलता प्राप्त की, जब उज्बेकिस्तान के लोगों ने ४'५ दिनों में २७० किलोमीटर लम्बी फर्गाना की

विशाल नहर बना डाली। स्तालिन जानते थे कि जब फ़ासिस्टों के आक्रमण से अन्न की कठिनाई होगी, उस समय इस सुरक्षित स्थान से लाखों मन अनाज की आमदनी होगी। उज्बेक कोलखोजियों की इंजीनियरों और सामग्री से पूरी मदद गई की। उन्होंने सफल होकर, स्तालिन के नाम एक पद्य-बद्ध अभिनंदन भेजा और अपनी नहर का नाम भी 'स्तालिन फर्गाना महानहर' रखा।

कामों में व्यस्त रहते हुये भी इसी साल (सन् १९३६), स्तालिन ने अपना एक महत्वपूर्ण ग्रंथ, 'समाजवादी राज्य का अखंड और पूर्ण सिद्धांत' लिखा। लेनिन ने 'राज्य और क्रांति' नामक पुस्तक सन् १९१७ के अगस्त में बोल्शेविक-क्रांति से कुछ ही महीने पहले लिखी थी, जिसके द्वारा क्रांति के समय भारी पथ-प्रदर्शन प्राप्त हुआ था। क्रांति के बाद जिस रास्ते से सोवियत रूस को गुज़रना पड़ा, पुनर्निर्माण और पंचवार्षिक योजनाओं द्वारा जिस तरह उसने महान् परिवर्तन किये तथा जिस तरह भीतरी और बाहरी शत्रुओं से उसे मुक़ाबला करना पड़ा,—इस तरह के महत्वपूर्ण और विशाल तजर्बों का वर्णन करना स्तालिन ही के बस का था; स्तालिन ने ही उसे किया भी। स्तालिन का यह ग्रंथ पार्टी, तरुण-कम्युनिस्ट-लीग, मजूर सभा, सहयोग संस्थायें, आर्थिक संगठन, शिक्षा-सेना आदि सभी संगठनों के और उनमें काम करने वालों के पथ-प्रदर्शन के लिये बहुत मूल्यवान साबित हुआ।

उन्होंने अठारहवीं कांग्रेस की रिपोर्ट में बतलाया था :

"अगर मार्क्सवादी-लेनिनवादी शिक्षा हमारे कर्मियों में ढीली पड़ने लगी और इन कर्मियों के राजनीतिक और सैद्धांतिक ज्ञान के तल को ऊपर उठाने में हमने गफ़लत की; कर्मी स्वयं इसके कारण हमारी और आगे की प्रगति की सम्भावनाओं में कम दिलचस्पी लेने लगे और बिना व्यापक दृष्टिकोण के, संकीर्णतापूर्वक, अन्धे हो कर, यांत्रिक तौर से ऊपर की हिदायतों को पूरा करने की कोशिश करने लगे; तो हमारा सम्पूर्ण राज्य और पार्टी का काम जरूर खटाई में पड़ जायेगा।"

फ़ासिस्तों के खिलाफ़ मिल कर मुक़ाबला करने के लिये, पश्चिमी साम्राज्यवादियों के सामने सोवियत का ज़ोर देना बेकार ही गया। वह बराबर यही सोचते रहे कि हिटलर किस तरह पूर्व की ओर बढ़े। ऊपर से वह मीठी-मीठी बातें करके, सोवियत के नेताओं को ग़फलत में रखना चाहते थे, लेकिन सोवियत राजनीतिज्ञ और उनके नेता—स्तालिन कच्चे गोइयां नहीं थे। वह साम्राज्यवादियों की बात को नहीं, बल्कि उनके काम को देखते थे। मार्च सन् १९३९ में, फ्रांस और इंगलैंड ने चैकोस्लोवाकिया को हिटलर के लिये बलिदान कर दिया। उसके बाद, एक ओर जर्मनी ने पूर्वी युरोप में बढ़ना शुरु कर दिया और दूसरी ओर, उसके सहकारी फ़ासिस्त

जापान ने चीन में मनमानी शुरू करके, मई १९३९ में मंगोलीय लोक गणराज्य की सीमा पार करके आगे बढ़ना चाहा, तो सोवियत के नेताओं को मालूम हो गया कि खतरा बिलकुल सिर पर आगया है। लेकिन, क्रांति के बाद के बाईस वर्षों के एक-एक क्षण को सोवियत रूस ने पूरी तौर से इस्तेमाल किया था और स्वतंत्र मंगोल जनता को अपनी देख-रेख में इतना मजबूत कर दिया था कि खलखिनगोल के किनारे जापानी सेना को मंगोलों के हाथों जबर्दस्त हार खानी पड़ी। इस हार ने पूर्वी और पश्चिमी फ़ासिस्तों को बतला दिया कि सोवियत गणसंघ की शक्ति की तो बात ही क्या, उसके एक छोटे से राज्य के पास भी इतनी शक्ति और दाव-पेंच है कि सामुराई पहलवान को चारों खाने चित्त होना पड़ा।

पश्चिमी साम्राज्यवादी सोवियत के साथ मिल कर कोई भी कार्रवाई करने के लिये तैयार नहीं थे, बल्कि उलटा उसे धोखा देना चाहते थे। पश्चिमी शक्तियों के साथ, समझौते की बातचीत महीनों चलती रही। स्तालिन देख रहे थे कि किस तरह छोटे-छोटे अधिकारियों को भेज कर सुलह की बातचीत में उलझाये रखना ही फ्रांस और इंगलैंड की नीति है। इसी समय हिटलर ने सोवियत की शक्ति को समझ कर चाहा कि उसको पूर्व से खतरा न रहे। उसने अपने विदेश-मंत्री रिबेनट्राप को तुरन्त मॉस्को भेज कर अनाक्रमण संधि करने का प्रस्ताव रखा। स्तालिन उसे कैसे ठुकरा सकते थे? इस प्रकार, सोवियत ने अगस्त सन १९३९ में जर्मनी के साथ अनाक्रमणात्मक संधि कर ली। पश्चिमी साम्राज्यवादी इस संधि को सोवियत का फ़ासिस्तवाद का समर्थन कह कर तरह-तरह से बदनाम करते रहे, लेकिन यह झूठा प्रचार भर था। वह भली भांति जानते थे कि सोवियत का वैसा करना उन्हीं के रवैये के कारण हुआ था।

साठवीं वर्षगांठ के समय, सोवियत सरकार ने २० दिसम्बर, १९३९ को स्तालिन को 'समाजवादी श्रम-वीर' की उपाधि प्रदान की और दो दिन बाद विज्ञान एकेडमी ने उन्हें अपना सम्माननीय सदस्य निर्वाचित किया।

१२. स्तालिन की सादगी

स्तालिन का जीवन बहुत सीधा-सादा रहा है। यद्यपि विरोधियों के षडयंत्रों के लम्बे तजर्बे के कारण, उनकी सुरक्षा के हित में यह पसन्द नहीं किया जाता था कि वह ऐसे स्थानों में बहुत अधिक जाया-आया करें, जहां शत्रुओं को अपना मसूंबा पूरा करने का मौका मिल सके। इसीलिये, उनके जीवन को नजदीक से देखने का मौका बहुत ही कम लोगों को मिल पाता था। अ० स० याकोव्लेफ़ टेकनीक के विशेषज्ञ तथा डिजाइनर हैं, जिन्होंने अपनी अविस्मरणीय मुलाक़ातों के वर्णन में स्तालिन के चरित्र पर इस प्रकार प्रकाश डाला है :

" साथी स्तालिन से अपनी पहली मुलाक़ात के बाद भी, मुझे एकाधिक बार अपने काम के सम्बंध में उनसे मिलने का मौका मिला और मेरे सामने उस महापुरुष की तसवीर और भी साफ़ होती गई ।

" हर उस चीज़ में जो उनके व्यक्तिगत जीवन से सम्बंध रखती है, स्तालिन बिलकुल ही आडम्बरहीन थे। वह सादी पोशाक पहिनते थे। युद्ध से पहले, वह बहुधा धूसर वर्ण की विशेष क़िस्म की सैनिक जाकिट पहिनते थे। वस्तुतः, सैनिक जाकिट की बजाय उसे एक आरामदेह, ढीली-ढाली जाकिट कहना ज़्यादा उपयुक्त होगा। वह उनके पतलून की ही तरह, धूसर रंग के कपड़े की बनी होती थी। इसके साथ ही, वह मुलायम चमड़े के बने हुये आरामदेह ऊँचे बूट पहिनते थे।

"बातचीत करते समय, स्तालिन अपने आफिस में धीरे-धीरे चहल-क़दमी करने लगते थे। वह जिससे बातें करते, उसको बातचीत के दौरान में बहुत ही कम टोकते थे; जब तक वह अपनी बात पूरी तरह न कह ले, तब तक इन्तज़ार करते थे।

" मैंने देखा, उनके पास सरकारी संस्थाओं की सभाओं द्वारा बहुधा नोट भेजे जाते थे। वह हमेशा उन्हें पढ़ते और फिर मोड़ कर सफ़ाई के साथ अपनी जेब में रख लेते थे। वह उनमें से एक की भी उपेक्षा नहीं करते थे।

"स्तालिन अपने प्रश्नों के संक्षिप्त, सीधे और स्पष्ट उत्तर पसन्द करते थे। जब कोई पहली बार साथी स्तालिन से बातें करता, तो बहुधा ग़लती के डर से उनके प्रश्न का उत्तर देने में देर तक हिचकिचाता। साथी स्तालिन से पहली बार बातें करते समय मैं भी ऐसा ही करता था, खिड़की के बाहर एक टक देखने लगता और कभी छत की ओर ताकने लगता था। स्तालिन ने हंस कर टीका की : 'छत की ओर ताकने की कोई ज़रूरत नहीं है। वहां आपको कुछ भी लिखा हुआ नहीं मिलेगा। बेहतर यह है कि आप मेरी ओर देखें और जो कुछ सोचते हैं, साफ़-साफ़ कहें। आप से सिर्फ़ यही आशा की जाती है।'

"एक बार जब उन्होंने मुझसे सीधे एक प्रश्न पूछा, तो मैं किंकर्त्तव्यविमूढ़ हो गया। मैं नहीं जानता था कि वह मेरा उत्तर किस रूप में लेंगे, जो कुछ मैं कहना चाहता था उसे पसन्द करेंगे या नहीं।

" वह इस बात को ताड़ गये और गम्भीरतापूर्वक बोले: 'बिलकुल वही उत्तर दीजिये, जो आप सोच रहे हैं। आप वह सब कहने की कोशिश न कीजिये, जिनसे आप सोचते हैं कि मैं खुश होऊंगा। हमारी बातचीत से कुछ भी फ़ायदा नहीं होगा, यदि आप मेरी मर्ज़ी के बारे में अनुमान लगाने की कोशिश करेंगे। आप यह न सोचें कि यदि आप कुछ ऐसी बात कहेंगे, जिससे मैं असहमत हूं, तो उसका बुरा असर

होगा। आप एक विशेषज्ञ हैं। आप और मैं इसीलिये बातें कर रहे हैं कि मैं आपसे कुछ सीखूं, सिर्फ़ इसलिये नहीं कि मैं आपको सिखाऊं।'

"एक बार स्तालिन ने कहा : 'यदि आपका दृढ़ विश्वास है कि आप जो कह रहे हैं, वह सही है और आप उसे सिद्ध कर सकते हैं, तो आप इसकी परवाह न करें कि अमुक-अमुक व्यक्ति इसके विषय में क्या सोचते हैं; आप अपनी बुद्धि और विवेक के अनुसार काम कीजिये।'

"एक राजनीतिक की हैसियत से, साथी स्तालिन को अनिवार्यतः बहुत लोगों से मिलना पड़ता था। वह नये लोगों को प्यार करते थे, उनका अध्ययन करते थे, पता लगाते थे कि वह व्यक्ति कैसा है, उसे कौनसा काम सौंपा जा सकता है, उसकी क्षमता क्या है। बहुधा, व्यवहारिक विषयों की बातचीत के दौरान में वह विनोदपूर्ण टिप्पणी कर देते थे।

"एक बार हम किसी समस्या को लेकर, स्तालिन से मिलने गये। बातचीत के दौरान में, हमने कुछ कर्मचारियों का ज़िक्र किया, जिन्होंने संतोषजनक प्रगति नहीं की थी। स्तालिन ने एकाएक टीका कर दी : 'ये हैं ज़ामोस्कवोरेची (मॉस्को के निकट एक ज़िला) के मिलशियादीज़ और थेमिस्तोक्लीज़ (जनरल और सिपहसालार)!'

"यह कहने के बाद, उन्होंने हमारी ओर यह देखने के लिये ताका कि मैंने उनका मज़ाक समझा या नहीं और पूछा : 'ज़ामोस्कवोरेची के क्यों? आप जानते हैं, मिलशियादीज़ और थेमिस्तोक्लीज़ कौन थे?'

"'पुराने ज़माने में यूनान के सिपहसालार थे।'

"'और, उन्होंने किस तरह ख्याति प्राप्त की थी?'

"'किसी न किसी लड़ाई में, ठीक-ठीक नहीं जानता किस तरह।'

"मुझे यूनान के प्राचीन इतिहास की अपनी अनभिज्ञता पर अत्यंत लज्जा आई।

"एक बार किसी कर्मचारी के विषय में बातें करते हुये, स्तालिन ने उसकी तुलना चेखोफ़ की 'ब्याह' नामक कहानी के एक पात्र से की। इसके बाद, उन्होंने मुझ से पूछा : 'आपको वह कहानी याद है।'

"मैंने उत्तर दिया : 'नहीं, मुझे याद नहीं है साथी स्तालिन।'

"'आपने चेखोफ़ को क्यों नहीं पढ़ा है?'

"'मैंने चेखोफ़ की समस्त कृतियां कई बार पढ़ी हैं, लेकिन मुझे वह कहानी याद नहीं है।'

"'कोई-कोई ऐसी चीजें हैं, जो दिमाग़ में घर कर लेती हैं।'

"मैं पुनः लज्जित हुआ, मैं अपने को एक सुशिक्षित एवं सुसंस्कृत व्यक्ति समझता था।

"बातचीत चाहे टेक्निकल विषय पर हो रही हो या राजनीतिक पर, स्तालिन इतिहास, पौराणिक कथा अथवा क्लासिकल साहित्य से उपयुक्त उदाहरण देना पसन्द करते थे।

"वह 'एक शहर के इतिहास'—से आश्चर्यजनक ढंग से, बड़े विनोदपूर्वक लम्बे-चौड़े उद्धरण देते और उन लोगों पर निर्मम व्यंग कसते थे, जिनमें शेद्रिन के पात्रों की कुछ चारित्रिक विशेषतायें अभी पाई जाती थीं।

"एक नये विमान की अविलम्ब जांच-परख की जाने को थी। कुछ लोगों ने वायुयान को फैक्टरी से कुछ दूर, उस जगह ले जाने का सुझाव दिया, जहां हवाबाज़ रहते थे।

"स्तालिन ने कहा : 'वायुयान क्यों ले जाओ। हवाबाजों का यहीं आ जाना कहीं अधिक आसान है। दुनिया में कौन इस ढंग से काम करता है? तुम अपने दिमाग से काम क्यों नहीं लेते? तुम ग्लुपोफ के निवासियों के दृष्टान्त का अनुसरण कर रहे हो; शेद्रिन की 'शहर का इतिहास'-शीर्षक कहानी में शहर का नाम! तुम्हें याद है, वे किस तरह बछड़े को स्नानागार में ले गये थे और उन्होंने किस तरह वोल्गा में जौ का आटा मिलाया था?'

"एक दिन काफ़ी रात गये उनके अफिस में देर तक काम सम्बंधी बातचीत करने के बाद, स्तालिन ने हम सभी को अपने यहां भोजन के लिये निमंत्रित किया।

"उन्होंने कहा : 'आज के लिये इतना काफ़ी है। मुझे आप लोगों के विषय में तो पता नहीं है, लेकिन मैं भूखों मरा जा रहा हूं। मैं आप लोगों में से किसी को विशेष रूप से निमंत्रित नहीं कर रहा हूं, जो आप अपने को कृतज्ञता के बोझ से दबा हुआ अनुभव करें। हां, जो कोई भोजन करना चाहे, उसे हार्दिक निमंत्रण है।'

"इसे कौन अस्वीकार करता? ऐसा निमंत्रण बार-बार नहीं मिला करता।

"अतः हम सब उनके साथ, उनके निवास-स्थान पर गये। हमारे पहुंचने तक भोजन-कक्ष में मेज़ लगाई जा चुकी थी। साथी स्तालिन का कक्ष निहायत सादे ढंग से सुसज्जित था। वहां बड़ी संख्या में रखीं पुस्तकें किसी का भी ध्यान आकृष्ट कर लेतीं। खाने के कमरे में भी दीवार के साथ, एक सिरे से दूसरे सिरे तक पुस्तकों से ठसाठस भरीं अलमारियों की क़तार चली गई थी।

"भोजन के समय राजनीतिक, अंतर्राष्ट्रीय, टेक्नीकल, साहित्यिक एवं कला सम्बंधी विषयों पर बातचीत होती थी। हम सब इतमीनान के साथ, खुल कर बातें

करते थे। ऊंच-नीच अथवा दबने-दबाने का भाव बिलकुल नहीं था। हम सब बराबरी का अनुभव करते थे।

"स्तालिन किसी चीज़ के विषय में जानकारी प्राप्त करने के लिये, बहुधा पुस्तकों का सहारा लेते थे। किसी मसले के बारे में सोचते हुये, वह किताबों की अलमारी के सामने खड़े हो जाते और उसमें से आवश्यक पुस्तक निकाल लेते थे। यदि बातचीत भौगोलिक विषय से सम्बंधित होती, तो वह यह कहते हुये अपना फटा-पुराना मानचित्र ले आते थे : 'इसको मेरे मानचित्र में देखिये। बेशक, यह बहुत जीर्ण-शीर्ण है, लेकिन फिर भी काम देता है।'

"स्तालिन की उक्तियों में साहित्य के उद्धरणों का प्राचुर्य पाया जाता था। उनकी स्मरण-शक्ति असाधारण थी और वह कई कृतियों से लम्बे-चौड़े उद्धरण, प्रायः अक्षरशः, देते थे। वह प्रायः गोर्की, चेखोफ़ तथा साल्तिकोफ़ शेद्रिन का ज़िक्र किया करते थे। वह आधुनिक साहित्य के विकास का ध्यानपूर्वक अध्ययन करते तथा हमेशा नवीनतम पुस्तकों की जानकारी रखते थे।

"एक बार साहसिक कहानियों—मेनेरिंग और जेम्स फेनीमोर कूपर की कृतियों—के विषय में प्रसंग छिड़ गया। स्तालिन ने कहा कि बचपन में, वह इन लेखकों के उपन्यासों के प्रवाह में बह जाते थे।

"स्तालिन लोगों के साथ अपने व्यवहार में असाधारण कौशल का परिचय देते थे। वह जिससे बातें करते, उसका बहुत ध्यान रखते और बड़ी शिष्टता दिखाते थे। जब वे किसी को अपने आफ़िस में बुलाते, तो उससे हमेशा पूछते थे : 'अपने कार्य में व्यस्त रहने के कारण, आपको यहां आने में असुविधा तो नहीं हुई?' अथवा, 'इस समय मुझसे मिलने के लिये आने में आपके काम में हर्ज तो नहीं हुआ?'

"'क्यों, साथी स्तालिन?'

"'तो यथाशीघ्र आइये।'

"स्तालिन बहुधा, व्लादिमिर इलिच लेनिन के जीवन और कृत्यों को दृष्टान्त के रूप में पेश करते थे। वह प्रेमपूर्वक लेनिन की याद करते थे। एक बार उन्होंने हमें बताया था : 'सन् १९१८ में, सोवियत सरकार ने राजधानी पेत्रोग्राद से मॉस्को स्थानान्तरित करने का निर्णय किया था। वह उथल-पुथल का ज़माना था। मॉस्को में समाजवादी क्रांतिकारी और मेन्शेविकों का विद्रोह अभी-अभी दबाया गया था। मॉस्को की यात्रा में, हम व्लादिमिर इलिच के साथ थे। उनकी रक्षा के लिये हमें बड़ी चिन्ता हुई। जब हमने देखा कि हमें खुली गाड़ी में जाना होगा, तो हमने लेनिन को गाड़ी के अन्दर बिठा दिया और खुद उनके चारों ओर खड़े हो गये, ताकि उन्हें कोई देखे नहीं और यदि उन पर हमला भी हो, तो उससे उनका बाल भी बांका न हो।

व्लादिमिर इलिच इस चीज़ के खिलाफ़ थे। उन्होंने हमें अपनी बगल में बैठने को कहा, लेकिन हमने आग्रह किया और हम रास्ते भर खड़े रहे।'

"अपने काम के दौरान में जिस किसी को भी, साथी स्तालिन से मिलने का मौका मिलता, उसके लिये यह सुअवसर एक अद्भुत शिक्षालय में शिक्षा प्राप्त करने के समान होता था। उनसे हुई, हर बातचीत की गहरी छाप पड़ जाती थी। हर बार उनसे मिलने के बाद, अनुभव होता था कि हमने राजनीतिक तथा व्यवसायिक दोनों ही दृष्टियों से तरक्क़ी की है।...

"अपने समस्त कार्यों में, साथी स्तालिन सोवियत संघ के लाखों-लाख लोगों के साथ अदृश्य सूत्रों द्वारा बंधे थे। हमारी विशाल मातृभूमि के कोने-कोने से उनके पास हर रोज हज़ारों पत्र आते थे। वह व्यक्तिगत रूप में सोवियत संघ के स्त्री-पुरुषों से परिचित थे। वह जानते थे कि उनसे किस तरह बातें करनी चाहिये, तथा यह भी कि उनकी बातें कैसे सुननी चाहिये, जो कम महत्वपूर्ण नहीं है। स्तालिन के विचार एवं भाव जनता के विचार एवं भाव हैं।—मॉस्को, सन १९५०."

१३. महायुद्ध की घटायें

सन् १९४० में सोवियत की आर्थिक स्थिति कितनी आगे बढ़ी थी, इसका पता निम्न आंकड़ों से लगेगा—

उत्पादन	१९४० में (करोड़ टन)	१९३३ से
कच्चा लोहा	१.५०	प्रायः ४ गुना
फ़ौलाद	१.८३	साढ़े ४ गुना
कोयला	१६.६०	,, ५ गुना
तेल-पेट्रोल	३.१०	,, ३ ,,
कपास	.२७	प्रायः ३ गुना
अनाज	३.८३	१.७०

साथी स्तालिन ने ११ दिसम्बर, १९३७ को पार्लमेंट के निर्वाचन-भाषण में ठीक ही कहा था:"उत्पादन की यह अद्वितीय वृद्धि, देश के पिछड़ेपन से प्रगति की ओर बढ़ने के मामूली साधारण से विकास के तौर पर नहीं मानी जा सकती। यह वस्तुतः छलांग मारना है, जिसके द्वारा हमारी मातृभूमि एक पिछड़े देश से अग्रगामी देश और कृषि-प्रधान देश से उद्योग-प्रधान देश के रूप में परिवर्तित हो गई है।"

द्वितीय महायुद्ध में पड़ने से पहले, सोवियत-भूमि की आर्थिक अवस्था जहां इतनी अच्छी थी, वहां सुरक्षा के बारे में भी वह ग़ाफ़िल नहीं थी। हिटलर के पूर्व की ओर के बढ़ाव ने यह भी मौका दे दिया कि सन् १९३९ की शरद में, बीस वर्षों से ज़बर्दस्ती पोलैंड के दख़ल में चले गये, पश्चिमी उक्रइन और पश्चिमी बैलोरुसिया मुक्त होकर फिर अपने जातीय गणराज्यों में मिल जायें। अगले साल (अगस्त सन् १९४० में) बाल्तिक के गणराज्य लिथुवानिया, लत्विया और एस्तोनिया भी पश्चिमी साम्राज्यवादियों के जाल से निकल कर अपने कम्युनिस्ट परिवार में आ मिले। इस प्रकार, पंचवार्षिक योजनाओं से समृद्ध सोवियत-भूमि और फ़ासिस्त जर्मनी के बीच का फ़ासला, इन राजनीतिक परिवर्तनों के कारण, और भी चौड़ा हो गया।

अठारहवीं पार्टी कांग्रेस मार्च सन् १९३९ में हुई, जिसमें तृतीय पंचवार्षिक योजना की सफलताओं और वैदेशिक सम्बंधों तथा सुरक्षा के बारे में विचार किया गया। इसी में, राज्य-योजना-कमीशन को चौथी पंचवार्षिक योजना बनाने का काम सुपुर्द किया गया और लक्ष्य रखा गया था—कच्चा लोहा, फ़ौलाद, तेल-कोयला, बिजली-शक्ति, मशीनें, तथा उपभोग की चीज़ों के उत्पादन की प्रति पुरुष मात्रा मुख्य पूंजीवादी देशों के स्तर से अधिक बढ़ाना।

लेकिन, शांतिपूर्वक निर्माण का समय समाप्ति पर पहुँच रहा था। अब जर्मनी सारे युरोप पर अधिकार करके, पागल सियार की तरह हो रहा था। स्तालिन की सूक्ष्म बुद्धि बतला रही थी कि वह समय दूर नहीं था, जब ब्रिटिश चैनल तक पहुंच कर रुका हुआ, हिटलर पूर्व को रुख़ करेगा।

स्तालिन लेनिन के निर्विवाद उत्तराधिकारी और सोवियत राष्ट्र के सर्वश्रेष्ठ नेता थे, लेकिन वह अब तक केवल कम्युनिस्ट पार्टी के प्रधान-मंत्री के पद पर थे। इस स्थिति में परिवर्तन करते हुये ६ मई, १९४१ को महासोवियत के अध्यक्ष-मंडल ने उन्हें लोक-कमीसार-परिषद का अध्यक्ष अर्थात् सोवियत संघ का प्रधान-मंत्री चुना। अब आर्थिक क्षेत्र की विजयों के सेनानी, ६२ वर्ष की उमर में मानवता के लिये ऐतिहासिक युद्ध-विजय के सेनानी बने।

अध्याय ९

मानवता का त्राता

(सन् १९४१-४५)

युद्ध-काल में स्तालिन के कामों का उल्लेख करते हुये, आज (सन् १९५३) के सोवियत प्रतिरक्षा-मंत्री, न. बुल्गानिन ने महान् नेता की ७० वीं वर्षगांठ पर कहा था :

"मॉस्को-युद्ध के समय, साथी स्तालिन ने अपनी असाधारण बुद्धि और हिम्मत का परिचय दिया था। युद्ध-क्षेत्र की स्थिति बड़ी भयंकर होते हुये भी, साथी स्तालिन ने रिज़र्व सेना को समय से पहले युद्ध में नहीं उतरने दिया। पश्चिमी मोर्चे के मुख्य सेनापति को मालूम था कि मॉस्को के क़रीब जनरल हेडक्वार्टर के पास भारी रिज़र्व सेना मौजूद है। इसलिये, उसने कुमक मांगी, लेकिन साथी स्तालिन ने उसे हुक्म दिया कि अपने पास की फ़ौजों द्वारा ही शत्रु को रोक रखो। जल्दी ही, साथी स्तालिन के निर्णय की दूरदर्शिता का पता लगा। साथी स्तालिन ने उन रिज़र्व सेनाओं को एक निर्णायक प्रत्याक्रमण करने के उद्देश्य से बचा रखा था। ठीक समय पर, मोर्चे को ये रिज़र्व सेनायें उपयुक्त परिमाण में मिलीं, जिसने मॉस्को के पास शत्रु (जर्मनी) की पराजय में मुख्य काम किया।...

" महान् मुक्ति-युद्ध की सभी सैनिक कार्रवाइयों की योजना साथी स्तालिन ने ही बनाई थी और उनके पथ-प्रदर्शन में ही, उन्हें कार्यरूप में परिणत किया गया था। कोई भी सैनिक कार्रवाई ऐसी नहीं थी, जिसकी योजना में उन्होंने भाग न लिया हो। किसी भी सैनिक कार्रवाई को मंजूर करने से पहले, वह अपने नज़दीकी सैनिक अफ़सरों से बहुत बारीक़ी के साथ बहस और विश्लेषण करते थे। उन्होंने नौसेना और सेना के कमांडरों की सम्मतियों और सुझावों को सुनने का नियम बना लिया था। वह सभी टिप्पणियों और प्रस्तावों को बड़े ध्यान से सुनते थे।

" किसी निश्चित सैनिक कार्रवाई के पहले, मौके पर जाकर सेनाओं की तैयारी की जांच-पड़ताल के लिये वह स्वयं युद्ध-मोर्चे पर जाते थे। स्मोलेन्स्क में सैनिक कार्रवाई आरम्भ करने से पहले, वह पश्चिमी मोर्चे पर गये थे।...

"स्तालिन की युद्ध-कला की एक विशेषता यह है कि वह शत्रु के साथ लड़ने के तरीक़े और रूप को अपनाने में अपने दृष्टिकोण को बिलकुल मुक्त रखती है। वह

बूर्ज्वा युद्ध-कला की रूढ़ियों और पुरानी मान्यताओं का अन्धानुसरण पसन्द नहीं करती।...

"साथी स्तालिन ने सोवियत सैनिक नेताओं के नये कर्मियों को चुन कर, उन्हें शिक्षित करके आगे बढ़ाया, जिन्होंने स्तालिन की प्रतिभा द्वारा बनाई गई योजनाओं को कार्यरूप में परिणत करने में अद्भुत कौशल का परिचय दिया है। उन्होंने हमारे सैनिक कर्मियों को नज़दीक से परख कर चुना है। वह हमारे जनरलों, एडमिरलों और बहुसंख्यक सैनिक अफ़सरों को व्यक्तिगत तौर से जानते हैं।"

जर्मन आक्रमण

१. धोखे से हिटलर का आक्रमण

२२ जून, १९४१ को हिटलर ने बिना चेतावनी दिये हुये, अनाक्रमणात्मक संधि तोड़ कर सोवियत संघ पर आक्रमण कर दिया, जो सचमुच में उसका पागल सियार की भांति गांव की ओर भागना ही सिद्ध हुआ। सारे युरोप की सेनाओं और सैनिक उत्पादन के साथ, हिटलर ने अचानक आक्रमण करके उस समय कुछ आरंभिक सफलता जरूर पाई। लेकिन, स्तालिन की नीति बड़ी गम्भीर थी, जिसको समझने में फ़ासिस्त बिलकुल असमर्थ रहे। स्तालिन ने अपनी सारी शक्ति को पहले ही मुक़ाबले में दाव पर लगा देना पसन्द नहीं किया और उसी सैनिक दाव-पेंच को काम में लाना अच्छा समझा, जिसके द्वारा रूस में सवा सौ वर्ष पहले नैपोलियन को हराया गया था। सोवियत सेनायें मुक़ाबला करते हुये, पीछे हटने लगीं। वह चाहती थीं कि फ़ासिस्त सेनाओं को काफ़ी हानि पहुंचा कर, उनके बढ़ाव की गति मन्द कर दें। हमला होने के आठ दिन बाद (३० जून, १९४१), राज्य-सुरक्षा समिति की स्थापना करके उसके हाथ में सारी शक्ति दे दी गई। स्तालिन इस समिति के अध्यक्ष हुये। अंगद की तरह, उन्होंने अपने पैर मॉस्को में रोप दिये और राजधानी पर भयंकर ख़तरा होने तथा अन्धाधुंध हवाई हमलों के समय भी, वहां से हटने का नाम नहीं लिया। हिटलर के पास हज़ारों टैंकों और हवाई जहाज़ों के साथ १७० डिवीज़न सेना थी। सारे युरोप के कारख़ाने उसके लिये गोला-बारूद, टैंक, विमान और दूसरे हथियार बना रहे थे। यह कोई आश्चर्य की बात नहीं थी, यदि फ़ासिस्त सेनाओं ने जल्दी ही लिथुवानिया, लतविया के काफ़ी भाग, पश्चिमी बेलोरुसिया तथा पश्चिमी उक्रेइन के भाग को अपने अधिकार में कर लिया था। ३ जुलाई, १९४१ को साथी स्तालिन ने अपने रेडियो-भाषण में सोवियत जनता और सेना को देश की नाजुक स्थिति का परिचय दिया। उन्होंने ख़तरे को कम करके नहीं बतलाया और न शत्रु की सफलताओं को छिपाना ही चाहा। साथ ही, सोवियत

जनता को बतलाया कि उन्हें सर्वस्व की बाजी लगा कर, शत्रु से मुक़ाबला करना है। इस भाषण की कुछ पंक्तियां थीं :

"शत्रु क्रूर और पकड़ाई आने में कठिन है। वह हमारी उस भूमि को छीनने पर उतारू है, जिसको हमने अपने ललाट के पसीने से सींचा है। वह हमारे अन्न और तेल को छीनना चाहता है, जिन्हें हमारे हाथों के श्रम ने प्राप्त किया है। वह ज़मींदारों के शासन और ज़ारशाही को पुनः स्थापित करने पर उतारू है और रूसियों के राष्ट्रीय अस्तित्व और राष्ट्रीय संस्कृति को एक राज्य के रूप में नष्ट कर देने की नीयत रखता है। वह रूसियों, उक्रइनियों, बेलोरुसियों, लिथुवानियों, लतवियों, एस्तोनियों, उज्बेकों, तातारों, मोलदावियों, गुर्जियों, अर्मेनियों, आजुर्बाइजानियों तथा सोवियत संघ की दूसरी स्वतंत्र जातियों की राष्ट्रीय संस्कृति और उनके राष्ट्रीय अस्तित्व को एक राज्य के रूप में खतम करने पर उतारू है।

"वह हमें जर्मन रंग में ढाल कर, जर्मन राजुलों और लार्डों के दासों के रूप में परिणत करना चाहता है। इस प्रकार सोवियत राज्य के लिये, यह जन्म-मरण का प्रश्न है। सोवियत समाजवादी गणसंघ के लोगों के लिये, जन्म-मरण का प्रश्न है। सोवियत संघ के लोग स्वतंत्र रहेंगे, या जर्मन-दासता में पड़ेंगे?"

स्तालिन ने फ़ासिस्त जर्मनी के विरुद्ध युद्ध में, सोवियत संघ के लक्ष्य को बतलाते हुये कहा कि वह जर्मन फ़ासिस्त सेना के विरुद्ध सारी सोवियत जनता का महान् युद्ध है। जनता के मुक्ति-युद्ध का लक्ष्य केवल देश पर आये ख़तरे को दूर करना ही नहीं, बल्कि जर्मन फ़ासिस्तवाद के जुये के नीचे कराहती सारी युरोपीय जातियों को मुक्त करने में सहायता देना भी है। उन्होंने यह भी कहा था कि मुक्ति-युद्ध में सोवियत जनता अकेली नहीं है :

"अपनी मातृभूमि की मुक्ति के लिये की जाने वाली यह लड़ाई युरोप और अमरीका की जनता की अपनी स्वतंत्रता तथा जनतांत्रिक मुक्ति के संघर्ष से मिल कर रहेगी। हिटलरी फ़ासिस्त सेना के दास बनने के ख़तरे के विरुद्ध स्वतंत्रता की पक्षपाती, दासीकरण की विरोधी जातियों का यह संयुक्त मोर्चा होगा।"

पश्चिमी शक्तियों ने फ़ासिस्तों के ख़तरे को सिर पर देखते हुये भी, सोवियत संघ की बात मान कर, एक होकर मुक़ाबला करने में बहुत हीला-हवाला किया था। अब उन हीला-हवाला करने वालों में, इंग्लैंड ही बचा हुआ था और वह भी हिटलरी आक्रमण के भय के मारे कांप रहा था। हिटलर को शह देने वाला चैम्बरलेन रंगमंच छोड़ चुका था और चर्चिल इंगलैंड का प्रधान मंत्री था। उसने १२ जुलाई, १९४१ को जर्मनी के विरुद्ध रूस से समझौता कर लिया। जून सन् १९४२ में संयुक्त

राष्ट्र अमरीका ने भी सोवियत संघ के साथ समझौता करके, आक्रमण के विरुद्ध युद्ध करने में पारस्परिक सहायता के सिद्धांत को स्वीकार कर लिया। इस प्रकार, अब इंगलैंड–सोवियत–अमरीका की संयुक्त शक्ति फ़ासिस्ट गुट को नष्ट करने के लिये एकजूट हो गई थी। इस प्रकार अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थिति अनुकूल बना कर, स्तालिन ने सोवियत जनता का आह्वान किया कि अब से सारा जीवन युद्ध के लिये संगठित करना चाहिये: शत्रु को हराने के लिये सेना की सारी आवश्यकताओं को पहले पूरा करना चाहिये। केवल लाल सेना और लाल नौसेना ही नहीं, बल्कि सारे सोवियत नागरिकों को अपने खून की एक-एक बूंद से सोवियत की एक-एक इंच ज़मीन की, प्रत्येक गांव और नगर की रक्षा के लिये लड़ना होगा। उन्होंने सेना और जनता को यह भी आदेश दिया कि अगर पीछे हटने के लिये मजबूर होना पड़े, तो शत्रु के हाथ में एक रेल का इंजन या डिब्बा ही नहीं, बल्कि कल-कारख़ानों, एक सेर अन्न और एक गैलन तेल भी नहीं छोड़ना चाहिये। लाखों की तादाद में बूढ़े-बच्चों और स्त्री–पुरुषों को अपने ग्राम छोड़ कर पूर्व की ओर भागना पड़ा था। उस समय, सोवियत सरकार ने फ़ासिस्तों के ख़तरे में तुरन्त पड़ने वाले कल–कारखानों की मशीनों को बहुत भारी परिमाण में ले जाकर, पूर्व में स्थापित करवाया। पंचवार्षिक योजनाओं के कारण, थोड़े ही समय में बड़े-बड़े काम करने के आदी हो जाने से सोवियत कमकरों और विशेषज्ञों ने तीन-तीन वर्षों में खड़े होने वाले कारख़ानों को छ-छ, आठ-आठ महीनों में ही नई जगहों पर ले जाकर, खड़ा कर दिया। हज़ारों की संख्या में अनाथ बच्चे किसी भी पूंजीवादी देश के लिये भारी समस्या बन सकते थे, लेकिन अपने नेता के परामर्श को सुनते ही मध्य एशिया तथा दूसरे भागों के सोवियत नागरिकों ने अपने-अपने घरों में एक-एक, दो-दो बच्चे धर्म-पुत्रों की तौर पर पालना शुरू किये, जिसके कारण बच्चों के पालन-पोषण ही नहीं, बल्कि उनकी शिक्षा-दीक्षा की समस्या भी हल हो गई। साथी स्तालिन के प्रथम भाषण को सोवियत जनता ने हृदयंगम कर लिया था:

"शत्रु का ध्वंस करने के लिये, जनता की सारी शक्तियो विजय के लिये आगे बढ़ो!"

और सचमुच, सोवियत के एशियाई युरोपीय तथा अनेक जातियों के गणराज्यों ने अपनी अद्भुत एकता का परिचय दिया। उनके भीतर कहीं भी दरार नहीं दीख पड़ी।

१९ जुलाई, १९४१ को युद्ध शुरु होने के दूसरे महीने, महासोवियत के प्रेसीडियम (अध्यक्ष-मंडल) ने स्तालिन को प्रतिरक्षा-जन–कमीसार नियुक्त किया। अभी भी जर्मन सेनाओं के बढ़ाव का वेग कम होता नहीं दिखाई पड़ रहा था। अक्तूबर में बहुत भारी संख्या में अपनी सेनाओं को कटवा कर, फ़ासिस्त सेनायें मॉस्को प्रदेश में घुसने में सफल होगईं। इस प्रकार सोवियत सेना को पीछे हटते देख कर, पश्चिमी सहयोगियों

को यह विश्वास हो गया था कि फ्रांस की तरह, रूस भी कुछ ही दिनों में घुटने टेक देगा। लेकिन, सोवियत जनता और उसके अदम्य नेता को कभी क्षण भर के लिये भी अपने भविष्य पर संदेह नहीं हुआ; क्योंकि उसे अपनी शक्ति पर पूरा विश्वास था। तो भी, मॉस्को प्रदेश में फ़ासिस्तों के घुस आने पर राजधानी के लिये भयंकर ख़तरा पैदा हो गया है—इसे वह भी समझते थे। १९ अक्तूबर, १९४१ को राज्य-प्रतिरक्षा-कमिटी के अध्यक्ष के तौर पर, स्तालिन ने मॉस्को के घेरे में पड़ने की घोषणा कर दी। राजधानी से बहुत से मंत्रालय अन्यत्र भेज दिये गये। कुइविशेफ़ युद्धकालीन राजधानी बन गई। लेकिन, अंगद मॉस्को से अपने पैर हटाने के लिये तैयार नहीं थे। उन्होंने अपने सेनापतियों के साथ मिल कर मॉस्को के बचाने की ही नहीं, बल्कि जर्मन फ़ासिस्तों को सबसे बड़ा सबक़ सिखाने की योजना भी तैयार की। शत्रु मॉस्को के दरवाज़े पर आकर ललकार रहा था, तो भी क्रांति के चौबीसवें वार्षिकोत्सव को लोगों ने उसके अनुरूप ही मनाया। एक दिन पहले, ६ नवम्बर को स्तालिन ने हमेशा की तरह, एक सभा में भाषण भी दिया, जिसमें उन्होंने चार महीने के युद्ध का सिंहावलोकन करते हुये बतलाया कि सेना, सैनिक नेता और जनता—सभी बड़ी बहादुरी और अद्‌भुत उत्साह के साथ अपने कर्त्तव्य का पालन कर रहे हैं। साथ ही, यह भी बतलाया कि किसी भी तरह की ग़फ़लत करना शत्रु के हाथ मज़बूत करना होगा। और, अन्त में घोषित किया : "जर्मन फ़ासिस्तों और उनकी सेना का नाश होकर रहेगा।"

हिटलर ने डेढ़-दो महीनों में ही सोवियत संघ को ख़तम कर देने के लिये गाल बजाया था, लेकिन चार महीने हो गये; पर फ़ासिस्त सेना अगम दलदल में फंसी दिखाई पड़ती थी। फ़ासिस्तों ने अपने गुरुओं—पश्चिमी साम्राज्यवादियों—की तरह, ग़लत अंदाज़ा लगाया था कि सोवियत-व्यवस्था वहां की जनता पर जबर्दस्ती लादी गई है, वहां के लोग उसके साथ नहीं हैं और युद्ध के अवसर से फ़ायदा उठा कर वह विद्रोह कर देंगे। सोवियत सैनिक शक्ति के बारे में भी, उनका ख़्याल उसी तरह ग़लत था। और, उन्होंने कभी नहीं सोचा था कि शकों, मंगोलों तथा इतिहास में अपनी वीरता के लिये प्रसिद्ध दूसरी जातियों के इन वंशजों की वीरता को सोवियत-व्यवस्था ने कम करने की जगह कई गुना बढ़ा दिया है। और, हरएक पिछड़ी हुई जाति को अपने बराबर लाने के लिये प्राण-पण से प्रयत्न करके, पिछले चौबीस वर्षों में रूसी जाति ने अपने स्वाभाविक भाईचारे का एक ऊंचा आदर्श रखा है। वहां तो युद्ध के ख़तरे ने उन्हें कवच की कड़ियों की तरह, एक दूसरे के साथ और भी घनिष्ट बना दिया था।

फ़ासिस्तों को इतनी सफलता भी निश्चय ही नहीं मिलती, यदि इसी समय पश्चिमी सहयोगियों ने 'मुंह में राम, बगल में छुरी' की नीति को न अपनाया होता। स्तालिन ने वार्षिकोत्सव के समय, अपने भाषण में इस बात को स्पष्ट कहा था कि

द्वितीय मोर्चे के न खोले जाने के कारण ही फ़ासिस्तों को इतनी सफलता मिली। उन्होंने यह भी बतलाया था कि उनके कारखानों के विमान और टैंक फ़ासिस्तों की अपेक्षा बहुत अच्छे और अधिक शक्तिशाली हैं, परन्तु सेना के पास उनकी पर्याप्त संख्या नहीं है। साथी स्तालिन ने सबसे ज़्यादा ज़ोर इस बात पर दिया कि टैंकों और विमानों का उत्पादन बढ़ाने की ओर सबसे अधिक ध्यान देना होगा।

तरुणाई का शास्त्रार्थी और भारी वक्ता, अब सोवियत राष्ट्र का संचालक बन कर मितभाषी हो गया था। स्तालिन के भाषण भी छोटे-छोटे होते थे, लेकिन उनके एक-एक शब्द में अणु बम की शक्ति थी। स्तालिन ने फ़ासिस्टों के आततायीपन को बतलाते हुये, अपनी जनता से कहा था :

> "ये आदमी न इज्ज़त रखते हैं, न मानवीय हृदय; इनका व्यवहार पशुओं जैसा है, तो भी ये नीच यह कहने की धृष्टता करते हैं कि वे महान् रूसी राष्ट्र को—प्लेखानोफ़ और लेनिन, बेलिन्स्की और चेर्नीशेव्स्की, पुश्किन और तालस्ताय, ग्लिका और चेकोव्स्की, गोर्की और चेखोफ़, सेचेनोफ़ और पावलोफ़, रेपिन और सुरिकोफ़, सुवारोफ़ और कतुज़ोफ़ की जाति को—नामशेष कर देंगे !..."

स्तालिन ने अपने भाषण में जिन महापुरुषों का नाम लिया था, वह दुनिया के राजनीति और आदर्शवाद के विशारद, साहित्य, संगीत, कविता, विज्ञान, ललितकला और युद्ध-विद्या में अद्वितीय थे। और सचमुच ही, लोगों ने अपने पूर्वजों के खून को एक बार फिर बड़ी तेज़ी के साथ अपनी नसों में दौड़ते हुये पाया; और पिछले ढाई हज़ार वर्षों से चली आने वाली अपनी वीरता के नये-नये उदाहरण युद्ध-क्षेत्र में प्रदर्शित किये। स्तालिन ने कहा :

> "अगर आक्रमणकारी जर्मन सोवियत समाजवादी गणसंघ के लोगों के विरुद्ध सर्वसंघारी युद्ध चाहते हैं, अगर जर्मन सर्वनाशी लड़ाई पसन्द करते हैं; तो वह उन्हें दी जायगी।
>
> "हमारा उद्देश्य न्यायोचित है, हमारी विजय होकर रहेगी !"

२. मॉस्को के लोहे के चने

अगले दिन, ७ नवम्बर को लाल मैदान में लाल सेना की सालाना परेड हुई। और हर साल की तरह, स्तालिन ने लेनिन-समाधि-मंदिर पर खड़े होकर भाषण दिया। उन्होंने अपनी सेना और जनता के हर क्षेत्र में वीरतापूर्ण युद्ध की प्रशंसा करते हुये, कहा :

> "इस युद्ध में हमें आज अलेक्सान्द्र, नेवस्की, दिमित्री दोन्स्की, कुज़्मा मीनिन, दिमित्री पझारस्की, अलेक्सान्द्र सुवारोफ़ और मिखाइल कतुज़ोफ़ जैसे

महान् पूर्वजों की वीर मूर्तियां प्रेरणा दें। महान् लेनिन का विजय-ध्वज हमारे हृदयों में शक्ति भर दे।"

साथी स्तालिन ने स्वयं मॉस्को की रक्षा का संचालन किया, उन्होंने लाल सेना की सैनिक कार्रवाइयों की बागडोर अपने हाथ में ली; राजधानी में आने वाले रास्तों की मोर्चेबंदी की देख-रेख भी उन्होंने स्वयं ही की। उनकी इस निर्भीकता, अदम्य उत्साह और दूरदर्शिता ने हरएक सैनिक और सेनापति में जान फूंक दी थी।

स्तालिन का हरएक काम गणित की तरह, बिलकुल नपा-तुला होता था। वह अपने गुरू की तरह ही, परिस्थिति को तौलने में सेर-छंटाक नहीं, बल्कि रत्ती-माशे का भी अन्तर नहीं रहने देते थे। इसीलिये तो कमांडरों की मांग आने पर भी, उन्होंने बिना रिज़र्व सेना के ही मुक़ाबला करने की आज्ञा दी थी। ६ दिसम्बर, १९४१ को आख़िर वह समय आ गया, जब अपार क्षति उठा कर थकी-मांदी जर्मन सेनायें मॉस्को के पड़ोस में आईं और उसी समय, पहले से ही तैयार रिज़र्व सेना उन पर बिजली की तरह टूट पड़ी।

मॉस्को की विजय ने ढुलमुलयक़ीनों को भी यह मानने के लिये मजबूर कर दिया कि हिटलरी सेना अजेय नहीं है। हिटलर के ढलवाये हुये ढेर के ढेर विजय के तमगे बेकार गये। २३ फरवरी, १९४२ में अपने ५५ वें दैनिक आदेश में, स्तालिन ने आठ महीनों के युद्ध के परिणामों का विश्लेषण करते हुये बतलाया :

"जर्मन फ़ासिस्त सेना के लिये अचानक और एकाएक आक्रमण करने से जो अपने अनुकूल सैनिक स्थिति प्राप्त हुई थी, वह अब ख़तम हो गई है। अब युद्ध का फ़ैसला अचानक आक्रमण के सुभीते के बल पर नहीं, बल्कि लगातार की जाने वाली सैनिक कार्रवाइयों पर ही निर्भर करेगा, जो मोर्चे के पीछे की दृढ़ता, सेना का नैतिक बल, सैनिक डिवीज़नों का परिमाण और योग्यता, सेना के हथियार और साधन तथा सेना के कमांडरों की संगठन की योग्यता ही है।"

स्तालिन ने द्वितीय विश्वयुद्ध में अपने को एक श्रेष्ठ सैनिक कमांडर और सैनिक प्रतिभा के धनी के रूप में साबित किया। सैनिक विज्ञान भी अब उनके लिये हस्तामलक हो गया था और वह अपने प्रतिभाशाली तरुण सेना नायकों को आगे बढ़ाते हुए, उसमें नई सूझें निकाल रहे थे। उन्होंने इस युद्ध में अचानक आक्रमण का सुभीता और लगातार सैनिक कार्रवाई के उपयोग को दिखलाते हुये, लकीर पीटने वाले सैनिक विज्ञानियों की कितनी ही धारणाओं को झूठा साबित कर दिया।

अजेय स्तालिन के वचन और उदाहरण से उत्साहित होकर सारी सोवियत जनता ने युद्ध के लिये हरएक क्षेत्र में काम करना शुरू किया, जिसका फल भी जल्दी ही दिखाई पड़ा। मॉस्को में फ़ासिस्तों को हराने के बाद, सन १९४२ के मई दिवस के महोत्सव के सम्बंध में आदेश देते हुये, स्तालिन ने बतलाया कि लाल सेना के

पास अब वह सारी चीज़ें मौजूद हैं, जिनसे वह दुश्मन को हरा कर सोवियत-भूमि से बाहर खदेड़ सकती है। उसके पास "केवल एक चीज की कमी है, वह है—जिन प्रथम श्रेणी के सैनिक साधनों को हमारा देश तैयार कर रहा है, शत्रु के विरुद्ध उनको पूरी तौर से काम में लाने की क्षमता। इसलिये लाल सेना, उसके आदमियों, उसके मशीनगनधारियों, उसके तोपचियों, उसके मॉर्टरचियों, उसके टैंकचियों, उसके वैमानिकों और उसके सवारों के सामने युद्ध की कला को सीखना, मेहनत के साथ सीखना पहला काम है। अपने हथियारों के कल-पुर्ज़ों को पूर्णतया समझना और इस प्रकार सीख कर, अपने काम में विशेषज्ञ बन कर शत्रु के ऊपर अचूक प्रहार करना है। केवल यही रास्ता, यही तरीक़ा है, जिससे शत्रु को हराने की कला सीखी जा सकती है।"

स्तालिन ने अफ़सरों को भी एक नये प्रकार के अफ़सर बनने की बात बतलाते हुये, कहा था कि लाल सेना के अफ़सरों को ऐसा होना चाहिये कि वह अपने साधारण सैनिक के हरएक काम को खुद कर सकें। जो चीज़, जो काम तुम खुद नहीं कर सकते, तुम अपने सिपाही से भी उसको करने की आशा नहीं रख सकते। युद्ध के दिनों में, इसका उदाहरण एक अमरीकी पत्र-संवाददाता को मिला था। वह मोटर में बैठा मोर्चे के पास की भूमि में घूम रहा था; किसी जगह गाड़ी का पहिया कीचड़ में धंस गया और ड्राइवर ने निकालने की पूरी कोशिश की, किन्तु वह नहीं निकला। इसी समय एक रूसी सैनिक ने आकर कीचड़ को हटा कर गाड़ी को बाहर ढकेल दिया। जब संवाददाता ने उसे ठीक से देखा, तो मालूम हुआ कि वह लाल सेना का मेजर था। उसको कभी आशा नहीं हो सकती थी कि पश्चिमी राज्यों का कोई सैनिक अफ़सर इस तरह के काम के लिये तैयार हो सकता है और सो भी जब वह गोला-गोली की वर्षा से दूर हो!

३. स्तालिनग्राद की विजय—

सन् १९४२ की वसंत बीत गई, गर्मी भी आ गई, लेकिन अभी भी पश्चिमी सहयोगी द्वितीय मोर्चा खोलने के लिये तैयार नहीं थे। यद्यपि उन्होंने देख लिया था कि उनकी इच्छा के अनुसार, फ़ासिस्तों द्वारा सोवियत खतम होने की सम्भावना नहीं है। उनको इस तरह रोड़ा अटकाते देख कर, हिटलर ने निश्चिंत होकर पश्चिमी मोर्चे की सेनाओं तथा अपनी सारी रिज़र्व सेना को ला कर सोवियत के ख़िलाफ़ पूर्वी मोर्चे पर लगा दिया। अब हिटलर के सेनापतियों ने सीधे राजधानी तथा रूस के मर्म पर प्रहार करने का ख़्याल हटा कर, अपनी सेनाओं को काकेशस की ओर बढ़ाया। वस्तुतः, यह उनकी चाल थी, जिसे भांपने में स्तालिन को देर नहीं लगी। उस समय हल्ला मचा हुआ था कि जर्मन सेनायें अब बाकू और ग्रोज़्नी के महान् तेल-क्षेत्रों को दख़ल करने के लिये बढ़ रही हैं। आगे उनका लक्ष्य ईरान से भारत पहुंच कर, जापानियों से

मिलने का है। लेकिन, स्तालिन ने समझ लिया था कि फ़ासिस्त पश्चिम और दक्षिण से राजधानी को घेरने में असफल हो कर, अब अपने घेरे को लम्बा करके वही काम पूर्व से करना चाहते हैं और इस प्रकार, उनकी मन्शा है कि वोल्गा और उराल के औद्योगिक क्षेत्रों से सोवियत को वंचित करके मॉस्को पर आक्रमण कर, इसी साल लड़ाई को विजयपूर्वक समाप्त कर दें। इस चाल के बारे में स्तालिन ने सोवियत कमांडरों को हिदायत कर दी। जुलाई के मध्य में, सचमुच ही जर्मन ईरान और हिन्दुस्तान जाने का रास्ता छोड़ कर वोल्गा की ओर मुड़ पड़े और स्तालिनग्राद पर आक्रमण कर दिया। लेकिन, स्तालिन ने कच्चा दूध नहीं पिया था। स्तालिनग्राद की रक्षा के लिये, वहां पहले से ही सेनायें तैयार थीं। स्तालिन पहले से ही जान लेते थे कि मोर्चे के किस भाग को मुख्य और किसको गौण मानना चाहिये। स्तालिनग्राद पर आक्रमण होते ही, क्रांति-विरोधियों से भूतपूर्व ज़ारित्सीन की रक्षा करने वाले, स्तालिन ने आदेश दिया कि जो भी हो स्तालिनग्राद की, वोल्गा के इस महत्वपूर्ण नगर की रक्षा करनी होगी। ५ अक्तूबर, १९४२ को वहां के कमांडर को उन्होंने जो आदेश दिया था, उसकी कुछ पंक्तियां थीं : "मैं मांग करता हूं कि तुम स्तालिनग्राद की प्रतिरक्षा के लिये सभी उपाय करो। स्तालिनग्राद को शत्रु के हाथों में समर्पण नहीं करना होगा।"

स्तालिनग्राद का ऐतिहासिक युद्ध शुरू हुआ। यह जिस तरह इतिहास की सबसे महत्वपूर्ण और बड़ी विजय है, वैसे ही यहां की लड़ाई भी संसार की सबसे भयंकर लड़ाई थी। लाल सेना ने बड़ी बहादुरी के साथ अपने नेता के नाम की नगरी की रक्षा की। सन् १९१८ की ज़ारित्सीन वाली युद्ध-परम्परा फिर दोहराई गई। सोवियत सैनिकों को अपनी विजय कर पूरा विश्वास था। लड़ाई जब अपनी चरम सीमा पर पहुंची हुई थी, उसी समय स्तालिनग्राद के मोर्चे के सैनिकों, सेनापतियों और राजनीतिक अफ़सरों ने अपने महान् नेता के पास एक चिट्ठी भेज कर प्रतिज्ञा की थी :

> " ...अपनी युद्ध-ध्वजाओं और सारे सोवियत देश के सामने, हम शपथ लेते हैं कि हम रूसी बाहुबल की कीर्ति को धब्बा नहीं लगायेंगे और अन्तिम क्षण तक लड़ते रहेंगे। आपके नेतृत्व में हमारे पिताओं ने ज़ारित्सीन की लड़ाई को जीता था और अब हम भी आपके नेतृत्व में स्तालिनग्राद के महान् युद्ध को जीत कर रहेंगे।"

यह शपथ उस समय ली जा रही थी, जबकि फ़ासिस्त सेनायें स्तालिनग्राद और काकेशस के पर्वतसानुओं में घुस आई थीं। इसी समय, सोवियत संघ क्रांति का पच्चीसवां वार्षिकोत्सव मना रहा था। हमेशा की तरह, अब भी उस दिन (६ नवम्बर, १९४२) स्तालिन ने अपनी जनता के लिये भाषण दिया था। पिछले साल के कामों की चर्चा की और विजय में पूरा विश्वास प्रकट करते हुये, आगे के कार्य को बताया था। मोर्चे

के पीछे जनता कितनी दृढ़ है और वह किस तरह सैनिक कारखानों, कोलखोजों और दूसरे स्थानों में अदम्य उत्साह के साथ काम कर रही है इसे बतलाते हुये, उन्होंने कहा था : "यह मानना पड़ेगा कि हमारे देश में इतना मजबूत और इतना संगठित पृष्ठ-भाग पहले कभी नहीं था।" उन्होंने फिर इसे दोहराया कि इन गर्मियों में हिटलरियों को जो सफलता हुई, उसका कारण है—युरोप में दूसरे मोर्चे का अभाव। आंकड़े बताते हुये, उन्होंने कहा था कि प्रथम महायुद्ध में जब जर्मनी दोनों मोर्चों पर लड़ रहा था: जर्मनी ने अपने मित्रों के डिवीज़नों को लेकर कुल १२७ डिवीज़न रूस के विरुद्ध भेजे थे। लेकिन आज की लड़ाई में, जबकि हिटलर को केवल एक मोर्चे पर लड़ना पड़ रहा है, उसने प्रथम महायुद्ध से क़रीब-क़रीब दूने–२४० डिवीज़नों से सोवियत पर हमला किया है। पश्चिमी साम्राज्यवादियों की नियत स्पष्ट थी। उनके पास एक मित्र की साफ़ नियत नहीं थी, बल्कि वह मित्र बन कर पीठ में छुरी घुसेड़ने का उपक्रम कर रहे थे। स्तालिन और सोवियत की जनता को मालूम हो गया कि इस लड़ाई को केवल अपने ही बल पर जीतना है। स्तालिन ने अपनी वीर जनता के कार्यों की प्रशंसा करते हुए, उस वक्त कहा था :

> "मैं समझता हूं कि कोई भी दूसरा देश या दूसरी सेना जर्मन फ़ासिस्ट लुटेरों और उसके सहयोगी बर्बर गुंडों के इस आक्रमण से अपने को नहीं बचा सकती थी। केवल हमारा सोवियत देश और केवल हमारी लाल सेना ही है, जो ऐसे प्रहार को रोक कर उसके प्रहार के सामने खड़ी ही नहीं रह सकती, बल्कि शत्रु को दबोच भी सकती है।"

अगले दिन ७ नवम्बर, १९४२ के दैनिक-आदेश में प्रतिरक्षा-जन-कमीसार (स्तालिन) ने कहा था :

> "रोस्तोफ़, मॉस्को और तिखविन में लाल सेना के प्रहार के बल को शत्रु पहले ही चख चुका है। वह दिन दूर नहीं है, जब लाल सेना के प्रहार के बल को शत्रु फिर से अनुभव करेगा। हमारी बारी भी आकर रहेगी।"

यह भविष्यवाणी जल्दी ही पूरी होने जा रही थी। ठीक समय पर, १९ नवम्बर, १९४२ को स्तालिनग्राद के बाहरी हिस्सों में लाल सेना ने प्रतिरक्षा के तरीक़े को छोड़ कर आक्रमण की नीति अपनाते हुये, शत्रु के दोनों पक्षों पर पहले आक्रमण किया— इतना जबर्दस्त आक्रमण कि आग पर जलते रेशम के धागे की तरह, वह सिमट कर, अस्त-व्यस्त होकर पीछे की ओर हटा। इसी समय, लाल सेना ने पीछे से भी आक्रमण कर दिया। यह व्यूह-रचना और आक्रमण का दाव पेंच स्तालिन ने स्वयं निश्चित किया था और उन्हीं के संचालन में उसे कार्यरूप में परिणत किया गया था। जर्मन भी जानते थे कि स्तालिनग्राद के युद्ध का फ़ैसला उनके भाग्य का फ़ैसला होगा, इसलिये वह

भी सर्वस्व की बाजी लगाये हुये थे। लेकिन, उससे कोई फ़ायदा नहीं हुआ। तीन लाख फ़ासिस्त सेनाओं को एक जगह घेरना मामूली बात नहीं थी, लेकिन लाल सेना ने सिर्फ़ घेरा ही नहीं डाला, बल्कि उसने कितने ही भाग को नष्ट भी कर दिया और बाकी को बन्दी बना कर, स्तालिनग्राद की जबर्दस्त विजय प्राप्त की। स्तालिनग्राद की सफलता के महत्व के बारे में, बाद में (सन् १९४६ में) स्तालिन ने कहा था : "स्तालिनग्राद से जर्मन फ़ासिस्त सेना के पतन का आरम्भ होता है। यह सभी लोग जानते हैं कि स्तालिनग्राद की घोर मारकाट के बाद जर्मन फिर प्रकृतिस्थ नहीं हो सके।" स्तालिनग्राद की विजय के बाद तो सचमुच ही हिटलरी सेना में भगदड़ मच गई थी; और वह आगे-आगे भागी जा रही थी, पीछे-पीछे लाल सैनिक उनको खदेड़ते हुये, अपने देश को स्वतंत्र करते जा रहे थे।

फ़ासिस्तों की पराजय

आगे की सफलताओं का ज़िक्र करते हुये, स्तालिन ने २३ फरवरी, १९४३ के दैनिक आदेश में सोवियत सेना और सोवियत-जनता की वीरता और सफलता के बारे में कहा था : "हमारे लोग सेवस्तॉपोल और ओदेसा की वीरतापूर्ण प्रतिरक्षा, मॉस्को के नज़दीक की ज़बर्दस्त लड़ाई, काकेशस के पर्वतों, र्झेफ़ इलाक़े और लेनिनग्राद के समीप के युद्धों एवं हमेशा के इतिहास में सबसे बड़े युद्ध—स्तालिनग्राद के सबसे बड़े युद्ध—को हमेशा याद रखेंगे। इन महान् युद्धों में हमारे वीर योद्धा, सेनापति और राजनीतिक शिक्षकों ने लाल सेना की पताकाओं को अचल कीर्ति से शोभित कर दिया है और जर्मन फ़ासिस्त सेना पर विजय प्राप्त करने की सुदृढ़ नींव रख दी है।"—यह कहते हुये, स्तालिन ने बेकार के अभिमान के ख़तरे से भी सावधान करते हुये और लेनिन की सूक्ति का स्मरण दिलाते हुये कहा था :

> "पहली मुख्य चीज़ यह है कि विजय से मतवाला नहीं होना चाहिये और न घंमड से गाल बजाना चाहिये। दूसरी चीज़ यह है कि विजय को सुप्रतिष्ठित करना; और तीसरी चीज़ है—शत्रु पर उसे समाप्त करने वाला प्रहार करना।"

४. मातृभूमि की मुक्ति

सन् १९४२-४३ के जाड़ों में, लाल सेना का अभियान जर्मनों के हाथ से सोवियत के उन इलाक़ों को भी छीनने में सफल हुआ, जिन्हें युद्ध के आरम्भ में ही उन्होंने ले लिया था। इस सफलता के लिये, सोवियत राज्य ने अपने कमांडर-इन-चीफ़ (मुख्य सेनापति) को ६ मार्च, १९४३ को 'सोवियत संघ के मार्शल' की उपाधि प्रदान की।

अभी भी, चर्चिल और उसके साथियों ने द्वितीय मोर्चा खोलने का इरादा नहीं किया था, यद्यपि वह हिटलरी सेना की भीषण पराजय देख चुके थे। यह हिटलर को सीधी मदद देना था, इसमें सन्देह नहीं। सोवियत के कर्णधार उनकी इस हरकत को खून का घूंट पीकर बर्दाश्त कर रहे थे। इससे हिटलर को फिर हिम्मत हुई और सन् १९४३ की गर्मियों में उसने ओरेल और बेलगोरद से कुर्स्क के क्षेत्र में सोवियत की सेनाओं पर भीषण प्रत्याक्रमण किया। उनके ख़्याल में यह मॉस्को पर आक्रमण का श्री गणेश था। इससे पहले ही, २ जुलाई को स्तालिन ने इस क्षेत्र के कमांडरों को सूचित कर दिया था कि जर्मन ३ और ६ जुलाई के बीच उन पर आक्रमण करने वाले हैं। शत्रु की गतिविधि जान कर, लाल सेना पहले से ही तैयार थी। जब ५ जुलाई को नाज़ियों ने ओरेल-कुर्स्क और बेलोगोरद के क्षेत्र पर आक्रमण किया, तो सोवियत सेना के सामने उनकी एक न चली और हिटलरी योजना व्यर्थ गई। इसके बाद तो अब सारे युद्ध-क्षेत्र में लाल सेना ने प्रतिरक्षा छोड़ कर, आक्रमण की नीति अख़्तियार कर ली। जर्मनों के इस आक्रमण के विफल होने के बाद, २४ जुलाई को स्तालिन ने घोषित किया : "इस फ़ासिस्ती टांय-टांय-फिस्स ने उस पोवाड़े को झूठा साबित कर दिया है जिसमें कहा जाता था कि गर्मियों में जर्मन हमेशा आक्रमणात्मक सैनिक कार्रवाई में सफल होते हैं और सोवियत सेनायें पीछे हटने के लिये मजबूर होती हैं।" सफलता के बाद, लाल सेना शत्रुओं को नष्ट करती-भगाती बराबर आगे बढ़ती रही। ५ अगस्त को उसने अपने हाथ में ओरेल और बेलगोरद ले लिये, जिसके सम्मान में राजधानी में बहादुर सेना को तोपों की सलामी दी गई। इसके बाद तो हरएक महत्वपूर्ण विजय पर राजधानी में तोपें दगने लगीं, जिसे सुन-सुन कर राजधानी की जनता फूली नहीं समाती थी। स्तालिन ने कहा था : "अगर स्तालिनग्राद का युद्ध जर्मन फ़ासिस्त सेना के पतन की भविष्यवाणी करता है, तो कुर्स्क के युद्ध ने फ़ासिस्तों को सर्वनाश के मुंह पर पहुंचा दिया है।"

नवम्बर सन् १९४३ तक, जर्मनों के हाथों से दो-तिहाई सोवियत को फिर से मुक्त कर लिया गया। स्तालिन अच्छी प्रकार जानते थे कि यह मुक्ति अस्थायी नहीं है। इसीलिये, लाल सेना एक तरफ़ नये भूभागों को जर्मनों से मुक्त करती जा रही थी और दूसरी तरफ़ साधारण जनता एक निश्चित योजना के अनुसार, पुनर्वास और पुनर्निर्माण के काम में लगी थी। १९ वीं सदी के आरम्भ में, रूस ने सुवारोफ़ जैसे महान् सेनापति को जन्म दिया था, जिसकी विजयवाहिनी के घोड़ों की टापें इटली और आलप्स पर भी सुनाई दीं थीं। उसके युद्ध-विज्ञान का सोवियत-काल में पूरी तौर से सम्मान हुआ और, अंग्रेजों के विक्टोरिया क्रास की तरह, 'सुवारोफ़ तमग़े' को वीरता का भारी पारितोषक बनाया गया। ६ नवम्बर, १९४३ को यह तमगा बड़े सम्मान पूर्वक स्तालिन को प्रदान किया गया।

शत्रु भाग रहे थे, लेकिन वह भाग कर फिर संगठित होने का मौका न पायें इसलिये जगह-जगह गोरिल्ला उन पर भीषण प्रहार करके, उनकी अपार क्षति कर रहे थे। स्तालिन ने उन्हें आदेश दिया था कि शत्रु की पांतों में गोरिल्ला-युद्ध की आग भड़का देनी चाहिये, उसके सैनिक अड्डों को नष्ट करके, जर्मन फ़ासिस्त गुंडों का सर्वनाश कर देना चाहिये। गोरिल्ला-युद्ध अब और भी प्रचंड हो उठा, जिसके कारण फ़ासिस्त सेना किंकर्तव्यविमूढ़ हो गई। उसको हर जगह अपने शत्रुओं का खतरा दिखाई पड़ता था।

अब इसमें ज़रा भी शुबहा नहीं रह गया था कि इंगलैंड और अमरीका चाहे द्वितीय मोर्चा न भी खोलें, सोवियत सेना अकेली ही युरोप से फ़ासिस्तों को खतम करने के लिये पर्याप्त है। साम्राज्यवादी उसकी इस तरह की पराजय को कभी पसन्द नहीं कर सकते थे, क्योंकि यदि लाल सेना सारे युरोप को फ़ासिस्तों से मुक्त करती, तो उसके साथ-साथ रोम, पेरिस, बर्लिन और दूसरी राजधानियों में भी जनवादी मुक्ति के झंडे फहर जाते। इसीलिये १९४३ में, अब पश्चिमी सहयोगियों ने भी तत्परता दिखानी शुरु की। उन्होंने उत्तरी अफ्रीका और इटली के खिलाफ़ ज़ोर की लड़ाई लड़नी शुरु की। और साथ ही, उनके बमवर्षकों ने जर्मनी के युद्ध-सम्बन्धी औद्योगिक केन्द्रों पर आक्रमण करने शुरु कर दिये। फ़ासिस्त शक्ति के ध्वंस का पहला ज़बर्दस्त परिचय उस समय देखने को मिला, जबकि सितम्बर सन् १९४३ में इटली ने बिना शर्त आत्मसमर्पण कर दिया। अब हिटलरी सेना पश्चिम में अकेली रह गई। पूर्व में अपने फ़ासिस्त-बन्धुओं की सहायता के नाम पर, अपने चिरपोषित उद्देश्यों की पूर्ति के लिये जापान अब भी बड़े ज़ोर-शोर के साथ लड़ रहा था। भारत अब भी उसके खतरे से बाहर नहीं था। बर्मा, इन्डोनेशिया तक ही नहीं, बल्कि चीन का भी अधिकांश भाग उसके हाथ में था।

५. *तेहरान कान्फ्रेन्स और पुनर्निर्माण का आरंभ (१९४३)*

लाल सेना की सफलताओं ने पश्चिमी साम्राज्यवादियों के सिर से एक भय के भूत को दूर कर दिया था, लेकिन साथ ही दूसरा भूत उनके सिर पर सवार हो गया—कहीं बोल्शेविज़्म सारे युरेशिया को उदरसात् न कर ले ! इससे बचने के लिये, उन्होंने नवम्बर सन् १९४३ में तेहरान में कान्फ्रेन्स की, जहां स्तालिन, अमरीका के प्रेसीडेंट रूज़वेल्ट और इंगलैंड के महामंत्री चर्चिल ने मिल कर, आपस में बातचीत की और जर्मनी के विरुद्ध लड़ने तथा युद्धोपरान्त सहयोग के सम्बन्ध में तीनों शक्तियों ने एक समझौता किया।

हम यह बतला चुके हैं कि सोवियत राष्ट्र युद्ध के आखिरी वर्षों में केवल लड़ाइयां लड़ कर विजय ही प्राप्त नहीं कर रहा था, बल्कि इसी समय फ़ासिस्तों द्वारा ध्वस्त कल-कारखानों, लोहे के भट्टों, पनबिजली-स्टेशनों की लगातार मरम्मत करके उनको फिर से

चालू करने में भी लगा था। इसी लड़ाई के समय, चेलियाबिन्स्क और उज्बेकिस्तान में नये फ़ौलाद के कारखाने तथा तगिल, मगनितोगोर्स्क और दूसरे स्थानों में नये धौंकू भट्टे अधिक लौह-उत्पादन के लिये खड़े किये गये। स्तालिन्स्क में अल्मोनियम का नया कारखाना स्थापित होकर, काम करने लगा। स्तालिन्स्क, चेलियाबिन्स्क आदि में नये पनबिजली-स्टेशन काम करने लगे। स्तालिन जिस तरह सम्मान और बढ़ावा देकर सैनिकों में नई रूह फूंक रहे थे, उसी तरह उद्योग-क्षेत्र के कर्मठ सैनिकों को भी वह परम सम्मान का पात्र समझते थे। युद्ध की कठिन परिस्थिति में भी एक विशाल धौंकू भट्टे को मगनितोगोर्स्क के कमकरों ने बहुत जल्दी खड़ा कर दिया था, उसके लिये भी उन्होंने दिसम्बर सन् १९४३ में उन्हें बधाई भेजी थी। उन्होंने येनाकियेवो के लौह-फ़ौलाद के कारख़ाने के मज़दूरों को भी इसी तरह का अभिनंदन भेजा। स्तालिन ने मुक्त होने वाले भू-भागों का आर्थिक तौर से, फिर से निर्माण करने की ओर ख़ास ध्यान दिया। उनकी प्रेरणा से, पार्टी की केन्द्रीय कमिटी और राज्य की जन-कमीसार-परिषद् ने अगस्त सन् १९४३ में जर्मन-अधिकार से मुक्त किये गये इलाक़ों के आर्थिक पुनर्वास के लिये आवश्यक उपायों को अख़्तियार करने का निश्चय किया, जिससे पुनर्निर्माण और पुनर्वास का काम बहुत तेज़ी से बढ़ा। सोवियत जनता हर तरह से सहयोग करने के लिये तैयार थी। जिस तरह प्रतिरक्षा के उद्योग को उसने आगे बढ़ाया, उसी तरह अब साथ-साथ पुनर्वास के काम को भी हाथ में लिया। पुनर्वास का काम समाजवादी व्यवस्था में जितनी आसानी से किया जा सकता है, उतना पूंजीवादी व्यवस्था में करना सम्भव नहीं है। भारत इसका अच्छा उदाहरण है। आज ६ वर्ष बाद भी, पाकिस्तान से आये हुये अपने विस्थापितों का हम ठीक से प्रबन्ध नहीं कर पाये हैं, जबकि हमारे देश ने युद्ध की ध्वंसलीला भी नहीं देखी और हमारे सभी आर्थिक साधन सुरक्षित रहे हैं। तो भी देश-विभाजन के कारण, सन् १९४७ के अन्त में भीषण समस्या उठ खड़ी हुई। सोवियत जनता का सामूहिक स्वार्थ वैयक्तिक स्वार्थ से अलग नहीं, बल्कि सामूहिक स्वार्थ का अभिन्न अंग होने से व्यक्ति समाज के हितों में ही अपने हितों को मानता है। यही कारण था कि वहां के लोग सामूहिक स्वार्थों की रक्षा के लिये ढिलाई नहीं दिखा सकते थे। हिटलर ने जिन इलाक़ों पर अधिकार किया था, वहां पर उसने चाहा था कि किसान कोलखोज़ों की जगह फिर वैयक्तिक तौर से अपनी खेती करें, इसी तरह दूसरे व्यवसायों में भी वैयक्तिक स्वार्थों को उसने पुनः स्थापित करने की कोशिश की थी। जब उसमें उसे सफलता नहीं हुई, तो उसने लोमड़ी के खट्टे अंगूर की तरह, यह कहना शुरू किया कि इन लोगों में आंतरिक बढ़ावा और अध्यवसाय की भावना ही नहीं है। वैयक्तिक बढ़ावा और अध्यवसाय से सामाजिक बढ़ावा और अध्यवसाय व्यक्ति के लिये भी सबसे अधिक हित की बात है, यह सोवियत के नागरिक अपने सत्ताईस वर्षों के जीवन से अच्छी तरह समझ गये थे। कोलखोज़ों का

समृद्ध जीवन क्या वैयक्तिक किसानी से कभी प्राप्य हो सकता था? क्या वैयक्तिक किसान गावों में बिजली की रोशनी और जीवन के आधुनिक सुभीतों के पाने का स्वप्न भी देख सकते थे?

स्तालिनी संविधान ने सोवियत गणसंघ को सर्वतंत्र-स्वतंत्र गणों का संघ मानते हुये, उन्हें अधिकार दे रखा था कि वह स्वेच्छापूर्वक संघ से सम्बंद्ध हैं और जब चाहें तब उनको संघ से अलग होने का अधिकार है; लेकिन सोवियत आर्थिक ढांचे, सांस्कृतिक नवनिर्माण तथा जातियों के प्रति स्तालिन की दूरदर्शितापूर्ण नीति ने उनके दिल से अलग होने के ख़्याल को ही निकाल दिया था। मार्च सन् १९४४ में सोवियत सरकार ने एक और बड़ा क़दम उठाया, जबकि संघ के सोलहों गणराज्यों को प्रतिरक्षा और वैदेशिक विभाग के अपने-अपने मंत्रालय रखने की इजाज़त दे दी। युद्ध ने सोवियत की भिन्न-भिन्न जातियों को और भी घनिष्टता से एक दूसरे के साथ सम्बद्ध कर दिया। पिछड़ी हुई जातियों में पंचवार्षिक योजनाओं ने जिस तरह हज़ारों की तादाद में इंजीनियर, विशेषज्ञ आदि पैदा कर दिये थे, वहां अब इन जातियों के सैकड़ों जवान 'सोवियत-संघ-वीर' के सर्वोच्च वीरता सूचक सोने के पचकोने तारे वाले तमगों को अभिमान के साथ धारण कर रहे थे, उनमें कितने ही ऊंचे-उंचे अफ़सरों के पदों पर पहुंचे थे।

६. *बर्लिन की ओर*

सन् १९४४ के नवम्बर में, जब सोवियत की जनता अपनी महान् क्रांति का २७ वां वार्षिकोत्सव मना रही थी, स्तालिन ने अपने भाषण में बतलाया कि सोवियत की सारी भूमि जर्मन फ़ासिस्तों से मुक्त की जा चुकी है। यही नहीं, बल्कि सोवियत सेना अब जर्मनी और उसके सहयोगियों के देश में घुस कर दुश्मनों का सफ़ाया कर रही है। इससे पहले, २० जून (सन् १९४४) को 'मॉस्को प्रतिरक्षा-तमगा' सबसे पहले मार्शल स्तालिन को प्रदान किया गया। २६ जुलाई, १९४४ को 'विजय-तमगा' भी स्तालिन को दिया गया। स्तालिन की नीति ने सोवियत को अमर विजय प्रदान की थी, क्या यह कहने की आवश्यकता है? सन् १९४४ में फ़ासिस्तों के सहयोगी देशों रूमानिया, फिनलैंड और बल्गेरिया ने आत्मसमर्पण करके ही संतोष नहीं किया, बल्कि उन्होंने अपनी बन्दूकों की नलियों को हिटलरी सेनाओं की ओर फेर दिया। इसी साल, हंगरी भी अब-तब कर रहा था। सोवियत सेना, जर्मनी को एक धक्के में गिरा करके फ्रांस तक के देशों को मुक्त कर, अतलान्तिक के तट तक पहुंचने के लिये बिल्कुल सक्षम थी। अब चार्चिल को दूसरे मोर्चे को और अधिक रोके रखना भारी ख़तरे की बात मालूम होने लगी। इस प्रकार जून सन् १९४४ में दूसरा मोर्चा खोलते हुये, अमरीकी और अंग्रेज सेनायें उत्तरी फ्रांस के तट

पर उतरीं। जर्मन फ़ासिस्त अब दोनों ओर से पिटने लगे। स्तालिन ने ६ नवम्बर, १९४४ के क्रांति-महोत्सव-सम्बन्धी अपने भाषण में ही पुकार की—"बर्लिन का ओर!" लाल सेना ने अब बड़ी तेजी के साथ बर्लिन का रास्ता पकड़ा; पोलैंड की राजधानी (वारसा) को मुक्त कर दिया। सेना लाल पूर्वी प्रशिया के भीतर घुसी। सारे मोर्चे पर जर्मन फ़ासिस्त बुरी तौर से पिटने लगे। अन्तिम विजय नज़दीक दीख पड़ी रही थी। इसी समय फरवरी सन् १९४५ में, तीनों देशों के प्रमुख नेता याल्टा (क्रीमिया) में मिले, जिसमें हिटलरी जर्मनी को शीघ्रातिशीघ्र पराजित करने के लिये सैनिक तरीक़ों की योजना के बारे में विस्तृत विचार हुआ। इसी सम्मेलन में यह भी निश्चय हुआ कि सोवियत संघ जापान के विरुद्ध भी युद्ध में सम्मिलित होगा।

२३ फरवरी, १९४५ को जिस वक्त लाल सेना का २७ वां जन्मोत्सव मनाया जा रहा था, उस वक्त तक उसने बड़ी-बड़ी विजयें प्राप्त कीं थीं। जनवरी और फरवरी के चालीस दिनों में, बिजली की चाल से चलने वाले अपने आक्रमणों द्वारा सोवियत सेना ने सारे पोलैंड को मुक्त कर दिया: चैकोस्लोवाकिया का अधिकांश भाग भी मुक्त हो गया और जर्मन सिलेसिया के अतिरिक्त, पूर्वी प्रशिया का भी बहुत सा भाग लाल सेना के हाथों में था। हंगरी के रूप में, हिटलर का अन्तिम युरोपीय साथी भी अब आत्मसमर्पण कर चुका था। २३ फरवरी, १९४५ के दैनिक आदेश में साथी स्तालिन ने कहा था: "जर्मनों पर पूर्ण विजय की प्राप्ति अब बिलकुल नजदीक है।" लाल सेना ने वियना (आस्ट्रिया) पर अधिकार करके जर्मनी के दक्षिणी दुर्ग को खतम कर दिया। इसी समय ओडर पार करती हुई, लाल सेना बर्लिन के पास पहुंचने लगी। स्तालिन ने कहा:

"अपने विजय-ध्वज को बर्लिन पर फहराओ!"

आख़िरी प्रहार होने ही वाला था। इसी समय २१ अप्रैल, १९४५ को पोलैंड-सोवियत मित्रता-संधि पर स्तालिन ने हस्ताक्षर किये। पश्चिमी साम्राज्यवादी पोलैंड को अब भी पिछले महायुद्ध की तरह, अपने हाथ की कठपुतली बनाकर सोवियत-विरोधी अड्डे के रूप में इस्तेमाल करना चाहते थे और उन्होंने कितने ही समय तक इस मित्रता को न होने देने के लिये कोशिश भी की। प्रतिगामियों की भगोड़ी सरकार को लन्दन में शरण देकर, चर्चिल उनकी पीठ ठोकता रहा; लेकिन अन्त में उसे सफलता नहीं मिली। सोवियत के लिये यह संधि एक बड़ी ज़बर्दस्त राजनीतिक विजय थी। इसी समय भाषण देते हुये, साथी स्तालिन ने कहा था:

"स्वतंत्रता प्रेमी जातियां, खास कर स्लाव जातियां बहुत समय से अधीरता पूर्वक इस संधि की प्रतीक्षा कर रही थीं। यह संधि युरोप में समान शत्रु के विरुद्ध संयुक्त मोर्चे के दृढ़ होने की सूचना देती है।"

महान् विजय

७. *हिटलर का अंत*

२ मई, १९४५ को महान् कमांडर-इन-चीफ़ के दैनिक आदेश को प्रसारित करते हुये, मॉस्को रेडियो ने कहा था कि सोवियत सेना ने "बर्लिन की जर्मन सेनाओं को पूर्ण तौर से पराजित कर दिया है और आज २ मई को जर्मन साम्राज्यवाद के केन्द्र और जर्मन आक्रमण की पीठ—जर्मनी की राजधानी बर्लिन—पर अधिकार कर लिया है।" लाल सेना ने स्तालिन की आज्ञा को पूरा किया। बर्लिन पर अपनी विजय-ध्वजा फ़हरा दी। इस समय तक हिटलर अपने गिने-चुने अनुयायियों के साथ अपने तहख़ाने में आत्महत्या कर चुका था। जर्मनी के लिये अब दूसरा रास्ता नहीं था, इसलिये ८ मई, १९४५ को जर्मन सेना के उच्च प्रतिनिधियों ने बिना शर्त आत्मसमर्पण कर दिया। ९ मई के दिन को स्तालिन ने विजय-दिवस घोषित किया। उस दिन स्तालिन ने अपने लोगों को सम्बोधित करके, कहा थाः

> "जर्मनी पर विजय का महान् दिवस आ गया है। लाल सेना और हमारे सहयोगियों की सेनाओं के प्रहार से मजबूर होकर, फ़ासिस्त जर्मनी ने घुटने टेक कर बिना शर्त के आत्मसमर्पण कर दिया है।...अब यह कहने के लिये पूरा कारण है कि जर्मनी की अन्तिम पराजय का ऐतिहासिक दिन, जर्मन साम्राज्यवाद पर हमारी जनता की महान् विजय का दिन आगया है।
>
> "मेरे प्यारे देशबन्धुओ और देशबहिनो! विजय के लिये अभिनंदन!"

सोवियत जनता ही नहीं, बल्कि सारी मानवता ने उस दिन सुख की सांस ली, जब दुनिया के रेडियो-स्टेशनों ने जर्मनी की पूर्ण पराजय को घोषित किया। इस पराजय का सबसे अधिक श्रेय स्तालिन और उनकी जनता को ही है। उन्होंने इस युद्ध के समय अपनी सर्वांगीण प्रतिभा का पूर्ण उपयोग किया था। पंचवार्षिक योजनाओं की तरह, इस समय भी कितनी ही नई-नई सैनिक प्रतिभाओं का खोज निकालना स्तालिन का ही काम था। इस युद्ध से पहले बुल्गानिन, वासीलेव्स्की, कोनेफ़, गवरोफ़, जुकोफ़, वतूनिन, चेर्न्याखोव्स्की, अन्तोनोफ़, सोकोलोव्स्की, मेरेत्स्तोफ़, मालिनोव्स्की, वरोनोफ़, तोल्बुखिन, याकोव्लेफ़, मालिनिन, गलित्स्की, त्रोफिमेन्को, गोर्बातोफ़, इतेमेन्को, कुरासोफ़, वेरशिनिन, गलोवानोफ़, फ़ेदोरेंको, रिबालँको, बगदानोफ़, कतुकोफ़, लेल्युशेंको आदि अनेक प्रतिभाशाली सेनापतियों को कौन जानता था? उन्हें अपना जौहर दिखलाने का मौक़ा स्तालिन ने जितनी आसानी से दिया, क्या

पूंजीवादी राष्ट्र वैसा कर सकते थे? उनके यहां तो ये पैंतीस–चालीस वर्ष के छोकरे अभी मेजर और कर्नल तक ही पहुंचने के अधिकारी थे; जनरल और मार्शल होने के लिये तो साठ के नज़दीक होना ज़रूरी था।

स्तालिन के आदेश के अनुसार २४ जून, १९४३ को मॉस्को के लाल-मैदान में विजय-परेड हुई। इस समय लाल सेना के विजय–ध्वजों और पराजित फ़ासिस्तों की पताकाओं के साथ जो विशाल सैनिक प्रदर्शन हुआ, वह मेरे और सभी दर्शकों के लिये अद्वितीय था। लेनिन-समाधि-मंदिर पर खड़े, इस प्रदर्शन को देखते हुये स्तालिन कितने मुग्ध हुये होंगे, इसे आसानी से समझा जा सकता है। सोवियत जनता और उसका एक-एक बच्चा जानता था कि इस विजय–प्रदर्शन को रूप देने में सबसे बढ़कर जिनका हाथ है, वह महान् स्तालिन ही हैं। सोवियत जनता और सरकार अपने महान् नेता का सम्मान करते नहीं थकती थी। परेड के दो दिन बाद, २६ जून को राज्य ने मार्शल स्तालिन को एक और 'विजय-तमगा' प्रदान किया और अगले दिन (२७ जून को) उन्हें 'जनरलस्सिमो' (परम सेनापति) की उपाधि दी।

८. *जापान हारा*

फ़ासिस्त जर्मनी की पूर्ण पराजय हुई। जापान अब भी अमरीका और इंगलैंड को परेशान किये हुये था। उन्हें दिखाई नहीं पड़ रहा था कि कैसे भारत की सीमा तक डटी जापानी सेना को हटाया जाय। इसी समय (जुलाई सन् १९४५) त्रिदली सम्मेलन हुआ। टूमैन, चर्चिल और स्तालिन की बातचीत हुई। अमरीकी प्रेसीडेंट रूज़वेल्ट के अकस्मात मर जाने से उनके सहकारी टूमैन अब अमरीका के राष्ट्रपति थे। अमरीका और इंगलैंड ने जापान से बिना शर्त हथियार रखने की मांग पेश की थी, लेकिन उसने ऐसा करने से इन्कार कर दिया था। दोनों राष्ट्र समझने लगे थे कि यदि सोवियत ने हस्तावलम्ब न दिया, तो जापान अभी भी टेढ़ी खीर बना रहेगा। सोवियत ने जापान के विरुद्ध युद्ध में शामिल होना स्वीकार किया और उसके साथ साम्राज्यवादियों ने भी लम्बी बाहों को समेटने का वचन दिया।

९ अगस्त, १९४५ के सबेरे सोवियत स्थल और नौसेना ने जापान के साथ लड़ाई छेड़ दी। सोवियत के मुक़ाबले के लिये ही लड़ाई के भी पहले से जापान की मशहूर 'क्वान्तुड' सेना मंचूरिया में रखी गई थी। उसकी भी वही हालत हुई जो लाल सेना के सामने पश्चिम में हिटलरी सेना की हुई थी। सोवियत सेना ने मंचूरिया, दक्षिणी सखालिन, उत्तरी कोरिया और कुरिल द्वीपपुंजों से जापानी सेना को मार भगाया। जापान के लिये बिना शर्त आत्मसमर्पण के सिवा और कोई रास्ता नहीं रह गया। वह वैसा करने ही जा रहा था कि इससे पहले

चर्चिल के समर्थन से ट्रूमैन ने सोवियत से बिना पूछे ही हिरोशिमा (६ अगस्त) और नागासाकी (९ अगस्त) पर अणुबम गिरा दिया। जब जापान की पराजय निश्चित थी, तो ऐसे नरसंहारी अस्त्र का दो बड़े-बड़े नगरों की साधारण जनता पर गिराना यही बतलाता है कि साम्राज्यवाद कहां तक आततायी बन सकता है। साथ ही, जनता के हितों की परवाह न करते हुये, उसने सोवियत के विरुद्ध शीत-युद्ध आरंभ भी कर दिया। उसी समय दोनों शहरों में स्त्री-बच्चों-बूढ़ों सहित पचास-पचास हजार आदमी काल के गाल में चले गये और कुछ ही महीनों बाद उतनी ही संख्या में और भी आदमी बुरी तौर पर मरे। इस आततायीपन को मानवता और जापानी भी कभी नहीं भूल सकते। क्या ट्रूमैन और चर्चिल हिटलर के विरुद्ध भी अणुबम का प्रयोग कर सकते थे? हरगिज़ नहीं; क्योंकि वह जानते थे कि ऐसा करने पर हिटलर के उड़न्तू बम भारी परिमाण में विषैली गैसों और कीटाणुओं को इंगलैंड पर गिरायेंगे, जिससे लन्दन जैसे शहरों में कोई रोने वाला भी नहीं बच पायेगा।

अन्त में २ सितम्बर, १९४५ को जापानी सेना ने भी बिना शर्त के आत्मसमर्पण कर दिया।

इस समय भी स्तालिन ने शांति पर ही जोर दिया और रेडियो द्वारा घोषित किया :

"अब से हम अपने देश को पश्चिम में जर्मन और पूर्व में जापान के आक्रमण के भय से मुक्त समझ सकते हैं। सारी दुनिया के लोगों के लिये चिरप्रतीक्षित विजय आज आ गई है!"

अध्याय १०

महामानव

(सन् १९४५-५३)

१. पुनर्निर्माण

युद्ध के समय सोवियत समाजवादी व्यवस्था ने अपने को पूंजीवादी व्यवस्था से कहीं श्रेष्ठ साबित कर दिया था। स्तालिन के शब्दों में :

> "युद्ध के तर्जबे ने सिद्ध कर दिया है कि सोवियत व्यवस्था केवल शांतिपूर्ण निर्माण के समय ही देश के आर्थिक और सांस्कृतिक विकास के संगठन के लिये सर्वश्रेष्ठ व्यवस्था नहीं है, बल्कि युद्ध के समय शत्रु के साथ प्रतिरोध करने के लिये, जनता की सारी शक्ति को संचालित करने के लिये भी यही सर्वश्रेष्ठ व्यवस्था है।...अक्तूबर-क्रांति से उत्पन्न समाजवादी व्यवस्था ने हमारे लोगों और हमारी सेनाओं को बल प्रदान कर महान् और अजेय बना दिया है।"

कृषि के हथियारों, उपयोगी पशुओं तथा दूसरे साधनों का इतने भारी परिमाण में नष्ट होना और ७० लाख नर-नारियों का युद्ध में मारा जाना तथा २ करोड़ का हताहत होना बतलाता है कि सोवियत भूमि को यह विजय कितनी महंगी पड़ी थी। युद्ध के कारण, परती पड़ गई करोड़ों एकड़ जमीन जोतने के लिये आदमियों का अकाल था। अगर वैयक्तिक खेती का बोलबाला होता तो देहात के पुनर्वास में एक युग लग जाता, लेकिन सोवियत में पंचायती खेती की व्यवस्था थी। नई मशीनों की सहायता से उजड़े गांवों को आबाद करने के लिये सामूहिक श्रम तैयार था। जैसे-जैसे युद्ध की आवश्यकतायें कम हुई, वैसे ही वैसे युद्ध के लिये माल तैयार करनेवाले कारखाने अब शान्ति के समय के उपयोग की चीजों को पैदा करने में लग गये और पुनर्निर्माण का काम और ज़ोरों से चल पड़ा।

इसके लिये चतुर्थ पंचवार्षिक योजना तैयार की गई, जिसके बारे में स्तालिन ने ९ फरवरी, १९४६ को अपने निर्वाचन-क्षेत्र मॉस्को के वोटरों के सामने भाषण करते हुये, कहा था कि इसका लक्ष्य टूटे-फूटे की मरम्मत करना ही नहीं, बल्कि अपने देश के उद्योग तथा कृषि-सम्बंधी उपज को युद्धपूर्व के तल से भी आगे बढ़ाना है। अन्त में १८मार्च, १९४६ को महासोवियत (पार्लामेन्ट) ने चतुर्थ पंचवार्षिक

योजना (सन् १९४६-५०) को स्वीकृति दी। इसके सम्बंध में पार्लामेन्ट में भाषण देते हुये, योजना-कमीशन के अध्यक्ष ने कहा था :

"...हमारी पंचवार्षिक योजना का लक्ष्य है—वर्गहीन समाजवादी समाज का निर्माण और देश को क्रमशः आर्थिक समाजवाद में परिवर्तित करना। उसका लक्ष्य है—सोवियत संघ के मूलभूत आर्थिक कर्तव्य को पूरा करना, यानी प्रधान पूंजीवादी देशों के, वहां की जनसंख्या के प्रतिपुरुष औद्योगिक उत्पादन के, तल पर पहुंचना ही नहीं बल्कि आगे बढ़ जाना। सोवियत संघ की कृषि और कल-कारखानों—राष्ट्रीय अर्थनीति—की पुनःस्थापना की यह पंचवार्षिक योजना उक्त दिशा में एक और क़दम है। हमारा झंडा मार्क्स-एंगेल्स-लेनिन-स्तालिन के वैज्ञानिक साम्यवाद का झंडा है। इस झंडे के नीचे साम्यवाद की ओर बढ़ते हुये, हम नई विजय प्राप्त करेंगे।"

प्रकृति का कायाकल्प

लेकिन, युद्धोत्तर पंचवार्षिक योजना के चार वर्षों और तीन महीनों में ही पूरे हो जाने से, युद्ध से विध्वस्त सोवियत के पश्चिमी भाग के पुनर्निर्माण से ही स्तालिन संतुष्ट नहीं थे। उनकी निगाहें समय के क्षितिज पर दूर कम्युनिस्ट समाज के उदय पर लगी हुई थीं, उनका मस्तिष्क कम्युनिस्ट समाज की स्थापना की मंज़िलें पूरी करने का पथ निश्चित करने में और उसकी नींवें मजबूत करने में व्यस्त था। उसके लिये उत्पादन-शक्तियों और साधनों के विशालतम प्रसार की आवश्यकता थी और इस विशालतम प्रसार के लिये ज़रूरी था कि उत्पादन और उत्पादन के साधनों के विकास के आड़े आने वाली प्राकृतिक बाधाओं पर विजय प्राप्त की जाय, प्रकृति के नियमों का मानवता के हित में उपयोग किया जाय और उनसे शक्ति हासिल की जाय, इसी शक्ति से प्रकृति का कायाकल्प किया जाय।

यह विचार एकदम नया नहीं था। विज्ञान की प्रगति के साथ-साथ, जैसे-जैसे मानव कुदरत के नियमों से परिचित होता आया है, वैसे-वैसे इन्हीं नियमों के उपयोग के द्वारा प्रकृति का कायाकल्प करने की उसकी कल्पनाओं में रंग भरते चले गये हैं, उनमें वास्तविकता आती गई है। लेकिन सदैव ही, समाज की वर्ग-व्यवस्था और शासक-वर्गों के स्वार्थ उनके विकास पर एक बेड़ी बनते रहे हैं। आज अमरीका का शासक वर्ग जैसे वैज्ञानिकों को मौत की कुर्सियों पर बैठा रहा है, बुद्धिजीवियों और लेखकों को अपना शिकार बना रहा है और समाज के निर्माण की जगह विश्व-संहार की योजनायें बनाकर मानव सभ्यता और संस्कृति का दुश्मन बन गया है, इसी प्रकार हर एक शासक-वर्ग एक समय मौत के पंजे की तरह अपने समकालीन समाज पर जकड़ता रहा है। इसीलिये, मानवता के इन सपनों को मूर्त रूप देने के लिये सबसे पहला महान् काम था—वर्ग-शोषणहीन समाजवादी राज्य की

स्थापना। लेनिन और स्तालिन के नेतृत्व में इसे सम्पन्न किया जा चुका था। स्तालिन के नेतृत्व में इस समाजवादी राज्य को सुदृढ़ बना लिया गया था। वह ज़मीन तैयार हो चुकी थी और अब प्रश्न था—मानवता के उन चिरपोषित सपनों को मूर्त रूप देने का। यह एक नया और युगान्तरकारी क़दम था। स्तालिन इसी की योजना बनाने में व्यस्त थे।

२. *युगान्तरकारी महान् निर्माण-योजनायें*

अठारहवीं सदी के अन्त में, एक रूसी इंजीनियर ग्लूखोवस्की ने ज़ार के सामने दो योजनायें रखी थीं। पहली योजना थी—आमूदर्या नदी को उज़बोई नदी की नहर से मिलाकर, कास्पिन सागर की ओर मोड़ देने की। दूसरी योजना थी—बालतिक्, कास्पियन और अरल सागरों को एक दूसरे से सम्बद्ध कर देने की। अलेक्सान्द्र बोईकोफ़ ने कहा था कि रेगिस्तानों की सिंचाई करके मनुष्य पेड़-पौधे उगा सकता है, फ़सलों की पैदावार बढ़ा सकता है। वासिली दोकुचायेफ़ ने नदियों के बहाव की दिशा बदलकर, उसकी नमी का उपयोग करने की योजना रखी थी। जनता की उन दिनों यह धारणा बन गई थी कि हर तीन सालों के बाद एक सूखा पड़ता ही है। इसके विरुद्ध, क्लीमैंत तिमिरियाज़ेफ ने गेहूं की एक बाल की जगह दो बालें उपजाने की एक योजना रखी थी। इवान मिचूरिन ने कहा था : "हम प्रकृति की कृपा पर निर्भर नहीं रह सकते, उसे हमें प्रकृति के हाथों से छीन लेना चाहिये।" —और, ज़ार ने इन सबको 'पागल स्वप्नवादी' घोषित कर दिया था, उनकी योजनाओं पर अमल करने का तो कोई प्रश्न ही नहीं था।

पर, स्तालिन उनके महत्व को जानते थे और उनको सम्पन्न करने के लिये आवश्यक परिस्थितियाँ भी समाजवादी समाज के रूप में उनके नेतृत्व में तैयार हो चुकी थीं। स्तालिन ने इन योजनाओं और योजनाकारों को उचित सम्मान दिया और उनके आधार पर वैसी ही और नई योजनाओं को प्रस्तावित किया। सन् १९२४ में ही, स्तालिन ने स्टेपीज़ के अर्द्ध-रेगिस्तानों और दक्षिण-पूर्व के रेगिस्तानों के सूखे प्रदेश की सिंचाई की एक विशाल योजना पेश की थी। उन्होंने सत्रहवीं कांग्रेस में वोल्गा प्रदेश की सिंचाई की योजना रखते हुये, कहा था :

> "वोल्गा प्रदेश में बिलकुल स्थायी अन्नभंडार के एक ऐसे आधार के बिना हम कुछ नहीं कर सकते, जो मौसिमों की निरंकुशता से क़तई स्वतंत्र हो और बाज़ार के लिये लगभग ३,६०,००,००,००० सेर अनाज की पूर्ति कर सके।"

लेनिन ने कहा था: "सोवियत शासन + सारे देश का विद्युतीकरण = कम्युनिज़्म।"

सोवियत सरकार का सारा निर्माण-कार्य इसी राह पर चलकर हुआ है। सन् १९५० में, मंत्रियों की कौन्सिल ने पांच विशालतम पन-बिजली के केन्द्र बनाने का फ़ैसला लिया था। इन केन्द्रों का निर्माण सन् '५७ तक पूरा होने की योजना है। इनके अलावा, प्रकृति के कायाकल्प के लिये सिंचाई और कृत्रिम वनों की पेटियों की योजनायें भी बनाई गईं।

● वोल्गा पन-बिजली-शक्ति केन्द्र :

वोल्गा युरोप की सबसे बड़ी नदी है। उसका महत्व सोवियत संघ के लिये उतना ही है, जितना कि हमारी सभ्यता के विकास में गंगा का। सदियों से वहां की जनता वोल्गा का पूरा-पूरा उपयोग करने का स्वप्न देख रही थी। पर, वह समाजवादी समाज में ही, स्तालिन के नेतृत्व में ही सम्भव हो सका है।

इस योजना के अन्तर्गत दो पन-बिजली-शक्ति केन्द्र बनेंगे। पहला—कुई बिशेफ़ पन-बिजली-केन्द्र और दूसरा, स्तालिनग्राद केन्द्र होगा। इन दोनों के फलस्वरूप, मॉस्को को लगभग १० अरब किलोवाट बिजली मिलेगी और मॉस्को संसार का सबसे बड़ा बिजली-शक्ति का केन्द्र बन जायेगा। दोनों केन्द्रों में लगभग २० अरब किलोवाट बिजली बनेगी, जिसमें से बाकी १० अरब कुई बिशेफ़ प्रदेश के औद्योगीकरण तथा मध्य वोल्गा प्रदेश की सिंचाई के काम आयेगी। इसी योजना के अन्तर्गत वोल्गा और उराल पर्वत के बीच ५०८ मील लम्बी मुख्य नहर और २,८१२ मील लम्बी एक-दूसरे को मिलानेवालीं अगल-बगल की छोटी-छोटी नहरें बनेंगी।

इसके फलस्वरूप, अर्द्ध-रेगिस्तानी और रेगिस्तानी सूखे प्रदेशों की जलवायु ही बदल जायेगी। लगभग ४०,००,००० एकड़ खेतों और ३,००,००,००० एकड़ चरागाहों को पानी मिलेगा। इस सिंचाई के द्वारा अस्त्राख़ान प्रदेश में लगभग ५६ लाख मन कपास, १६ करोड़८८ लाख मन गेहूं और २२ करोड़ ४० लाख मन भूसा उपजेगा। स्टेपीज़ में २०–२'५ गुनी अधिक घास पैदा होने लगेगी। कास्पियन सागर के उत्तरी भाग से रेगिस्तानी रेत का हमला रुक जायेगा। इसका असर पूरी अर्थ-व्यवस्था और भौगोलिक परिस्थिति पर पड़ेगा। आज रेलों के यातायात से जितना माल एक जगह से दूसरी जगह जा पाता है, उसका लगभग ४० गुना माल इन जलमार्गों से आ-जा सकेगा। अकूत श्रमशक्ति, कोयले और यातायात पर होनेवाले ख़र्च की बचत होगी।

● तुर्कमान नहर:

आमूदर्या मध्य एशिया की सबसे बड़ी नदी है। यह पामीर और हिन्दूकुश की पर्वत-श्रेणियों में बहती है। सदियों से यहां के लोग इस नदी का उपयोग करने की सोचते थे, परन्तु यह एक बड़ी अनियंत्रित और वेगमती नदी है। यदि मोटे तौर

पर हिसाब लगाया जाय तो इसका लगभग ८० लाख वर्गगज़ जल व्यर्थ ही समुद्र में पहुंच गया है और उसी के किनारे सदियों से लोग सूखे और अनावृष्टि के कारण भूखों मरते रहे हैं।

स्तालिन की प्रेरणा और नेतृत्व के कारण, इस पर नहर बनाने की योजना कार्यान्वित की गई है। यह नहरें लगभग ४६७ से ५३३ वर्गगज़ जल काराकुम और तुर्कमान के दक्षिणी रेगिस्तानों में ले जायेंगी। इनके कारण, रेगिस्तानों में नख-लिस्तान बनने लगेंगे और लगभग ३०,००,००० एकड़ की फ़सलों को पानी मिल सकेगा। कपास की पैदावार ७-८ गुनी बढ़ जायेगी। वहाँ फलों की पैदावार होने लगेगी। रेशम के कीड़े पाले जा सकेंगे। लगभग १,७०,००,००० एकड़ चरागाहों की सिंचाई हो सकेगी। खेतिहर जानवरों की संख्या दुगुनी हो जायेगी। लगभग १३,००,००० एकड़ के क्षेत्र में हरियाली की ऐसी पेटियाँ बन जायेंगी, जो रेगिस्तानों से आने वाली गर्म हवाओं और रेत को रोककर खेती की रक्षा करेंगी। सूती कपड़े की मिलों की सालाना पैदावार लगभग ५ करोड़ ६० लाख मन हो जायेगी। वनस्पतियों के तेल का परिमाण ११-१२ गुना बढ़ जायेगा। यातायात की सुविधा हो जायेगी।

लम्बाई में इस नहर की तुलना, चीन की विशालतम नहर को छोड़कर, संसार की और किसी नहर से नहीं की जा सकती।

● उक्रइन और क्रीमिया में स्तालिनी योजनायें :

बोरिस मार्गुनेंकोफ़ ने लगभग चालीस वर्षों पहले ज़ार के सामने नीपर नदी के पानी को सिंचाई के काम में लाने की योजना रखी थी। लेकिन, उसे स्तालिन के नेतृत्व में ही कार्यरूप में परिणत किया जा सका है। इनका निर्माण-कार्य सन् १९५१ में शुरू हुआ है और १९५६ में समाप्त होगा।

इस योजना के अन्तर्गत दो विशाल बांध, पानी के नियंत्रण के लिये दो 'लॉक' और एक पन-बिजली-शक्ति-केन्द्र बनेगा। बांधों में क्रमशः १९,००,००,००,००० और ८,००,००,००,००० वर्गगज़ पानी जमा रखने का इन्तज़ाम होगा। पन-बिजली-केन्द्र से लगभग १ अरब २० करोड़ किलोवाट विद्युत-शक्ति उपलब्ध होगी। लगभग ४० लाख एकड़ ज़मीन की सिंचाई हो सकेगी। कपास की पैदावार ५-६ गुनी बढ़ जायेगी। उक्रइन और क्रीमिया दोनों मिलाकर कुल २२ करोड़ ४० लाख मन कपास, ५ करोड़ ६० लाख मन गेहूँ और लगभग ११ करोड़ २० लाख मन भूसा आज से अधिक पैदा कर सकेंगे। खेतों की रेगिस्तानों की रेतों से रक्षा करके, काली भूमि की उपज-शक्ति बढ़ाई जा सकेगी।

इनके बनाने में स्वेज़ नहर से लगभग ४ गुनी अधिक भूमि को खोदना पड़ेगा।

● जहाज़रानी का वोल्गा-दोन जल-मार्ग :

इसका निर्माण-कार्य युद्ध से पहले ही आरम्भ कर दिया गया था। फिर युद्ध के बाद सन् १९४७ से शुरू कर दिया गया था। सन् १९५२ की वसंत में नियत अवधि से दो वर्षों पहले ही यह पूरी हो चुकी है।

इसके अन्तर्गत सोवियत की दो सबसे बड़ी नदियों—वोल्गा और दोन—को एक विशाल नहर के ज़रिये मिलाया गया है। इसके द्वारा सोवियत संघ के यूरोपीय हिस्से के सभी समुद्र—श्वेत, बालतिक्, कास्पियन, अज़ोव और काला सागर—एक-दूसरे से सम्बंधित हो गये हैं। यह एक इतना बड़ा जल-मार्ग बन गया है कि 'कृत्रिम समुद्र' कहा जाने लगा है। इसमें बड़े-बड़े जहाज़ चल सकते हैं और इसी को सुगम बनाने के लिये, इसमें १३ लॉक और ३ बांध बांधे गये हैं।

सोवियत संघ के युरोपीय हिस्से के यातायात की यह सभी समस्यायें सुलझा देता है। इसके द्वारा लगभग १५,००,००० एकड़ अर्द्ध-रेगिस्तानी खित्तों की सिंचाई होगी, लगभग ४०,००,००० एकड़ चरागाहों को पानी पहुँचेगा। सभी ओर यथेष्ट मात्रा में पानी उपलब्ध होगा। सभी को सस्ती बिजली मिल सकेगी।

यह आधुनिक युग का विशालतम निर्माण है। यह वोल्गा प्रदेश की प्राकृतिक-भौगोलिक परिस्थिति में एक आधारभूत परिवर्तन ला देगा। वहाँ की जलवायु बदल देगा।

● वृहत्तम वनीयक्षेत्रों की योजना :

स्तालिन की यह महानतम योजना सुनने में ऐसी लगती है, जैसे कोई दंतकथा हो!—सचमुच महान् स्तालिन ने मानव जाति के सामने कितनी विशाल सम्भावनाओं के द्वार खोल दिये हैं, उन्हें कार्यरूप में परिणत भी कर दिया है। स्तालिन की यह योजना है : राज्य की ओर से कृत्रिम जंगलों की आठ अत्यंत विशाल पेटियाँ उगाई जाँय, जिनका प्रसार पूरे देश में हजारों मीलों तक आर-पार फैला हुआ हो।

इनमें से प्रत्येक पेटी २२ गज़ चौड़ी और १२½ लाख मील लम्बी होगी। इनका कुल क्षेत्रफल १,२०,००,००० एकड़ से भी ज़्यादा होगा। इन पेटियों में पानी इकट्ठा रखने के लिये बड़ी-बड़ी नहरें बनाई जायेंगी। यह नहरें इतनी बड़ी होंगी कि इनके द्वारा यातायात भी हो सके। प्रदेशों की आवश्यकता के अनुसार ही, इन जंगलों में बोने के लिये पेड़ों की क़िस्मों का चुनाव किया जायगा।

इनसे कल्पनातीत लाभ होंगे। फ़सलें बोने के त्रावोपोलीय नियम के अनुसार एक निश्चित क्रम में फ़सलें बोने के कारण, ज़मीन की ऊपरी पर्त अधिक उर्वर हो जायेगी। ज़मीन में नमी भी बढ़ जायेगी। रेगिस्तानों से आनेवाली गर्म हवा और

रेत से जमीन की रक्षा हो सकेगी। हवा की निचली पर्तों की शुष्कता कम हो जायेगी और उसका तापक्रम कभी भी ६० या ७० अंश सेंटीग्रेड से ज़्यादा नहीं हो सकेगा। हवा की नमी में रहनेवाली ऑक्सिजन और कॉरबन डाई-ऑक्साईड के वर्तमान अनुपात में अन्तर आ जायेगा। ऑक्सीजन का अंश बढ़ जायेगा, मतलब यह कि जलवायु अधिक स्वास्थकर हो जायेगा और साथ ही, कार्बन डाई ऑक्साईड भी अधिक बनने लगेगी; क्योंकि हम सभी जानते हैं कि पेड़-पौधों के हरे पत्ते ही उसका निर्माण करते हैं।

और, इसकी सबसे प्रमुख बात यह है कि स्तालिन की यह योजना उस समस्या का भी समाधान करती है जिसका हल ढूंढने में आज संसार के वैज्ञानिक जुटे हुये हैं। वह समस्या है—सूर्य के अकूत भंडार से धरती को नित्य मिलनेवाली सौर-शक्ति का उपयोग। स्तालिन की योजना के अन्तर्गत उगाये गये इन विशालतम जंगलों के हरियाले प्रसार में, हरे-हरे पौधों में यह सौर-शक्ति अर्जित की जायेगी और फिर, जहां भी आवश्यकता होगी, उसे खाद्य, ईंधन, औद्योगिक कच्चे माल आदि के रूप में प्रयुक्त किया जायगा। इस सौर-शक्ति का सबसे महत्वपूर्ण उपयोग हम जान ही चुके हैं—पन-बिजली-शक्ति के केन्द्रों के रूप में। पानी से उत्पन्न की जानेवाली पन-बिजली-शक्ति और कुछ नहीं है, प्रकृति के द्वारा तब्दील कर दी गई सौर-शक्ति ही है, जिसका अर्जन जल कर लेता है।

इस प्रकार, महान् स्तालिन ने वह राह दिखाई है जिस पर चलकर समूची मानवता सभी प्राकृतिक शक्तियों का उपयोग अपने हित में कर सकेगी, प्रकृति का कायाकल्प कर सकेगी।

● महान् योजनाओं पर एक तुलनात्मक दृष्टिपात :

इन योजनाओं और इनके निर्माण-काल के ऐतिहासिक महत्व को, महान् स्तालिन के महामानव कहलाने के औचित्य को हम तब तक पूरी तौर पर नहीं समझ सकते, जब तक पूँजीवादी व्यवस्था के निर्माणों की तसवीर भी हमारे सामने न हो।

संक्षेप में, मानवता ने अपने पूरे इतिहास में समूची धरती के रेगिस्तानों का सिर्फ दो फ़ीसदी भाग ही—३,६५,००,००० वर्ग मील ही—खेती के काम में लगा पाया है। युद्ध, फ़साद, भूमि के प्रबंध की शोषक व्यवस्थायें औपनिवेशिक प्रथा, दास प्रथा आदि के फलस्वरूप हरे-भरे विशाल जनसंख्याओं वाले प्रदेश भी उजड़ गये हैं, बंजर पड़ गये हैं, रेगिस्तान बनते जा रहे हैं। पूंजीवादी अर्थशास्त्री चीख रहे हैं कि रेगिस्तान एक दिन समूची धरती को लील लेगा, लीलता जा रहा है। सचमुच पूंजीवाद उसके आगे असमर्थ ही है। नतीजा सामने है कि अपने देश में जोतने योग्य जमीन का ७० फ़ीसदी भाग

बेकार पड़ा है। पिछले बीस सालों में, हमारी प्रति एकड़ जमीन की गेहूं की पैदावार .८ से लेकर .९ तक गिर गई है। जोत की जमीन का रक़बा लगभग ५०,००,००० एकड़ कम हो गया है। प्रति वर्ष लगभग ६,००,००० आदमी भूख से मरते हैं। अकाल कभी देश से विदा नहीं होता; आज बंगाल में है, तो कल मद्रास, फिर महाराष्ट्र, फिर गुजरात में।

इसी प्रकार, नील की घाटी की संसार-प्रसिद्ध कपास की पैदावार और क़िस्म भी उजाड़ मिश्र में दिन-दिन गिरती ही जा रही है। अफ्रीका में कई परित्यक्त उजाड़ प्रदेश पड़े हुये हैं। स्वयं अमरीका में ८०,००,००,००० एकड़ से अधिक जमीन सूखे की शिकार हो गई है। इसमें से ४,००,००,००० एकड़ तो पूरी तौर से बेकार हो चुकी है। उपजाऊ शक्ति ३०-४० फ़ीसदी घट गई है। लगभग ५,००,००० किसान स्वयं अपने लिये भरपेट खाना जुटा सकने में असमर्थ हैं। और, बूढ़े पूंजीवादी इंगलैण्ड में? टेम्स नदी की बाढ़ों से नगरों की रक्षा नहीं की जा सकती। इसलिये कि बांधों की मरम्मत नहीं की जा सकती, क्योंकि कोष ही नहीं है; सब युद्ध की तैयारी पर खर्च हो जाता है!

इतना ही नहीं, पूंजीवाद ने जो थोड़ा-बहुत निर्माण-कार्य कभी किया भी था उसकी रफ़्तार की जरा समाजवादी निर्माण से तुलना कीजिये। नीपर पन-बिजली-केन्द्र १,५०० दिनों में, कुई विशेफ़ केन्द्र ५ सालों में, स्तालिनग्राद केन्द्र ५ सालों में, १,४०० मील लम्बी तुर्कमान नहर ७ सालों में, वोल्गा-दोन नहर—एक कृत्रिम समुद्र—६-७ सालों में; जबकि नील नदी पर एक बांध बांधने में ६८ वर्ष, टैनेण्सी नदी की अमरीकी योजना में ३५ वर्ष, १०३ मील लम्बी स्वेज़ नहर में १० वर्ष और ५१६ मील लम्बी पनामा नहर के बनाने में ३५ वर्ष लगे थे! समूची मानवता के इतिहास में, जहाँ अब तक कुल लगभग १६,००,००००० एकड़ भूमि की सिंचाई का प्रबंध किया जा सका था, वहाँ सोवियत संघ में, महान् स्तालिन के नेतृत्व में, ५-६ वर्षों के दौरान में ही लगभग ५,६०,००,००० एकड़ की सिंचाई हो सकेगी!

लेकिन, इन महान् निर्माणों के लिये सबसे पहली शर्त क्या है? विश्व शांति। अपने अन्तिम क्षणों तक महामानव स्तालिन ने शान्ति का पथ प्रकीर्ण किया और हर मौक़े पर जंगखोरों को धूल चटाई है।

स्थायी शान्ति के अग्रदूत

साम्राज्यवादी जंगबाज़ और उनके टुकड़खोर पत्रकार, आज से नहीं सोवियत के जन्मकाल से ही, महान् लेनिन और स्तालिन को 'खूंखार', 'साम्राज्यवादी', 'निरंकुश' आदि कहकर कीचड़ उछालते रहे हैं। आज जब युद्ध ही साम्राज्यवादियों को 'अधिकतम' मुनाफ़ा कमाने का एकमात्र ज़रिया नज़र आ रहा है, तब वह और

भी बौखला उठे हैं और सोवियत संघ तथा महान् स्तालिन पर लाछंन लगाने की सिरतोड़ कोशिशें कर रहे हैं। परन्तु, उनका प्रचार सूर्य पर थूकने के समान ही होता जारहा है। हर मोर्चे पर वह चारों खाने चित्त पड़ते जारहे हैं। सारे संसार की जनता दिन-ब-दिन समझती जा रही है कि महान् स्तालिन ने द्वितीय विश्व-युद्ध के बाद से ही नहीं, सदैव से ही जनता के लिये एक निर्माणशीला शान्ति का नारा बुलन्द किया है।

३. शान्ति का स्तालिनीय पथ

८ नवम्बर, १९१७ को सत्ता हाथ में लेते ही, सोवियत सरकार ने जो पहला आदेश निकाला था वह शान्ति की स्थापना का ही था। सन् १९१९ में, सोवियतों की कांग्रेस में लेनिन ने घोषणा की थी: "सोवियत प्रजातंत्र सभी देशों के साथ शान्तिपूर्वक रह कर अपनी सारी शक्ति घरू निर्माण पर केन्द्रित कर देना चाहता है।" एक मुलाक़ात के दौरान में, उन्होंने कहा था :- "हम निश्चयपूर्वक अमरीका, सभी देशों, पर खास तौर पर अमरीका, के साथ आर्थिक समझदारी बढ़ाने के पक्षपाती हैं।" दिसम्बर सन् १९२२ में सोवियत के वैदेशिक मंत्री—श्चेरिन—ने कहा था : "...आज के इस ऐतिहासिक युग में, पूंजी की पुरानी और नवजात व्यवस्थाओं का प्रतिनिधित्व करने वाले राष्ट्रों में परस्पर आर्थिक सहयोग होना, संसारव्यापी आर्थिक निर्माण के लिये, सबसे आवश्यक है।"

महान् स्तालिन का नेतृत्व शान्ति के इसी पथ पर आगे बढ़ता रहा है। इसी पथ को प्रकीर्ण करता रहा है। देखिये, किस तरह उन्होंने इसका क्रमशः विकास किया है।

दिसम्बर सन् १९२७ में, पार्टी की पंद्रहवीं कांग्रेस में स्तालिन ने इसी का समर्थन करते हुये कहा था: "पूँजीवादी देशों के साथ हमारे सम्बंधों का आधार है—दो विरोधी व्यवस्थाओं के एक साथ रहने की सहमति। अमल ने इसे पक्की तौर पर सही सिद्ध कर दिया है।"

सन् १९३६ में, राय होवार्ड से भेंट करते हुये, स्तालिन ने कहा था : "अमरीकी प्रजातंत्र और सोवियत व्यवस्था एक-दूसरे के साथ शान्तिपूर्वक रह सकते और होड़ कर सकते हैं।"

सन् १९३८-३९ के अरीब-क़रीब, जब युद्ध की अफ़वाहें गर्म होने लगीं, धमकियां दी जाने लगीं और सारे वातावरण में तनातनी आगई थी, तब स्तालिन ने संसार के सामने '**शान्ति अविभाज्य है**' और '**सामूहिक सुरक्षा**' की घोषणा की थी। सन् १९३८ में, पार्टी की अठारहवीं कांग्रेस में उन्होंने सोवियत की शान्तिपूर्ण

नीति की घोषणा इस प्रकार की थी: "हम शान्ति के हामी हैं। हम सभी देशों के साथ व्यापारिक सम्बंध दृढ़ करने के हामी हैं। हमारी यही नीति है और हम इसी नीति पर तब तक दृढ़ रहेंगे जब तक सोवियत संघ के साथ दूसरे देश इसी तरह के सम्बंध बनाये रखेंगे और जब तक वह हमारे देश के हितों का उलंघन नहीं करेंगे।"

९ फरवरी, १९४६ को अपने निर्वाचकों के समक्ष बोलते हुये, उन्होंने कहा था: "यह सोचना ग़लत होगा कि दूसरा विश्व-युद्ध एक आकस्मिक घटना या किसी ख़ास राजनीतिज्ञ की ग़लतियों का परिणाम था। निसंदेह, ग़लतियां तो तमाम की गई थीं। पर वास्तव में, युद्ध उन संसारव्यापी आर्थिक और राजनीतिक शक्तियों के विकास का ही लाज़िमी नतीजा था, जो आधुनिक एकाधिकारवादी पूंजीवाद के आधार पर विकसित हो रही थीं।...असलियत यह है कि पूंजीवादी देशों के असमान विकास के फलस्वरूप समय-समय पर, बहुधा पूंजीवादी संसार की व्यवस्था के संतुलन में हिंसापूर्ण गड़-बड़ियाँ होने लगती हैं।...इसका नतीजा होता है—पूंजीवादी संसार का दो शत्रु ख़ेमों में बँट जाना और उनके बीच युद्ध!...इस प्रकार, पहला विश्व-युद्ध (सन् १९१४-१८) संसारव्यापी पूंजीवादी व्यवस्था के पहले आर्थिक संकट का परिणाम था और दूसरा विश्व-युद्ध (सन् १९३९-४५) उसके एक दूसरे आर्थिक-संकट का।...इसका यह अर्थ नहीं है कि दूसरा विश्व-युद्ध पहले युद्ध की बिलकुल एक कापी ही था।..."

हर क़दम पर वह साम्राज्यवादी युद्धख़ोरों का पर्दाफ़ाश करते गये। १३ मार्च, १९४६ को चर्चिल की फुल्टन स्पीच के बारे में, स्तालिन ने 'प्राव्दा' के प्रतिनिधि के उत्तर में कहा था: "मैं उसे एक ख़तरनाक कारनामा मानता हूँ, जिसका नियोजित अर्थ है—मित्र शक्तियों में फूट के बीज बोना और उनके साहकार्य को रोकना।...ध्यान देने की एक बात यह है कि इस सिलसिले में मि. चर्चिल और उनके दोस्तों तथा हिटलर और उसके दोस्तों में बड़ी समानता है!...लेकिन, भीषण युद्ध के पांच सालों के दौरान में, राष्ट्रों ने अपनी आज़ादी और अपनी स्वतंत्रता की ख़ातिर ही अपना ख़ून बहाया था, इसलिये नहीं कि हिटलरों के बजाय चर्चिलों का आधिपत्य क़ायम हो जाय। इसलिये, यह क़तई मुमकिन है कि ग़ैरअंग्रेज़ी भाषा-भाषी राष्ट्र, जो दुनिया की जनसंख्या के बहुमत में हैं, एक नई ग़ुलामी के सामने सिर नवाने को राज़ी नहीं होंगे।...यह बिलकुल साफ़ है कि मि. चर्चिल की यह स्थिति ब्रिटेन और सोवियत संघ के बीच हुई मैत्रीपूर्ण संधि से मेल नहीं रखती।... संधि के अवधि काल के बढ़ाये जाने का कोई मतलब नहीं होता, यदि दोनों में से एक संधि का उलंघन करता है और उसे कोई मान्यता ही नहीं देता। ...मैं नहीं समझता कि दूसरे विश्व युद्ध के बाद चर्चिल और उसके दोस्त लोग पूर्वी युरोप के ख़िलाफ़ एक नया सशस्त्र प्रयाण संगठित करने में सफल हो सकेंगे या नहीं। लेकिन, यदि वह सफल भी हो गये, हालांकि उसकी अधिक संभावना नहीं है क्योंकि लाखों-

लाख साधारण मनुष्य शान्ति के हितों की रक्षा के लिये कटिबद्ध हैं, तो यह विश्वासपूर्वक कहा जा सकता है कि वह कुचल दिये जायेंगे, ठीक उसी तरह जैसे वह २६ वर्षों पहले एक बार कुचल दिये गये थे।"

२२ मार्च, १९४६ को एडी गिलमोर—एसोसियेटेड प्रेस के प्रतिनिधि—से मुलाक़ात करते समय राष्ट्र संघ के बारे में उसके एक प्रश्न के उत्तर में, स्तालिन ने कहा था : "मैं संयुक्त राष्ट्र संघ को बड़ा महत्व देता हूं, इसलिये कि वह शान्ति और अन्तर्राष्ट्रीय सुरक्षा क़ायम रखने का एक गम्भीर साधन है।...यदि संयुक्त राष्ट्र संघ भविष्य में भी समानता के अधिकार को क़ायम रखने में सफल रहा, तो निसंदेह ही वह विश्वव्यापी शान्ति और सुरक्षा की गारंटी करने में एक बड़ी क्रियात्मक भूमिका अदा कर सकेगा। ...यह जरूरी है कि जनता और राज्यों के शासक नये युद्ध के प्रचारकों के खिलाफ़ बड़े पैमाने पर एक विरोधी प्रचार का संगठन करें, साथ ही शान्ति क़ायम रखने के लिये प्रचार करें...।"

एक बार फिर सोवियत संघ की वैदेशिक नीति को स्पष्ट करते हुये लाल सेना के नाम अपने १ ली मई सन् १९४६ के आदेश में, स्तालिन ने कहा था : "समूचे संसार को न सिर्फ़ सोवियत संघ की शक्ति, बल्कि सभी जगहों की जनता की समानता की मान्यता और उनकी आजादी तथा स्वतंत्र सत्ता की भावना के आदर पर आधारित सोवियत संघ की नीति की विशेषता देखने और समझने का एक मौक़ा मिल चुका है। अब इसमें संदेह करने की कोई गुंजाइश ही नहीं है कि भविष्य में भी सोवियत संघ अपनी नीति—शान्ति और सुरक्षा की नीति, तमाम जनता की समानता और मित्रता की नीति—के प्रति वफ़ादार रहेगा।"

२४ सितम्बर, १९४६ को 'लंदन संडे टाइम्स' के सम्वाददाता एलेक्जेण्डर वर्थ ने उनसे 'नये युद्ध' के खतरे के बारे में कुछ सवाल किये थे। स्तालिन ने परिस्थिति का गहरा विवेचन करते हुये, पूरी समस्या का एक-एक धागा अलग-अलग निकालकर रख दिया था : "मैं एक 'नये युद्ध' के वास्तविक खतरे में यक़ीन नहीं करता। जो भी 'नये युद्ध' के बारे में शोरगुल मचा रहे हैं, उनमें कुछ सैनिक-राजनीतिक गुप्तचर और नागरिकों में से कुछ उनके पिछलग्गू हैं।..." उनको इस शोरगुल की जरूरत इसलिये थी कि कुछ अपने दलाल दूसरे देशों के शासकों को भड़काकर अपने देश के शासकों के लिये भारी सुविधायें प्राप्त करने, युद्धकालीन बजट को क़ायम रखने और फ़ौजों को भंग न करके बेकारी न फैलने देने में उन्हें इससे सहायता मिलती है। आगे चलकर, स्तालिन ने और भी स्पष्टतया कहा था कि आज जो युद्ध के बारे में शोरगुल हो रहा है, उसमें और 'नये युद्ध' के एक वास्तविक खतरे में, जो आज नहीं है, साफ़ फ़र्क करना चाहिये। उसी मुलाक़ात में, उन्होंने एटम बम के बारे में कहा था : "कुछ राजनीतिज्ञ जानबूझकर भी एटम बम को जितनी अहम शक्ति

सोचते हैं, मैं उसमें यक़ीन नहीं करता। एटम बम दुर्बल हृदयों को धमकाने के मतलब के हैं, लेकिन वे युद्ध का परिणाम निश्चित नहीं कर सकते। एटम बम इसके लिये नाकाफ़ी हैं। हाँ, एटम बम के रहस्य का एकाधिकारी स्वामित्व एक धमकी अवश्य पैदा करता है, लेकिन उसके ख़िलाफ़ भी दो इलाज मौजूद हैं—(अ) एटम बम का एकाधिकारी स्वामित्व अधिक दिनों तक नहीं रह सकता; (ब) एटम बम का प्रयोग निषिद्ध कर दिया जायगा।"

और, महान् स्तालिन ने फिर दृढ़ विश्वास से घोषित किया था: "मैं सहयोग की शान्तिपूर्ण सम्भावनाओं में संदेह नहीं करता। कम होने के बजाय, वह बढ़ भी सकती हैं। 'एक देश में कम्युनिज़्म' क़तई मुमकिन है, ख़ास तौर पर सोवियत संघ जैसे देश में।"

२८ अक्तूबर, १९४६ को 'यूनाइटेड प्रेस' के अध्यक्ष ह्यू बैली से स्तालिन ने कहा था कि अणु-शक्ति को नियंत्रित करने का सबसे अच्छा तरीक़ा है—"अन्तर्राष्ट्रीय नियंत्रण और यह ज़रूरी भी है।"

२१ दिसम्बर, १९४६ को अमरीकी प्रेसीडेन्ट रूज़वेल्ट के पुत्र इलियट रूज़वेल्ट के प्रश्नों के उत्तर में, स्तालिन ने कहा था: "**हाँ, क़तई। यह (दोनों व्यवस्थाओं का शान्तिपूर्वक रहना) सम्भव ही नहीं है, बुद्धिमत्तापूर्ण भी है और हासिल भी किया जा सकता है**। युद्ध के कड़े दिनों में सरकारों के बीच के भेदों ने हमारे दोनों राष्ट्रों के एक-दूसरे से मिलकर अपने दुश्मन को शिकस्त देने में कोई रुकावट नहीं डाली। इसलिये, अब...मैं सोचता हूं कि एक ही नहीं कई मीटिंगें (तीन बड़ों की) होनी चाहिये। उनसे बड़ा लाभ होगा।...**विश्व के व्यापार का प्रसार हमारे दोनों देशों के बीच अच्छे सम्बंधों के विकास के लिये कई क्षेत्रों में हितकारक होगा।**......"

९ अप्रैल, १९४७ को हैरोल्ड स्टासेन से मुलाक़ात के दौरान में, स्तालिन ने कहा था: "जहाँ तक सहयोग का सवाल है, उनके (दोनों व्यवस्थाओं के) बीच का फ़र्क़ महत्वपूर्ण नहीं है। जर्मनी और अमरीका की आर्थिक व्यवस्थायें समान ही थीं, फिर भी दोनों में लड़ाई ठन गई थी। अमरीका और सोवियत संघ की व्यवस्थायें भिन्न-भिन्न हैं, फिर भी दोनों ने एक-दूसरे के ख़िलाफ़ लड़ाई नहीं छेड़ी; और सोवियत संघ उसका कोई इरादा भी नहीं रखता।...सहयोग की संभावना तो हमेशा ही रहती है, लेकिन सहयोग करने की इच्छा हमेशा मौजूद नहीं रहती। यदि एक पक्ष सहयोग करने की इच्छा नहीं रखता तो नतीजा होगा—टकराव, युद्ध।...हम अपनी व्यवस्थाओं की परस्पर आलोचना न करें। प्रत्येक को यह अधिकार है कि वह जो भी व्यवस्था चाहे, क़ायम रखे। कौनसी अच्छी है, यह इतिहास बता देगा। हमें जनता द्वारा चुनी हुई व्यवस्थाओं की इज़्ज़त करनी चाहिये।...हमें इस ऐतिहासिक सत्य से बात शुरू

करनी चाहिये कि संसार में जनता द्वारा समर्थित दो व्यवस्थायें हैं। सिर्फ़ इसी बिना पर सहयोग सम्भव है।"

१७ मई, १९४८ को हैनरी वालेस की खुली चिट्ठी के जवाब में, उन्होंने फिर घोषित किया : "**सोवियत संघ की सरकार का यह यक़ीन है कि आर्थिक व्यवस्थाओं और सैद्धान्तिक फ़र्कों के बावजूद इन दोनों व्यवस्थाओं का एक साथ रहना और सोवियत संघ तथा अमरीका के बीच के मतभेदों का शान्तिपूर्वक निपटारा करना सम्भव ही नहीं, बल्कि विश्वव्यापी शान्ति के हित में परम आवश्यक भी है।**"

२७ जनवरी, १९४९ को 'इंटरनेशनल न्यूज़ सर्विस' के प्रतिनिधि किंगसबरी स्मिथ के साथ मुलाक़ात में, कहा था : "सोवियत सरकार एक ऐसी घोषणा निकालने के बारे में विचार करने को तैयार है (कि अमरीका और सोवियत संघ दोनों एक-दूसरे के ख़िलाफ़ युद्ध नहीं छेड़ना चाहते)... स्वभावतः, सोवियत संघ की सरकार ऐसे शान्ति समझौते को कार्यान्वित करने के लिये क़दम उठाने में अमरीकी सरकार के साथ सहयोग कर सकती है, जिसके द्वारा धीरे-धीरे निशस्त्रीकरण हो सके। ...(तीन बड़ों की) मीटिंग के लिये, मैं पहले ही कह चुका हूं, कोई आपत्ति नहीं है।"

इस प्रकार, स्तालिन सदैव ही शान्ति का हाथ बढ़ाते रहे, पर साम्राज्यवादियों ने तीसरा विश्व युद्ध छेड़ने के लिये सोवियत संघ के सामने हर प्रकार के उकसावे पेश किये, मैत्रीपूर्ण संधियों को तोड़ा, गन्दा और भ्रामक प्रचार किया, शान्ति को ख़तरे में डालने के लिये ही शान्ति की बातें चलाने का पाखंड किया। पर स्तालिनीय पथ, चाहे वह समाजवाद के निर्माण का हो या विश्व शान्ति का, सदैव ही आम जनता के लिये, आम जनता को ध्यान में रखकर ही तय किया जाता है; चन्द सिरफिरे निहित स्वार्थों के दलाल शासकों या बुद्धिजीवियों के कुछ करने या न करने पर उसका दारोमदार नहीं रहता। वह किसी राज्य के चन्द शासकों के चेहरों और उनकी वक्तृताओं में उस राज्य की नीति नहीं ढूंढा करते थे। उनकी अद्वितीय मार्क्सवादी दृष्टि से कुछ भी छिपा नहीं रहता था। वह सिखाते थे कि जनता की शक्ति अजेय है और जिस काम को जनता अपने हाथों में ले लेती है उसे सम्पन्न होने से ब्रह्मा भी नहीं रोक सकता।

इसीलिये १६ फरवरी, १९५१ को 'प्राव्दा' के प्रतिनिधि के प्रश्नों का उत्तर देते हुये, उन्होंने कहा था : "नहीं! कम से कम मौजूदा समय के लिये तो नया विश्व युद्ध अवश्यम्भावी नहीं माना जा सकता।...यह सही है कि अमरीका में, ब्रिटेन में और फ्रांस में भी आक्रमणकारी शक्तियाँ हैं, जो नये युद्ध की पिपासित हैं। उनको अतिरिक्त मुनाफ़ों के लिये, दूसरे देशों को लूटने-खसोटने के लिये युद्ध की

मालेन्कोफ़ के साथ

माओ त्से-तुंग के साथ

जरूरत है।...वे, यही आक्रमणकारी शक्तियाँ, प्रतिक्रियावादी सरकारों पर कब्जा जमाये रहती हैं और उनको चलाती हैं। पर साथ ही, वे अपनी उस जनता से खौफ़ खाती हैं, जो एक नया युद्ध नहीं चाहती और शान्ति की रक्षा के पक्ष में है। इसीलिये, जनता को झूठ में जकड़ देने के लिये, वे उसको धोखा देने के लिये और नये युद्ध को रक्षणात्मक तथा शान्ति-प्रेमी देशों की शान्तिपूर्ण नीति को आक्रमणकारी बताने के लिये, प्रतिक्रियावादी सरकारों का उपयोग करने की कोशिश कर रहे हैं।...

"इन आक्रमणकारी और शान्ति-प्रेमी शक्तियों के बीच चलनेवाले इस संघर्ष का फल क्या होगा? यदि तमाम जनता शान्ति की रक्षा के ध्येय को अपने हाथों में ले लेगी और अन्त तक उसकी रक्षा करेगी, तो शान्ति क़ायम रहेगी और सुदृढ़ होगी। यदि जंगबाज़ आम जनता को झुठलाने, धोखा देने और नये युद्ध में खींच लाने में सफल होजाते हैं तभी युद्ध अवश्यम्भावी बन सकता है।

"इसीलिये, जंगबाज़ों की मुजरिमाना साजिशों का भंडाफोड़ करने तथा शान्ति की रक्षा करने के लिये, आज एक विशाल आन्दोलन की परम आवश्यकता है।"

यही नहीं, शान्ति आन्दोलन के बीच उठनेवाली भ्रान्तियों को भी स्तालिन ने नजरअन्दाज नहीं किया। १ फरवरी, १९५२ को उन्होंने अपनी अन्तिम महान् पुस्तक **सोवियत संघ में समाजवाद की आर्थिक समस्यायें** (पृष्ठ ३९) में शान्ति आन्दोलन के क्षेत्र और ध्येय को पूरी तौर से स्पष्ट कर दिया था: "...इससे नतीजा निकलता है कि पूंजीवादी देशों के बीच युद्धों की अनिवार्यता क़ायम रहती है। कहा जाता है कि लेनिन की इस स्थापना को, कि साम्राज्यवाद लाज़िमी तौर से युद्ध को जन्म देता है, अब पुरानी पड़ चुकी समझना चाहिये; क्योंकि शान्ति की रक्षा के लिये और नये विश्वयुद्ध के खिलाफ़ ताक़तवर जन-शक्तियां सामने आचुकी हैं। यह सत्य नहीं है।

"मौजूदा शान्ति आन्दोलन का उद्देश्य है कि शान्ति की हिफ़ाज़त के लिये और नये विश्व युद्ध को रोकने के लिये, आम जनता को जगाया जाय। इसलिये, इस आन्दोलन का उद्देश्य पूंजीवाद को ख़त्म करना नहीं है--वह अपने को शान्ति क़ायम रखने के जनवादी लक्ष्य तक सीमित रखता है। इस लिहाज़ से मौजूदा शान्ति आन्दोलन पहले महायुद्ध के वक्त साम्राज्यवादी युद्ध को गृह-युद्ध में बदलने के लिये चलाये गये आन्दोलन से भिन्न है, क्योंकि वह आन्दोलन और आगे बढ़ा था और समाजवादी उद्देश्यों को लेकर चला था।

"यह मुमकिन है कि परिस्थितियों के किसी निश्चित योग में, शान्ति के लिये संघर्ष जहाँ-तहाँ समाजवाद के लिये संघर्ष में विकसित हो जाय। लेकिन, तब वह आज

का शान्ति आन्दोलन न रह जायगा; वह पूंजीवाद को परास्त करने का आन्दोलन होगा। जिस बात की सबसे ज़्यादा सम्भावना है, वह यह कि मौजूदा शान्ति आन्दोलन, शान्ति की रक्षा के लिये एक आन्दोलन की हैसियत से, अगर वह क़ामयाब होगा तो, किसी ख़ास लड़ाई को रोक लेगा, उसे अस्थायी रूप से मुल्तवी करा देगा, अस्थायी रूप से किसी ख़ास शान्ति को क़ायम रखेगा, किसी जंगबाज़ सरकार को पदच्युत कराके उसकी जगह दूसरी सरकार बिठा देगा, जो अस्थायी रूप से शान्ति क़ायम रखने के लिये तैयार हो। अवश्य ही, यह अच्छा होगा। बल्कि बहुत अच्छा होगा। लेकिन तो भी, आम तौर से पूंजीवादी देशों के बीच युद्धों की अनिवार्यता ख़त्म करने के लिये वह काफ़ी न होगा। वह इसलिये काफ़ी न होगा कि शान्ति आन्दोलन की तमाम सफलताओं के बावजूद साम्राज्यवाद क़ायम रहेगा, चालू रहेगा—और फलतः युद्धों की अनिवार्यता भी बनी रहेगी।

"युद्ध की अनिवार्यता को ख़त्म करने के लिये, यह ज़रूरी है कि साम्राज्यवाद को ही ख़त्म कर दिया जाय।"

इस तरह, महान् स्तालिन ने शान्ति के विरुद्ध चलनेवाले साम्राज्यवादी जंगख़ोरों के कुत्सित प्रचार का सदैव के लिये क्रियाकर्म कर दिया। इस तरह महान् स्तालिन ने नेक इरादों वाले समूचे मानवों के लिए शान्ति आन्दोलन के द्वार खोल दिये और शान्ति आन्दोलन की सम्भावना तथा उसकी व्यापकता का अधिकतम विकास कर दिया है। यह बिलकुल स्पष्ट कर दिया है कि दोनों व्यवस्थाओं का शांतिपूर्वक एक साथ रहना मानवता के हित में है।

● शान्ति प्रयत्नों का समर्थन

इतना ही नहीं, समूची मानव जाति के लिये शान्ति के सिद्धान्तों का विकास करने और उसको सुदृढ़ बनाने के लिये अनथक प्रयास करने के साथ ही साथ, जहाँ-जहाँ, जब-जब भी शान्ति की स्थापना के लिये किसी ने प्रयत्न किया, तो उसे महान् स्तालिन ने आगे बढ़कर अपना समर्थन भी दिया।

१३ अक्तूबर, १९४९ को उन्होंने जर्मन जनतांत्रिक प्रजातंत्र के अध्यक्ष और प्रधानमंत्री को बधाई भेजते हुए, कहा था : "...इस प्रकार एक संयुक्त, जनतांत्रिक और शान्ति-प्रेमी जर्मनी की नींव डाल कर, आप साथ ही साथ सारे योरुप के लिये एक बड़ा कार्य कर रहे हैं—उसकी स्थायी शान्ति की गारंटी कर रहे हैं। इस नये और वैभवशाली पथ पर, मैं आपकी सफलता की कामना करता हूँ।"

१५ जुलाई, १९५० को उन्होंने अपने देश के प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू को कोरिया में शान्ति की स्थापना के लिये उनके प्रयत्नों पर बधाई भेजी थी : "शान्ति के लिये आपकी पहल का मैं स्वागत करता हूँ।..."

१ अक्तूबर, १९५१ को उन्होंने अध्यक्ष माओ त्से-तुंग को चीनी जनतंत्र की वर्षगांठ पर अभिनन्दन भेजते हुए, कहा था : "...चीन के जनवादी जनतंत्र और सोवियत संघ की महान् मित्रता एक ऐसी मित्रता हो जो सुदूर पूर्व में शान्ति और सुरक्षा की सुदृढ़ गारंटी बने; और यह दृढ़तर ही होती जाय !"

● शान्ति पुरस्कार

इस समर्थन के साथ ही साथ महान् स्तालिन के शान्ति-प्रयत्नों के सम्मान में उनकी ७० वीं वर्षगांठ से, सोवियत संघ की सुप्रीम सोवियत के अध्यक्ष-मंडल ने २० दिसम्बर, १९४९ को "राज्यों के बीच शान्ति सुदृढ़ करने के लिये, अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति पुरस्कार" देना शुरू किये हैं।

हर साल ५ से लेकर १० तक पुरस्कार दिये जाते हैं। यह बिना किसी भेदभाव के, संसार के किसी भी नागरिक को मिल सकते हैं, जिसने भी संसार में शान्ति की सुरक्षा और स्थापना के लिये बहुमूल्य काम किया हो। पुरस्कार-विजेता को एक उपाधि-पत्र, स्तालिन के चित्र से अंकित एक स्वर्ण का तमग़ा और एक लाख रूबल का नक़द इनाम दिया जाता है।

अभी तक जिनको यह पुरस्कार मिल चुके हैं, उनके नाम इस प्रकार हैं : **सन् १९५० में**—फ्रेडरिक जोलियो क्यूरी (वैज्ञानिक, फ्रांस), मादाम सन यात सेन (चीन), ह्यूलेट जॉनसन्—डीन ऑफ कैन्टरबरी (इंगलैंड), यूजेन कॉटन (फ्रांस) विशप आर्थर मोल्टन (अमरीका), पाक देन एइ (कोरिया) और हैरीबेरितो जारा (मैक्सिको); **सन् १९५१ में**—को मोजो (चीन), पेट्रो नैनी (इटली), याकू ओयामा (जापान), मोनिका फैल्टन (ब्रिटेन), अन्ना सैगर्स (जर्मनी), जार्ज एमाडो (ब्राज़ील); **सन् १९५२ में**—डा० सैफुद्दीन किचलू (भारत) वेइस फार्ज (फ्रांस) पॉल राबसन (अमरीका), एलिसा ब्रॉको (ब्राज़ील), जॉनेन्स बेचर (जर्मन जनतंत्र), जेम्स एन्डी कॉट (कनाडा) और इलिया इहरेनबुर्ग (सोवियत संघ)।

● शान्ति का क़ानून

महान् स्तालिन की प्रेरणा से, सोवियत संघ की सुप्रीम सोवियत ने १२ मार्च, १९५१ को शान्ति की रक्षा के लिये यह क़ानून जारी किया था :

"१. युद्ध के लिये प्रचार, वह चाहे किसी भी रूप में किया जाय, शान्ति के ध्येय को हानि पहुंचाता है और एक नये युद्ध का खतरा पैदा करता है और इसी कारण वह मानवता के प्रति एक भयंकरतम अपराध है।

"२. युद्ध के लिये प्रचार करने के दोषी लोगों पर जघन्यतम अपराधी की तरह मुक़दमा चलाया जायगा।"

यह है—शान्ति और निर्माण का स्तालिनीय पथ !

मानवता के भावी पथ की रूपरेखा

कम्युनिज़्म के प्रगति-पथ पर बढ़ती हुई समूची मानवता के सामने जो-जो मुख्य समस्यायें उठती जाती थीं, उन्हें महान् स्तालिन हल करते जाते थे। अद्वितीय सेनानी की भांति, वह हर मोर्चे पर सफलता प्राप्त करते जाते थे।

सन् १८९९ में लेनिन ने कहा था : " हम कभी भी मार्क्स के सिद्धान्त को अपने-आप में पूर्ण और अनुलंघनीय नहीं मानते। इसके विपरीत, हमारा विश्वास है कि इस सिद्धान्त ने उस विज्ञान की नींव डाल दी है जिसके आधार पर समाजवादियों को, यदि वह ज़िन्दगी से पिछड़ना नहीं चाहते तो, हर दिशा में अनवरत रचना करते जाना चाहिये। "

" हर दिशा में अनवरत रचना करना "—ठीक यही है जो महान् स्तालिन ने किया है और इसीलिये वह सदैव ज़िन्दगी की राह का निर्देशन ही करते रहे, कभी भी पिछड़े नहीं थे। ६५ वर्षों की आयु होने पर भी, उनका अदम्य उत्साह वैसा ही था। वह विश्व की हर महत्वपूर्ण समस्या पर सोचते थे।

४. भाषाशास्त्र का प्रश्न

भाषाशास्त्र राजनीति और अर्थनीति से अलग विषय समझा जाता है और उसकी तरफ़ स्तालिन का ध्यान जाना उतना स्वाभाविक न था। लेकिन क्रांति के बाद, इस क्षेत्र में इतनी धांधली चली कि प्रथम श्रेणी के भाषाविदों और भाषाशास्त्रियों को पैदा करने का श्रेय होने पर भी, रूस में इसके विषय में एक तरह का गतिरोध सा आगया था। न. ई. मार एक बहुत उच्च कोटि के भाषाशास्त्री थे, जो जन्मना गुर्जी थे। और योग्यताओं के रहते हुए भी, प्रतिभाशाली पुरुषों में पाई जानेवाली एक सनक उनके सिर पर भी सवार थी। वह चाहते थे कि भाषाशास्त्र के क्षेत्र में द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद का प्रयोग करके एक नई खोज और देन का श्रेय लें। भाषाशास्त्र के क्षेत्र में वह किस तरह द्वन्द्वात्मक भौतिक दर्शन का प्रयोग कर रहे हैं, इसे ऊपर के नेताओं ने नहीं देखा और टुटपुंजिये [भाषाशास्त्री—मार—की जयजयकार करके मनमानी करते रहे। इन पंक्तियों के लेखक का अपना अनुभव है कि डाक्टर श्चेर्वात्स्की पश्चिम में संस्कृत और भारतीय दर्शन के ' न भूतो न भविष्यति ' जैसे अद्वितीय विद्वान थे; लेकिन वह भी मार के विरुद्ध एक शब्द भी बोलने का साहस नहीं रखते थे। वस्तुतः वह अपने विषय में लीन रहनेवाले विद्वान थे। राजनीति में वह कोई दखल नहीं देना चाहते थे। मार की महिमा सुनकर, इन पंक्तियों के लेखक ने अपने सहयोगियों द्वारा प्रस्तुत साहित्य पढ़ने के बाद अपने विचारों को स्पष्ट प्रकट किया कि यह कोई विज्ञान नहीं, बल्कि रहस्यवाद है। इस पर मेरे सहयोगियों ने " चुप-चुप ! " कहा।

इसी से मालूम होगा कि भाषा-विज्ञान के क्षेत्र में कितनी लबड़धोंधों चल रही थी और लोगों को खुलकर बहस करने का भी साहस नहीं होता था।

देर से ही सही, किन्तु अन्त में, सन् १९५० में इस ओर स्तालिन का ध्यान खींचा गया। और, उन्होंने अपनी स्वाभाविक नम्रता प्रदर्शित करते हुये, इस विषय में जो बातें कहीं और मार के जाल से भाषा-विज्ञान को बाहर निकाला, वह इस क्षेत्र की एक बहुत महत्वपूर्ण घटना है। स्तालिन के इस विषय के कुछ विचारों को उन्हीं के शब्दों में पढ़िये :

"नौजवान साथियों के एक दल ने मेरे सामने यह प्रस्ताव रखा है कि भाषाशास्त्र से सम्बन्धित बातों—खास कर भाषाशास्त्र से सम्बन्धित मार्क्सवाद की समस्याओं—के बारे में मैं अपनी राय पत्रों में प्रकट करूं। मैं भाषाशास्त्री नहीं हूं, इसलिये मैं साथियों को पूर्ण रूप से संतुष्ट नहीं कर सकता। लेकिन, जहां तक भाषाशास्त्र के सम्बन्ध में मार्क्सवाद की बात है, उससे भी दूसरे समाज-विज्ञानों की तरह मेरा सीधा सम्बन्ध है। यही वजह है कि मैं साथियों के पूछे हुये कई प्रश्नों का जवाब देने के लिये राजी होगया हूँ।...

"समाज के विकास की निश्चित मंजिलों में, उसकी आर्थिक व्यवस्था उसकी नींव का काम देती है। उसका ऊपरी ढांचा समाज के क़ानून, राजनीति, धर्म, दर्शनसम्बन्धी विचारों और उनके अनुरूप राजनीतिक, क़ानूनी और दूसरी संस्थाओं का होता है। हर नींव का उसके अनुरूप ही अपना ऊपरी ढांचा होता है।...आधार को बदल या खतम कर दिया जाय तो उसके बाद, उसका ऊपरी ढांचा भी बदल या खतम हो जाता है। इस मामले में भाषा ऊपरी ढांचे से मौलिक रूप में भिन्नता रखती है; उदाहरणार्थ रूसी समाज और रूसी भाषा को ले लीजिये। पिछले तीस वर्षों के भीतर, पुरानी पूंजीवादी नींव मिटा दी गई और उसकी जगह एक नई समाजवादी नींव तैयार की गई है। इसी के अनुसार, पूंजीवादी आधार के ऊपरी ढांचे को मिटाकर समाजवादी आधार के अनुसार, एक नये ऊपरी ढांचे की सृष्टि की गई है। फलतः पुरानी राजनीतिक, क़ानून-सम्बन्धी तथा दूसरी संस्थाओं का स्थान नई समाजवादी संस्थाओं ने लिया है। लेकिन इसके होते हुये भी, रूसी भाषा मूलतःवैसी ही बनी रही जैसी कि वह अक्तूबर की उथल-पुथल के पहले थी।...इस काल में, रूसी भाषा में क्या परिवर्तन हुआ है? एक हद तक रूसी भाषा का शब्दकोष बदल गया है;...जहां तक रूसी भाषा के बुनियादी शब्दकोष और भाषा के आधारभूत व्याकरण के ढांचे का सम्बन्ध है, पूंजीवादी नींव के नष्ट हो जाने के बाद, उनकी जगह एक नये आधारभूत शब्दकोष और व्याकरण के नये ढांचे के आजाने की बात तो दूर रही, बिना किसी गम्भीर परिवर्तन के आधुनिक रूसी भाषा के आधार जों के त्यों बने रहे हैं।..."

उन्होंने आगे कहा : "...उसकी (भाषा की) उत्पत्ति समाज के सदियों के इतिहास के पूरे युग से पैदा होती है। उसकी सृष्टि किसी अकेले वर्ग द्वारा नहीं बल्कि पूरे समाज द्वारा, समाज के सारे वर्गों द्वारा, सैकड़ों पीढ़ियों की कोशिशों द्वारा होती है।...इस बात को देखते हुये, भाषा का काम जनता के बीच बातचीत और सम्बंध स्थापित करने के साधन के रूप में दूसरे वर्गों को नुकसान पहुंचाकर किसी एक वर्ग की सेवा करना नहीं, बल्कि उसे समान रूप से सारे समाज और उसके सारे वर्गों की सेवा करनी होती है।...(जीवन की) आवश्यकताओं को प्रत्यक्षतः प्रतिबिम्बित करनेवाली भाषा अपने शब्दकोष में नये शब्दों को जोड़ती तथा अपने व्याकरण के ढंग को सुधारती जाती है। इस तरह : (१) कोई भी मार्क्सवादी भाषा को नींव के ऊपर का ऊपरी ढांचा नहीं मान सकता, और (२) भाषा का ऊपरी ढांचे के साथ घपला करना एक भारी गलती है।

"...वह (कुछ साथी) कहते हैं कि समाज बंटा हुआ है, अब एक संयुक्त समाज नहीं, बल्कि सिर्फ वर्ग हैं। इसलिये समाज के लिये एक सम्मिलित भाषा, एक जातीय भाषा की जरूरत नहीं है। समाज बंटा होने से अब जनता की कोई जातीय भाषा नहीं रह गई है। तो फिर रह क्या जाता है? वर्ग और वर्ग-भाषायें ही रह जाती हैं। यह स्पष्ट है कि प्रत्येक वर्ग-भाषा का अपना वर्ग-व्याकरण होगा—अर्थात् एक सर्वहारा व्याकरण और दूसरा पूंजीवादी-व्याकरण। पर, दुनिया में ऐसे व्याकरणों का कहीं भी कोई अस्तित्व नहीं देखा गया। तो भी, इन साथियों को कोई परेशानी नहीं होती। वह विश्वास रखते हैं कि ऐसे व्याकरण पैदा होंगे। एक समय हमारे भीतर ऐसे मार्क्स-वादी भी थे, जो जोर देकर कहते थे कि अक्तूबर क्रांति के बाद जो रेलें रह गई थीं वह पूंजीवादी थीं जिनका इस्तेमाल करना हम मार्क्सवादियों के लिये अच्छा नहीं। उन्हें खतम करके, हमें नई सर्वहारा-रेलों का निर्माण करना चाहिये।...हमारे साथी यहां गलती करते हैं। वह संस्कृति और भाषा के भेदों को नहीं देखते और न इस बात को समझते हैं कि समाज के विकास के हर नये काल के साथ विषय-वस्तु की दृष्टि से संस्कृति बदलती है, लेकिन भाषा बहुत से कालों तक मौलिक आधार के रूप में वही बनी रहती है तथा नई और पुरानी दोनों संस्कृतियों की समान रूप से सेवा करती है। इस प्रकार : (१) बातचीत और सामाजिक सम्बन्ध के रूप में, भाषा सदा ही समाज के लिये एक जैसी और उसके व्यक्तियों की सम्मिलित भाषा रहती आई है और अब भी है। (२) बोलियां और लोकोक्तियां एक निश्चित प्रकार के सभी लोगों की सम्मिलित भाषा के अस्तित्व से इन्कार नहीं, बल्कि उसे स्वीकार करती हैं कि वे किस भाषा की शाखायें हैं और किसके आधीन हैं। (३) वर्ग-स्वभाव वाला भाषा का सूत्र गलत और अमार्क्सवादी है।......"

भाषा की कुछ विशेषताओं के बारे में बताते हुये, स्तालिन ने आगे कहा : "भाषा एक ऐसी सामाजिक वस्तु है, जो समाज के अस्तित्व के सम्पूर्ण काल में

बराबर (एकसा) काम करती रहती है। समाज के जन्म के साथ उसका जन्म और विकास के साथ उसका विकास होता रहता है। समाज की मौत के साथ, वह भी खतम हो जाती है। समाज के बाहर भाषा का कोई अस्तित्व नहीं है। यही कारण है, जो एक भाषा और उसके नियमों को केवल तभी समझा जा सकता है जब कि उसका अध्ययन समाज के इतिहास के साथ, उस जनता के इतिहास से उसके अटूट सम्बंध को देखते हुये ही किया जाय, जिस जनता की कि वह भाषा है और जो जनता उस भाषा की संस्थापक और उसे आगे लेजाने वाली है।..."

विरोधी-समागम द्वारा एक बिलकुल नई भाषा के पैदा होने के मार के मत का खंडन करते हुये, स्तालिन ने आगे कहा : "...कहा जाता है कि इतिहास में भाषाओं के जो पारस्परिक समागम हुये हैं, उनसे हमें यह मान लेना पड़ता है कि इस समागम की क्रिया में एक नई भाषा एकाएक फूट निकली और पुराने गुणों से एक नये गुण का अचानक आ जाना एक नई भाषा के जन्म का कारण बना। यह बात बिलकुल ग़लत है। भाषाओं के समागम को एक निर्णायक प्रभाव डालनेवाला ऐसा अकेला काम नहीं माना जा सकता जिसका फल चन्द ही वर्षों में देखा जा सके। भाषाओं का समागम एक लम्बी क्रिया है, जो सैकड़ों वर्षों तक चलती रहती है। इस प्रकार, यहां पर विस्फोटों की कोई बात नहीं की जा सकती। इसके अतिरिक्त, यह सोचना बिलकुल ही ग़लत होगा कि दो भाषाओं के समागम के फलस्वरूप एक नई, तीसरी भाषा पैदा हो जाती है—ऐसी भाषा जो समागम में आई दोनों भाषाओं के साथ कुछ भी मेल नहीं खाती, अर्थात् जो अपने गुण में उनमें से हर एक से भिन्न है। वस्तुतः समागम होने पर, हमेशा उन दोनों में से ही एक भाषा विजयी हो जाती है। वह अपने व्याकरण-सम्बन्धी ढांचे और आधारभूत शब्दकोष को बनाये रखती है, अपने विकास के आन्तरिक नियमों के अनुसार आगे बढ़ती जाती है, जबकि दूसरी भाषा धीरे-धीरे अपना गुण खोती हुई कालांतर में लुप्त हो जाती है। इसलिये समागम किसी प्रकार की एक नई तीसरी भाषा को पैदा नहीं करता, बल्कि दोनों भाषाओं में से एक को ही बनाये रखता है, उसके व्याकरण-सम्बंधी ढाँचे और शब्दकोष को क़ायम रखता है और उस भाषा को अपने विकास के आन्तरिक नियमों के अनुसार विकसित होने में समर्थ बनाता है। यह सच है कि इस प्रक्रिया के समय पराजित भाषा को नुक़सान पहुँच कर विजयी भाषा के शब्द-भंडार की कुछ पूर्ति होती है। लेकिन, ऐसा होने से भाषा कमज़ोर नहीं बल्कि उलटे मज़बूत होती है।"

भाषाशास्त्र के सम्बंध में विचारों को खुल कर प्रकट करने में जो रुकावटें मार के हौवे ने पैदा कर दी थीं उनको हटाते हुये, स्तालिन ने कहा : "इस बहस से जिस बात का खास तौर से पता चला है, वह है केन्द्र और प्रजातंत्रों दोनों में भाषाशास्त्र की कमिटियों में जिस तरह का शासन चल रहा था, वह विज्ञान और वैज्ञानिकों के

अनुकूल नहीं था। सोवियत भाषाशास्त्र की स्थिति के बारे में ज़रा सी भी आलोचना ...करने की हलकी से हलकी कोशिश को भी प्रमुख भाषाशास्त्री मंडलियां दमन करतीं, रोक देती थीं।...यह बात सभी मानते हैं कि विचारों के संघर्ष के बिना, स्वतंत्र आलोचना के अभाव में कोई भी विज्ञान न विकसित हो सकता, न फूल-फल सकता है। लेकिन, यहां इस सर्वमान्य नियम को सबसे ज़्यादा बेपर्वाही के साथ उपेक्षित करके पैरों तले कुचला गया।...मार ने वर्ग-भाषा के बारे में एक और मिथ्या तथा अमार्क्सवादी विचार का सूत्रपात किया, जिसके द्वारा उसने अपने को भी गड़बड़ घोटाले में डाला और भाषाशास्त्र को भी। सोवियत भाषाओं को ऐसे मिथ्या सूत्र के आधार पर विकसित नहीं किया जा सकता, जो जनता और भाषाओं के इतिहास के पूरे युग के विरुद्ध है। न. ई. मार ने तुलनात्मक ऐतिहासिक शैली को आदर्शवादी बताकर, लम्बे-चौड़े शब्दाडम्बर के साथ दूषित ठहराया। किन्तु, यह कहना पड़ेगा कि तुलनात्मक ऐतिहासिक शैली अपनी कितनी ही गम्भीर कमज़ोरियों के होते हुये भी...मार के...तत्व-विश्लेषण से कहीं बेहतर है।..."

भाषा और भाषाशास्त्र के सम्बंध में जिस तरह महान् स्तालिन ने पथ-प्रदर्शन किया है, उससे यह भी मालूम हो जाता है कि हर विषय में उनका कितना वैज्ञानिक दृष्टिकोण रहता था। वह किसी भी बात में 'बाबा-वाक्यं प्रमाणं' के मानने के विरोधी थे और चाहते थे कि लोग 'वादे वादे जायते तत्वबोधः' की सूक्ति पर ही अमल करें।

५. *"सोवियत संघ में समाजवाद की आर्थिक समस्यायें"*

इस महान् पुस्तक का प्रकाशन सितम्बर सन् १९५२ में, सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी की ऐतिहासिक १९ वीं कांग्रेस के एक माह पहले हुआ था। अर्थ-शास्त्र पर एक पाठ्य पुस्तक के मसौदे और उसके बारे में होनेवाली बहस के सिलसिले में, एक आलोचनात्मक टिप्पणी के रूप में स्तालिन ने इसकी रचना की थी।

सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी और सारी दुनिया की प्रगतिशील मानवता के सैद्धान्तिक विकास में इसका प्रकाशन एक महानतम महत्व की घटना है। यह सारी दुनिया की मेहनतकश जनता को समाज के विकास के नियमों के ज्ञान से लैस करती है; कम्युनिज़्म के निर्माण के पथ को प्रकाशित करती है। यह मार्क्सवाद के खज़ाने को एक महान् देन है।

इस पुस्तक के प्रत्येक शब्द के पीछे पूंजीवादी शोषण के खिलाफ़ रूस के प्रारम्भिक मज़दूर आंदोलन से लेकर सोवियतों के रूप में मज़दूर-किसान-सैनिकों की पंचायतें बनाने तक, गृह-युद्ध की काली घटाओं से लेकर फ़ासिस्टी दरिंदों की पराजय तक और गृह-युद्ध के काल के अकाल से भूखों मरती हुई जनता के लिये अनाज

हासिल करने से लेकर पांच पंचवार्षिक योजनाओं के जरिये देश में समाजवाद के निर्माण करने तक का अतुलनीय अनुभव है। इस पुस्तक के प्रत्येक शब्द के पीछे संसार की समूची मेहनतकश जनता के आन्दोलन के नेतृत्व करने का अनुभव है। इस अनुभव को इस पुस्तक से जुदा नहीं किया जा सकता; उसी प्रकार जैसे इस पुस्तक को इस महान् अनुभव से अलग करके नहीं देखा जा सकता। सोवियत संघ में समाजवाद के निर्माण के काम से यह अविभाज्य रूप में जुड़ी हुई है। यह बहुत महत्व की बात है। इसीलिये, स्तालिन की यह पुस्तक रचनात्मक मार्क्सवाद की श्रेष्ठतम मिसाल है।

● प्राकृतिक और आर्थिक नियमों का फ़र्क

सोवियत संघ के विद्यार्थियों के लिये अर्थशास्त्र पर जो पुस्तक तैयार की जा रही थी, उसके मसौदे और उस मसौदे पर होनेवाली बहस के दौरान में लोगों ने कुछ ऐसी दलीलें दीं जैसे कि सोवियत संघ में आर्थिक नियमों को तबियत के मुताबिक बदला जा सकता है, ठीक उसी तरह जैसे एक सरकार अपने बनाये हुये क़ानूनों को जब चाहे रद्द करके नये क़ानून बना सकती है। ज़ाहिर है कि इस समझ का नतीजा यही निकल सकता था कि सोवियत संघ में आर्थिक नियमों की कोई ख़ास अहमियत नहीं है और उनका गहराई से अध्ययन करना भी जरूरी नहीं है। यह भी स्पष्ट है कि ऐसी समझ के लोग आर्थिक योजनायें बनाने के समय भी मनमाने ढंग से, अपनी कल्पना के आधार पर, योजनायें बनायेंगे और गलतियां करेंगे, जिनसे गड़बड़ी पैदा होगी। इसीलिये, स्तालिन ने आर्थिक नियमों की समझदारी ठीक कर देना जरूरी समझा।

स्तालिन ने दिखाया है कि जैसे कुदरत के नियम होते हैं, वैसे ही समाज के भी नियम हुआ करते हैं; जैसे कि प्रकृति में हर काम उसके निश्चित नियमों के मुताबिक ही हुआ करता है (हम उन नियमों को समझते हैं या नहीं, यह दूसरी बात है), उसी तरह समाज में भी हर घटना सामाजिक नियमों के अनुसार ही हुआ करती है। जिस तरह प्रकृति में हर मौसिम के आने का समय, सूरज के निकलने-डूबने आदि का समय निश्चित होता है, इसी तरह समाज में भी सब कुछ निश्चित नियमों के अनुसार ही हुआ करता है। न तो समाज में और न प्रकृति में ही, घटनायें या परिवर्तन एक मनमाने ढंग से, संयोगवश हुआ करते हैं।

हम सभी समझते हैं कि मनुष्य कुदरत के नियमों को गढ़ नहीं सकता, रच नहीं सकता। यह नियम मनुष्य की चाह से, हमारी अपनी आंतरिक इच्छा से बनते-बिगड़ते नहीं हैं। उनकी मौजूदगी हमारे मन के अलावा है; उनका अस्तित्व हमारे मन से स्वतंत्र है। इसी तरह हमारी अपनी चाह और अपनी इच्छा से अलग, सामाजिक नियम भी स्वतंत्र रूप में काम करते हैं। हम उन्हें गढ़ नहीं सकते।

दोनों ही वस्तुगत होते हैं। हाँ, हम उन्हें जान सकते हैं, उनकी खोज कर सकते हैं वह किस प्रकार काम करते हैं, यह समझ सकते हैं।

प्रकृति के तमाम नियमों की खोज करके, उनको समझ कर, हमने तमाम विज्ञानों का विकास किया है—जैसे जीव विज्ञान, रसायनिक विज्ञान, भूगर्भ विज्ञान, भौतिक विज्ञान आदि। और इन विज्ञानों के सहारे, हम बिलकुल नपे-तुले तौर पर परिवर्तनों, घटनाओं के घटने के समय तथा किन-किन चीजों के योग से क्या नई चीज बनेगी या क्या होगा बता सकते हैं। अभी चन्द्र-ग्रहण पड़ा था, तो उसके महीनों पहले अखबारों में आगया था कि ग्रहण कितने बज कर कितने मिनट पर कहां दिखाई देगा। दिन के मौसिम की भविष्यवाणी हम रोज ही अखबारों में पढ़ते हैं। इसी प्रकार, हम समाज के आर्थिक नियमों को भी जान सकते हैं, खोज सकते हैं और उनके एक-दूसरे से सम्बंध को समझकर समाज के आर्थिक विज्ञान की रचना कर सकते हैं। ठीक भौतिक, रसायनिक या जीव विज्ञान की तरह ही, समाज के अर्थ-विज्ञान के द्वारा भी हम आर्थिक घटनाओं और व्यवस्थाओं के नियमों की ठीक-ठीक जानकारी के आधार पर, उनका विश्लेषण कर सकते हैं और उनके बारे में भविष्यवाणी भी कर सकते हैं, जैसे हम मौसिमों और चन्द्र-ग्रहणों आदि के बारे में किया करते हैं।

प्राकृतिक नियमों को अपने हित में उपयोग करने के हम आदी हैं, अभ्यस्त हैं। खेती के बोने, काटने और निराई करने के समय हमने मौसिमों के आने-जाने के नियम के अनुसार ही तय किये हैं। इसी प्रकार, अपने रोज़ाना के जीवन में हम अपने हित में प्रकृति के नियमों का उपयोग करते हैं। हम उन नियमों को बदलते नहीं हैं, बदल नहीं सकते। उनकी जानकारी हासिल करके, उनका उपयोग करते हैं। ठीक इसी तरह आर्थिक नियमों की जानकारी हासिल करके भी, हम उन्हें अपने हित के लिये उपयोग में ला सकते हैं, बदल नहीं सकते, रद्द नहीं कर सकते।

कुछ लोग यह तर्क दे सकते हैं कि 'हम नियमों को बदल नहीं सकते'—यह जानकारी मनुष्य को भाग्यवादी बना देगी, वह अपने-आपको नियमों का दास समझने लगेंगे। लोग इसके लिये हिन्दुस्तान के गरीब किसानों की भाग्यवादिता का उदाहरण भी पेश कर सकते हैं। पर, महान् स्तालिन हमें सिखाते हैं कि असलियत ऐसी नहीं है। अपने यहां के किसानों की भाग्यवादिता के उदाहरण को ही अगर हम गौर से जांचें तो दृष्टिकोण साफ़ हो जायेगा। हिन्दुस्तानी किसान में जो भाग्यवादिता आई है, वह इसलिये नहीं कि वह प्रकृति के नियमों को समझता है, बल्कि इसलिये कि वह उन्हें समझते हुये भी उन नियमों का पूरा उपयोग नहीं कर पाता। समाज की जोंकें, सामंती शक्तियाँ उसे जकड़े हुये हैं और उसे उन नियमों का पूरा उपयोग नहीं करने देतीं। वह जानता है कि खाद देने से धरती की उपजाऊ शक्ति बढ़ सकती है, वह जानता है सिंचाई से अच्छी फ़सल तैयार की जा सकती

है; लेकिन उसके पास यह छोटे से प्रारम्भिक साधन जुटाने के लिये भी पैसे नहीं हैं। दूसरी ओर, उसी के भाई किसानों ने चीन में—जहाँ सामंती जोंकों का क्रिया-कर्म कर दिया है, वे भाग्यवादिता को पास फटकने भी नहीं देते; उनका भविष्य उज्ज्वल से उज्ज्वलतर होता जारहा है। यह सब इसीलिये कि वह प्रकृति के नियमों का अधिक उपयोग करने में समर्थ हैं। सोवियत संघ के किसानों के लिये हम जिस बृहत वनीय क्षेत्रों की योजना का जिक्र कर चुके हैं, वह भी प्रकृति के नियमों का उपयोग ही करना है, उन्हें रद्द करना नहीं। इसी प्रकार, हम समाज के आर्थिक नियमों का भी समाज के हित में उपयोग कर सकते हैं। संसार के मेहनतकश वर्ग ने, मार्क्स-ऐंगिल्स-लेनिन और स्तालिन के द्वारा, पूंजीवादी समाज के आर्थिक नियमों को जानकर ही संसार के एक-तिहाई भाग से पूंजीवादी शोषण की प्रणाली को खतम किया है। इन सिद्धान्तों की समझ ने किसी भी प्रकार से उनमें अपने को पूंजीवादी नियमों का गुलाम समझने की भावना पैदा नहीं की। इसीलिये, स्तालिन हमें सिखाते हैं कि समाज के नियमों की समझ हमें यह अवसर देती है कि हम समाज की हालतों को बदल सकें और नियमों का समाज के हित में प्रयोग कर सकें।

यह कोई बिलकुल नई चीज़ नहीं है। इतिहास के आरम्भ से ही, हम समाज के नियमों को जानने की कोशिश करते रहे हैं और उनका समाज के हित में उपयोग करने की चेष्टा करते रहे हैं। इसमें जो नया तत्व है वह यही कि अब तक के इतिहास में वर्ग रहे हैं और इसीलिये इन नियमों का उपयोग समाज का शोषक वर्ग अपने हित के लिये करता रहा है, परन्तु समाजवादी या जनवादी राज्य बनाने के बाद इन नियमों का उपयोग समाज की समूची जनता के लिये किया जाता है। और, इन नियमों का समाज के हित में उपयोग करने के लिये उन नियमों का समझना सबसे पहली शर्त है।

इस प्रकार, समाज के नियम प्राकृतिक नियमों की तरह ही वस्तुगत होते हैं, जो हमारी चाह या इच्छा से स्वतंत्र होते हैं; उनको समझा जा सकता है, खोजा जा सकता है और उनके आधार पर समाज का एक विज्ञान, रसायन विज्ञान या जीव विज्ञान की तरह ही, बनाया जा सकता है। उनको समझकर, उनका उपयोग समाज के हित में किया जा सकता है।

परन्तु, स्तालिन हमें सिखाते हैं कि समाज के नियम बिलकुल प्राकृतिक नियमों की तरह ही नहीं होते। इन समानताओं के साथ-साथ, उनमें भेद भी हैं।

पहला भेद यह है कि प्राकृतिक नियम स्थाई होते हैं। सामाजिक नियम बदलते रहते हैं। सामाजिक नियम एक ऐतिहासिक युग के लिये ही होते हैं और दूसरे ऐतिहासिक युग के आने के साथ-साथ, दूसरे सामाजिक नियम लागू हो जाते हैं। दास-प्रथा

की सामाजिक व्यवस्था के नियम सामंती, पूंजीवादी या समाजवादी व्यवस्था में लागू नहीं हो सकते।

सिर्फ़ कुछ ही सामाजिक नियम हैं जो सभी समाज-व्यवस्थाओं में समान रूप से लागू हो सकते हैं—जैसे यह सिद्धान्त कि पैदावार के सम्बंधों को उत्पादक-शक्तियों के लक्षणों से (तरीक़े से) मेल खाना ही चाहिये।

दूसरा भेद यह है कि प्राकृतिक नियमों को खोजने और उनको लागू करने का काम बहुत कुछ सीधे-सीधे हो जाता है। परन्तु, सामाजिक नियमों को खोजकर उनको लागू करने का काम सीधे-सीधे नहीं होता; क्योंकि समाज में जो शक्तियां सत्तारूढ़ होती हैं, जिनके हाथों में शक्ति होती है, वह नये नियमों के लागू करने का विरोध करती हैं क्योंकि उनसे उनके हितों को धक्का लगता है। इसलिये, समाज के नये नियमों को लागू करने में पूरी एक सशक्त, सत्तारूढ़ शक्ति का विरोध सामने आता है। उसको पराजित करके ही, नये नियमों को लागू किया जा सकता है। इसीलिये, उनको लागू करने के लिये एक सशक्त-संगठित ताक़त की, संगठन की ज़रूरत पड़ती है। इसीलिये, हमें जनवादी हिन्दुस्तान के नये सामाजिक नियम लागू होने की परिस्थिति पैदा करने के लिये मेहनतकशों, किसानों और सारी जनता के संगठनों तथा एक कम्युनिस्ट पार्टी की ज़रूरत पड़ती है।

सामाजिक नियम बदले नहीं जाते, रद्द नहीं किये जाते। नये ऐतिहासिक युग की परिस्थितियों में, पुराने सामाजिक नियम लागू नहीं होते और वह अपनी शक्ति तथा सार्थकता खो बैठते हैं। नये ऐतिहासिक युग में, नये नियम उनकी जगह ले लेते हैं। वह लागू होते हैं, उनकी अपनी शक्ति तथा सार्थकता होती है। पुराने नियम निरर्थक हो जाते हैं।

इस प्रकार महान् स्तालिन ने सामाजिक नियमों के सही लक्षणों को समझाकर, हमें सही मायनों में सामाजिक विज्ञान बनाकर उसके स्वरूप और कार्यक्षेत्र को समझकर अपनी नीति को बिलकुल वैज्ञानिक आधार पर रखने की राह बताई है। इस महान् पुस्तक की रोशनी में, वैज्ञानिक भौतिकवाद की सही समझ के द्वारा अपनी नीति निर्धारित करने में हमें बड़ी मदद मिलेगी। इसीलिये, मालेन्कोफ़ ने कहा है :

> "का. स्तालिन की सैद्धान्तिक रचनाओं का बहुत बड़ा महत्व यह है कि वह हमें सतह पर ही रह जाने के ख़िलाफ़ आगाह करती हैं और घटना के मर्म तक गहरे जाकर, समाज के विकास की प्रक्रिया के सार तक पहुंचकर, विकास के गर्भ में ही उस घटना को समझ लेना सिखाती हैं, जो कि आगे आने वाली सभी घटनाओं का स्वरूप निश्चित करेगी। और इस प्रकार, उनकी सीखें मार्क्सवादी पूर्वाभास को सम्भव बना देती हैं।"

● समाजवाद में बिकाऊ माल की पैदावार और मूल्य का नियम

इस प्रकार सामाजिक आर्थिक विज्ञान का आधार बनाकर, महान् स्तालिन ने बताया कि मार्क्स ने जिस आर्थिक विज्ञान के मूल नियम का पता लगाया था वह समाजवादी समाज पर भी उतना ही लागू होता है, जितना कि किसी दूसरी सामाजिक व्यवस्था पर। सोवियत संघ में भी उत्पादन के सम्बंधों को उत्पादक-शक्तियों के लक्षणों के अनुकूल ही होना चाहिये। यह नियम कैसे लागू होता है?

गल्ले के रूप में टैक्स और सहकारी योजना नामक अपनी रचनाओं में लेनिन ने बताया था कि सोवियत राज्य में गांवों में छोटे-छोटे उत्पादक थे, जिनको अक्तूबर क्रांति के समय तक पूंजीवादी प्रतियोगिता नेस्तनाबूद नहीं कर पाई थी। गांवों के छोटे-छोटे उत्पादक बिकाऊ माल की पैदावार करते थे। वह अपने पैदा किये हुये माल को शहरों में बेचते थे और उन्हें शहरों के साथ अपना केवल वही सम्बंध मंजूर था। इसलिये, दो ही रास्ते थे—या तो उन्हें समाजवादी राज्य का दुश्मन बनाकर क्रांति की सफलता पर पानी फेर दिया जाता, या फिर एक निश्चित अवधि के लिये बिकाऊ माल के उत्पादन को क़ायम रहने दिया जाता और क्रमशः परिस्थितियाँ बदल कर उन्हें अपनी इच्छा से ही नये सम्बंधों को अपनाने दिया जाता। लेनिन ने बताया था कि दूसरा रास्ता ही सही होगा और परिस्थितियों में क्रमशः परिवर्तन लाने के लिये उन छोटे-छोटे उत्पादकों को सहकारी उत्पादक-संस्थाओं में संगठित किया जाय। यही सही साबित हुआ। सोवियत संघ में बिकाऊ माल की पैदावार को सुरक्षित रहने दिया गया था।

इस प्रकार, आज भी सोवियत संघ में समाजवादी उत्पादन के दो क्षेत्र बने हैं—राज्य या सामाजिक सम्पत्ति का उत्पादन क्षेत्र और सहकारी खेती के उत्पादन का क्षेत्र। इन दो क्षेत्रों के होने से व्यक्तिगत जरूरत की चीजों को बिकाऊ माल के रूप में पैदा करना आवश्यक होजाता है।

इस सामाजिक परिस्थिति में, स्तालिन हमें सिखाते हैं कि उन सभी आर्थिक नियमों का चलन भी रहेगा जो इनके अनुकूल हैं। उन नियमों को मंसूख़ नहीं किया जा सकता। परिस्थितियों में परिवर्तन लाकर ही, नये आर्थिक नियमों को जन्म दिया जा सकता है। पूँजीवादी सामाजिक व्यवस्था से पहले, दास प्रथा में भी बिकाऊ माल की पैदावार का प्रचलन था। तभी इस पैदावार के तरीक़े के साथ ही, मूल्य का नियम भी जन्मा था। माल का बेचा जाना तब तक सम्भव नहीं हो सकता था जब तक कि माल का मूल्य निश्चित न होता। बाज़ार के लिये माल के उत्पादन के साथ ही, समाज में मूल्य के निर्द्धारण की आवश्यकता पूरे तौर पर उभर कर सामने आगई। मूल्य का नियम बना कि हर चीज़ का मूल्य उसके बनाने में ख़र्च हुये समय के हिसाब से तय किया जायगा। इस समय का लेखा-जोखा करने के लिये वही समय का माप माना जायगा

जो उस समाज में आम तौर से उस चीज़ के बनाने पर ख़र्च करना ज़रूरी होगा। यही मूल्य का नियम है और बिकाऊ माल की पैदावार के साथ-साथ, स्वाभाविक रूप से चालू रहता है। सोवियत संघ में बिकाऊ माल की पैदावार को एक निश्चित अवधि तक के लिये सुरक्षित करने के कारण, यह मूल्य का नियम भी चालू है।

बिकाऊ माल की पैदावार के साथ जन्मने वाला, यह मूल्य का सिद्धान्त पूंजीवादी समाज व्यवस्था में ही अपने चरम विकास पर पहुँचा और यही पूंजीवादी उत्पादन का नियंत्रण करने लगा। व्यक्तिगत पूंजीपतियों में यह होड़, यह प्रतियोगिता चल पड़ी कि हर तरह से बिकाऊ माल को कम से कम लागत मूल्य में तैयार करें और बाज़ार पर आधिपत्य क़ायम करके, दूसरे पूंजीपतियों से ज़्यादा मुनाफ़ा कमा लें। यह लागत मूल्य कैसे कम किया जा सकता है? लागत मूल्य का अर्थ, जैसा कि हम देख चुके हैं, किसी भी माल के तैयार करने में लगने वाला सामाजिक रूप से आवश्यक श्रम-समय ही है। इसे कैसे कम किया जा सकता है? नई से नई और अधिक विकसित मशीनें लगाकर—जिनसे कि कम समय में अधिक माल पैदा हो सके, मज़दूरों की श्रम-शक्ति को कम से कम दामों पर ख़रीद कर—जिससे कि अतिरिक्त मूल्य की मात्रा बढ़ जाय। सारे पूंजीपतियों में इसी के लिये होड़ लग गई और जिस भी माल के उत्पादन में कम से कम लागत मूल्य लगाकर, अतिरिक्त मूल्य की मात्रा अधिक से अधिक बढ़ाकर सबसे ज़्यादा मुनाफ़ा कमाने की गुंजाइश दिखती थी, सारे पूंजीपति उसी के उत्पादन में अपनी पूंजी लगाने लगते। एक ओर तो उत्पादन खपत की सम्भावना से कहीं अधिक तैयार हो जाता और दूसरी ओर कम से कम दामों में श्रम-शक्ति ख़रीदने की होड़ के कारण, कम से कम तनख़ा देकर मज़दूरों की ख़रीदने की शक्ति कम से कम कर दी जाती। उत्पादित माल और जनता की क्रय-शक्ति में इस चौड़ी खाई के बन जाने का नतीजा होता—मंदी, आर्थिक संकट, गला-काटू प्रतियोगिता और युद्ध। चूंकि पूँजीवादी व्यवस्था में यह चीजें आज भी होरही हैं, दो युद्धों की विभीषिका हमारे दिमाग़ों में इतनी ताज़ी है और हम जानते हैं कि इन सबकी जड़ में पूंजीवादी उत्पादन का नियंत्रण करने वाला, बिकाऊ माल के साथ पैदा हुआ, मूल्य का नियम ही है। इसलिये, हम यह सोच कर शंकित हो उठते हैं कि सोवियत संघ में इन दोनों के मौजूद रहने से क्या पूँजीवाद का पुनर्जन्म न हो जायेगा।

महान् स्तालिन ने अपनी पुस्तिका में इसका जवाब देते हुये, हमें फिर सीख दी है कि किसी भी आर्थिक नियम के काम करने के तरीक़े को उसकी वस्तुगत परिस्थितियों से अलग करके नहीं देखना चाहिये, वरना हम हमेशा ही ग़लतियाँ करेंगे। बिकाऊ माल की पैदावार और मूल्य का नियम दासप्रथा, सामंती, पूँजीवादी और समाजवादी—चारों सामाजिक व्यवस्थाओं में पाया जाता है। परन्तु, हर व्यवस्था में उसका अमल भिन्न-भिन्न है; क्योंकि हर व्यवस्था की अपनी वस्तुगत परिस्थितियाँ—उत्पादन के लक्षण (तरीक़े)—भिन्न-भिन्न हैं।

उन्होंने समाजवादी समाज की व्यवस्था का गहरा विश्लेषण करके, बताया है कि सोवियत संघ में मूल्य के नियम के जारी रहने से पूँजीवाद नहीं पैदा हो सकता। क्यों? इसलिये कि सोवियत संघ की व्यवस्था में उत्पादन के साधनों पर एक व्यक्ति का नहीं, समाज का अधिकार है। किस चीज़ का उत्पादन कितना हो, इसका निर्द्धारण मुनाफ़े की गुंजाइश—मूल्य का नियम—नहीं, बल्कि जनता की ज़रूरत करती है। सोवियत संघ में समाजवादी उत्पादन के दो क्षेत्र हैं। मूल्य का नियम केवल गाँवों में सहकारी खेती और शहरों में रोज़ाना की ज़रूरत की चीज़ों के उत्पादन के क्षेत्र और निर्यात के माल पर ही लागू होता है; क्योंकि सिर्फ़ यहीं बिकाऊ माल की पैदावार होती है। इस क्षेत्र में भी मूल्य का सिद्धान्त एक सीमित रूप में ही लागू है क्योंकि वह उत्पादन का नियंत्रण नहीं करता, सिर्फ़ सामूहिक खेती की पैदावार और रोज़ाना की ज़रूरत की चीज़ों की ख़रीद-बेच पर लागू होता है। उसके द्वारा इनकी क़ीमत तय की जाती है। इस तरह बिकाऊ माल के सीमित क्षेत्र के साथ ही साथ, मूल्य के नियम का काम भी सोवियत संघ में सीमित है। वह उत्पादन का नियंत्रण नहीं करता। पैदावार के साधन—मशीनें, ज़मीन और श्रम-शक्ति आदि—सोवियत संघ में एक बिकाऊ माल नहीं हैं। साथ ही मज़दूरों की तनखा श्रमशक्ति की क़ीमत के आधार पर नहीं, बल्कि मज़दूरों की आवश्यकताओं के अनुसार—कि वह कितना हिस्सा सीधे-सीधे तनख़ा के रूप में चाहते हैं, कितना उत्पादन के साधनों को और बढ़ाने पर ख़र्च करना चाहते हैं और कितना अपनी राज्य-व्यवस्था आदि की मद में लगाना चाहते हैं—उनकी योजना के अनुसार ही तय होती है। इसलिये, सोवियत संघ में पूँजीवाद का पुनर्जन्म नहीं हो सकता। वहाँ आर्थिक संकट, बेकारी और युद्ध की चाह नहीं भड़क सकती।

सोवियत संघ में मूल्य के नियम का क्षेत्र दिन-दिन सीमित ही नहीं हुआ है, नई परिस्थितियों के पैदा होने से समाजवादी समाज के संतुलित उत्पादन के विकास का नया आर्थिक नियम भी पैदा हुआ है, जो उत्तरोत्तर व्यापक होता जा रहा है।

महान् स्तालिन हमें सिखाते हैं कि दूसरे आर्थिक नियमों की तरह, मूल्य का नियम भी अस्थायी है। कम्युनिस्ट समाज में बिकाऊ माल की पैदावार ख़तम होने के साथ-साथ, यह नियम भी नहीं रहेगा। और वह परिस्थिति जल्दी से जल्दी पैदा हो सके, इसके लिये ज़रूरी है कि मूल्य के नियम को अमली तौर पर पूरी गहराई के साथ समझा जाय, जिससे योजनाओं में कोई भी ग़लती न आ सके और जल्दी से जल्दी उनको सम्पन्न किया जा सके।

इस पूरी विवेचना के साथ, उन्होंने बताया है कि सोवियत के समाजवादी समाज में बिकाऊ माल की पैदावार और मूल्य के सिद्धान्त का मौजूद होना बताता है कि उत्पादन की शक्तियों के लक्षण और उत्पादन-सम्बंधों में असंगति है। दोनों में

विरोध है, परन्तु दोनों में टकराव नहीं है। दोनों ही समाजवादी व्यवस्था के समाजवादी उत्पादन के आधीन हैं; इसलिये दूसरे वर्ग-समाजों की भांति, सोवियत संघ में नये आर्थिक नियमों को सत्तारूढ़ वर्ग की शक्ति का प्रतिरोध नहीं करना पड़ता; क्योंकि वहां दो विरोधी हितों वाले वर्ग नहीं हैं। वहां सोच-समझकर दोनों के बीच की खाई को पूरने के लिये सारे समाज द्वारा सचेतन प्रयास किया जाता है। पूर्व नियोजित पंच वार्षिक योजनाओं द्वारा इस काम को सम्पन्न किया जाता है। वहां नये आर्थिक नियम प्राकृतिक नियमों की सरलता से ही लागू होजाते हैं। उत्पादन बढ़ने की एक निश्चित अवस्था तक पहुँचने पर, यह खाई पूर दी जायगी और फिर कम्युनिस्ट समाज में दोनों में कोई भी असंगति नहीं रहेगी।

महान् स्तालिन की यह विवेचना बताती है कि हमें अपने देश के आर्थिक ढांचे और आर्थिक नियमों के स्वरूप को किस प्रकार समझने की कोशिश करनी चाहिये कि हमारे देश में क्यों इतनी तबाही मची हुई है। अपने देश ही क्यों, वह हर समाज व्यवस्था के अध्ययन करने का तरीक़ा बताती है।

● आधुनिक पूंजीवादी व्यवस्था के आंतरिक टकराव

मौजूदा समाजवादी समाज की आर्थिक विवेचना के बाद, उन्होंने आधुनिक पूंजीवादी व्यवस्था के आंतरिक टकरावों की विवेचना की है; क्योंकि दो-तिहाई संसार जिसके जुये के नीचे कराह रहा है उसकी साफ़ और सही समझ के बिना कोई सही नीति निर्द्धारित नहीं की जा सकती।

उन्होंने द्वितीय महायुद्ध के बाद के पूंजीवादी संसार की मुख्य प्रवृत्तियों का विवेचन करके, बताया कि उसकी सबसे महत्वपूर्ण बात यह हुई है कि पूरा संसार पहले की तरह एक मिला-जुला बाज़ार नहीं रह गया है। वह दो भागों में बंट गया है। एक ओर तो पूंजीवादी देशों का बाज़ार है और दूसरी ओर जनवादी देशों का। इसने पूंजीवादी व्यवस्था के आम संकट को और भी गहरा बना दिया है। संसार के इस एक मिले-जुले बाज़ार का छिन्न-भिन्न होना असल में उसके गहरे आम संकट का ही फल है। किस प्रकार ?

उन्होंने बताया है कि इस आम संकट को हमें शुरू से, उसके ऐतिहासिक रूप में ही देखना चाहिये। उसके पूरे विकास को समझे बिना, हम न तो उसकी गहराई का पूरा अंदाज़ा लगा सकेंगे और न उससे सही नतीजे ही निकाल सकेंगे।

इस शताब्दी से पहले भी पूंजीवादी व्यवस्था में आर्थिक संकट, मंदी आदि के चक्र चलते रहते थे, पर वह आम संकट का रूप धारण नहीं कर पाते थे। वह नियमित रूप से आते रहते थे। यह सही है कि वह सभी आंशिक रूप में इसी विश्वव्यापी आम

संकट का रास्ता साफ़ कर रहे थे, पर पूंजीवाद उन पर क़ाबू पा लेता था। वह नये उपनिवेशों के नये बाज़ारों को खोज कर, उनका समाधान कर लेता था। परन्तु इस सदी की पहली दशाब्दी तक, सारे संसार के बाज़ार इन साम्राज्यवादी शक्तियों ने आपस में बाँट लिये थे। नये बाज़ार नहीं रह गये थे। जर्मनी जैसे नये पूँजीवादी देश के विकास के लिये, नये बाज़ारों की ज़रूरत थी। पूँजीवादी व्यवस्था के आंतरिक विरोधाभासों के कारण, निरन्तर आने वाले आर्थिक संकटों के लिये भी निरन्तर नये बाज़ारों की ज़रूरत बनी ही रहती थी। पर, नये बाज़ार थे ही नहीं। और, नये बाज़ार नहीं तो पूँजीवादी देशों में मंदी, बेकारी और आर्थिक संकटों का दौर शुरू हो जायेगा। नये बाज़ारों का सवाल पूँजीवादी देशों की व्यवस्था की मौत और ज़िन्दगी का सवाल था। इसीलिये, मौजूदा बाज़ारों के ही पुनर्विभाजन के लिये युद्ध छेड़ना ज़रूरी हो गया और सन् १९१४ में शुरू होने वाला विश्व युद्ध इस पूँजीवादी आम संकट का प्रारम्भ था।

चले थे छब्बे बनने और दुबे ही रह गये—वाली मसल चरितार्थ हुई। पूँजीवादी व्यवस्था के चौधरियों ने मिलकर नये पूँजीवादी प्रतियोगी देश जर्मनी को दबा लिया, परन्तु दुनिया का एक-छठा भाग पूँजीवादी व्यवस्था के घेरे से बाहर निकल गया। रूस में अक्तूबर की महान् क्रान्ति हुई और लेनिन तथा स्तालिन के नेतृत्व में मज़दूरों, किसानों और सैनिकों की सोवियतों के समाजवादी राज्य की नींव पड़ गई। दूसरे शब्दों में, पूँजीवादी बाज़ार के बन्धन से दुनिया का एक-छठा भाग मुक्त हो गया। वह चले थे बाज़ारों का पुनर्विभाजन करने और वहां उनका बाज़ार बढ़ना तो दूर और भी सिकुड़ गया। इसने उनके आम संकट को और भी उभार दिया। यह आम संकट की पहली मंज़िल थी।

अपने एक सबसे बड़े प्रतिद्वन्दी को हराकर, पूँजीवादी गुट ने जो नया बंटवारा किया उससे कुछ दिनों बड़ी तेज़ी के साथ, ज़ोर-शोर से चारों ओर फैलना शुरू किया। सन् १९१६ में, लेनिन ने कहा था कि पूंजीवाद बड़ी तेज रफ़्तार से बढ़ रहा है। सन् १९२७ में, स्तालिन ने भी बताया था कि पूँजीवाद में 'क्षणिक स्थायीत्व' का दौर है। लेकिन, मूल समस्या तो बाज़ारों की थी और उसमें कुल मिलाकर एक-छठे भाग की कमी और भी जुड़ गई थी। इस बार आम आर्थिक संकट ने और गहरा रूप प्रकट किया। सन् १९३० में, स्तालिन ने इस आम संकट की विशेषतायें बताते हुये, कहा था कि संसार में पूंजीवादी व्यवस्था ही एकमात्र आर्थिक व्यवस्था नहीं रह गई है, अक्तूबर क्रांति की जीत ने उसकी जड़ें हिलादी हैं, पिछड़े हुये देशों में भी नई पूंजीवादी शक्तियां तेज़ी से प्रतिद्वन्दिता के मैदान में उतर रही हैं और प्रमुख पूंजीवादी देशों में स्थायी रूप से बेरोज़गारी बढ़ती जारही है। प्रमुख पूंजीवादी शक्तियों ने सोवियत संघ को गुलाम बनाकर फिर इस संकट को टालना चाहा और उसे नेस्तनाबूद करने के लिये साज़िशें करने लगे। फिर लगभग बीस वर्षों के अन्दर ही, दूसरा महायुद्ध छिड़ गया।

इस बार फिर, पूंजीवादी बाज़ारों के घेरे को तोड़ कर संसार का एक बहुत बड़ा भाग मुक्त होगया; उसमें जनवादी राज्य क़ायम होगये। यह पूँजीवाद के आम संकट की दूसरी मंज़िल थी।

जनवाद की बढ़ी हुई ताक़त देखकर, पूंजीवादी गुट के पांवों के नीचे से धरती खिसक गई। वह एक ओर एटम बम की धमकी दिखाकर धमकाने लगा और दूसरी ओर सारे जनवादी देशों से व्यापार बन्द करके उनकी व्यापारिक नाकेबन्दी शुरू कर दी। इस प्रकार, पहले जहां समूचे संसार का एक मिला-जुला बाज़ार था वहां अब दो समानान्तर बाज़ार बन गये। इसका नतीजा क्या हुआ? 'विनाश काले विपरीत बुद्धि'—वाली मसल हुई। पूँजीवाद की सारी समस्या ही बाज़ारों की समस्या थी। इस नाकेबन्दी के कारण, उसने और भी अधिक बाज़ारों से अपने को वंचित कर लिया। परिणाम ठीक उलटा ही हुआ। उसका आम संकट और तीव्रतर होगया है।

एक ओर जनवादी बाज़ार बन गया, जो जनवादी देशों के पारस्परिक सहयोग के आधार पर दृढ़ता से खड़ा है और जो एक-दूसरे की मदद करते हुये, समानता की बिना पर अपनी सारी ज़रूरतें पूरी करता है। इतना ही नहीं, अब वह परिस्थिति भी पैदा होगई है कि यह जनवादी बाज़ार अपनी ज़रूरतों से भी ज़्यादा उत्पादन करने लगा है।

दूसरी ओर पूँजीवादी बाज़ार है, जो एक-दूसरे की लूट-खसोट के आधार पर खड़ा है और जो एक-दूसरे का गला काटते हुये, प्रतियोगिता और मुनाफ़े की बिना पर एक-दूसरे के आर्थिक जीवन पर कब्ज़ा जमाने की कोशिश में अपने आंतरिक विरोधाभासों को और तीव्रतम बनाता जारहा है। उसका उत्पादन गिरता जा रहा है। निर्यात कम होता जारहा है। जनता में बेरोज़गारी फैली हुई है और उसकी ख़रीदने की शक्ति गिरती ही जारही है। साथ ही, पिछड़े हुये देशों की जनता स्वतंत्रता के लिये संघर्ष करके अपनी मुक्ति के द्वारा उसे और भी संकुचित बनाती जारही है।

दो समानान्तर बाज़ारों के बनने से पैदा होने वाला, पूंजीवाद का यह आम संकट उसकी पूरी गहराई के साथ समझा जाना चाहिये। यह आम संकट पिछले आर्थिक संकटों और मंदी के नियमित रूप से आने वाले चक्रों की तरह नहीं है। आम संकट का अर्थ है—हर दिशा में, हर क्षेत्र में संकट होना और सिवाय आत्मविनाश के उससे उबरने का और कोई भी रास्ता न होना। यदि हम पिछली शताब्दी के अन्तिम चरण से पूंजीवादी उद्योग के विकास की गति का अध्ययन करें, तो इस आम संकट का अर्थ और भी स्पष्ट हो जायेगा।

इससे बिलकुल स्पष्ट होजाता है कि सन् १९१३ से शुरू हुये आम संकट के काल से पूंजीवादी उद्योगों के विकास की रफ़्तार उत्तरोत्तर कम ही होती जारही है।

विश्व में पूंजीवादी उद्योग के विकास की वार्षिक गति

काल	प्रतिशत गति
सन् १८६० से १८८० तक	३·१%
सन् १८९० से १९१३ तक	३·७%
सन् १९१३ से १९२९ तक	२·४%
सन् १९२९ से १९४९ तक	१·३%

साथ ही, मौजूदा पूंजीवादी बाज़ार को लीजिये। पूंजीवादी देशों का सरगना अमरीका ही है। अमरीका का व्यापार संकुचित होता जारहा है। आज अमरीका से निर्यात होने वाले ग़ैरफ़ौजी माल में ३० प्रतिशत कमी होगई है। पहले सभी पूंजीवादी देश इन देशों के साथ व्यापार किया करते थे। पर आज सन् १९३७ के मुक़ाबले में, उनके साथ होने वाला अमरीका का व्यापार लगभग १/१०, इंगलैंड का १/२ और फ्रांस का १/४ ही रह गया है। यह पूंजीवादी बाज़ार की तसवीर का एक पहलू हुआ।

संकुचित होते हुये बाज़ार की इसी तसवीर का दूसरा पहलू यह है कि एक ओर तो अमरीका, इंगलैन्ड और फ्रांस ने अपने रहे-सहे बाज़ारों—उपनिवेशों और अर्द्ध-उपनिवेशों—का शोषण और भी तीव्र कर दिया है और अमरीकी थैलीशाह दूसरों के बाज़ारों को छीनने के लिये हर क़िस्म की साज़िशें और खून-ख़राबी कर रहे हैं; और दूसरी ओर अमरीका इंगलैन्ड, फ्रांस और इटली की घरू अर्थ-व्यवस्था का गला भी घोंटता जारहा है, वहां की जनता पर शोषण का बोझ बढ़ाता जारहा है।

इन सबका लाज़िमी नतीजा यही होरहा है कि एक ओर तो अर्द्ध-उपनिवेशों और उपनिवेशों की जनता का मुक्ति संग्राम तेज़ होरहा है और दूसरी ओर इंगलैन्ड, फ्रांस, इटली, पश्चिमी जर्मनी, जापान आदि की जनता अमरीकी डॉलरशाहों से मुक्ति पाने के लिये छटपटा रही है और अपनी सरकारों पर दबाव डाल रही है कि वे अमरीकी प्रभाव से मुक्त होने के लिये क़दम उठायें।

इस प्रकार, पूंजीवादी अर्थ-व्यवस्था का आम आर्थिक संकट अधिकाधिक गहरा होचुका है। उनकी व्यवस्था के विरोधाभास ही एक-दूसरे में टकराव पैदा कर रहे हैं। सिवा एक-दूसरे के रहे-सहे बाजारों की छीना-झपट और एक-दूसरे के गला घोंटने के, उनके सामने कोई रास्ता नज़र नहीं आरहा है। जनवादी देशों को नेस्तनाबूद करने के लिये, तीसरा विश्व युद्ध छेड़ने का एक रास्ता उनके लिये हो सकता था और

इस प्रकार वहां की जनता को गुलाम बनाकर, नये बाज़ार पाकर वह कुछ दिनों के लिये अपनी समस्या सुलझा सकते थे। परन्तु द्वितीय विश्व युद्ध में, उन्होंने सोवियत की अपार शक्ति को जान लिया था। वह यह भी जानते हैं कि उसके बाद जनवादी खेमे की शक्ति दुगुनी और तिगुनी बढ़ गई है—आधे यूरोप और चीन की महान् वीर जनता की शक्ति भी उसमें जुड़ गई है। फिर, शान्ति आन्दोलन की शक्ति ने उन्हें यह भी बता दिया है कि दुनिया की जनता युद्ध के ख़िलाफ़ है। इसीलिये, वह समझ गये हैं कि जनवादी खेमे के ख़िलाफ़ युद्ध छेड़ने का अर्थ होगा—संसार में पूंजीवाद का ख़ात्मा। इससे उनके आपसी टकराव और भी बढ़ गये हैं; और बढ़ते ही जायेंगे।

परिस्थिति के इस विश्लेषण के बाद, महान् स्तालिन ने नतीजा निकाला है कि आज सैद्धान्तिक रूप से तो आधुनिक पूँजीवादी खेमे और जनवादी खेमे के विरोध ही सबसे महत्वपूर्ण हैं; लेकिन अमली तौर से पूँजीवादी खेमे के अपने आंतरिक टकराव अधिक महत्वपूर्ण होते जारहे हैं। और, यह सोचना गलत होगा कि पूँजीवादी देश जनवादी खेमे के ख़िलाफ़ एक हो ही जायेंगे और उनके बीच आपस में युद्ध नहीं छिड़ सकता। उन्होंने बताया है कि पूँजीवादी देशों के बीच युद्ध की अनिवार्यता का लेनिन-वादी सिद्धान्त आज भी उतना ही लागू होता है, जितना कि पहले। द्वितीय महायुद्ध के समय भी, पूँजीवादी खेमे और समाजवादी खेमे का विरोधाभास ही सैद्धान्तिक रूप से सबसे प्रमुख था। पूँजीवादी देशों ने उसकी शुरूआत भी समाजवादी खेमे के ख़िलाफ़ साज़िशों से की थी। परन्तु, अमली तौर पर उनके अपने विरोधाभास इतने तीव्र हो गये थे कि उनमें आपस में ही युद्ध ठन गया था। आज भी वही हो सकता है। महान् स्तालिन ने कहा है कि इन आंतरिक टकरावों की वजह से, शायद पहले इंगलैंड तथा फ्रांस और बाद में जापान तथा पश्चिमी जर्मनी अमरीका के प्रभाव से मुक्त होने के लिये क़दम उठायेंगे।

महान् स्तालिन के इस विश्लेषण ने शांति आन्दोलन के लिये और भी व्यापक सम्भावनाओं के द्वार खोल दिये हैं, जैसा कि हम देख चुके हैं। उनका यह विश्लेषण हमें अपने देश की सही वैदेशिक नीति निर्द्धारित करने में मदद दे सकता है कि हम अमरीकी और अंग्रेज़ी पूंजी के प्रभाव से अपने देश को मुक्त करने की नीति अपनायें और जनवादी खेमे के बाज़ार के साथ अपने व्यापारिक सम्बंधों को बढ़ायें, नहीं तो हमारे देश की जनना युद्ध, भुखमरी और बेकारी की शिकार होती जायेगी; क्योंकि हमेशा की तरह आज भी आधुनिक पूंजीवादी देश अपने आर्थिक संकट का सारा बोझ अर्द्ध-उपनिवेशों, उपनिवेशों और उन पर निर्भर रहने वाले देशों पर ही डालने की सिरतोड़ कोशिशें कर रहे हैं।

● आधुनिक पूंजीवाद का बुनियादी नियम

उपर्युक्त विश्लेषण से, यह स्पष्ट होजाता है कि आधुनिक पूंजीवाद वह पूंजीवाद नहीं है जो मार्क्स के काल में था। वह भी नहीं है जो लेनिन के काल में था। तब, उसका बुनियादी नियम क्या है ?

किसी भी आर्थिक व्यवस्था का बुनियादी नियम वही होता है जो उस अर्थ व्यवस्था के अन्तर्गत होनेवाले उत्पादन की शक्ति के लक्षणों के सार को व्यक्त कर दे; ऐसा सार जिससे उसकी सभी विशेषतायें निश्चित होती हैं और उत्पादन के विकास की प्रक्रिया के पूरे गुण पता लग जाते हैं। आधुनिक पूंजीवाद का ऐसा बुनियादी नियम क्या है ?

मूल्य का नियम वह बुनियादी नियम नहीं हो सकता; क्योंकि वह पूंजीवादी व्यवस्था से पहले की दास और सामंती व्यवस्थाओं में भी मौजूद था।

मार्क्स ने अपने काल के पूंजीवाद का बुनियादी नियम अतिरिक्त मूल्य का नियम बताया था। तब वह सोलहों आने सही था। यह अतिरिक्त मूल्य का नियम औसत मुनाफ़े की दर के नियम से सम्बंधित था। औसत मुनाफ़े की दर के नियम के अनुसार, पूंजीवादी उत्पादन के सभी क्षेत्रों के मुनाफ़ों में दूसरे क्षेत्रों के मुनाफ़ों के बराबर होने की प्रवृत्ति होती है। इस प्रकार, सभी क्षेत्रों के मुनाफ़ों की एक औसत दर बन जाती है। जिस क्षेत्र में भी मुनाफ़ा उस औसत दर से नीचे होता है, पूंजीपति उत्पादन के उस क्षेत्र को छोड़कर दूसरे क्षेत्र में पूंजी लगाने जाता है। इस प्रकार, सारे क्षेत्रों की पूंजी में उत्पादन के कुछ ही क्षेत्रों में केन्द्रित होते जाने की प्रवृत्ति बनने लगती है और नतीजा होता है—अति-उत्पादन, मंदी, आर्थिक संकट आदि का पूरा चक्र। यह औसत मुनाफ़े की दर कम होती जाती है। परन्तु, आज की पूंजीवादी व्यवस्था में पूंजीपति आपस में व्यक्तिगत तौर से प्रतियोगिता नहीं करते: आज उनमें एकाधिकारी कम्पनियों, कार्पोरेशनों, कर्टेलों, सिन्डीकेटों और विशालतम एकाधिकारी कम्पनियों की संस्थायें मिलकर सारे बाज़ार पर अधिकार जमा लेती हैं।

मुनाफ़े की औसत दर के अलावा, अति-मुनाफ़ा भी आज के एकाधिकारी पूंजीवाद के लिये पूरा नहीं पड़ता। उपनिवेशों से सस्ते दामों में कच्चा माल तथा श्रम-शक्ति ख़रीद कर और औसत मूल्य से अधिक क़ीमत पर पक्का माल बेचकर जो अति-मुनाफ़ा पूंजीवादी देश कमाते हैं, वह भी उनकी सर्वभक्षिणी भूख को शांत नहीं कर पाता।

तब, आधुनिक पूंजीवाद का बुनियादी नियम क्या होना चाहिये ? महान् स्तालिन ने बताया है कि यह बुनियादी नियम है—अधिकतम मुनाफ़ा प्राप्त करना। "...अतिरिक्त मूल्य के नियम को और ठोस बनाना चाहिये और इजारेदार पूँजीवाद की परिस्थितियों के अनुसार, उसे और विकसित करना चाहिये। साथ ही, यह ध्यान रखना चाहिये कि इजारेदार पूँजीवाद को हर किसी तरह के मुनाफ़े की चाह नहीं है। उसे

अधिकतम मुनाफ़ा ही चाहिये। आधुनिक पूँजीवाद का वह बुनियादी आर्थिक निय
होगा।" (पृष्ठ ४२)

यह सवाल उठ सकता है कि पूंजीपति तो हमेशा से ही अधिकतम मुनाफ़
प्राप्त करने की चेष्टा करते रहे हैं, तब इसमें नई बात क्या है? इसको हमें बारीकी
समझना चाहिये। एक पूंजीपति की अधिकतम मुनाफ़ा बटोरने की आंतरिक इच्छ
और अधिकतम मुनाफ़ा चूसने की वस्तुगत आवश्यकता में बहुत बड़ा फ़र्क है। पहले
पूँजीपति उसी क्षेत्र में पूँजी लगाते थे जिसमें अधिक मुनाफ़ा मिलता था और उस प
मुनाफ़े की औसत दर के हिसाब से अधिक मुनाफ़ा कमा लेते थे। इनमें से कुछ पूंजी
पति तमाम तिकड़में करके, इस औसत दर से कुछ अधिक मुनाफ़ा भी जुटाने में सम
होजाते थे, परन्तु अधिकांश पूंजीपति इस औसत दर से नीचे ही रहते थे। पर दोन
ही तरह के पूंजीपति क़ायम रहते थे, हालांकि और अधिक मुनाफ़ा कमाने की उनक
इच्छा बनी ही रहती थी। परन्तु, आधुनिक पूंजीवाद की वह हालत नहीं रही है। आ
के ज़माने में अधिकतम मुनाफ़ा कमाने की वस्तुगत आवश्यकता का मतलब है ि
यदि वह अधिकतम मुनाफ़ा प्राप्त करने में असमर्थ रहते हैं तो वह अपनी पूंज
सुरक्षित नहीं रख सकते। एक पूंजीपति के रूप में उनकी मौत हो जायेगी। वही कार्पोरे
शन या विशाल कार्पोरेशनों की संस्था ज़िन्दा रह सकेगी, जो अधिकतम मुनाफ़ा कम
सकती है। दूसरी छोटी-मोटी एकाधिकारी कम्पनियाँ मुनाफ़ा कमा ही नहीं सकतीं
उन्हें अपने उद्योग-धन्धे बेच देना पड़ेंगे। वस्तुगत आवश्यकता का अर्थ है—
अधिकतम मुनाफ़ा या मौत; तीसरा कोई रास्ता नहीं। यही आधुनिक पूंजीवा
का बुनियादी नियम है।

अधिकतम मुनाफ़ा कमाने के लिये, प्रमुख पूंजीवादी देशों में एकाधिकार
पूंजीपतियों के कुछ मुट्ठीभर विशालतम संगठन ही सारा व्यापार हथिया कर, अपने ह
देश के छोटे-मोटे पूंजीपतियों तथा उनकी संस्थाओं के मुनाफ़े की औसत दर क
कर देते हैं; क्योंकि बाज़ारों पर उनका एकाधिकार क़ायम होजाता है और दूस
उनसे प्रतियोगिता नहीं कर सकते। सन् १९४८ और '४९ के दौरान में अमरीका क
२५ विशालतम एकाधिकारी संगठनों ने १३ प्रतिशत अधिक मुनाफ़ा कमाया, ज
कि सभी दूसरे पूंजीपति और उनकी छोटी संस्थाओं को २० प्रतिशत का घाटा रह
था। सन् १९३३ से '५२ तक के बीस वर्षों में, अमरीकी कार्पोरेशनों ने ३८० अरब डॉल
का मुनाफ़ा कमाया है जो सन् '३३ में अमरीका में लगी हुई कुल पूंजी के बराबर था।

> " आधुनिक पूंजीवाद के बुनियादी आर्थिक नियम की मुख्य विशेषतायें औ
> ज़रूरतें मोटे तौर से यों रखी जा सकती हैं: किसी देश की बहुसंख्यक जनता के
> शोषण, तबाही और ग़रीबी के ज़रिये; दूसरे देशों की जनता, ख़ासकर पिछड़े
> हुये देशों की जनता, की ग़ुलामी और उसकी बाक़ायदा लूट के ज़रिये—और अन्त
> में, युद्ध और राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्था की फ़ौजबन्दी के ज़रिये—जिससे अधिकतम
> मुनाफ़ा हासिल किया जाता है—अधिकतम पूंजीवादी मुनाफ़ा प्राप्त करना।"
> (पृष्ठ ४२)

फिर उपनिवेशों, अर्द्ध-उपनिवेशों तथा कम विकसित पूंजीवादी देशों के बाज़ारों के पुनर्विभाजन के लिये, वह युद्ध की तैयारियां करते हैं, फ़ौजबन्दी करते हैं, राष्ट्रीय बजट का अधिकांश भाग युद्ध के लिये शस्त्रों और फ़ौजों पर खर्च करते हैं और इसके लिये अपने यहां की जनता पर टैक्सों की भरमार करते जाते हैं। कुछ मुट्ठीभर एकाधिकारी विशालतम संगठनों को, जनता की क़ीमत पर, टैक्सों में भारी सुविधायें देते हैं और युद्ध का सामान आदि बनाने के लिये मनमाने ठेके दिया करते हैं। युद्ध के जमाने में, इन मुट्ठीभर एकाधिकारी महाप्रभुओं को १७५ अरब डॉलर के और सन् '५२ में, ७३ अरब डॉलर के ठेके मिले थे। इन ठेकों में अमरीकी एकाधिकारी महाप्रभुओं ने पहले विश्व युद्ध से २५ अरब, दूसरे विश्व युद्ध से १०७ अरब और कोरिया के युद्ध से १२३ अरब डॉलर मुनाफ़े के रूप में कमाये थे। ब्रिटेन के बजट का एक-तिहाई भाग युद्ध की तैयारी पर खर्च होता है।

यही एकाधिकारी पूंजी के महाप्रभु उपनिवेशों, अर्द्ध-उपनिवेशों और कम विकसित देशों के बाज़ारों पर कब्ज़ा जमा लेते हैं। उनकी लूट-खसोट, तबाही-बर्बादी और शोषण करते हैं। उनकी जनता के साथ ही साथ, अपने घर की जनता का शोषण भी अधिकतम कर देते हैं। आज अमरीका की जनता पर सन् १९३७-३८ की तुलना में, १२ गुना टैक्स और बढ़ गया है। अमरीकी मजदूर अपनी तनखा का एक-तिहाई टैक्सों में दे देता है। रोज़ाना की जरूरत की चीजों की क़ीमतें जो सन् '३९ में सिर्फ़ ९९.४ थीं, सन् '५२ में आसमान पर चढ़कर १८९.६ तक पहुंच गई हैं। सारे संसार के बचे-खुचे बाज़ारों पर, खास तौर पर अर्द्ध-औपनिवेशिक और कम विकसित देशों के बाज़ारों पर, छा जाने की प्रवृत्ति के लिये अमरीका द्वारा तमाम बाज़ारों पर खर्च की जाने वाली पूंजी का अनुपात देखना ही काफ़ी होगा :—

मार्शल योजना के बाहर रहने वाले युरोपीय देशों पर	७.६%
कनाडा पर	१४.०%
मार्शल योजना के अन्तर्गत आने वाले देशों पर	१४.५%
अमरीकी प्रजातंत्रों पर	१७.४%
मार्शल योजना के अन्तर्गत उपनिवेशों पर	२०.०%
मध्यपूर्व के देशों पर	३१.३%

आधुनिक पूंजीवाद का अधिकतम मुनाफ़ा प्राप्त करने का यही तरीक़ा है। इस अधिकतम मुनाफ़े के बिना वह पनप नहीं सकता और अधिकतम मुनाफ़ा प्राप्त करने का इसके सिवा दूसरा रास्ता नहीं है। इस रास्ते पर चलने से उसके आंतरिक टकराव और तीव्रतर होते जाते हैं, उनका आम आर्थिक संकट और भी गहरा होता जाता है। उसका पूरा अस्तित्व ख़तरे में है। इसलिये, आधुनिक पूंजीवाद आज ख़तरे भरे

क़दम उठाने का दुःसाहस भी कर बैठता है। परन्तु, उससे उसके आंतरिक विरोधों में और भी विस्फोट होने लगता है।

इस प्रकार, महान् स्तालिन द्वारा प्रतिपादित आधुनिक पूंजीवाद का अधिकतम मुनाफ़े का बुनियादी नियम हमें आधुनिक पूंजीवाद के आम संकट की गहराई और सभी क्षेत्रों पर पड़ने वाले उसके असर की व्यापकता को समझने में मदद देता है। और, यह समझ भारत को आर्थिक सहायता देने के अमरीकी ढोंग का पर्दाफ़ाश कर देती है। हमें अपने राष्ट्रीय हितों के लिये पैदा होनेवाले ख़तरों के ख़िलाफ़ आगाह करती है। यह समझ हमें रास्ता दिखाती है कि अधिकतम मुनाफ़े के भूखे आधुनिक पूंजीवाद के ख़िलाफ़ सभी अर्द्ध-औपनिवेशिक और कम विकसित देशों का एक संयुक्त मोर्चा बनाकर, अपने राष्ट्रीय प्रभुत्व और हितों की रक्षा की जाय, युद्ध छेड़ने की उसकी दुःसाहसिक चेष्टाओं को दफ़ना दिया जाय।

● समाजवाद का बुनियादी नियम

दूसरी ओर समाजवाद का बुनियादी आर्थिक नियम क्या है? सोवियत संघ में अर्थ-व्यवस्था के संतुलित विकास का नियम भी काम करता है। यह हम देख चुके हैं। पर, क्या वह समाजवाद का बुनियादी आर्थिक नियम बन सकता है? महान् स्तालिन ने बताया है कि नहीं; क्योंकि यह संतुलित विकास किस दिशा में, किस उद्देश्य से होता है उसे यह नियम नहीं बताता। असल में यह बुनियादी आर्थिक नियम का प्रतिफल या प्रतिबिम्ब ही हो सकता है? स्वयं बुनियादी नियम नहीं बन सकता। तब वह बुनियादी नियम क्या है?

उन्होंने समाजवादी अर्थ-व्यवस्था की विवेचना करके, बताया है कि वह बुनियादी आर्थिक नियम है—समाज की लगातार बढ़ती हुई भौतिक और सांस्कृतिक आवश्यकताओं की अधिकतम पूर्ति करना। समाज की आवश्यकताओं की यह अधिकतम पूर्ति उच्चतर कौशल के आधार पर, समाजवादी पैदावार के निरंतर प्रसार और पूर्णता के ज़रिये की जाती है। समाजवादी पैदावार के संतुलित विकास का नियम इसी बुनियादी आर्थिक नियम पर आश्रित होकर, इसी के अन्तर्गत काम करता है।

एक ओर जहां आधुनिक पूंजीवाद का बुनियादी आर्थिक नियम अधिकतम मुनाफ़ों के लिये समूची मानवता पर आम आर्थिक संकट, बेरोज़गारी, भुखमरी, बेशुमार टैक्स, शोषण और युद्ध की बलायें थोपता है; दूसरी ओर वहीं समाजवाद का बुनियादी आर्थिक नियम समाज की बढ़ती हुई भौतिक और सांस्कृतिक आवश्यकताओं की अधिकतम पूर्ति करके जनता की खुशहाली, तनख़ाहों में बढ़ती, चीज़ों की क़ीमतों में आम कमी, समृद्धि तथा समानता के आधार पर सभी देशों के साथ सहयोग और शांति को बढ़ावा देता है। सोवियत संघ की चौथी पंचवार्षिक योजना सन् १९५१ में पूरी

हुई है। इसके फलस्वरूप, उसकी राष्ट्रीय आय ८३ प्रतिशत और बढ़ गई है। इसका तीन-चौथाई भाग मज़दूर वर्ग में तनख़्वाहों, फंडों, बोनसों और राज्य द्वारा प्रस्तुत की हुई सेवाओं के द्वारा बांट दिया जायगा; बाक़ी एक-चौथाई उत्पादन के साधनों को और भी विकसित करने में लगा दिया जायगा। पांचवीं पंचवार्षिक योजना आजकल चल रही है। इसके द्वारा सन् १९५५ तक राष्ट्रीय आय में ६० प्रतिशत वृद्धि और हो जायेगी। दूसरे विश्व युद्ध के पहले की पैदावार के मुक़ाबले में, सारी पैदावार तिगुनी हो जायेगी।

यह दोनों बुनियादी आर्थिक नियम बताकर, महान् स्तालिन ने स्पष्ट कर दिया है कि किस ओर नाश, शोषण तथा मृत्यु है और किस ओर समृद्धि, समानता तथा जीवन है। यह मानवता की सबसे बड़ी सेवा है।

● कम्युनिज़्म तक संक्रमण की प्राथमिक शर्तें

लेनिन ने अपनी महान् रचना **राज्य और क्रान्ति** में 'कम्युनिज़्म की आर्थिक परिपक्वता की विभिन्न मंज़िलों' के मार्क्स के विश्लेषण की इस विशेषता पर सबसे अधिक ज़ोर दिया है कि वह ग़ैरस्वप्नवादी है, कि उस विश्लेषण और विभिन्न मंज़िलों के निर्देशन का आधार ठोस आर्थिक परिस्थितियाँ ही हैं; मार्क्स की अपनी आंतरिक इच्छा या स्वप्नवादिता नहीं है। मार्क्स ने विभिन्न वस्तुगत आर्थिक नियमों को समझने के बाद, उनसे पैदा होनेवाली परिस्थितियों के लेखे-जोखे के बाद ही उन मंज़िलों का निर्देशन किया है।

महान् स्तालिन ने भी हमें इस पुस्तिका में यही मार्क्सवादी सत्य सिखाया है कि कम्युनिज़्म की स्थापना सरकारी क़ानून पास कर देने से नहीं, बल्कि उसके लिये आर्थिक नियमों की वस्तुगत समझ के आधार पर सचेतन और नियोजित क़दम उठाकर, उस संक्रमण के लिये ठोस परिस्थितियां तैयार कर देने पर ही होगी। वह परिस्थितियाँ क्या हैं?

महान् स्तालिन ने सोवियत संघ के समाजवादी अर्थतंत्र से उसके उच्चतर रूप कम्युनिस्ट अर्थतंत्र तक संक्रमण की तीन बुनियादी शर्तें बताई हैं।

१—पैदावार के साधनों के उत्पादन का प्रसार और भी तेज़ रफ़्तार से होता जाय।

२—पंचायती खेतों की सम्पत्ति को सार्वजनिक सम्पत्ति की सतह तक ले जाकर, समाजवादी पैदावार का एक ही क्षेत्र बनाया जाय।

३—चौमुखी सांस्कृतिक विकास की बढ़ती पक्की होजाय।

यह शर्तें कैसे पूरी की जायेंगी? इनके द्वारा किस प्रकार समाज में यह परिवर्तन आयेगा?

पहली शर्त को लीजिये। पैदावार के साधनों का और भी तेज़ रफ़्तार से प्रसार होते जाने का साफ़ मतलब है कि समाज की पुनरुत्पादन करने की शक्ति लगातार बढ़ती रहे। यदि यह शक्ति लगातार बढ़ती न रहे, एक सतह पर जाकर उत्पादन के साधनों का प्रसार यदि रुक जाय तो ज़ाहिर है कि उसका उत्पादन भी एक निश्चित सतह तक ही रह जायेगा। इससे समाज का विकास भी रुक जायेगा। इसीलिये, यह ज़रूरी है कि उत्पादन करने के साधनों—जैसे भारी मशीनें, कारखाने, भूमि, कौशल यानी श्रम-शक्ति को पैदा करने की क्षमता आदि—में लगातार वृद्धि होती रहे; तभी इनसे होने वाला पुनरुत्पादन भी बढ़ता रहेगा और समाज की सभी शाखाओं को साज़-सामान मिलता रहेगा। रोज़ाना की ज़रूरत की चीज़ों का उत्पादन भी बढ़ते रहने की गारंटी रहेगी और उनके उत्पादन पर होने वाला ख़र्च भी कम होता रहेगा, उनकी क़ीमतें भी घटती ही जायेंगी। समाज की सम्पन्नता बढ़ती जायेगी। सोवियत संघ में सन् १९५३ के अन्त तक, द्वितीय विश्व युद्ध के पहले की अपेक्षा, उत्पादन के साधनों में १७० प्रतिशत की वृद्धि हो जायेगी। इसी के आधार पर, सन् १९५५ तक कुल उत्पादन तिगुना हो सकेगा। हम इसी से समझ सकते हैं कि कम्युनिज़्म तक पहुँचने के लिये यह प्रसार कितना आवश्यक है।

दूसरी शर्त है—पंचायती खेती की सम्पत्ति को सार्वजनिक सम्पत्ति की सतह तक ले जाना। दूसरे शब्दों में, इसका अर्थ है—समाजवादी उत्पादन का एक ही राज्य-क्षेत्र बनाना। हम देख चुके हैं कि वर्तमान सोवियत समाज में समाजवादी उत्पादन के दो क्षेत्र हैं—राज्य या सामाजिक सम्पत्ति का उत्पादन-क्षेत्र और सहकारी खेती के उत्पादन का क्षेत्र। इन दोनों का एक ही राज्य या सामाजिक सम्पत्ति का उत्पादन-क्षेत्र बनाना पड़ेगा। इन दोनों क्षेत्रों के क़ायम रहने की वजह भी हम जान चुके हैं। हमने यह भी देख लिया है कि समाज में उत्तरोत्तर विकास होने की सबसे बड़ी शर्त मार्क्स का यही आर्थिक सिद्धान्त है कि समाज की उत्पादक-शक्तियों का लक्षण सामाजिक सम्बंधों के साथ मेल खाना चाहिये। एक मंज़िल पर आकर, समाज की उत्पादक-शक्तियों का विकास आगे बढ़ जाया करता है और हमेशा समाज के उत्पादन-सम्बंध पीछे पड़ जाते हैं। तब उन सम्बंधों में परिवर्तन करना आवश्यक होजाता है। उदाहरण के लिये, हम आज के पूंजीवादी समाज को देखें। सारे पूंजीवादी समाज में उत्पादन की शक्तियों का लक्षण (तरीक़ा) सामाजिक यानी सामूहिक है, यानी आगे बढ़ गया है। किसी भी बिकाऊ माल का उत्पादन आज सामंती काल के तरीक़े से, व्यक्तिगत तौर पर करके, मुनाफ़े के साथ नहीं बेचा जा सकता; क्योंकि मशीनें कम समय और अधिक मात्रा में उसे तैयार करके सस्ते दामों में बेच सकती हैं। परन्तु दूसरी ओर, उत्पादन के सम्बंध पीछे पड़ गये हैं, यानी उत्पादन के साधनों पर समाज का नहीं, व्यक्तियों का अधिकार है। आज आधुनिक पूंजीवाद

में आर्थिक संकटों और तबाही का यही मूल कारण है। जहाँ-जहाँ मानवता ने इस मूल विरोधाभास को दूर कर दिया है, वहां हम देख रहे हैं कि उत्पादन का चौमुखी विकास होरहा है।

इसी को समझाते हुये, महान् स्तालिन ने इस पुस्तिका में बताया है कि समाजवादी उत्पादन में यह क्षेत्र सुरक्षित रखने की वजह उस समय की आर्थिक परिस्थिति थी। जाहिर है कि पूंजीवादी उत्पादन के तरीक़े से यह सामूहिक खेती के द्वारा उत्पादन करने का तरीक़ा एक और ऊंची समाजवादी मंज़िल थी और इसीलिये, समाज के विकास में इसने एक बड़ा भारी योग दिया था और अभी काफ़ी समय तक देती भी रहेगी। पर, इसके कारण यह भूल जाना घातक होगा कि इन दो क्षेत्रों के उत्पादन के तरीक़ों में असंगति है, जो यदि आगे चल कर दूर न की गई तो समाज के विकास में एक रोड़ा बन जायेगी। जब सोवियत की उत्पादक-शक्तियों का विकास एक निश्चित सतह तक पहुंच जायेगा, तब शहर के सामाजिक सम्पत्ति वाले क्षेत्र और सामूहिक खेती के उत्पादन के क्षेत्र का आपस में बिकाऊ माल के आधार पर खड़ा रहने वाला सम्बंध पिछड़ जायेगा और उसे बदलना ही पड़ेगा। तभी कम्युनिस्ट अर्थतंत्र तक पहुंचा जा सकेगा।

यह कैसे किया जा सकेगा? आज दोनों क्षेत्रों का सम्बंध बिकाऊ माल के उत्पादन पर निर्भर है, यानी सहकारी खेतों में जितना उत्पादन होता है उसमें से अपनी ज़रूरत का गांवों में रखकर, बाक़ी शहर में बेच दिया जाता है और उससे मिली हुई रक़म से अपनी रोज़ाना की ज़रूरत की चीज़ें शहर से ख़रीद ली जाती हैं। इससे मूल्य का नियम इस सीमित क्षेत्र में लागू होने लगता है। यह हम देख चुके हैं। अब इस सम्बंध को मिटाने का तरीक़ा क्या है? तरीक़ा यह है कि सहकारी खेती से होने वाली पैदावार के गाँवों की ज़रूरत से बचे हुये हिस्से को बिकाऊ माल के चलन से अलग कर दिया जाय। गावों की सामूहिक संस्थायें शहरों की उत्पादक-संस्थाओं को अपनी अतिरिक्त पैदावार बेचकर उनसे अपनी ज़रूरत की चीज़ें हासिल न करें, बल्कि वे एक-दूसरे की उपज को आपस में विनिमय करलें। सामूहिक खेतों की संस्थायें और राज्य-उद्योगों की संस्थायें अपनी-अपनी ज़रूरत के मुताबिक़ अपनी-अपनी उपज की अदला-बदली करलें।

लेकिन, यह सरकार की ओर से क़ानून बना देने से नहीं हो जायगा। इसके लिये दो चीज़ें ज़रूरी हैं—पहली तो यह कि राज्य के उद्योग-क्षेत्र का उत्पादन इतना अधिक बढ़ जाय कि वह गाँवों की जनता की ज़रूरत की चीज़ें काफ़ी तदाद में और कम क़ीमत पर करने पैदा लगे; दूसरी यह कि सामूहिक खेती का क्षेत्र भी इतना अधिक अनाज और खेतिहर कच्चा माल पैदा करने लगे कि वह शहर की जनता और कारख़ानों की ज़रूरत पूरी कर सके। दोनों से ही एक-दूसरे का फ़ायदा होगा। दोनों में से एक न

होने से जरूरत के मुताबिक पैदावार की अदला-बदली, उपज-विनिमय का ढंग चल ही नहीं सकता।

उपज-विनिमय से क्या होगा? बिकाऊ माल की पैदावार और इसीलिये मूल्य के नियम का क्षेत्र दिन-दिन सिकुड़ता जायेगा। समाज में जरूरतों की चीजें कम होने पर ही, यह जरूरत खड़ी होती है कि चीजों का मूल्य उनमें लगे हुए सामाजिक रूप से आवश्यक श्रम-समय के आधार पर तय किया जाय। जब उत्पादन इतना बढ़ जायगा कि सभी की जरूरतें पूरी हो सकती हैं; तो यह मूल्य का नियम बेमतलब होजायेगा। हम अपनी-अपनी जरूरतों के आधार पर ही चीजों का महत्व आँकेंगे। फिर, आज जो राष्ट्रीय योजना बनाई जाती है उसमें सहकारी खेतों की मूल सम्पत्ति का शुमार नहीं किया जा सकता। उस समय इसका शुमार भी किया जा सकेगा। यह अड़चन मिट जायेगी और अधिक व्यापक योजना बनाई जा सकेगी। इसके फलस्वरूप, गांवों और शहरों के बीच का भेद मिट जायगा; क्योंकि एक ओर तो अधिकाधिक रूप में गांवों के रहन-सहन का स्तर शहरों के बराबर होता जायेगा और दूसरी ओर तमाम बड़े-बड़े नये शहर उठ खड़े होंगे।

सहकारी खेती की सम्पत्ति का राष्ट्रीयकरण करना, सिर्फ़ एक आरम्भिक क़दम होगा। सोवियत के समाजवादी समाज में राज्य तभी तक रहेगा जब तक वह चारों ओर से पूँजीवादी संसार से घिरा रहता है। जब सारे संसार में समाजवाद क़ायम हो जायगा, तब वहां राज्य जैसी संस्था बेमतलब हो जायेगी और सारी सम्पत्ति सार्वजनिक संस्थाओं के हाथों में दे दी जायेगी। वही कम्युनिज़्म का पूर्ण रूप होगा।

इस उपज-विनिमय के लिये, आज के सोवियत समाज में प्राथमिक संगठन मौजूद हैं। वहां आज भी खेतिहर उपज की "सौदागरी" होती है। यह उपज-विनिमय ही है। इसी को सारे उत्पादन के क्षेत्र में फैलाने की आवश्यकता है।

इस प्रकार, दूसरी शर्त को तब तक पूरा नहीं किया जा सकता। जब तक कि पहली शर्त—पैदावार के साधनों के उत्पादन का तेज़ होती हुई रफ़्तार से प्रसार—पूरी नहीं हो जाती। तब तक इस उपज-विनिमय और सरकारी खेतों की सम्पत्ति को सामाजिक सम्पत्ति के स्तर तक ऊंचा उठाने का आर्थिक आधार तैयार नहीं हो सकता।

तीसरी शर्त है—चौमुखी सांस्कृतिक विकास की गारंटी। इस सांस्कृतिक विकास के लिये, समाज के सभी सदस्यों की शारीरिक और मानसिक शक्तियों का चौमुखी विकास होना आवश्यक है। यह तभी हो सकता है जब उन्हें इतनी शिक्षा मिल जाय कि वे "सामाजिक विकास के सक्रिय कार्यकर्त्ता" बन सकें, यानी समाज के उत्पादन के विकास में पूरी समझदारी से और क्रियात्मक ढंग से योग देने लगें। इसके

लिये, यह भी जरूरी है कि वे अपने पेशे अपनी ही इच्छा से चुन सकें और जब किसी दूसरे पेशे को भी अपनाना चाहें तो अपने पहले पेशे को छोड़कर, उसे अपना सकें। यानी जिन्दगी भर एक ही पेशे से बंधे रहने की अनिवार्यता न हो। यह कैसे हो सकता है?

यह तभी हो सकता है जब काम करने के घंटे ५ या ६ से ज़्यादा न हों। दूसरे शब्दों में, उत्पादन के साधनों का इतना विकास होजाय कि समाज के हर सदस्य के द्वारा पांच या छ घन्टे रोज़ काम करने से ही सारे समाज की आवश्यकताओं को पूरा करने लायक़ उत्पादन होसके। समाज के सभी सदस्य अपना बाकी फ़ुर्सत—लगभग दस या ग्यारह घन्टे रोज़—का समय अपने सांस्कृतिक विकास में लगा सकें; अपनी रुचि के विषयों और पेशों का अध्ययन करने में लगा सकें। उसके लिये सार्वजनिक लाज़िमी 'पोलीटेकनिकल' (बहुकौशली) शिक्षा चालू की जाय और वह उससे फ़ायदा उठाने के योग्य हों। यह भी जरूरी है कि उनकी तनख्वा कम से कम दुगुनी करदी जाय और मकानों की व्यवस्था में बुनियादी सुधार होसकें।

तभी यह सांस्कृतिक विकास सम्भव होगा और समाज के प्रत्येक सदस्य के लिए उच्चतर कौशल प्राप्त करना सम्भव हो सकेगा। मानसिक और शारीरिक श्रम का भेद भी तभी मिट सकेगा।

ड्यूरिंग मत-खंडन में एंगेल्स ने बताया था कि श्रम को एक बोझ के रूप में खतम करने और उसे जिन्दगी की एक प्रथम आवश्यकता बनाने के लिये, समाज को मनुष्य की श्रम के विभाजन से बंधे रहने की गुलामी मिटानी पड़ेगी। मार्क्स ने कहा था कि यह तभी हो सकेगा जबकि व्यक्तियों के चौमुखी विकास के साथ-साथ, सामाजिक उत्पादन की शक्तियां भी विकसित हो जायेंगी और सामाजिक सम्पदा के सारे स्रोत स्वतंत्रता से प्रवाहित होंगे। महान् स्तालिन की इन तीनों शर्तों में यह सभी उपकरण आजाते हैं। इन तीनों शर्तों के पूरी होने पर ही, यह मुमकिन होगा कि 'हर एक से उसकी योग्यता के अनुसार और हर एक को उसके काम के अनुसार' के इस समाजवादी सूत्र से आगे बढ़कर, 'हर एक से उसकी योग्यता के अनुसार और हर एक को उसकी जरूरत के अनुसार' के कम्युनिस्ट सूत्र तक पहुंचा जा सकेगा। तभी यह बुनियादी संक्रमण सम्भव होगा।

और, सोवियत संघ तेज़ी से इस ओर बढ़ा जारहा है। युद्ध के पहले के काल की अपेक्षा, वहां रोज़ाना की जरूरत की चीज़ों का उत्पादन ६० फ़ीसदी, असल तनखा ३५ फ़ीसदी, सहकारी खेतों के सदस्यों की आमदनी ४० फ़ीसदी और श्रम-शक्ति की उत्पादक-शक्ति ५० फ़ीसदी बढ़ चुकी है। युद्ध के बाद से आज तक क़ीमतों में पांच कटौतियाँ होचुकी हैं।

इसी साल, १ ली सितम्बर को मॉस्को विश्व-विद्यालय की ३२ मंजिली इमारत का उद्घाटन-समारोह हुआ है । इसमें ५७ जातियों के लगभग १७,००० विद्यार्थी शिक्षा पारहे हैं । इस इमारत के हॉल में १,५०० लोगों के बैठने लायक़ स्थान है । १४८ शिक्षाभवनों, विज्ञान की शिक्षा के लिये १,००० शिक्षाभवनों और विद्यार्थियों के निवास के लिये ५,७५४ कमरों के साथ-साथ एक विशाल पुस्तकालय भी है, जिसमें १२,००,००० ग्रंथ हैं ।

इस प्रकार ठोस आर्थिक आधार बनाकर, समाज की परिस्थिति में बुनियादी परिवर्तन करने और नये उच्चतर समाज के निर्माण करने के महान् स्तालिन के इस मार्क्सवादी तरीक़े से हमें काफ़ी शिक्षा मिलती है । हमें वह सही तरीक़ा मिलता है जिसके द्वारा हम अपने देश की हालतों में भी बुनियादी आर्थिक और सांस्कृतिक परिवर्तन करने का काम शुरू कर सकते हैं । इससे हमारी सरकार की उस पंचसाला योजना की निस्सारिता समझ में आजाती है, जो सामंतवाद का ख़ात्मा किये बिना, बुनियादी आर्थिक परिवर्तन करके किसानों को ज़मीन दिये बिना ही देश की कृषि में युगान्तरकारी विकास करने की डींग मारती है; जो मज़दूरों और किसानों की आमदनी और रहन-सहन में कोई परिवर्तन किये बिना ही, उनको अध्ययन के लिये अवकाश दिये बिना ही सार्वजनिक शिक्षा और संस्कृति में व्यापक प्रसार की बातें करके जनता को धोखे में डालती है । महान् स्तालिन की यह पुस्तिका हमें सीख देती है कि जब तक हम अपने देश की उत्पादन की शक्तियों के लक्षण और उत्पादन के पिछड़े हुये सम्बंधों के टकराव को ख़तम नहीं कर देते, तब तक कोई भी सांस्कृतिक या आर्थिक विकास असंभव है । सबसे पहले हमें सामंतवादी सम्बंधों का क्रियाकरम करके, ज़मीन किसानों को देनी चाहिये; विदेशी और अपने देश की एकाधिकारी पूंजी को राज्य की सम्पत्ति बना कर, कृषि और भारी उद्योग-धंधों के विकास की योजना बनानी चाहिये ।

● पुस्तिका की देन

महान् स्तालिन की यह पुस्तिका मार्क्सवादी-लेनिनवादी विज्ञान को एक और ऊँची सतह पर ले जाती है । संसार के मज़दूर वर्ग के हाथों में एक अमोघ सैद्धान्तिक अस्त्र देती है । यह आज के काल का—समाजवादी अर्थ-व्यवस्था से कम्युनिस्ट अर्थ-व्यवस्था की उच्चतर मंज़िल तक संक्रमण के काल का—मार्क्सवाद है ।

इस पुस्तिका में महान् स्तालिन ने तमाम कठिनतम सामाजिक समस्याओं का वैज्ञानिक समाधान पेश किया है, जैसे शहरों तथा गांवों, मानसिक तथा शारीरिक श्रम और उद्योग-धंधे तथा कृषि के विरोध की समस्यायें । उन्होंने इनके आपसी टकरावों को मिटाने की राह बताई है । इस तरह, यह पुस्तिका मार्क्सवादी विज्ञान में एक नया और शानदार अध्याय जोड़ती है ।

इस पुस्तिका में महान् स्तालिन ने मार्क्स और एंगेल्स की कई धारणाओं का संशोधन किया है और कई नई धारणायें प्रस्तावित की हैं। समाजवादी उत्पादन के दो क्षेत्रों की समस्या पर मार्क्स और एंगेल्स ने विचार नहीं किया था।

इस पुस्तिका में वर्तमान युग की सभी मूलभूत समस्याओं का समाधान किया गया है। और, जब-जब मार्क्सवाद ने किसी नये युग की मूल सैद्धान्तिक समस्याओं का समाधान किया है, तब-तब सामाजिक विकास को एक नई स्फूर्ति मिली है; क्योंकि जब सैद्धान्तिक समस्यायें उलझी रहती हैं तब वह सामाजिक विकास में एक रोड़ा बन जाती हैं। इसीलिये, यह पुस्तिका जहां एक ओर सोवियत संघ और जनवादी शांति प्रिय देशों के निर्माण कार्य को एक नई स्फूर्ति देती है, वहीं दूसरी ओर सारे संसार के मजदूरों को शांति, जनवाद और समाजवाद के अपने संघर्ष में एक नया बल और विश्वास देती है। यह हमें बताती है कि भावी संसार की संभावित रूपरेखा कैसी होगी।

महान् स्तालिन की पुस्तिका के बिना, इसके वैज्ञानिक ज्ञान के बिना, सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी की १९ वीं कांग्रेस पूरे सोवियत संघ को कम्युनिज़्म की उच्चतर मंज़िल पर लेजाने के कार्यक्रम को इतने वैज्ञानिक तरीक़े पर नहीं बना सकती थी।

६. *उन्नीसवीं कांग्रेस और अन्तिम सन्देश*

महान् स्तालिन ने २८ सितम्बर, १९५२ को अपनी पुस्तिका पूरी की थी। उसके लगभग एक सप्ताह बाद ही, सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी की कांग्रेस अक्तूबर के दूसरे सप्ताह में हुई। इस कांग्रेस में ४४ दूसरे देशों की बिरादर कम्युनिस्ट पार्टियों के प्रतिनिधि भी मौजूद थे। इस प्रकार, यह कांग्रेस संसार के मजदूरों की एकता और उनकी बढ़ती हुई शक्ति की प्रतीक बन गई थी।

इस कांग्रेस में कॉ. मालेन्कोफ़ ने अपनी रिपोर्ट पेश की थी। इस रिपोर्ट में महान् स्तालिन की पुस्तक के द्वारा प्रस्तुत किये गये वैज्ञानिक मार्क्सवाद की रोशनी में अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थिति का विवेचन किया गया था। उसमें बताया गया था कि कैसे फासिस्टों की हार के कारण, साम्राज्यवादियों की सारी योजनायें धूल में मिल गई हैं और समाजवाद तथा जनवाद के खेमे की शक्ति और अधिक बढ़ गई है; किस प्रकार उपनिवेशों और अर्द्ध-उपनिवेशों की जनता में जनवाद की स्थापना और मुक्ति के लिये एक नया उभार आया है। चीन में जनवाद की जीत के साथ-साथ, दुनिया की एक-तिहाई जनता जनवाद और शान्ति के खेमे में आगई है। साम्राज्य-वादियों का खेमा आम संकट के भंवर में फंस कर नाश की ओर बढ़ रहा है और जनवाद का खेमा महान् निर्माणकारी योजनायें कार्यान्वित कर रहा है। सोवियत संघ

की जनता कम्युनिज़्म के निर्माण की ओर अग्रसर होरही है। उन्होंने सारी दुनिया के सामने युद्धखोरों को बेनक़ाब करके, सारे संसार के जनसाधारण को शान्ति के लिये क्रियाशील बनाने का काम रखा।

इस कांग्रेस ने सोवियत की जनता के सामने कम्युनिज़्म की उच्चतर मंज़िल तक पहुंचने की परिस्थितियां पैदा करने के लिये अगली पंचसाला योजना का मसविदा भी पेश किया।

इस कांग्रेस ने शान्ति और मुक्ति के मानवता के भावी पथ को प्रकाशित किया।

● अन्तिम सन्देश

इसी कांग्रेस के अन्त में १४ अक्तूबर, १९५२ को हमारे युग के सबसे बड़े महापुरुष स्तालिन ने मानवता को अपना यह अन्तिम संदेश दिया :

"साथियो ! मुझे इजाज़त दीजिये कि मैं अपनी कांग्रेस की तरफ़ से उन सभी बिरादराना पार्टियों और दलों के प्रति उनके मित्रतापूर्ण अभिनन्दन के लिए, सफलता की उनकी कामनाओं के लिए और उनके विश्वास के लिए आभार प्रदर्शित करूं, जिनके प्रतिनिधियों ने अपनी उपस्थिति से हमारी कांग्रेस की इज्ज़त बढ़ायी है या जिन्होंने कांग्रेस के लिए अभिनन्दन के सन्देश भेजे हैं।

"उनका यह विश्वास हमारे लिए विशेष रूप से मूल्यवान है। यह इस बात का प्रतीक है कि जनता के उज्ज्वल भविष्य के लिए हमारी पार्टी के संघर्ष में, जंग के ख़िलाफ़ संघर्ष में और शान्ति क़ायम रखने के संघर्ष में वे हमारी पार्टी का समर्थन करने को तैयार हैं।

"यह सोचना ग़लत होगा कि चूँकि हमारी पार्टी अब एक शक्तिशाली ताक़त बन गयी है, इसलिए उसे समर्थन की ज़रूरत नहीं रही। यह बात सही नहीं है। बाहरी देशों की बिरादराना जनता के विश्वास, सहानुभूति और समर्थन की हमारे देश को हमेशा ज़रूरत रही है और ज़रूरत रहेगी।

"इस समर्थन की विशेषता यह है कि जब कभी कोई बिरादराना पार्टी हमारी पार्टी की शान्तिमय आकांक्षाओं का समर्थन करती है, तो साथ ही साथ यह, शान्ति क़ायम रखने के संघर्ष में स्वयं उसकी जनता का समर्थन भी होजाता है। सन् १९१८-१९ में, जब ब्रिटेन के पूँजीपति वर्ग ने सोवियत संघ पर हथियारबन्द हमला किया था, तो ब्रिटेन के मज़दूरों ने "रूस में दख़लन्दाज़ी बन्द करो" का नारा बुलन्द करके, उस जंग के ख़िलाफ़ संघर्ष का संगठन किया था। उनका यह समर्थन, सबसे पहले शांति के लिए ब्रिटेन की जनता के संघर्ष का समर्थन था और साथ ही, वह सोवियत संघ का समर्थन भी था। कामरेड थोरे या कामरेड तोगलियाती जब ऐलान करते हैं कि उनके देशों की जनता सोवियत संघ की जनता के ख़िलाफ़

लड़ाई न लड़ेगी, तो यह ऐलान सबसे पहले शांति के लिए संघर्ष करने वाले फ्रांस और इटली के मजदूरों और किसानों का समर्थन करना होता है और साथ ही, वह सोवियत संघ की शांतिमय आकांक्षाओं का समर्थन भी होता है। पारस्परिक समर्थन की इस विशेषता का कारण यह है कि हमारी पार्टी के हित, न सिर्फ़ शांति-प्रेमी जनता के हितों के खिलाफ़ नहीं जाते, बल्कि उसके विपरीत, उनके हितों के साथ एक रूप हो जाते हैं। जहाँ तक सोवियत संघ का सवाल है, उसके हित विश्व शांति के ध्येय से एकदम ही अभिन्न हैं।

"स्वाभाविक है कि हमारी पार्टी बिरादराना पार्टियों की ऋणी नहीं रह सकती और उसे अपनी ओर से उनका और स्वतंत्रता के उनके संघर्ष में, शान्ति क़ायम रखने के उनके संघर्ष में, उनके देशों की जनता का भी समर्थन करना ही चाहिये। सन् १९१७ में, जब हमारी पार्टी ने राज्यसत्ता पर कब्ज़ा कर लिया और जब पूंजीपतियों व ज़मींदारों के उत्पीड़न के ख़ात्मे के लिये कारगर क़दम उठा लिया था, तो बिरादराना पार्टियों के प्रतिनिधियों ने हमारी पार्टी के साहस और कामयाबियों की प्रशंसा में उसे दुनिया के क्रांतिकारी आंदोलन और मज़दूर आंदोलन की "तूफ़ानी पलटन" की उपाधि दी। इस तरह उन्होंने यह आशा प्रकट की कि "तूफ़ानी पलटन" की सफलताओं से, पूंजीवादी जुए के नीचे कराह रही जनता को राहत पाने में मदद मिलेगी। मेरे विचार में हमारी पार्टी ने इन आशाओं को पूरा किया है, ख़ास तौर से दूसरे विश्व युद्ध के दौरान में जब जर्मन और जापानी फ़ासिस्टी आतंक का अंत करके, सोवियत संघ ने योरुप और एशिया की जनता को फ़ासिस्टी गुलामी के ख़तरे से मुक्त किया।

"जब हमारी यह "तूफ़ानी पलटन" एकमात्र और अकेली थी, जब उसे इस नेतृत्व की भूमिका को क़रीब-क़रीब अकेला ही पूरा करना पड़ रहा था, तब बेशक इस गौरवशाली उद्देश्य को पूरा करना बहुत ही मुश्किल काम था। लेकिन, यह तो बीते ज़माने की बात है। आज हालात बिलकुल ही भिन्न हैं। आज जब चीन और कोरिया से लेकर चैकोस्लोवाकिया और हंगरी तक जनता के जनवादी देशों के रूप में नयी "तूफ़ानी पलटनें" सामने आगयी हैं,—तो अब हमारी पार्टी के लिए संघर्ष करना ज़्यादा आसान होगया है और सचमुच में काम बड़े मज़े में आगे बढ़ रहा है।

"वे कम्युनिस्ट, जनवादी, मज़दूर और किसान पार्टियाँ जिनके हाथों में अब तक भी सत्ता की बागडोर नहीं आयी है और जो अभी भी पूंजीपति वर्ग के तानाशाही क़ानूनों के बूटों के नीचे काम कर रही हैं, उनकी ओर ख़ास ध्यान देने की ज़रूरत है। बेशक, उनके लिए काम करना ज़्यादा मुश्किल है। फिर भी, उनके लिए काम करना उतना कठिन नहीं है जितना कि वह हमारे रूसी कम्युनिस्टों के लिए ज़ारशाही ज़माने में था, जब थोड़े आगे बढ़े हुये आंदोलन को भी भयानक अपराध करार दे दिया

जाता था। फिर भी, रूसी कम्युनिस्ट दृढ़तापूर्वक डटे रहे, वे मुश्किलों से नहीं डरे और उन्होंने विजय हासिल की। इन पार्टियों के बारे में भी ऐसा ही होगा।

" आखिर इन पार्टियों के लिये काम करना उतना ही कठिन क्यों नहीं रहा है, जितना कि वह जारशाही जमाने में रूसी कम्युनिस्टों के लिये था ?

"एक तो इसलिए कि उनके सामने संघर्ष और सफलताओं की वे मिसालें मौजूद हैं, जिन्हें सोवियत संघ और जनता के जनवादी देशों ने पेश किया है। इस कारण, वे इन देशों की गलतियों व सफलताओं से सीख सकती हैं और इस तरह अपना काम आसान बना सकती हैं।

"और, दूसरे इसलिये कि स्वाधीनता आन्दोलन का खास दुश्मन—पूंजीपति वर्ग—स्वयं बदल गया है, बहुत काफ़ी बदल गया है। वह और ज़्यादा प्रतिक्रियावादी होगया है। वह जनता से अलग होगया है और इस तरह उसने अपने को कमजोर बना लिया है। स्वाभाविक है कि यह परिस्थिति भी, क्रांतिकारी और जनवादी पार्टियों के काम को आसान बनायेगी ही।

"पहले पूंजीपति वर्ग उदारवादी होने का शौक़ कर सकता था, पूंजीवादी-जनवादी स्वतंत्रताओं का समर्थन कर सकता था और ऐसा करके वह जनता के बीच लोकप्रियता हासिल कर सकता था। अब तो उस उदारवाद का एक चिन्ह भी बाकी नहीं रह गया है। तथाकथित " व्यक्ति की आज़ादी " अब नहीं रह गयी है। अब व्यक्ति के अधिकार सिर्फ़ उन्हीं के लिए माने जाते हैं जिनके पास पूंजी है; दूसरी ओर बाकी तमाम नागरिकों को सिर्फ़ शोषण के योग्य इन्सानी कच्चा माल माना जाता है। मनुष्यों और देशों के समान अधिकारों के सिद्धान्त को पैरों तले रौंदा गया है। उसकी जगह, यह सिद्धान्त क़ायम किया गया है कि अल्पमत शोषकों को तो तमाम अधिकार हैं और बहुमत शोषितों को कोई अधिकार नहीं हैं। पूंजीवादी-जनवादी स्वतंत्रताओं के झंडे को उठाकर फेंक दिया गया है। यदि आप जनता की बहुसंख्या को अपने इर्द-गिर्द संगठित करना चाहते हैं तो मेरे विचार से आपको ही, कम्युनिस्ट और जनवादी पार्टियों के प्रतिनिधियों को ही, इस झंडे को उठाना होगा और आगे ले चलना होगा। दूसरा और कोई नहीं है जो इसे उठा सके।

"पहले पूंजीपति वर्ग को राष्ट्र का अगुआ माना जाता था। उसने राष्ट्र के अधिकारों और आज़ादी को " सबसे ऊपर " मानकर उनका समर्थन किया था। अब " राष्ट्रीय सिद्धान्त " का एक भी चिन्ह बाकी नहीं रह गया है। अब पूंजीपति वर्ग डॉलरों के लिये राष्ट्र के अधिकारों और आज़ादी को बेच देता है। राष्ट्रीय आज़ादी और राष्ट्रीय स्वाधीनता का झंडा उठाकर फेंक दिया गया है। यदि आप अपने देश के देशभक्त होना चाहते हैं, यदि आप राष्ट्र की अगुआ शक्ति बनना चाहते हैं तो इस बात में

जरा भी शक नहीं है कि आपको ही, कम्युनिस्ट और जनवादी पार्टियों के प्रतिनिधियों को ही, इस झंडे को उठाना होगा और आगे ले चलना होगा। दूसरा और कोई नहीं है जो उसे उठा सके।

"आज की स्थिति ऐसी ही है। स्वाभाविक है कि इन तमाम परिस्थितियों से उन कम्युनिस्ट और जनवादी पार्टियों के काम में आसानी होगी, जिनके हाथों में अभी तक भी सत्ता की बागडोर नहीं आयी है।

"फलस्वरूप, जहां अभी भी पूंजी का बोलबाला है उन देशों की हमारी बिरादर पार्टियों की सफलता और विजय पर भरोसा करने का हर कारण मौजूद है।

"हमारी बिरादर पार्टियाँ ज़िन्दाबाद!

"बिरादर पार्टियों के नेता दीर्घजीवी हों और स्वस्थ रहें!

"राष्ट्रों के बीच शांति ज़िन्दाबाद!

"जंगबाज़ों का नाश हो!"

महान् स्तालिन का यह अन्तिम सन्देश हमारे देश के लिये विशेष महत्व का है। हमारे देश में हर मनुष्य कहता है कि राष्ट्रीय कांग्रेस पार्टी ने पन्द्रह अगस्त के अपने सभी वायदों को तोड़ दिया है, और उन सभी सिद्धान्तों के ख़िलाफ़ खड़ी हो रही है, जिनके लिये एक ज़माने में वह साम्राज्यवाद के ख़िलाफ़ लड़ा करती थी। महान् स्तालिन ने बताया है कि अब उन सिद्धान्तों की रक्षा करने का काम भारतीय मज़दूरों और किसानों की कम्युनिस्ट और दूसरी जनवादी पार्टियों को ही करना पड़ेगा। यह सीख हमें अपने देश की स्वतंत्रता, प्रभुता और नागरिक अधिकारों की रक्षा के लिये सभी जनवादी पार्टियों का एक संयुक्त मोर्चा बनाने की राह बताती है।

अध्याय ११.

महाप्रयाण

(सन् १९५३)

१९ वीं कांग्रेस ने नई पंचवार्षिक योजना तथा दूसरी बातों पर अपने निर्णय करते समय, नहीं सोचा था कि पार्टी-कांग्रेस में महान् नेता की यह अन्तिम उपस्थिति है।

आख़िर क्रांति का पेंतीसवां वार्षिकोत्सव आया। ६ नवम्बर को बोल्शोई नाट्य-शाला की बैठक में, स्तालिन मार्शल की वर्दी में स्वस्थ दीख पड़ते थे। उन्होंने दृढ़तापूर्वक क़दम बढ़ाते हुये, दूसरी पंक्ति के बीच में अपना स्थान ग्रहण किया। उनके साथ पोलिट ब्यूरो के सदस्य और दूसरे नेता भी थे। अगले दिन हर साल की तरह लाल मैदान में अक्तूबर क्रांति का महान् महोत्सव बड़े जोश-ख़रोश के साथ मनाया गया। उस समय भी स्तालिन मार्शल की वर्दी में आकर, लेनिन-समाधि की छत पर खड़े हुये। लोगों ने अपने प्रिय नेता के दर्शन से गद्गद् हो, हर्षध्वनि की। प्रधान भाषण मार्शल तिमोशेंको ने किया। कोई दुःशंका नहीं थी। यद्यपि समय-समय पर उनके स्वास्थ के सम्बंध में चिन्ताजनक ख़बरें भी उड़ा करती थीं, लेकिन साम्राज्यवादियों की झूठ से अघाये हुये लोग उन्हें कोई महत्व नहीं देते थे।

अन्त में, १९५३ का सन् आया। ७ फरवरी को अर्जेन्तीन के राजदूत ब्रावो ने स्तालिन से मुलाक़ात करने का सौभाग्य प्राप्त किया। उसने २४ मिनटों तक मुलाक़ात की और उत्सुक जनता ने बहुत संतोष की सांस ली, जबकि ब्रावो ने बतलाया : "वह शारीरिक तौर से बहुत ही स्वस्थ और बातचीत में असाधारण तौर से सजग दिखाई पड़े।" १७ फरवरी की रात को भारतीय राजदूत क. प. स. मेनन ने भी स्तालिन से क्रेमलिन में आध घंटे तक मुलाक़ात की। उन्होंने भी अर्जेन्तीन के राजदूत की तरह ही उनके स्वास्थ के बारे में खुशख़बरी दी। लेकिन, ७३ वर्षों का कर्मठ शरीर कितने दिनों तक और साथ देता?

१. निधन

आख़िर १ मार्च का वह शोचनीय दिन आगया, जब हृदय के धड़कते रहते भी मस्तिष्क ने विश्राम लेना शुरू किया। उस दिन रात को वह बेहोश हुये,

तो फिर होश में नहीं आये। ५ मार्च को उन्होंने अपनी जीवन-यात्रा समाप्त की। महान् स्तालिन की बीमारी और मृत्यु के बारे में सूचना देते हुये, डाक्टरों ने निम्न बुलेटिन निकाला :

"१ मार्च की रात को खून का दबाव बढ़ जाने तथा रक्त की नालियों की दीवारों के मोटे और कड़े पड़ जाने के कारण, यो० वि० स्तालिन के मस्तिष्क के अन्दर बांये अर्द्धवृत्त में रक्तस्राव होगया। फलस्वरूप, शरीर के दाहिने हिस्से में लकवा मार गया और उनकी चेतना-शक्ति का लगातार ह्रास शुरू होगया। बीमारी के ठीक पहले दिन ही, स्नायु-केन्द्रों की क्रियाओं में गड़बड़ी के लक्षण पाये गये। दिन-प्रतिदिन यह गड़बड़ी बढ़ती ही गई। लम्बे विराम के साथ, रुक-रुक कर आने वाली सांसों के रूप में यह गड़बड़ी प्रकट हुई। २ मार्च की रात को सांस लेने की क्रिया में गड़बड़ी जब-तब भयानक रूप धारण करने लगी। बीमारी शुरू होने के समय से ही, हृदय और रक्त-संचार-प्रणाली में भारी विकार पाये गये—खून का ऊंचा दबाव, नाड़ी की निरन्तर असमान धड़कन तथा दिल का फैल जाना। सांस लेने की क्रिया तथा रक्त-संचार में गड़बड़ी के बढ़ते जाने के कारण, ३ मार्च के दिन से ऑक्सीजन की कमी शुरू होगई थी। बीमारी के पहले दिन से तापमान अत्यन्त बढ़ गया था और रक्त के श्वेतकणों में वृद्धि होगई थी, जो फ़ेफड़ों में सूजन की बढ़ती की सूचक हो सकती थी।

"बीमारी के आख़िरी दिन शरीर की सामान्य स्थिति तेज़ी से बिगड़ गई, दिल और रक्त-संचार-प्रणाली में गहरे और भीषण ह्रास (शरीर-पात) के बार-बार आक्रमण होने लगे। बिजली के ज़रिये दिल की धड़कनों का चार्ट लेने से पता चला कि हृदय की मांसल दीवारों के और कड़े होजाने से, वर्तुलाकार धमनियों के अन्दर रक्त-संचार में भारी गड़बड़ी आगई।

"५ मार्च को दोपहर के बाद, रोगी की हालत तेज़ी से बेहद बिगड़ गई : सांस उखड़ गई, उसकी गति अत्यन्त विकृत होगई, नाड़ी की धड़कन प्रति मिनट १४०–१५० तक पहुँच गई, नाड़ी का फ़ैलाव गिर गया।

"हृदय, रक्त-संचार-क्रिया तथा सांस के ह्रास में उत्तरोत्तर बढ़ती के साथ नौ बज कर पचास मिनट (भारतीय समय—रात के एक बज कर बीस मिनट) पर यो० वि० स्तालिन की मृत्यु होगई।"

सोवियत की जनता अपने महान् नेता को कितना प्यार करती थी, किस तरह उन्हें पिता, त्राता और महामानव के रूप में देखती थी, इसका पता उनके सम्मान में की गई परेड, अर्थी की यात्रा और उनके जन्म-स्थान गोरी में व्यक्त हुये जनता के उद्‌गारों से लगता है। इसीलिये, हम यहाँ अलेक्सेइ सुरिकोफ़ द्वारा लिखित वर्णन और 'प्राव्दा' के लेखों से उद्धरण दे रहे हैं।

२. *सम्मान-गारद*

रात और दिन, बिना किसी विराम के, लगातार तीन दिनों तक मॉस्को के बाज़ारों में लोगों के प्रेम और शोक का सजीव सागर उमड़-उमड़ कर स्तम्भ-सदन की ओर प्रवाहित होता रहा। जिसके भी वक्ष में सोवियत देशभक्त का हृदय धड़का है, ऐसा हरएक व्यक्ति इन दिनों नेता और शिक्षक की अर्थी के पास तक पहुँचने की कोशिश कर रहा था, ताकि वह अपनी श्रद्धांजलि अर्पित कर सके, स्तालिन के प्रति अपनी पितृभक्ति को व्यक्त कर सके। उनके लक्ष्य के प्रति, उनकी पार्टी के प्रति वफ़ादारी की शपथ ले सके। नेता को अन्तिम श्रद्धांजलि देने का यह क्रम अगर सालभर तक चलता रहता, तब भी यह सजीव मानव-सागर इसी प्रकार अन्तहीन बना रहता, जिस प्रकार कि इन उन्तीस सालों से वह अनंत सजीव सागर ग्रेनाइट पत्थर से बनी लेनिन की समाधि के सामने उमड़ता रहा है।

हर कोने से स्तम्भ-सदन में लाये गये फूलों और हारों का ढेर लोगों के प्रेम की अभिव्यक्ति का केवल एक ही रूप है। लेकिन, इन फूलों की मूक भाषा कितनी अर्थपूर्ण है! हारों के साथ लगे स्याह हाशिये वाले लाल फीतों पर सुनहरी अक्षरों में रूसी और बन्धु-जातियों की भाषाओं में शुभ्रतम, अत्यन्त सच्चे, कोमलतम और साहस से पूर्ण शब्द अंकित हैं।

सोवियत जनता के प्रेम और शोक को मुखर करने वाले हारों के साथ-साथ, हमारे देश की सीमाओं से बाहर शान्ति और समाजवाद के संघर्ष में योग देने वाले हमारे मित्रों के हार भी शामिल हैं। महान् चीन, संघर्षरत कोरिया, जनता के जनतंत्रों और पूंजीवादी देशों की बिरादराना कम्युनिस्ट तथा मजदूर पार्टियों के एक के बाद एक प्रतिनिधि-मंडलों ने शव-शय्या के चरणों में अपने हार अर्पित किये। इनमें से एक पर, ये शब्द अंकित हैं: 'एक कृतज्ञ और निस्सीम परमभक्त शिष्य मौरिस थोरेज़ की ओर से!'

इन तीन दिनों में कई-कई घंटों तक, दिन और रात उमड़ते-बढ़ते अबाध मानव-सागर के तटों पर मैं खड़ा रहा। लगता था, जैसे सामने से गुज़रने वाले हरएक भाई और हरएक बहिन के हृदय की धड़कन सुनाई दे रही हो। मेरे कानों ने सुना उन शब्दों को, जो मुंह से प्रकट हुये थे; और हृदय ने आंखों की चमक से अनुभव किया अन्तर से निकले उन शब्दों की सचाई को,—वे शब्द जो मेरे देशवासियों के मुंह से महान् विदाई के इन क्षणों में प्रकट हुये हैं।

मॉस्को निवासी इस किशोर को देखिये, जिसके सिर पर घने लाल बाल छाये हैं। अनायास ही उसके पांव धीमे पड़ जाते हैं और वह एक लम्बी गहरी नज़र से

स्तालिन के रूप को देखता है,—ठीक बड़े लोगों की भांति। अपने ऊर्ध्वमुखी और उज्ज्वल समूचे भावी जीवन के लिये, वह महान् स्तालिन की छवि को, उनकी अमिट स्मृति को अपने हृदय में उतार लेना चाहता है।

सोवियत अफ़सरों और तोपख़ाना एकेदमी के छात्रों की पांतें, एक के बाद एक महान् जनरलस्सिमो के सामने से गुज़रती हैं। चौड़े कंधों के ये प्रतापी युवक, मालूम होता है, ख़ास तौर के मज़बूत इस्पात से ढाले गये हैं। आकृति-सम्बंधी कुछ अलक्षित चिन्हों से उनमें रूसियों, उक्रेनियों और उज़्बेकों को और हमारी शानदार मातृभूमि में बसने वाली अन्य जातियों की सन्तानों को पहचाना जा सकता है। हमारे देश की जनता की शानदार स्तालिन-पीढ़ी के इन किशोर-प्रतिनिधियों की प्रतिभापूर्ण आँखों में कितना अक्षय पितृप्रेम और सैनिकों जैसी वफ़ादारी हिलोरें ले रही है।

नेता की अर्थी के निकट अभी-अभी दो सामूहिक-किसान महिलाओं ने 'सम्मान-गारद' में स्थान ग्रहण किया है,—इनमें एक बुजुर्ग महिला है और दूसरी फुर्तीली तपे चेहरे की एक किशोरी। दोनों के वक्षों पर 'समाजवादी-श्रम-वीर' के सोने के तारे दिखाई दे रहे हैं। साम्यवाद के प्रतिभाशाली शिल्पकार की महान् विदाई के इन क्षणों में, सोवियत जनता की सभी पीढ़ियों की स्तालिनी एकता के ये मूर्तिमान रूप हैं।

तीन दिनों तक महान् और बुद्धिमान स्तालिन की अर्थी के सामने जनता के प्रेम और शोक का अक्षय और अनन्त जीवित सागर उमड़ता रहा। तीन दिनों तक सभी कालों और सभी लोगों के महानतम सेनानी की अर्थी के चरणों के पास सैनिक गारद बदलते रहे। स्तालिनी सैनिकों के वीरतापूर्ण खिले हुये किशोर चेहरे, 'प्रोजेक्टरों' के प्रकाश में चमकती हुई संगीनों की इस्पाती नोकें, दुनिया की परम विजयिनी सेना और शान्ति तथा निर्माण सम्बन्धी श्रम के निःस्वार्थ रखवारों की सेना, अपनी शक्ति और अमर गौरव के रचयिता की अर्थी के सामने शोकपूर्ण सम्मान में खड़ी थी।

तीन दिनों तक अर्थी के 'सम्मान-गारद' बदलते रहे।

पार्टी कर्मियों, मंत्रियों, सोवियत सेना के प्रसिद्ध मार्शलों और जनरलों, नौसेना के एडमिरलों—सभी ने बारी-बारी से अर्थी के निकट 'सम्मान-गारद' में अपना स्थान ग्रहण किया।

मेहनतकश लोगों के लक्ष्य के प्रति असीम भक्ति की भावना में साथी स्तालिन द्वारा पाले-पोसे गये, सोवियत देश के प्रसिद्ध वैज्ञानिकों, जन-कलाकारों और साहित्यकारों, श्रेष्ठतम शिक्षकों, डाक्टरों, इंजीनियरों, डिज़ाइनरों, आविष्कारकों, समाजवादी सोवियत के बुद्धिजीवियों के प्रतिनिधियों ने बारी-बारी से विज्ञान के महान् प्रकाशपुंज की अर्थी के निकट 'सम्मान-गारद' में अपना स्थान ग्रहण किया।

करोड़ों सोवियत जवानों की सशक्त सेना के नेताओं और सामान्य सैनिकों ने, मज़दूर सभाओं के नेताओं और सामान्य कार्यकर्त्ताओं ने, उद्योग की अग्रणी विभूतियों और नये समाजवादी देहातों के निर्माताओं ने, एक के बाद एक 'सम्मान-गारद' में स्थान ग्रहण किया।

जनता के इन सन्देश-वाहकों ने नेता की अर्थी के सन्मुख केवल भारी शोक और दुःख ही प्रकट नहीं किया, बल्कि सबसे बढ़कर यह कि उन्होंने लेनिन और स्तालिन के लक्ष्य के प्रति वफ़ादार रहने की, कम्युनिस्ट पार्टी और उसकी केन्द्रीय कमिटी के प्रति वफ़ादार रहने की अटूट शपथ ग्रहण की।

'सम्मान-गारद' में दुनिया के पहले समाजवादी राज्य के मेहनतकश लोगों के साथ-साथ जनता के जनतंत्रों की सरकारों के अध्यक्षों, प्रतिनिधि-मंडलों के सदस्यों अन्तर्राष्ट्रीय कम्युनिस्ट और मज़दूर आन्दोलन के प्रमुख नेताओं ने बारी-बारी से स्थान ग्रहण किया।

चैकोस्लोवाकिया जनतंत्र के अध्यक्ष क्लीमन्त गोतवाल्द, पोल जनता के जनतंत्र की मंत्रिपरिषद के अध्यक्ष बोलेस्लवि बीरुत, पोलैंड के मार्शल रोकोस्सोवस्की, चीनी जनता के जनतंत्र की राजकीय प्रशासन-परिषद के महामंत्री और पर-राष्ट्र-मंत्री चाउ-एन्-लाई, रूमानियन जनता के जनतंत्र की मंत्रिपरिषद के अध्यक्ष गेओर्गे गेओर्गीयू देज़, बुल्गारी जनता के जनतंत्र की मंत्रिपरिषद के अध्यक्ष विल्को चेर्वेन्कोफ़, मगयार जनता के जनतंत्र की मंत्रिपरिषद के अध्यक्ष मथाइअस राकोसी, जर्मन समाजवादी एकता पार्टी के प्रधान मंत्री वाल्टर उलब्रिख़्त, जर्मन जनवादी जनतंत्र के प्रधान मंत्री ओटो ग्रोटवाल्ड, मंगोल जनता के जनतंत्र के प्रधान मंत्री चेदेन्बल ने बारी-बारी से 'समान-गारद' में स्थान ग्रहण किया।

'समान-गारद' में स्थान-ग्रहण करने वालों में इटली की जनता के नेता पाल्मीरो तोगलियात्ती, स्पेन की कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय कमिटी की प्रधान मंत्रिणी दोलोर इबारुरी, ब्रिटेन की कम्युनिस्ट पार्टी के प्रधान मंत्री हैरी पौलिट, आस्ट्रिया की कम्युनिस्ट पार्टी के अध्यक्ष को प्लेनिग, फिनलैंड की कम्युनिस्ट पार्टी के अध्यक्ष विल्ले पेस्सी और इटली की सोशलिस्ट पार्टी के मंत्री पिएत्रो नेन्नी भी थे।

सुबह के दो बजे महान् स्तालिन के वफ़ादार शिष्यों और सहकर्मियों—साथी ग० म. मालेन्कोफ़, व. म. मोलोतोफ़, क. य. वोरोशिलोफ़, न. स. बुल्गानिन, ल. म. कगानोविच, अ. ई. मिकोयान, म. ज. साबुरोफ़ और म. ग. पेर्वुखिन—ने 'सम्मान-गारद' में स्थान ग्रहण किया।

इसके बाद, 'सम्मान-गारद' में न. म. श्वेर्निक, म. अ. सुस्लोफ़, प. क. पोनोमरेन्को, न. अ. मिखाइलोफ़, अ. अ. अन्द्रेयेफ़, अ. म वसीलेव्स्की और ग. क. झुकोफ़ ने स्थान ग्रहण किया।

सुबह के ढाई बजे मज़दूर सभा-सदन के स्तम्भ-भवन में प्रवेश बन्द कर दिया गया।

महान् नेता के प्रति अन्तिम श्रद्धांजलि देते हुये, सोवियतों के देश के लोगों ने साथी स्तालिन द्वारा लिखित **सोवियत संघ में समाजवाद की आर्थिक समस्यायें** और सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी की उन्नीसवीं कांग्रेस में दिये गये उनके भाषण— **अन्तिम संदेश**— में वर्णित साम्यवाद के पथ के प्रति वफ़ादार रहने की शपथ ग्रहण की।

स्तालिन हम सोवियत लोगों के लिये, हमारे नेताओं—अपने शिष्यों और सहकर्मियों—के लिये, एक समृद्ध और गौरवपूर्ण दायभाग छोड़ गये हैं। पार्टी की उन्नीसवीं कांग्रेस में कहे गये, ग. म. मालेन्कोफ़ के ये शब्द सोवियत जनता में गहरे देशभक्तिपूर्ण गर्व का संचार करते हैं :

"हमारा शक्तिशाली देश अपनी शक्ति के शिखर पर पहुंच, सफलता पर सफलतायें पाता हुआ आगे बढ़ रहा है। हमारे पास पूर्ण साम्यवादी समाज के निर्माण के लिये आवश्यक प्रत्येक चीज़ है। सोवियत संघ प्राकृतिक निधियों का अक्षय भंडार है। हमारा राज्य इन व्यापक निधियों को मेहनतकशों के काम में लाने की अपनी योग्यता को प्रदर्शित कर चुका है। सोवियत जन एक नये समाज का निर्माण करने और विश्वास के साथ सामने भविष्य की ओर देखने की अपनी क्षमता को प्रदर्शित कर चुके हैं।

"लड़ाइयों में परखी, कसौटी पर खरी उतरी, फ़ौलादी बनी हुई तथा लेनिन-स्तालिन की नीति का अडिग अनुसरण करनेवाली हमारी पार्टी सोवियत संघ की जनता की अगुआ है।"

इसी में हमारी शक्ति निहित है। इसी में आने वाली सुबह में हमारे विश्वास का अक्षय स्रोत निहित है। इसी में यह गारंटी निहित है कि दुनिया के मेहनतकश मानव-सुख के निर्माण में हमारे अनुभवों से सीखते हुये, प्रतिदिन अधिकाधिक संख्या में उसी पथ को ग्रहण करेंगे, जिस पर कि हम लेनिन और स्तालिन के विजयी झंडे के नीचे आगे बढ़ रहे हैं।

३. स्तालिन की जन्मभूमि—गोरी

उस रात को लोग कभी नहीं भूलेंगे। गोरी क़स्बे की आंखें ज़रा भी नहीं झपकीं। पौ फटते ही हज़ारों लोग स्तालिन-प्रांगण में जमा होगये। उनकी आंखों में अकथनीय शोक और दुःख भरा था। योसेफ़ विस्सारियोनोविच के निधन का समाचार मुंह-मुंह सारे क़स्बे में फैल गया था।

"हमारी कितनी इच्छा थी कि साथी स्तालिन अपने जन्मस्थल—गोरी में एक बार और आते और देखते कि यहां की प्रत्येक चीज़ में कितना अद्भुत परिवर्तन हो गया है। हम चाहते थे कि हमारे साथ वह हमारी खुशी में शामिल होते। और, अब...।"—स्कूल के एक बहत्तर वर्षीय वृद्ध शिक्षक के मुंह से ये शब्द निकले थे। उनके इन शब्दों में गोरी के प्रत्येक निवासी की आकांक्षा व्यक्त हुई थी।

स्तालिन-प्रांगण उस मामूली घर के पास पहुंचा देता है, जिसमें नेता ने जन्म लिया था। दुनिया के सभी हिस्सों से आये हुये, अनगिनत लोग इस घर की यात्रा कर चुके हैं और आगे भी स्तालिन की प्रतिभा के अमर गौरव के प्रति अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करने के लिये, अनगिनत लोग इस घर की यात्रा करेंगे। उस दिन यहां शोक से पूर्ण लोगों की एक अनन्त धारा उमड़ पड़ी। इस घर के सामने, जहां महान् जीवन का उदय हुआ था—एक ऐसे जीवन का जिसने अपने रक्त की आखिरी बूंद तक मेहनतकश लोगों की सेवा की—वे नंगे सिर, निस्तब्ध और निश्चल खड़े थे। गोरी के निवासियों के साथ आसपास के ख़िदिस्तावी, तिनिख़िदी, स्वेनेती, ख़ेल्तूबानी और दूसरे गांवों के सामूहिक किसान भी यहां आये थे। छोटे घर के ऊपर बने संगमरमरी पंडाल के खम्भों पर काले हाशियों से युक्त, आधे झुके हुये फरहरे फहरा रहे थे।

स्मारक-म्युज़ियम में उन्नीस बड़ी जिल्दें रखी हैं, जिनमें आगन्तुकों की भावनायें दर्ज हैं। ये योसेफ़ विस्सारियोनोविच स्तालिन के प्रति समूची प्रगतिशील मानव जाति के असीम प्रेम, भक्ति और कृतज्ञता का हृदयस्पर्शी चित्र पेश करती हैं।

आइये, आखिरी पन्नों को पलट कर एक नज़र देखें, जिन पर मार्च सन् १९५३ की तारीखें पड़ी हैं। यहां पर आखाल्त्सीने ज़िले के सामूहिक-किसान बगरात दव्नोसादर्ज़े के, महान् क़ौमी युद्ध के एक सैनिक के—जिसने अपने दो बेटों के साथ तुआप्से से बर्लिन तक अभियान किया था—शब्द अंकित हैं: "प्रिय साथी स्तालिन, एक सैनिक के रूप में, एक जनसेवक के रूप में, एक से अधिक बार मैंने आपकी सराहना प्राप्त की थी। आज शान्तिपूर्ण नागरिक जीवन में, मैं इस तरह काम कर रहा हूं कि अब भी आपके सन्तोष का पात्र बन सकूं। मैं आपको अपना वचन देता हूं कि भविष्य में भी साम्यवाद की जीत के लक्ष्य के लिये अपनी शक्तियों को लगाने में, मैं उसी प्रकार कोई कसर नहीं उठा रखूंगा, जिस प्रकार कि जनता की खुशहाली के लिये अपनी शक्तियां लगाने में आप कोई कसर नहीं उठा रखते।"

इस लिखावट पर २ मार्च की तारीख़ पड़ी है। नेता की ख़तरनाक बीमारी की ख़बर मिलने से पहले की यह आखिरी लिखावट है। इसके बाद की लिखावटें साथी स्तालिन के जीवन के प्रति आशंकाओं से भरी हैं और उस आह्वान का देशभक्तिपूर्ण जवाब हैं, जो पार्टी तथा सरकार ने साम्यवाद के निर्माण के लिये अपनी पांतों को और भी ज़्यादा एकजूट बनाने के लिये किया था।

"आज ४ मार्च को, इस महान् पवित्र स्थल में, कम्युनिस्ट पार्टी और सोवियत सरकार से प्रतिज्ञा करते हैं कि हम और भी ज़्यादा निःस्वार्थ भाव से काम करेंगे, हम और भी ज़्यादा सतर्क रहेंगे और हम स्तालिन द्वारा निर्धारित कामों को सम्मान के साथ पूरा करेंगे।"—इस लिखावट के नीचे दस्तख़त हैं : 'शोतादज़े, चगुरिया।'

मार्च के इन दिनों में बाहर से आये हुये अतिथियों की अनेक लिखावटें भी इसमें मौजूद हैं : "फ्रान्स के सूती कपड़ा-मज़दूरों का प्रतिनिधि-मंडल—जिसने इस घर के दर्शन किये हैं, जहां कि साथी स्तालिन ने जन्म लिया था—अन्तर्राष्ट्रीय सर्वहारा के प्रिय नेता की अडिग इच्छा और साहस की सराहना में अपना मस्तक झुकाता है।"

६ मार्च को नई पंक्तियां, मेहनतकश लोगों के दुःख और शोक से पूर्ण पंक्तियां, आगन्तुकों के इस रजिस्टर में दर्ज हुई हैं : "यहां, जहां नेता ने पालने में जीवन बिताया था, मैं उनके निधन का शोक मनाता हूं।"—कवि इराकली अबाशिदज़े ने लिखा।

"मुझे यक़ीन नहीं होता कि हमारे प्यारे स्तालिन की छवि को काले हाशिये ने घेर लिया है।"—एक सैनिक अफ़सर की पत्नी ओल्गा तिनियाकोवा ने लिखा।

बावजूद इसके कि उनका शोक गहरा था, सोवियत नर-नारियों ने साहस, दृढ़ता और अपनी ताक़त में विश्वास से भरपूर पंक्तियां लिखीं। इस साहस, दृढ़ता और विश्वास का स्रोत सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी के प्रति उनके गहरे प्रेम में, पार्टी की बुद्धिमत्तापूर्ण नीति में, उनके असीम भरोसे में निहित है।

"साथी स्तालिन की सीख के मुताबिक, हम जियेंगे और काम करेंगे। पार्टी के नेतृत्व में, हम स्तालिन द्वारा निर्देशित पथ पर, साम्यवाद के पथ पर आगे बढ़ना जारी रखेंगे।"—यही वह शपथ है, जो इस घर के दर्शन करने वाले तमाम सोवियत नर-नारियों ने ग्रहण की। यही शपथ अत्याधिक शक्तिशाली रूप में,गोरी की फ़ैक्टरियों, दफ़्तरों और स्कूलों में हुई शोक-सभाओं में गूंजी।

युद्ध के बाद की पहली पंचवार्षिक योजना के काल में स्थापित सूती कपड़ा मिल—जिसने अब मज़दूरों की बड़ी बस्ती से युक्त भारी-भरकम कारख़ाने का रूप धारण कर लिया है—के भीमाकार बुनकर-विभाग के शान्त सांचों पर मिल के तमाम मज़दूर और कर्मचारी जमा हुये। सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय कमिटी और सोवियत सरकार को भेजे गये, अपने तार में उन्होंने अपने विचारों और भावनाओं को व्यक्त करते हुये, लिखा है : "हम अपनी प्रिय कम्युनिस्ट पार्टी के चारों ओर पांतों को और भी ज़्यादा घनिष्ट रूप में एकजूट करेंगे, अपनी समाजवादी मातृभूमि की महान् विजयों की हम सदा से और भी ज़्यादा जागरूकता के साथ रक्षा करेंगे; उसकी ताक़त को मज़बूत बनाने के लिये हम सदा से और भी ज़्यादा निःस्वार्थ भाव से काम करेंगे, ताकि साम्यवाद विजयी हो।"

४. अर्थी की अंतिम यात्रा

९ मार्च को, लेनिन के संघर्षों के साथी और उनके लक्ष्य को आगे ले जाने वाले महापुरुष, दुनिया के बुद्धिमान नेता और शिक्षक, योसेफ़ विस्सारियोनोविच स्तालिन की अन्तिम यात्रा के समय सोवियत जनता और सारी प्रगतिशील मानव जाति उनका साथ दे रही थी।

मज़दूर संघ-सदन का स्तम्भ-भवन। विदा की अन्तिम घड़ियां। वातावरण मातमी संगीत की उदास धुन में डूबा हुआ है। नेता की अर्थी के समीप केवल उनके सम्बंधी और मित्र, पार्टी और सरकार के प्रमुख सदस्य, मंत्री और दूसरे देशों की बिरादर कम्युनिस्ट और मज़दूर पार्टियों के नेता खड़े हैं। योसेफ़ विस्सारियोनोविच स्तालिन के अन्तिम संस्कार में शामिल होने के लिये आये हुये विदेशी सरकारों के प्रतिनिधि-मंडल और दूतावासों तथा विदेशी मिशनों के प्रमुख—जिन्हें उनकी सरकारों ने अन्तिम संस्कार के समय मौजूद रहने का आदेश दिया है,—सब अर्थी के समीप शोक में खड़े हैं। हर दो-दो, तीन-तीन मिनटों बाद 'सम्मान-गारद' बदल रहे हैं।

सुबह के दस बजे। अर्थी के सन्मुख गारद के रूप में महान् स्तालिन के वफ़ादार शिष्य और उनके सहकर्मी साथी, सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी और सोवियत सरकार के नेता शोक में खड़े होते हैं।

दस बजकर पांच मिनट। साथी ग. म. मालेन्कोफ़, व. म. मोलोतोफ़, न. स. ख़ुरुश्चेफ़, न. अ. बुलगानिन, ल. म. कगानोविच और अ. ई. मिकोयान योसेफ़ विस्सारियोनोविच स्तालिन की अर्थी को सावधानी से उठाये, धीरे-धीरे बाहर के दरवाज़े की ओर बढ़ते हैं। मज़दूर-संघ-सदन से शोक-मालायें उठा ली गईं। सोवियत संघ के मार्शल और जनरल लाल मख़मल के कुशनों पर रखे हुये स्तालिन के उपाधि-चिन्ह और तमग़े हाथों पर उठाये, आगे बढ़ने लगे। ओखोत्नीर्याद और मानेझनया चौक के किनारे-किनारे फ़ौजी सन्तरी पांत बांधे खड़े हैं।

साथी स्तालिन की अर्थी धीरे से तोप-गाड़ी पर रख दी गई। अर्थी के ऊपर सिर की तरफ़, सोवियत संघ के परम सेनापति (जनरलस्सिमो) की टोपी रखी है।

दिवंगत पुरुष के परिवार के सदस्य, महान् नेता के संघर्षों के निकटतम साथी, पार्टी और सोवियत सरकार के नेता, सोवियत सेना के मार्शल, जनरल, दूसरे देशों और उनकी सरकारों के प्रतिनिधि-मंडलों के नेता, कूटनीतिक दलों और दूतावासों के वे सब प्रमुख, जिन्हें उनकी सरकारों ने योसेफ़ विस्सारियोनोविच स्तालिन के अन्तिम संस्कार में भाग लेने का आदेश दिया था तथा बाहरी देशों के दूसरे प्रतिनिधि अर्थी के साथ-साथ चल रहे हैं।

मातमी संगीत की उदास धुन बज रही है। संघीय गणतन्त्रों, स्वायत्त गणतन्त्रों, क्षेत्रों और प्रदेशों के प्रतिनिधि-मंडल मौजूद हैं। महान् चीनी जनता और जनता के जनतंत्रों के प्रतिनिधि, दूसरे देशों के प्रतिनिधि-मंडल और प्रतिनिधि भी मौजूद हैं।

दूतावासों के सदस्य लाल मैदान के चबूतरे पर निस्तब्ध मुद्रा में खड़े हैं। लाल मैदान में मॉस्को के सैनिक रक्षक पांत बांधे मूर्तिवत् निश्चल खड़े हैं।

दस बजकर पैंतालीस मिनट। अर्थी समाधि के सामने आकर रुकती है। सैनिक झंडे झुका दिये जाते हैं,—झंडे जो महान् राष्ट्रीय युद्ध में सोवियत सेना की अमर जीतों के गौरव से मंडित हैं, उन जीतों के गौरव से जिन्हें सोवियत सेना ने सभी कालों और सभी राष्ट्रों के महानतम सेनापति, साथी यो० वि० स्तालिन के नेतृत्व में प्राप्त किया था। तोप-गाड़ी से उठा कर, अर्थी को एक ऊंचे चबूतरे पर रख दिया जाता है। चबूतरा लाल और काले कपड़ों से ढंका है। पार्टी और सोवियत सरकार के नेता, दूसरे देशों और उनकी सरकारों के प्रतिनिधि-मंडलों के नेता, कूटनीतिक दलों और दूतावासों के प्रमुख, बाहरी देशों की बंधु कम्युनिस्ट और मजदूर पार्टियों के नेता—सब समाधि के चबूतरे पर खड़े हैं।

दस बजकर बावन मिनट। अन्त्येष्टि कमीशन के अध्यक्ष, साथी न. स. खुरुश्चेफ़ सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय कमिटी और मंत्रिमंडल की ओर से शोक-सभा को शुरू करते हैं। सोवियत संघ के मंत्रिमंडल के अध्यक्ष, सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय कमिटी के मंत्री और सोवियत संघ के जनरलस्सिमो योसेफ़ विस्सारियोनोविच स्तालिन के शोक में सभा शुरू होती है।

ग्यारह बजकर चौवन मिनट। साथी न. स. खुरुश्चेफ़ सभा समाप्त करते हैं।

सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी और सोवियत सरकार के नेता और बाहर के देशों की बंधु कम्युनिस्ट और मजदूर पार्टियों के नेता समाधि से नीचे उतर आते हैं। अर्थी को उठा कर धीरे-धीरे समाधि के भीतर ले जाया जाता है—उस समाधि के भीतर, जिसके द्वार पर दो अत्यंत ही प्रिय नाम अंकित हैं: "लेनिन, स्तालिन।"

तोपें तीस गोलों की सलामी देती हैं। उनकी गरज से जमीन कांप उठती है। क्रैमलिन के स्पास्की घंटाघर में बारह बजता है। तीन मिनटों के लिये मॉस्को और समस्त सोवियत भूमि का वातावरण कारखानों, इंजनों और जहाजों की सीटियों और भौंपुओं की आवाजों से गूंज उठता है,—महान् पिता और जनता के शिक्षक को मातृभूमि सलामी देती है। बाल्तिक के तट से लेकर कुरील द्वीपसमूह तक, सारी सोवियत भूमि में तमाम कल-कारखाने पांच मिनटों के लिये काम रोक कर निस्तब्ध होजाते हैं। चलती हुई रेलें, जहाज और मोटर—सब जहां के तहां खड़े होजाते हैं...

देश महान् क्षति पर शोक प्रकट कर रहा है, किन्तु स्तालिन का नाम और उनका उद्देश्य अमर है। जनता के हृदयों में और कम्युनिज़्म के लिये किये जाने वाले उनके कामों में स्तालिन हमेशा-हमेशा के लिये जीवित रहेंगे।

अन्तिम संस्कार के बाद, सोवियत संघ के राष्ट्र-गीत के राजसी गम्भीर स्वर वायु में गूंज उठते हैं।

पार्टी और सरकार के नेता फिर समाधि के चबूतरे पर खड़े होते हैं। समाधि के सामने से दृढ़तापूर्वक मार्च करती हुई फ़ौज की टुकड़ियां गुज़रती हैं। बहुत ऊंचे, आकाश में, चौक के ऊपर सुव्यवस्थित आकार में वायुयान उड़ रहे हैं। महान् नेता और सेनानायक योसेफ़ विस्सारियोनोविच को अन्तिम सैनिक श्रद्धांजलि अर्पित की जा रही है।

५. *कुछ श्रद्धांजलियाँ*

● सोवियत सरकार और केन्द्रीय कमिटी की श्रद्धांजलि

प्यारे साथियो और दोस्तो !, सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय कमिटी, सोवियत संघ की मन्त्रिपरिषद् और सोवियत संघ की सर्वोच्च सोवियत का अध्यक्ष-मंडल गहनतम शोक के साथ, सोवियत संघ की पार्टी के सदस्यों और तमाम मेहनतकश जनता को सूचित करता है कि ५ मार्च की रात को ६ बजकर ५० मिनट (भारतीय समय—रात के १ बजकर २० मिनट) पर ख़तरनाक बीमारी के बाद, सोवियत संघ की मन्त्रिपरिषद् के अध्यक्ष और सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय कमिटी के महामन्त्री योसेफ़ विस्सारियोनोविच स्तालिन का देहान्त होगया है।

लेनिन के सहकर्मी, उनके उद्देश्यों को आगे ले जाने वाले, प्रतिभा-पुंज, कम्युनिस्ट पार्टी और सोवियत जनता के बुद्धिमान नेता और शिक्षक, योसेफ़ विस्सारियोनोविच स्तालिन के हृदय की धड़कन बन्द होगई है।

स्तालिन का नाम हमारी पार्टी के लिये, सोवियत जनता के लिये, तमाम दुनिया के मेहनतकशों के लिये, अत्यन्त प्यारा नाम है। लेनिन के साथ मिलकर, साथी स्तालिन ने कम्युनिस्टों की शक्तिशाली पार्टी खड़ी की, उसे पाला-पोसा और फ़ौलादी बनाया। लेनिन के साथ-साथ, साथी स्तालिन ने अक्तूबर की महान् समाजवादी क्रांति को प्रेरणा दी, उसका नेतृत्व किया, दुनिया में सबसे पहले समाजवादी राज्य की स्थापना की। लेनिन के अमर उद्देश्य को आगे बढ़ाते हुये, साथी स्तालिन ने हमारे देश में समाजवाद की युगान्तरकारी जीतें हासिल करने में सोवियत जनता की अगुआई की। साथी स्तालिन ने दूसरे महायुद्ध में फासिज़्म के ख़िलाफ़ विजय पाने में हमारे

देश का नेतृत्व किया, जिसने समूची अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति में आमूल परिवर्तन कर दिया। साथी स्तालिन ने सोवियत संघ में कम्युनिज़्म के निर्माण के महान् और स्पष्ट कार्यक्रम से पार्टी और समूची जनता को लैस किया।

साथी स्तालिन—जिन्होंने कि अपना सारा जीवन कम्युनिज़्म की निःस्वार्थ सेवा के महान् उद्देश्य में अर्पित कर दिया था—की मृत्यु पार्टी के, सोवियत संघ और सारी दुनिया की मेहनतकश जनता के लिये एक अत्यन्त गम्भीर क्षति है।

हमारे देश के मज़दूरों, कलखोज़ी किसानों, बुद्धिजीवियों और तमाम मेहनतकशों के दिलों में, हमारी बहादुर सेना और नौसेना के वीरों के दिलों में, दुनिया के सभी देशों की करोड़ों मेहनतकश जनता के दिलों में साथी स्तालिन की मृत्यु की खबर गहरी पीड़ा का संचार करेगी।

शोक में डूबे हुये इन दिनों में हमारे देश में बसी सभी जातियों के लोग, लेनिन और स्तालिन की जन्माई तथा बड़ी की हुई, कम्युनिस्ट पार्टी के परखे और कुन्दन बने नेतृत्व में अपने महान् भ्रातृत्वपूर्ण परिवार के अन्दर और भी घनिष्टता के साथ एकजूट होरहे हैं।

सोवियत जन खुद अपनी कम्युनिस्ट पार्टी में अटूट विश्वास रखते हैं और उसके प्रति उनमें ज्वलंत प्रेम के भाव हैं; क्योंकि वे जानते हैं कि पार्टी की सारी कारंवाइयों का सर्वोच्च उद्देश्य जनता के हितों की सेवा करना ही है।

मज़दूर, कलखोज़ी किसान, सोवियत बुद्धिजीवी, हमारे देश की समूची मेहनतकश जनता, अविचल रूप से हमारी पार्टी द्वारा बताई हुई नीति पर चलती है। यह नीति मेहनतकश जनता के बुनियादी हितों के अनुकूल है और इसका उद्देश्य हमारी समाजवादी जन्मभूमि की शक्ति को और मज़बूत बनाना है। कम्युनिस्ट पार्टी की नीति की सचाई दसियों सालों के संघर्ष में परखी हुई सचाई है। उसने सोवियत देश की जनता का समाजवाद की ऐतिहासिक विजयों के पथ पर नेतृत्व किया है। इस नीति से अनुप्राणित हो, सोवियत संघ की सारी जनता पार्टी के नेतृत्व में अपने देश में कम्युनिज़्म के निर्माण में नई से नई सफलतायें प्राप्त करने के लिये विश्वासपूर्वक आगे बढ़ रही है।

हमारे देश की जनता जानती है कि आबादी के सभी अंशों—मज़दूरों, कलखोज़ी किसानों, बुद्धिजीवियों की भौतिक समृद्धि और समुन्नति, सारे समाज की बराबर बढ़ती हुई भौतिक और सांस्कृतिक आवश्यकताओं की पूर्णतम पूर्ति कम्युनिस्ट पार्टी और सोवियत सरकार के विशेष ध्यान का केन्द्र रही है, और है।

सोवियत जनता जानती है कि सोवियत राज्य की रक्षा की क्षमता और शक्ति बढ़ती और बराबर मज़बूत होती जारही है। सोवियत सेना, नौसेना और अंतरंग सुरक्षा-संगठनों को पार्टी हर तरह से मज़बूत बना रही है, ताकि किसी भी हमलावर को मुंहतोड़ जवाब देने की हमारी तैयारी में निरन्तर वृद्धि होती रहे।

कम्युनिस्ट पार्टी और सोवियत संघ की सरकार की परराष्ट्र नीति हमेशा से शांति की रक्षा तथा मजबूती की, दूसरे युद्ध की तैयारी और उसे छेड़ने के खिलाफ़ संघर्ष की, अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग और सभी देशों से व्यापारिक सम्बंधों के विकास की अडिग नीति रही है, और है।

सर्वहारा अन्तर्राष्ट्रवाद के झंडे की वफ़ादार, सोवियत संघ की जनता महान् चीनी जनता तथा सभी जनवादी देशों की मेहनतकश जनता के साथ बन्धुतापूर्ण दोस्ती को और शांति, जनतंत्र और समाजवाद के लिये लड़ती हुई पूंजीवादी तथा औपनिवेशिक देशों की मेहनतकश जनता के साथ मित्रता के सम्बन्धों को मजबूत बनाती हुई आगे बढ़ी है।

प्यारे साथियो और दोस्तो !, हमारी कम्युनिस्ट पार्टी कम्युनिज़्म के निर्माण में सोवियत जनता के संघर्ष का पथ-प्रदर्शन और निर्देशन करने वाली महान् शक्ति है। पार्टी की पांतों की वज्र एकता और अखण्ड एकबद्धता पार्टी की शक्ति और बल का मुख्य आधार हैं। हमारा कर्त्तव्य है कि पार्टी की एकता की आंख की पुतली की भांति रक्षा करें, पार्टी की नीति और फ़ैसलों को अमल में लाने के लिये कम्युनिस्टों को सक्रिय राजनीतिक योद्धाओं के रूप में तैयार करें, तमाम मेहनतकश जनता के साथ मजदूरों, कलखोज़ी किसानों, बुद्धिजीवियों के साथ पार्टी के सम्बन्ध को और भी ज़्यादा मज़बूत बनायें; क्योंकि जनता के साथ इसी अटूट सम्बन्ध में हमारी पार्टी की अजेयता और शक्ति निहित है।

ऊंची राजनीतिक जागरूकता की भावना में, भीतरी तथा बाहरी दुश्मनों के खिलाफ़ संघर्ष में निर्ममता और अंगद की भांति डटे रहने की भावना में, कम्युनिस्टों और तमाम मेहनतकश जनता को दीक्षित करना पार्टी अपना एक कर्त्तव्य मानती है।

सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय कमिटी, सोवियत संघ की मंत्रि-परिषद और सोवियत संघ की सर्वोच्च सोवियत का अध्यक्ष-मंडल शोक से भरे इन दिनों में पार्टी और जनता को संदेश देता हुआ, अपना यह दृढ़ विश्वास प्रकट करता है कि हमारे देश की पार्टी और जनता केन्द्रीय कमिटी और सोवियत सरकार के चारों तरफ़ और भी घनिष्टता से एकजूट होगी और हमारे देश में कम्युनिज़्म के निर्माण के महान् उद्देश्य में अपनी सारी ताक़तें और रचनात्मक सामर्थ्य लगा देगी।

स्तालिन का अमर नाम सोवियत जनता तथा सारी प्रगतिशील मानवता के दिलों में सदा जीवित रहेगा।

मार्क्स, एंगेल्स, लेनिन और स्तालिन की महान् और सर्वजयी शिक्षा—जिन्दाबाद !
हमारी शक्तिशाली समाजवादी मातृभूमि—जिन्दाबाद !
हमारी बहादुर सोवियत जनता—जिन्दाबाद !
सोवियत संघ की महान् कम्युनिस्ट पार्टी—जिन्दाबाद !

५ मार्च, १९५३.
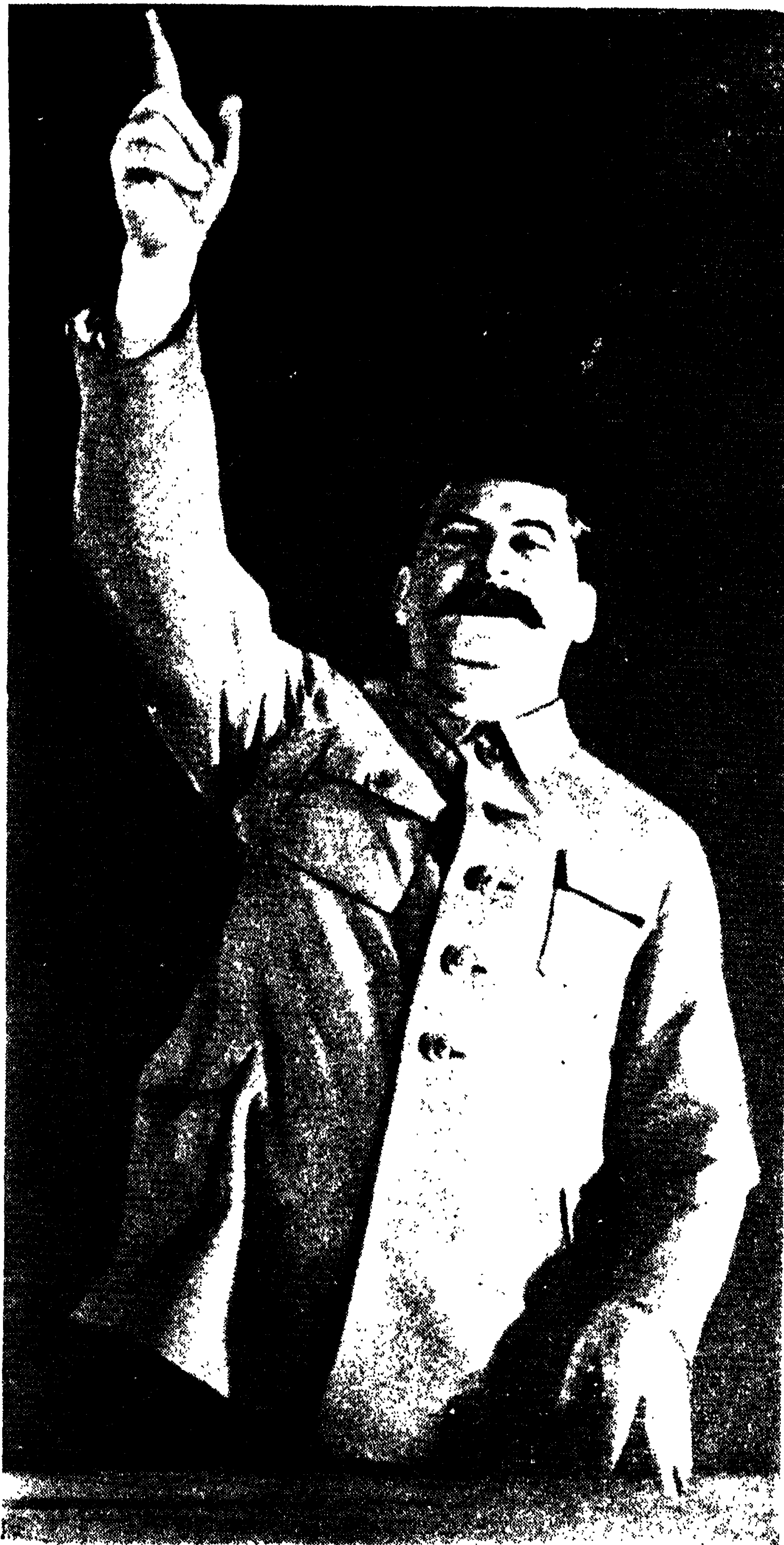
मानवता के पथ प्रदर्शक

चिर निद्रा में

● ग. म. मालेन्कोफ़ की श्रद्धांजलि

प्रिय देशवासियो, साथियो और मित्रो! दूसरे देशों के प्रिय भाइयो, हमारी पार्टी, सोवियत जनता और समूची मानव जाति को गम्भीरतम, कभी न पूरी होने वाली क्षति सहनी पड़ी है। हमारे शिक्षक और नेता, मानव जाति की महान्तम प्रतिभा, योसेफ़ विस्सारियोनोविच स्तालिन की गौरवमय जीवन-यात्रा का अन्त होगया है।

इन कठिन दिनों में, समूची उन्नत और प्रगतिशील मानव जाति ने सोवियत जनता के गहरे शोक में उसका साथ दिया है। स्तालिन का नाम सोवियत पुरुषों और स्त्रियों को, दुनिया के सभी हिस्सों की व्यापकतम जनता को इतना प्यारा है कि उसकी कोई सीमा नहीं। सोवियत जनता और सभी देशों के मेहनतकश लोगों के लिये साथी स्तालिन ने जो काम किये हैं, उनकी महानता और महत्व अकूत है। स्तालिन का लक्ष्य युग-युग तक जीवित रहेगा और आने वाली कृतज्ञ पीढ़ियां, ठीक हम सब लोगों की भांति, स्तालिन के नाम का गौरव-गान करेंगी।

साथी स्तालिन ने अपना जीवन शोषकों के उत्पीड़न और गुलामी से मेहनतकश वर्ग तथा तमाम मेहनतकश लोगों को मुक्त करने, विनाशकारी युद्धों से मानव जाति को उबारने, मेहनत करने वाले लोगों के वास्ते धरती पर आज़ाद और खुशहाल जीवन का निर्माण करने के संघर्ष के लिये अर्पित कर दिया है। साथी स्तालिन ने, हमारे युग के इस महान् विचारक ने नई ऐतिहासिक परिस्थितियों में मार्क्सवाद-लेनिनवाद की सीख का रचनात्मक विकास किया है। मानवता के समूचे इतिहास की महान्तम विभूतियों के साथ—मार्क्स, एंगेल्स, लेनिन के साथ—स्तालिन का नाम लिया जाना सर्वथा उचित है।

हमारी पार्टी मार्क्सवाद-लेनिनवाद की महान् सीख पर चलती है, जो कि पार्टी और जनता को अजेय शक्ति तथा इतिहास में नई लीकें डालने की योग्यता प्रदान करती है।

फरारी (अण्डरग्राउण्ड) जीवन की कठिन परिस्थितियों में, लेनिन और स्तालिन ने रूस के लोगों को निरंकुश शासन के जुये से, ज़मींदारों और पूंजीपतियों के उत्पीड़न से मुक्त करने के लिये अनेक लम्बे सालों तक संघर्ष किया था। लेनिन और स्तालिन की अगुआई में सोवियत जनता ने मानव जाति के इतिहास में महान्तम मोड़ लिया था; पूंजीवादी व्यवस्था को हमारे देश से खतम कर, एक नये पथ पर—समाजवाद के पथ पर—पांव रखा था।

लेनिन के लक्ष्य को आगे बढ़ाते हुये, पार्टी तथा सोवियत राज्य के अग्रिम पथ को आलोकित करने वाली लेनिनवादी सीख को बराबर विकसित करते हुये, स्तालिन ने समाजवाद की युगांतरकारी जीतें हासिल करने में देश की अगुआई की है। इससे, मानव जाति के हजारों वर्षों के जीवन में पहली बार मानव द्वारा मानव के शोषण का खात्मा सुनिश्चित होगया है।

लेनिन और स्तालिन ने दुनिया में मजदूरों और किसानों के पहले राज्य की, हमारे सोवियत राज्य की नींव रखी थी। साथी स्तालिन ने सोवियत राज्य को मजबूत बनाने के लिये अनथक काम किया है। हमारे राज्य का ठोसपन और ताक़त ही हमारे देश में साम्यवाद के सफल निर्माण का बुनियादी आधार है।

यह हमारा पवित्र कर्त्तव्य है कि अनथक और हर प्रकार से अपने समाजवादी राज्य को, राष्ट्रों की सुरक्षा और शान्ति के दुर्ग को मजबूत बनाना जारी रखें।

साथी स्तालिन का नाम समाज के इतिहास की एक अत्यन्त पेचीदा समस्या—जातियों के सवाल—के हल के साथ जुड़ा हुआ है। जातियों के सवाल के महान्तम सिद्धान्तविद्, साथी स्तालिन ने इतिहास में पहली बार एक सुविस्तृत बहुजातीय राज्य के भीतर युगों के पुराने जातीय वैमनस्यों का पक्की तौर से खात्मा कर दिया है। साथी स्तालिन के निर्देशन में, हमारी पार्टी ने पहले की उत्पीड़ित जातियों के आर्थिक और सांस्कृतिक पिछड़ेपन को क़ाबू में किया, सोवियत संघ की तमाम जातियों को एक बंधुता के परिवार में संयुक्त किया और जातियों की मित्रता को ढाला है।

हमारा यह पवित्र कर्त्तव्य है कि सोवियत देश में बसी हुई जातियों की एकता और मित्रता की मजबूती की, बहुजातीय सोवियत राज्य की दृढ़ता को और भी ज़्यादा पक्की करें। हमारे देश की जातियों के बीच मित्रता के क़ायम रहते हुये, हमें भीतरी या बाहरी किन्हीं भी दुश्मनों से डरने की जरूरत नहीं।

साथी स्तालिन के प्रत्यक्ष निर्देशन में ही सोवियत सेना जन्मी, बढ़ी और शक्तिशाली बनी है। साथी स्तालिन की निरन्तर लगन का लक्ष्य देश की रक्षात्मक क्षमता और सोवियत सैन्य बल को मजबूत बनाना था। महान् सेनानी, जनरलस्सिमो स्तालिन की ही अगुआई में सोवियत सैन्यबल ने दूसरे विश्व युद्ध में इतिहास-निर्माणकारी जीत हासिल की और युरोप तथा एशिया के लोगों को फासिस्टी गुलामी के खतरे से मुक्त किया है।

हमारा यह पवित्र कर्त्तव्य है कि शक्तिशाली सोवियत सैन्यबल को हर प्रकार से मजबूत बनायें। दुश्मन के किसी भी आक्रमण का मुंहतोड़ जवाब देने के लिये जरूरी है कि उन्हें युद्ध-तत्परता की स्थिति में रखा जाये।

साथी स्तालिन की अनथक कोशिशों के फलस्वरूप, उन योजनाओं के मुताबिक जो कि उन्होंने बनाई थीं, हमारी पार्टी ने पहले के एक पिछड़े हुये देश को एक शक्तिशाली उद्योग और कलखोजी (सामूहिक) कृषि का राज्य बना दिया है, संकटों और बेकारी से मुक्त एक नई आर्थिक व्यवस्था का निर्माण किया है।

हमारा यह पवित्र कर्त्तव्य है कि समाजवादी मातृभूमि की निर्बाध प्रगति को और भी ज़्यादा सुनिश्चित बनायें। जरूरी है कि हम हर प्रकार से अपने देश की ताक़त और ठोसपन के मुख्य आधार—समाजवादी उद्योग—को विकसित करें। ज़रूरी है कि हम सामूहिक खेती की व्यवस्था को मज़बूत बनायें, सोवियत देश के तमाम कलखोज़ों की बेरोक उन्नति और खुशहाली के लिये और भी ज़्यादा कोशिश करें, मेहनतकश वर्ग और सामूहिक किसानवर्ग के गठबन्धन को पक्का बनायें।

गृह-नीति में मज़दूरों, सामूहिक किसानों, बुद्धिजीवियों—सारे सोवियत जनों की आर्थिक खुशहाली में और भी ज़्यादा सुधार के लिये निश्चित गति से कोशिश करना हमारा मुख्य काम है। लोगों की खुशहाली का ध्यान रखना, उनकी आर्थिक और सांस्कृतिक जरूरतों की पूर्णतम पूर्ति करना, हमारी पार्टी और सरकार का क़ानून है।

लेनिन और स्तालिन ने हमारी पार्टी को कायापलट करने वाली एक महान् शक्ति के रूप में रचा और ढाला था। जीवन-पर्यन्त साथी स्तालिन ने हमें सिखाया है कि कम्युनिस्ट पार्टी के सदस्य की उपाधि से ऊंची और कोई भी चीज़ नहीं है। दुश्मनों के खिलाफ़ अनवरत् संघर्ष में, साथी स्तालिन ने पार्टी की एकता और अखंड एकबद्धता को ऊंचा उठाया था।

हमारा यह कर्त्तव्य है कि हम महान् कम्युनिस्ट पार्टी को मज़बूत बनाने का काम जारी रखें। हमारी पार्टी की ताक़त और अजेयता उसकी पांतों की एकता और जुड़ाव में, संकल्प और क्रियात्मक एकता में, पार्टी के संकल्प और इच्छाओं के साथ अपने संकल्प और इच्छाओं का विलय करने की पार्टी-सदस्यों की योग्यता में निहित है। हमारी पार्टी की ताक़त और अजेयता आम जनता के साथ उसके अटूट नाते में निहित है। पार्टी द्वारा जनता के हितों की निरन्तर सेवा की नींव पर पार्टी और जनता की एकता टिकी है। ज़रूरी है कि हम पार्टी की एकता की आंख की पुतली की भांति रक्षा करें, जनता के साथ पार्टी के अटूट नाते को और भी ज़्यादा पक्का बनायें, कम्युनिस्टों और तमाम मेहनतकश लोगों को ऊंची राजनीतिक जागरूकता की भावना में, भीतरी और बाहरी दुश्मनों के ख़िलाफ़ संघर्ष में दृढ़ता और कभी न झुकने की भावना में शिक्षित करें।

महान् स्तालिन के निर्देशन में शांति, जनतंत्र और समाजवाद के एक शक्तिशाली खेमे का निर्माण होगया है। इस खेमे में सोवियत जनता के साथ-साथ, घनिष्ट

बंधुतापूर्ण एकता में, चीन की महान् जनता, पोलैन्ड, चैकोस्लोवाकिया, बुलगारिया, हंगरी, रूमानिया, अलबानिया, जर्मन जनवादी जनतन्त्र, मंगोलिया—जनता के सभी गणतन्त्रों के भाईचारे पूर्ण लोग आगे बढ़ रहे हैं। कोरिया की वीर जनता जुझारू लड़ाइयों में अपनी मातृभूमि की आज़ादी की रक्षा कर रही है। वियतनाम के लोग अपनी आज़ादी और राष्ट्रीय स्वतन्त्रता के लिए साहस के साथ संघर्ष कर रहे हैं।

हमारा यह पवित्र कर्त्तव्य है कि लोगों के—शान्ति, जनतंत्र और समाजवाद के खेमे के—महानतम लाभ की रक्षा करें और उसे मज़बूत बनायें, जनवादी खेमे के देशों के लोगों की मित्रता और एकजूटता के नातों को दृढ़ करें। ज़रूरी है कि हम हर प्रकार से महान् चीनी जनता के साथ, जनता के सारे गणतंत्रों के मेहनतकश लोगों के साथ, सोवियत संघ की चिरंतन और अनुलंघनीय बन्धुत्वपूर्ण मित्रता के नाते को सुदृढ़ बनायें।

सभी देशों के लोग जानते हैं कि साथी स्तालिन शान्ति के महान् अलमबरदार थे। साथी स्तालिन ने सभी देशों के लोगों को ऊँचा उठाने में अपनी प्रतिभा की महानतम कोशिशों को लगाया था। सोवियत राज्य की परराष्ट्र नीति, राष्ट्रों के बीच शान्ति और मित्रता की नीति, एक दूसरे युद्ध के फूट पड़ने के रास्ते में एक निर्णायक रुकावट है और सभी राष्ट्रों के बुनियादी हितों के साथ मेल खाती है। सोवियत संघ ने शान्ति के लक्ष्य की पूरी हिमायत की है और करता है; क्योंकि उसके हित विश्व शान्ति के लक्ष्य से अभिन्न हैं। सोवियत संघ ने शान्ति को क़ायम रखने और मज़बूत बनाने की अडिग नीति का, अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग और सभी देशों के साथ व्यापारिक सम्बंध विकसित करने की नीति का—एक ऐसी नीति का, जो लेनिन-स्तालिन की इस स्थापना से निकली है कि दो भिन्न व्यवस्थाओं (पूंजीवादी और समाजवादी व्यवस्थाओं) के लम्बे अर्से तक एक साथ बने रहने और शांतिपूर्ण प्रतियोगिता करने की सम्भावना है—अनुसरण किया है और करता है।

महान् स्तालिन ने हमें जनता के हितों की सेवा के प्रति असीम भक्ति की भावना में बड़ा किया है। हम जनता के सच्चे सेवक हैं, जनता शान्ति चाहती है, युद्ध से घृणा करती है। करोड़ों के रक्त की होली को रोकने और खुशहाल जीवन के शांतिपूर्ण निर्माण की गारंटी करने की लोगों की इच्छा, हम सबकी पवित्र इच्छा हो!

परराष्ट्र नीति में, एक दूसरे युद्ध को रोकना और तमाम देशों के साथ शान्ति से रहना हमारा मुख्य काम है। सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी और सोवियत सरकार की नज़र में परस्पर विश्वास पर आधारित सभी राष्ट्रों के बीच की शान्ति—जो कि तथ्यों पर आधारित और तथ्यों से पुष्ट एक कारगर नीति है—अत्यन्त सही, ज़रूरी और न्यायपूर्ण परराष्ट्र नीति है। ज़रूरी है कि सरकारें सचाई के साथ अपने

लोगों की सेवा करें। लोग शान्ति के प्यासे हैं, युद्ध को कोसते हैं। वे सरकारें जो लोगों को धोखा देना चाहेंगी और शांति को क़ायम रखने तथा एक दूसरे विनाश को रोकने की पवित्र इच्छा के ख़िलाफ़ जायेंगी, अपराधी होंगी। कम्युनिस्ट पार्टी और सोवियत सरकार मानती है कि राष्ट्रों के बीच शांति की नीति ही एकमात्र सही नीति है, जो तमाम लोगों के बुनियादी हितों के साथ मेल खाती है।

साथियो, हमारे नेता और शिक्षक महान् स्तालिन की विदाई तमाम सोवियत नर-नारियों को कर्त्तव्यबद्ध करती है कि वे सोवियत जनता के सामने प्रस्तुत शानदार कामों की पूर्ति में अपनी कोशिशों को दुगुना-चौगुना बढ़ायें, साम्यवादी समाज के निर्माण के सामूहिक लक्ष्य में और भी ज़्यादा भारी योग दें, हमारी समाजवादी मातृभूमि की ताक़त और प्रतिरक्षा की क्षमता को और भी ज़्यादा मज़बूत बनायें।

सोवियत संघ के मेहनतकश लोग देखते और समझते हैं कि हमारी शक्तिशाली मातृभूमि नई से नई सफलताओं की ओर बढ़ रही है। पूर्ण साम्यवादी समाज के निर्माण के लिये ज़रूरी हर चीज़ हमारे पास है।

अपनी अक्षय ताक़तों और क्षमताओं में दृढ़ विश्वास के साथ, सोवियत जनता साम्यवाद के निर्माण के महान् लक्ष्य को कार्य में उतार रही है। दुनिया में ऐसी कोई ताक़त नहीं है, जो सोवियत समाज की साम्यवाद की ओर प्रगति को रोक सके।

विदा, हमारे शिक्षक और नेता, हमारे प्रिय मित्र, हमारे अपने साथी स्तालिन, विदा।

लेनिन और स्तालिन के महान् लक्ष्य की पूर्ण विजय के पथ पर आगे बढ़ो!

● माओ त्से-तुंग की श्रद्धांजलि

हमारे युग के महानतम प्रतिभाशाली व्यक्ति साथी योसेफ़ विस्सारियोनोविच स्तालिन, जो दुनिया के कम्युनिस्ट आन्दोलन के महान् शिक्षक और अमर लेनिन के सहयोगी थे, हमसे सदा के लिये बिछुड़ गये हैं।

सिद्धांत और अमल दोनों ही के क्षेत्रों में उनके कार्यों के ज़रिये हमारे युग को साथी स्तालिन की जो देन रही है, वह अकूत है। स्तालिन हमारे इस पूरे नये युग के प्रतिनिधि हैं। यह उनके कार्यों का ही परिणाम है कि सोवियत जनता और सभी देशों की मेहनतकश जनता ने समूची दुनिया की परिस्थिति बदल दी है। इसका मतलब है कि न्याय, जनवादी लोकतंत्र और समाजवाद के ध्येय ने दुनिया के एक विशाल भूभाग पर—जिस पर पृथ्वी की एक-तिहाई से ज़्यादा आबादी, ८० करोड़ जनता बसती है—विजय प्राप्त कर ली है। जैसे-जैसे दिन गुज़रते जाते हैं, वैसे ही वैसे इस विजय का असर पृथ्वी के हर कोने में फैलता जारहा है।

साथी स्तालिन की मृत्यु से सारी दुनिया की मेहनतकश जनता अथाह शोक में डूब गई है। सारे संसार के ईमानदार लोगों के दिल दर्द से भर गये हैं। यह बात बताती है कि साथी स्तालिन के ध्येय और उनके विचारों ने सारी दुनिया की विशाल जनता को अत्याधिक प्रभावित किया है और वे एक अजेय शक्ति बन गई है, जो विजयी देशों की जनता को नई से नई विजयों की तरफ़ ले जारही है और जिन देशों की जनता अभी भी पुरानी, कुत्सित पूंजीवादी दुनिया के उत्पीड़न के नीचे कराह रही है उसे वह इतनी सामर्थ्य देगी कि वह भी अपने दुश्मनों पर हिम्मत के साथ प्रहार कर सके।

लेनिन के निधन के बाद, स्तालिन ने जनता का पथ-प्रदर्शन किया। जिस पहले समाजवादी राज्य को अक्तूबर-क्रान्ति के दिनों में उन्होंने अमर लेनिन के साथ मिल कर जन्म दिया था, उन्होंने उसका निर्माण किया और उसे एक शानदार समाजवादी समाज बना दिया।

सोवियत समाजवादी निर्माण की विजय अकेली सोवियत जनता की विजय नहीं है, वह सारी दुनिया की जनता की भी विजय है। एक तो इस विजय ने ज़िन्दगी में मार्क्सवाद-लेनिनवाद की पूर्ण सचाई को साबित कर दिया है, सारी दुनिया की मेहनतकश जनता को प्रत्यक्ष रूप से सिखा दिया है कि वह सुखी जीवन की तरफ़ कैसे बढ़े। दूसरे, इस विजय ने मानव जाति को दूसरे विश्व युद्ध में फ़ासिस्ट राक्षसों पर विजय प्राप्त करने की शक्ति दी है। सोवियत समाजवादी निर्माण की इस विजय के बिना, फ़ासिस्ट-विरोधी युद्ध में विजय प्राप्त की जा सकती थी, इसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती। सोवियत संघ में समाजवादी निर्माण की विजय का और फ़ासिस्ट-विरोधी युद्ध में विजय का मानव जाति के भविष्य से सीधा सम्बन्ध है। और, इन विजयों का श्रेय सचमुच ही महान् स्तालिन को है।

साथी स्तालिन ने मार्क्सवाद-लेनिनवाद के सिद्धान्तों का अधिकारपूर्वक और सांगोपांग विकास किया। उन्होंने मार्क्सवाद को एक नई मंजिल पर पहुंचाया। पूंजीवाद के असमान विकास और एक देश में समाजवाद की विजय की संभावना के लेनिनवादी सिद्धान्तों का साथी स्तालिन ने रचनात्मक रूप से विकास किया। पूंजीवादी व्यवस्था के आम संकट के सिद्धान्त को और सोवियत संघ में कम्युनिज़्म के निर्माण के सिद्धान्त को साथी स्तालिन ने रचनात्मक रूप से सम्पन्न बनाया। आधुनिक पूंजीवाद के बुनियादी आर्थिक नियम की और समाजवाद के बुनियादी आर्थिक नियम की उन्होंने खोज की और उसे साबित किया। उपनिवेशों की क्रांति के सिद्धान्त को उन्होंने समृद्ध बनाया। साथी स्तालिन ने पार्टी के निर्माण के लेनिनवादी सिद्धान्त का भी रचनात्मक तरीक़े से विकास किया। साथी स्तालिन के इन सब कामों ने सारी दुनिया के मज़दूरों को और भी ज़्यादा एकजूट किया, सारी दुनिया की सारी उत्पीड़ित जनता

को और भी ज़्यादा एकजूट किया। इस तरह, उन्होंने दुनिया के मज़दूरवर्ग और तमाम उत्पीड़ित जनता को मुक्ति और खुशहाली के संघर्ष के लिये समर्थ बनाया और संघर्ष में उसे अभूतपूर्व विजयें प्राप्त हुईं।

साथी स्तालिन की सभी रचनायें मार्क्सवाद को उनकी अमर देनें हैं। **लेनिनवाद के मूल सिद्धान्त, सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी का इतिहास** और उनकी अन्तिम महान् रचना **सोवियत संघ में समाजवाद की आर्थिक समस्यायें**—सभी मार्क्सवाद-लेनिनवाद के ज्ञान-कोष हैं। सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी की १९ वीं कांग्रेस में उनका भाषण दुनिया के सभी देशों के कम्युनिस्टों के लिये अमूल्य, पवित्र आदेश है। दुनिया के सभी देशों के कम्युनिस्टों की तरह, हम चीनी कम्युनिस्ट भी साथी स्तालिन की महान् रचनाओं के प्रकाश में अपनी विजय का मार्ग पाते हैं।

लेनिन के निधन के बाद से, साथी स्तालिन ही हमेशा दुनिया के कम्युनिस्ट आन्दोलन के मुख्य व्यक्ति रहे हैं। हम उनके इर्द-गर्द एकजूट हुये। हमने निरन्तर उनकी सलाह ली और बराबर उनकी रचनाओं से सैद्धान्तिक शक्ति प्राप्त की।

साथी स्तालिन के हृदय में पूर्व की उत्पीड़ित जनता के लिये अगाध स्नेह था। **पूर्व को मत भूलो**—अक्तूबर-क्रांति के बाद, साथी स्तालिन का यही महान् आह्वान था।

सभी लोग जानते हैं कि चीनी जनता के लिये साथी स्तालिन के दिल में गहरा प्रेम था और वह चीनी क्रांति की शक्ति को अकूत मानते थे। उन्होंने अपनी महान् बुद्धिमता से चीनी क्रांति की समस्याओं को सुलझाने में मदद दी। लेनिन तथा स्तालिन के सिद्धान्तों पर अमल करके और महान् सोवियत संघ तथा दूसरे सभी देशों की सभी क्रांतिकारी शक्तियों की मदद से ही, कुछ बरसों पहले चीनी कम्युनिस्ट पार्टी और चीनी जनता ने ऐतिहासिक विजय प्राप्त की है।

अब हमारे महान् शिक्षक, हमारे सबसे सच्चे दोस्त साथी स्तालिन हमारे बीच में नहीं रहे। यह कैसा वज्रपात हुआ है! दुर्भाग्य के इस तरह फट पड़ने से, हमें जो दुःख हुआ है उसे व्यक्त करने के लिये शब्द नहीं हैं।

हमारा कर्त्तव्य है कि हम इस दुख को शक्ति में बदल दें। अपने महान् शिक्षक स्तालिन की स्मृति में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी और चीनी जनता तथा सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी और सोवियत जनता के बीच साथी स्तालिन के नाम पर जो महान् मित्रता मौजूद है, उसे हम असीम रूप से शक्तिशाली बनायेंगे। अपने देश का निर्माण करने के लिये, चीनी कम्युनिस्ट और चीनी जनता स्तालिन के सिद्धान्तों का और सोवियत विज्ञान तथा कौशल का और भी ज़ोरों से अध्ययन करेगी।

सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी, जिसे खुद लेनिन और स्तालिन ने बड़ा किया, दुनिया की सबसे आगे बढ़ी हुई, सबसे ज़्यादा अनुभवशील और सैद्धान्तिक दृष्टि से सबसे ज़्यादा लैस पार्टी है। यह पार्टी हमारे लिये आदर्श थी, अब भी है, भविष्य में भी बनी रहेगी। हमें पूरा विश्वास है कि सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय कमिटी और सोवियत सरकार, जिसके नेता साथी मालेन्कोफ़ हैं, कम्युनिज़्म के महान् ध्येय को आगे बढ़ाने और अधिक शानदार क़ामयबियाँ हासिल करने के सम्बन्ध में साथी स्तालिन के आदेशों को पूरा करने में अवश्य सफल होगी।

इस बात में कोई भी सन्देह नहीं है कि सोवियत संघ के नेतृत्व में चलने वाला शान्ति, जनवाद और समाजवाद का विश्व-पक्ष और भी अधिक एकजूट तथा और भी अधिक शक्तिशाली होगा।

पिछले ३० बरसों में, साथी स्तालिन के सिद्धान्तों और सोवियत समाजवादी निर्माण के उदाहरण की बदौलत दुनिया ने ज़बर्दस्त प्रगति की है। आज सोवियत संघ इतना शक्तिशाली होगया है, चीनी जन-क्रांति ने ऐसी महान् विजय हासिल कर ली है, जनता के विभिन्न लोकतन्त्रों ने अपने निर्माण-कार्य में ऐसी महान् सफलतायें प्राप्त कर ली हैं, उत्पीड़न तथा आक्रमण के ख़िलाफ़ सारी दुनिया की जनता का आन्दोलन इतनी बुलन्दियों पर पहुँच गया है और मित्रता तथा सहयोग का हमारा मोर्चा इतना शक्तिशाली बन गया है कि हम पूरे विश्वास के साथ कह सकते हैं कि हम किसी भी साम्राज्यी हमले से नहीं डरते। हम किसी भी साम्राज्यी हमले को धूल में मिला देंगे, तमाम घृणित उकसावे एकदम असफल साबित होंगे।

चीन और सोवियत संघ की जनता की महान् मित्रता अटूट है; क्योंकि उसका आधार मार्क्स, एंगेल्स, लेनिन और स्तालिन के अन्तर्राष्ट्रीयता के महान् सिद्धान्त हैं। चीनी जनता, सोवियत जनता, विभिन्न जन-लोकतन्त्रों की जनता और दुनिया के सभी देशों में शान्ति, जनवाद तथा न्याय को प्यार करने वाली तमाम जनता की दोस्ती का आधार भी अन्तर्राष्ट्रीयता का यही महान् सिद्धान्त है। इसलिये, वह अटूट है।

साफ़ ज़ाहिर है कि इस मित्रता से जन्मी हुई शक्तियां असीम, अक्षय और वास्तव में अजेय हैं।

तमाम साम्राज्यी हमलेवर और जंगबाज़ हमारी महान् मित्रता के आगे थर-थर कांप रहे हैं।

मार्क्स, एंगेल्स, लेनिन और स्तालिन की शिक्षायें ज़िन्दाबाद!

महान् स्तालिन का अमर नाम युग-युग तक चिरंजीवी हो!

● श्रीमती सनयात् सेन की श्रद्धांजलि

हम उसे खो बैठे हैं, जो महान् प्रतिभाशाली क्रान्तिकारी रचयिता था, लम्बे संघर्ष की आग में इस्पात बना था, जिसमें अदम्य भावना-शक्ति थी और जो ऊंचे सिद्धान्तों वाला तथा तमाम उत्पीड़कों का कट्टर दुश्मन था। स्तालिन के भीतर जलने वाली क्रान्ति की लौ इतनी प्रखर थी कि उनके लिये ज़िन्दगी का बस एक ही क़ानून था—जनता की सेवा करना। इतने बरसों तक क्रैमलिन के अपने कमरे से, उन्होंने न सिर्फ़ निर्माण करने और सारी मानव जाति के भविष्य की गारंटी करने में सोवियत जनता का नेतृत्व किया, बल्कि सभी उत्पीड़ितों के लिये भी—फिर वे चाहे कितनी ही दूर क्यों न बसते हों—गहरी सहानुभूति दिखाई है।

हम उसे खो बैठे हैं, जो शान्ति का सबसे बड़ा झंडाबरदार था। स्तालिन ने दुनिया को एक नई ज़िन्दगी का रास्ता दिखाया—सचाई और ईमानदारी की ज़िन्दगी का, जो सीधी और स्पष्ट है, आदमियों और औरतों के लिये, तमाम जनता के लिये और तमाम राज्यों के लिये समान है और जो ऐसी ज़िन्दगी है जिसने राष्ट्रों के बीच के सम्बन्धों को ऐसी मित्रता के आधार पर क़ायम किया है, जैसी इतिहास में पहले कभी भी मौजूद न थी।

सचमुच हमने बहुत कुछ खो दिया है। मगर, आगे हमारी प्रगति के लिये स्तालिन ने हमें निःशस्त्र नहीं छोड़ा है। उनकी समूची ज़िन्दगी और काम ने हमें इतना लैस कर दिया है कि उनके पूर्वगामियों और खुद उनकी उच्चतम आशाओं को हम पूरा करें।...

उनके ध्येय को आगे बढ़ाना हमारा कर्त्तव्य है। तमाम प्रगतिशील मानव जाति को जागरूक होना चाहिये। स्तालिन की पार्टी और महान् सोवियत जनता के चौगिर्द हमें एकजूट होना चाहिये।

"स्तालिन के लिये"—यही वह झंडा है, जिसके तले अन्तर्राष्ट्रीय मज़दूर वर्ग की विजय हासिल करनी है।

● पंडित जवाहरलाल नेहरू की श्रद्धांजलि

मार्शल स्तालिन अब नहीं रहे। अभी दो दिन पहले ही, हमने उनकी सख़्त बीमारी की खबर सुनी थी। सिर्फ़ दो या तीन हफ़्ते पहले ही, हमारे मॉस्को-स्थित राजदूत ने उनसे मुलाक़ात की थी और जब हमारे राजदूत द्वारा भेजी हुई इस मुलाक़ात की रिपोर्ट मैं पढ़ ही रहा था, तो मुझे मार्शल स्तालिन की सख़्त बीमारी की सूचना मिली। हमारे राजदूत के मिलने पर, उन्होंने अपने-आपको शान्ति का हामी बतलाते हुये यह ख़्वाहिश ज़ाहिर की थी कि दुनिया की शांति भंग नहीं होनी चाहिये। उन्होंने हिन्दुस्तान के लिये अपनी सद्भावना प्रकट की थी और हमारे मुल्क तथा हममें से

कुछ लोगों के लिये अपनी शुभ कामनायें भी भेजी थीं। यह बात और भी दिलचस्प है कि उन्होंने हमारी बहुत सी सांस्कृतिक समस्याओं के बारे में भी बातचीत की थी। इस बारे में उनकी काफ़ी जानकारी है, यह देखकर हमारे राजदूत को थोड़ा ताज्जुब भी हुआ। उन्होंने हिन्दुस्तान की भिन्न-भिन्न भाषाओं, उनकी उत्पत्ति, उनके पारस्परिक सम्बंधों और उनके बोले जाने के क्षेत्रों के बारे में भी बातचीत की थी।

जब हम मार्शल स्तालिन के बारे में सोचते हैं, तो हमारे—कम से कम मेरे—दिमाग़ के सामने कई विचार आते हैं और पिछले पैंतीस वर्षों के इतिहास की घटनावली जैसे आँखों के सामने आजाती है। हम सब इसी युग की सन्तान हैं और हम पर अनेक प्रकार से इसका असर भी पड़ा है। इस दौरान में हम न सिर्फ़ अपने देश में ही संघर्ष करके बड़े हुये हैं, दुनिया के दूसरे हिस्सों में होने वाले ताक़तवर संघर्षों ने भी हम पर अपना असर डाला है। इन पैंतीस वर्षों की घटनाओं पर नज़र डालने से कई उल्लेखनीय व्यक्तित्व सामने आते हैं। पर, शायद कोई भी ऐसा दूसरा व्यक्तित्व नजर नहीं आता, जिसने मार्शल स्तालिन की तरह इन वर्षों के इतिहास को इतना प्रभावित किया और बनाया हो। धीरे-धीरे वे कथा-कहानियों के नायक की तरह बन गये। कभी एक रहस्यमय व्यक्ति के रूप में और कभी असंख्य लोगों के साथ घनिष्ट सम्बंध रखने वाले व्यक्ति के रूप में वे सामने आये। शान्ति और युद्ध दोनों में ही, उन्होंने अपने-आपको महान् साबित किया। उन्होंने जिस दुर्दम इच्छा-शक्ति और असाधारण साहस का परिचय दिया, कम ही लोगों में होते हैं जब इस काल का इतिहास लिखा जायगा, तो उनके बारे में तरह-तरह की बातें कही जायेंगी और पता नहीं, आने वाली पीढ़ियाँ क्या राय क़ायम करेंगी; पर इस बात से तो सभी सहमत होंगे कि मार्शल स्तालिन एक बहुत बड़े व्यक्तित्व वाले आदमी थे, जिन्होंने अपने युग के भाग्य का निर्माण किया। यद्यपि उन्हें लड़ाई में ही काफ़ी सफलता मिली, पर उन्हें सबसे ज़्यादा तो इसलिये याद किया जायगा कि उन्होंने अपने देश को महान् बनाया है।

उन्होंने जो कुछ कहा या किया, उसकी इस सचाई से कोई इन्कार नहीं कर सकता कि उन्होंने रूस को महान् बनाया, जो कि एक बहुत बड़ी क़ामयाबी है। इसके अलावा, वे न सिर्फ़ अपने मुल्क की मौजूदा पीढ़ी में ही काफ़ी प्रसिद्ध और लोकप्रिय थे, बल्कि वे काफ़ी बड़ी तादाद में दुनिया के इन्सानों के साथ घनिष्ट सम्पर्क भी रखते थे। यह बात बहुत ही कम लोगों के बारे में कही जा सकती है। देश और विदेश के बहुसंख्यक लोग उनसे बड़े ही घनिष्ट और मैत्रीपूर्ण भाव से सम्बद्ध थे मैं ऐसे लोगों को भी जानता हूं जो मार्शल स्तालिन से इस घनिष्ट सम्बन्ध के बावजूद, बहुत सी बातों और कार्यों में सहमत नहीं थे। उन्होंने मुझे बताया कि जिस घनिष्ट मैत्री-भाव से वे मार्शल स्तालिन के साथ सम्बद्ध थे, उसके साथ इस तरह का मतभेद बड़ा अरुचिकर लगता था। ऐसे लोगों में रूस और बाहरी देशों के वे लोग भी हैं

जिन्होंने स्तालिन को सिर्फ़ देखा भर था और उनके बहुत नज़दीक नहीं गये थे। इस तरह स्तालिन एक ऐसे व्यक्ति थे, जिन्होंने एक तरफ़ इतिहास के इस अशान्त समय में से सफलतापूर्वक गुज़रने की चेष्टा की और दूसरी तरफ़, अगणित मनुष्यों की मुहब्बत और तारीफ़ भी हासिल की। वे अपने किन कामों में सफल हुये और किन में उन्होंने ग़लतियां कीं, इस बारे में मुख़्तलिफ लोगों की मुख़्तलिफ रायें हो सकती हैं, मगर यह तो सभी मंज़ूर करेंगे कि उनका व्यक्तित्व महान् था और वैसी ही बुलंद उनकी क़ामयाबियां भी थीं।

आज उनके निधन पर, हम उनके प्रति अपनी श्रद्धा का इज़हार कर रहे हैं, यह न सिर्फ़ एक महान् व्यक्ति की ज़िन्दगी के ख़तम होने का मौक़ा है, बल्कि एक तरह से इतिहास के एक युग की समाप्ति भी है। वैसे इतिहास का काम तो जारी ही है और उसे मुख़्तलिफ़ टुकड़ों में बांटना ग़लत होगा—जैसा कि हमारे इतिहासकार और दूसरे लोग किया करते हैं। इतिहास तो बराबर ही आगे बढ़ता है, पर उसके कुछ ख़ास युग ख़तम होजाते हैं और फिर नये रूप में नये सिरे से ज़िन्दगी शुरू होती है। पर, जो अत्यन्त महान व्यक्ति अपने-आपको युग-विशेष का प्रतीक बना लेता है, उसके निधन से ऐसा मालूम होता है, मानो वह युग ही ख़तम होगया है। मैं नहीं कह सकता कि भविष्य का फ़ैसला क्या होगा, पर इस बात में कोई शक नहीं कि जो जबर्दस्त असर लोगों के दिलों और दिमाग़ों पर मार्शल स्तालिन का है, वह उनकी मौत के बाद भी क़ायम रहेगा और लोग उनसे प्रेरणा लेते रहेंगे।

बहुत से लोगों ने—जिनमें से कई ऐसे भी हैं, जो दुनिया में उनके बड़े विरोधियों के रूप में मशहूर होचुके हैं—भिन्न-भिन्न ढंग से स्तालिन के बारे में अपना मत ज़ाहिर किया है। अक्सर ये बातें परस्पर विरोधी भी होती हैं। कुछ लोगों ने उन्हें बड़ा ही बेतकल्लुफ़ और भला आदमी बतलाया है, जबकि दूसरों ने बड़ा ही सख़्त और बेरहम। हो सकता है, ये सारी बातें उनमें रही हों, पर इनके बावजूद इसमें कोई शक नहीं कि वे एक महान् व्यक्ति थे।

हालांकि संविधान की रू से मार्शल स्तालिन सोवियत राष्ट्र के मुखिया नहीं थे, लेकिन वैसे वे राष्ट्र के मुखिया से कहीं अधिक थे। वे अपने अधिकार से ही महान् थे, भले ही वे किसी ओहदे पर हों या न हों। मेरा विश्वास है कि उन्होंने अपने असर का इस्तेमाल हमेशा शान्ति के हक़ में ही किया है। पर जब जंग छिड़ी, तो उसमें भी वे एक महान् योद्धा साबित हुये। लेकिन, जहां तक मेरी जानकारी है उसके आधार पर, मैं यही कह सकता हूं कि अशांति और संघर्ष की इस दुनिया में उन्होंने अपने प्रभाव का इस्तेमाल हमेशा शान्ति के पक्ष में ही किया। मुझे यह पक्की उम्मीद है कि जिस प्रभाव का इस्तेमाल उन्होंने शान्ति-रक्षा के लिये किया, वह उनकी मृत्यु के बाद भी शान्ति के लिये ही काम में लाया जायगा। ऐसा करने से, मुझे उम्मीद है कि

मुख्तलिफ मुल्कों के लोगों के दिमागों में आज जो एक दिमागी तनहाई की हालत पैदा होरही है, वह कम होगी। जिस तनाव के साथ आज के मसलों को हल करने की कोशिश की जारही है, लम्बी-लम्बी बहसें होती हैं, उन मसलों के हल की दिशा में ज़्यादा समझदारी और सहयोग की भावना से काम होगा, ताकि मार्शल स्तालिन की मौत हमें इस बात की और ज़्यादा प्रेरणा दे सके कि आज की अशांत दुनिया को पहले से भी कहीं ज़्यादा शान्ति की जरूरत है और हम सबको मिल कर, उसे नई दुर्घटनाओं से बचाना चाहिये।

● डा. सर्वेपल्ली राधाकृष्णन् की श्रद्धांजलि

स्तालिन की यह हार्दिक आकांक्षा थी कि मृत्यु के रूप में वे अपने देश से उसी समय विदा लें, जबकि उनका देश किसी खतरे में नहीं, बल्कि पूर्ण शान्ति की अवस्था में हो। कहना न होगा कि उनकी इच्छा सचमुच परिपूर्ण हुई है। मुझे आशा है, स्तालिन के उत्तराधिकारी भी शान्ति-रक्षा के लिये भरसक चेष्टा करेंगे और राष्ट्रों के आपसी सम्बंधों को अधिकाधिक मैत्रीपूर्ण बनायेंगे। अपने ढाई वर्ष के राजदूत-काल में, भारत के राजदूत की हैसियत से मॉस्को में मार्शल स्तालिन से भेंट करने पर, उन्होंने प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से कभी भी यह संकेत नहीं किया कि मौजूदा संघर्ष में भारत सोवियत संघ का साथ दे।

तेहरान में हुई चार महान् राष्ट्रों के नेताओं की कान्फ्रेंस में, चर्चिल ने कहा था कि रूस के इतिहास की महानतम विभूतियों के समकक्ष होने के नाते स्तालिन को महान् कहना सर्वथा उपयुक्त ही है। भले या बुरे जिस रूप में भी हो, उनके कार्य ने विश्व इतिहास पर अपनी गहरी छाप डाली है, जिसका प्रभाव हर राष्ट्र महसूस करता है।

मैं यह स्पष्ट कह देना चाहता हूं कि जिन्हें हम नागरिक स्वतंत्रतायें कहते हैं, रूस में उनके अभाव की बात से स्तालिन अनभिज्ञ नहीं थे। जब इस बारे में उनसे कोई कुछ पूछता, तो वे यही कहते कि उनके देश के वैविध्यपूर्ण इतिहास को देखिये और जिन ऐतिहासिक परिस्थितियों में से उन्हें गुज़रना पड़ा है, उन्हें भी देखिये। उन्हीं से इस बात का जवाब मिल जायगा कि रूस में नागरिक स्वतंत्रताओं का अभाव क्यों है? फिर, जब पहले शान्ति, समृद्धि और सुरक्षा हो जायेगी, तब नागरिक स्वतंत्रतायें तो बाद में भी प्राप्त की जा सकती हैं। जब मैंने उनसे कहा कि यह तो मार्क्सवाद के सिद्धान्तानुसार नहीं है; तो उन्होंने सिर्फ यही कहा कि वे कोई मौखिक कट्टरतावाले मार्क्सवादी नहीं, बल्कि क्रियात्मक मार्क्सवादी हैं।

यदि युद्ध-काल में मित्र-राष्ट्रों में जो सहयोग-सम्बन्ध था, वह युद्ध के बाद भी बना रहता तो आज दुनिया का मानस अधिक स्वस्थ होता। जहां तक रूस का सम्बन्ध

है, जिस देश के दो करोड़ व्यक्ति हताहत हुये हों और समूचे देश का एक-तिहाई भाग शत्रुओं द्वारा नष्ट कर दिया गया हो, वह आसानी से युद्ध की बात नहीं सोचेगा।

स्तालिन का निधन रूस के लिये एक बहुत बड़ी दुर्घटना है। अक्सर दुर्घटनायें एक बहुत बड़ा परिवर्तन लाती हैं और मुझे आशा है, यह दुर्घटना भी रूसियों में वह बड़ा परिवर्तन लायगी, जिससे कि वे दुनिया के विभिन्न राष्ट्रों के साथ भाईचारे और मित्रता का सम्बन्ध स्थापित कर सकेंगे। इस देशव्यापी दुःख, चिन्ता और संकट के समय हम रूस वासियों के साथ हार्दिक समवेदना और सहानुभूति प्रकट करते हैं और यह आशा करते हैं कि वे अपने देश को सुसंगठित रखते हुये, दूसरे राष्ट्रों से अपने सम्बन्ध सुधारने और शान्ति को क़ायम रखने की भरसक चेष्टा करेंगे।

● हिन्दुस्तानी कम्युनिस्ट पार्टी की श्रद्धांजलि

गहरे शोक के साथ, जिसे आंसू नहीं बता सकते, हम कामरेड स्तालिन की याद को अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करते हैं। मानव जाति ने अपना सबसे महान् प्रतिनिधि खो दिया। मानव-मुक्ति के आंदोलन ने अपना सबसे बड़ा रहनुमा खो दिया। और, शान्ति के ध्येय ने अपना अथक सूरमा खो दिया।

करोड़ों घरों में मातम छा गया है। सभी देशों के पचासों करोड़ आदमियों और औरतों के दिल दुख से भर गये हैं। जिसके लिये वे सबसे ज़्यादा लालायित हैं, जिसे वे सबसे ज़्यादा प्यार करते हैं, स्तालिन उसी सब के प्रतीक थे। वे उन सब की आशाओं और आकांक्षाओं के मूर्त रूप थे।

मानव इतिहास में आज तक दूसरा कोई ऐसा व्यक्ति नहीं हुआ, जिसके हर शब्द का दुनिया के हर देश में ऐसा व्यापक स्वागत हुआ हो, जिसके नाम का इतनी भारी बहुसंख्या के लिये इतना भारी महत्व रहा हो।

सोवियत जनता और सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी के लिए, हमारे दिल में गहरी सहानुभूति है। हम उन्हें विश्वास दिलाते हैं कि उनका शोक हिन्दुस्तान की तमाम जनता का शोक है, हर देश के हर नेकनीयत आदमी और औरत का शोक है।

कामरेड स्तालिन, मार्क्स, एंगेल्स और लेनिन के वफ़ादार शिष्य थे। उनके वैज्ञानिक और क्रांतिकारी काम को उन्होंने ज़ारी रखा, आगे बढ़ाया और नई बुलन्दियों पर पहुँचाया। कम्युनिज़्म में संक्रमण करने वाले समाज के वह मेमार और निर्माता थे और वह उस विजय के संगठनकर्त्ता और प्रेरणा-स्रोत थे, जिसने मानव जाति को बबर फासिस्टों की यंत्रणाओं से बचाया। कामरेड स्तालिन दुनिया के क्रान्तिकारी आन्दोलन के सेनानी थे। उनके ही नेतृत्व में उसने विजय पर विजय प्राप्त की।

औपनिवेशिक और गुलाम देशों की जनता के ध्येय को उन्होंने हमेशा आगे बढ़ाया। आज़ादी और जनवाद के लिए, उसके संघर्ष में वह अविचल पथ-प्रदर्शक और मित्र थे।

एक-तिहाई मानव जाति गौरवपूर्ण मुक्त दुनिया में रह रही है। समाजवाद, जनवाद और शान्ति का बराबर बढ़ता हुआ आन्दोलन पुरानी दुनिया की नींव हिला रहा है और तमाम देशों की जनता के लिए एक नयी और खुशहाल ज़िन्दगी के द्वार खोल रहा है। ये उनकी याद के जीवित स्मारक हैं। उनके ऐतिहासिक नेतृत्व के महान् सबूत हैं।

मानव सिद्धान्त और कार्यनीति के इस महापुरुष की मृत्यु से दुखी, हम मौजूदा पीढ़ी के कम्युनिस्ट इस बात को हमेशा गर्व के साथ याद करेंगे कि हम कामरेड स्तालिन के ही युग में रहे हैं, उन्होंने हमारा पथ-प्रदर्शन और नेतृत्व किया और उन्होंने हमें सिखाया कि कैसे अपने खून की आखिरी बूंद तक मज़दूर वर्ग और जनता की सेवा करनी चाहिये।

मुश्किलों के दिन, कठिन परीक्षा के दिन, इम्तहानों और कठिनाइयों के दिन आगे आने वाले हैं। उनमें कामरेड स्तालिन की बुद्धिमत्तापूर्ण सलाह, उनका प्रेरण-ा दायक नेतृत्व अब हमें न मिल सकेगा। उनकी मृत्यु से हुई भारी क्षति हर घड़ी खटकेगी। मगर, इस बात में हमें ज़रा भी सन्देह नहीं है कि स्तालिन के सांचे में ढले हुए व्यक्तियों के नेतृत्व में और स्तालिन द्वारा निर्मित पार्टी के पथ-प्रदर्शन में कम्युनिस्ट आन्दोलन और शक्तिशाली तथा एकजूट होगा; मानव-प्रगति के शत्रुओं की साजिशों को खतम करेगा और हमारे महान् शिक्षक और नेता द्वारा निर्धारित रास्ते पर दुनिया के मज़दूर वर्ग और आम जनता की रहनुमाई करता रहेगा।

जिस फरहरे को स्तालिन ने ऊँचा उठाया, उसके नीचे दृढ़तापूर्वक एकजूट होकर; जिस ध्येय के लिये स्तालिन जिये और जिसके लिये उन्होंने वीरगति पाई, उसके प्रति अडिग रूप से वफ़ादार रह कर और स्तालिन द्वारा हमारे लिये छोड़ी गई सबसे क़ीमती विरासत के रूप में कम्युनिस्ट पार्टी और अन्तर्राष्ट्रीय कम्युनिस्ट आन्दोलन के एके को सुरक्षित रख कर, हम विजय-पथ पर आगे बढ़ेंगे।

कामरेड स्तालिन का अमर नाम हमारे हृदय में अंकित है। अपने ध्येय को प्राप्त करने के लिये, वह हमेशा हमें प्रेरणा देते रहेंगे। इस गम्भीर घड़ी में, हम एक बार फिर प्रतिज्ञा करते हैं कि उन ध्येयों को हासिल करने के लिये हम अपने प्राण तक निछावर कर देंगे।

● इलिया एरेनबुर्ग की श्रद्धांजलि

इन कठिन दिनों में, स्तालिन अपनी पूर्णतम महानता के साथ हमारी आंखों के सामने उभर कर आये—हमने देखा उन्हें अखिल विश्व के मार्गों पर लम्बे डग भरते हुये, हमारे संकटपूर्ण ज़माने की हिलोरों पर शिखर की भांति छाते हुये। अपनी जन्मभूमि गुर्जी के पहाड़ों को वह लांघते हैं, दोन और वोल्गा के बीच के युद्ध-क्षेत्र को वह पार करते हैं, निर्माण-रत नये मॉस्को के चौड़े पथों से वह गुज़रते हैं, जनरव से पूर्ण शंघाई के बाज़ारों में वह दिखाई देते हैं, फ्रांस की पहाड़ियों को वह पार करते हैं, ब्राज़ील के जंगलों से गुज़रते हैं, रोम के प्रांगण में पहुंचते हैं, भारत के गाँवों को पार करते हैं—शिखरों को अपने चरणों से नापते हुये।

स्तालिन की अन्त्येष्टि का समय जब हो आया, तो पेरिस में एक बेरोज़गार आदमी गुलाब के हारों से सजे उनके चित्र के पास पहुंचा और वायलेट के फूलों का एक छोटा सा गुलदस्ता उसने अपनी ओर से अर्पित किया—"बजाय रोटी ख़रीदने के, मैंने उनके लिये फूल ख़रीदे।..." तूरिन में मशीनी औज़ारों का चलना बन्द होगया, सिसली के कृषि-मज़दूर ख़ामोशी में निस्तब्ध खड़े होगये, गेनोआ के घाट-मज़दूरों ने काम बन्द कर दिया। ये सब भी स्तालिन की अर्थी का साथ दे रहे थे। प्राचीन पीकिंग में युवक, बूढ़े लोग और अपने बच्चों को साथ लिये स्त्रियां, संकरे बाज़ारों को लांघती हुई मैदान की ओर तेज़ी से बढ़ रही थीं, जहां चीन अपने मित्र के प्रति शोक प्रकट कर रहा था। अर्जन्तीना की चरागाहों में एक गड़रिये ने किसी राह-चलते यात्री को 'शोक!' शब्द कह कर रोका और दोनों ने मिल कर स्तालिन के निधन का शोक मनाया। कोरिया के खंडहरों के बीच उन माताओं ने, जो मानव के दुर्भाग्य के लबालब प्याले चख चुकी हैं, अपनी आंखें झुका लीं और स्तालिन के निधन का शोक मनाया। पुलिस, मुख़बिरों और दमनकारियों से घिरे हुये न्युयॉर्क के ईमानदार लोगों ने शोक में भर कर कहा—"शान्ति का मित्र जाता रहा।"

हमारे दुश्मनों ने सोचा था कि इस महान् शोक में हमारा कोई साथी नहीं रहेगा। निस्सन्देह, हमारा शोक ऐसा है कि उसे शब्दों में नहीं बताया जा सकता। कमीने लोग, जो हर चीज़ का मूल्य डॉलरों और सैन्टों में आंकते हैं, कभी नहीं समझ सकते कि ऐसे आदमी को खोने के क्या अर्थ होते हैं। लेकिन इन कठिन दिनों में ही सम्भवतः पहली बार, हमने देखा कि हमारे मित्र कितने हैं, कि हमारा शोक मानव जाति का शोक बन गया है।

ब्राज़ील का खेत-मज़दूर, जो सपने में भी नहीं सोच सकता कि मॉस्को के बाज़ारों की शक्ल कैसी है या गांवों में लोग किस प्रकार जीवन बिताते हैं; रूसियों से वह कभी नहीं मिला है, उसने कभी बर्फ़ नहीं देखी है, वह नहीं जानता कि

छुट्टियों का विश्राम-घर कैसा होता है। अनेक सदियों पहले की भांति, वह सुबह से सांझ तक हाड़ तोड़ता है और उसकी खुशी के दुर्लभ क्षण बहुत ही नगण्य होते हैं। लेकिन हर मेहनत करने वाले की भांति, उसका हृदय बड़ा है और उसके हृदय पर उस आदमी के बारे में शब्द अंकित हैं, जो दुनिया के दूसरे हिस्से में रहता है और जो सब लोगों के लिये खुशहाली चाहता है। दुबला-पतला, काले रंग का यह खेत-मज़दूर जानता है कि मॉस्को नाम का एक नगर है और मॉस्को में स्तालिन रहते थे। उससे उसे जीवित रहने में मदद मिली। उससे उसे अपने कंधों को सीधा करने में सहारा मिला।

ऐसी पुस्तकें हैं जो हृदय को हिला देती हैं : इटली और फ्रांस के फांसी पाये हुये कम्युनिस्टों के पत्र। फासिज़्म के खिलाफ़ संघर्ष के दिनों में जल्लादों के हाथों पड़ने वाले वीर, जिन्होंने साहस के साथ मौत को गले लगाया था। उनमें से कई अपने जीवन की आखिरी घड़ियों में अपनी पत्नियों, अपनी माताओं या अपने मित्रों के नाम कुछ शब्द भेजने में सफल होगये थे। किन चीज़ों के बारे में उन्होंने लिखा था? उन्होंने लिखा था अपने प्रियजनों के बारे में, अपने बच्चों के बारे में और उस आदमी के बारे में, जिसने उन्हें उनकी मृत्यु से पहले की घड़ियों में सहारा दिया था—उन्होंने लिखा था स्तालिन के बारे में। फांसी पर चढ़ाये जाने से एक घंटा पहले, रेबेर, जो गेस्टापो की यंत्रणाओं के कारण हिल तक नहीं सकता था, ने स्तालिन का नाम लिखा था। स्तालिन के नाम को अपने होठों पर धारण किये, गेब्रील पेरी और दनियल केसानोवा ने बहादुरी के साथ अपनी मौत को गले लगाया था। स्तालिन का नाम था—चीन के उन वीरों की ज़बान पर जिन्होंने महान् अभियान में हिस्सा लिया था, कैन्टन के उन शहीदों की ज़बान पर जिन्होंने अपने देश की आज़ादी के लिये अपने प्राणों की बलि दी थी। स्तालिन का नाम लेकर ही, स्पेन के लोगों ने फासिज़्म के खिलाफ़ संघर्ष में कूदने की शपथ ली थी। थेलमॉन को जब यंत्रणायें दी जारही थीं, तब स्तालिन के नाम ने ही उन्हें बल दिया था और स्तालिन ी थे जिन्होंने वियतनाम के हृदय में आशाओं को जगाये रखा था।

उनकी बातों को केवल सुना ही नहीं जाता था, केवल दोहराया ही नहीं जाता था। उन्हें प्यार किया जाता था, एक महान् मानवीय प्रेम के साथ प्यार किया जाता था; क्योंकि वह जनता को प्यार करते थे, उनकी कमज़ोरियों और उनकी ताक़त को पहचानते थे, क्योंकि वह उस मां के आंसुओं का मर्म समझते थे जो युद्ध में अपने बेटे को खो चुकी है, क्योंकि वह खान-मज़दूर और ईंटसाज़ के श्रम की क़द्र करते थे। उनके शब्दों को सभी समझते थे—मॉस्को में और कैन्टन में, पेरिस में और रियो-द-जनेरो में। उनकी जड़ें हमारे इतिहास में, हमारी जन्मभूमि में गहरी

जमी थीं, लेकिन वह वास करते थे हमारे देश की सीमाओं से परे, बहुत दूर-दूर के लोगों के हृदयों में।

उन दिनों जब फ़ासिज़्म संस्कृति के अस्तित्व मात्र को आतंकित कर रहा था, मानव की प्रतिष्ठा और जीवन के लिये ख़तरा बन गया था—स्तालिन ने मुक्ति-सेना को युद्ध में उतारा। उन्होंने युरोप और एशिया के लोगों की रक्षा करने वाली सेनाओं का नेतृत्व किया। गुलाम देशों के वीरों को—लीमूसीन, पिएमौन्त, पोलैंड और स्लोवाकिया के गुरिल्ला सैनिकों को प्राग और ओसलो की, एथेन्स और तिराना की बहादुर सन्तानों को—उन्होंने आगे बढ़ाया। विजय के गौरव को लोगों ने पहचाना। इसका कारण यह था कि खुद स्तालिन ने युद्ध में उनकी अगुआई की थी। और, जब फ़ासिस्टी क़ैदखानों और कन्सैन्ट्रेशन कैम्पों के दरवाज़े खोले गये तो युरोप के सभी देशों के पुरुषों और स्त्रियों ने खुशी के आंसू बहाते हुये, स्तालिन के नाम को दोहराया। योसेफ़ विस्सारियोनोविच के जन्म की सत्तरवीं वर्षगांठ के अवसर पर, उनके पास बहुमूल्य उपहार भेजे गये—युद्ध में काम आये सैनिकों की माताओं ने पारिवारिक स्मृति-चिन्ह भेजे : यंत्रणायें देकर गेस्टापो द्वारा मारी गई लड़की का हैट, लड़ाई में मारे गये बेटे को मिला युद्ध का पदक। फ्रांस के लोगों ने स्तालिन को एक कलश भेजा, जिसमें वलेरिएन के उस किले की मिट्टी रखी थी जहां देशभक्तों को गोलियों से उड़ा दिया गया था और जहां वीरों ने अपने देश की जय के साथ, जीवन की जय के साथ, स्तालिन की जय के साथ अपनी मौत को गले लगाया था।

वह महान् सेनापति थे, जो युद्ध से घृणा करते थे। वह उस शोक से अच्छी तरह परिचित थे, जो युद्ध में आम लोगों के सिर पर फूटता है। वह सेनापति थे एक ऐसी सेना के, जो युद्ध के वर्षों में शान्ति के लिये लड़ी, जिसने स्तालिनग्राद के खंडहरों में शपथ ली कि भयानक क़त्लेआम की आग लगाने वालों का अन्त करके ही वह दम लेगी। सभी जानते हैं कि वह कौन था, जिसने लोगों की विजय को कलंकित किया, वह कौन था जिसने फिर से युद्ध का हल्ला शुरू किया। उस छाया को हम कभी नहीं भूलेंगे, जो स्तालिन के चेहरे पर उस समय पड़ गई थी, जबकि समुद्र के उस पार से नये रक्तपात के पहले आह्वान हम तक पहुंचे थे।

स्तालिन ने कहा कि लोग, सभी देशों के साधारण पुरुष और स्त्रियां, युद्ध को रोक सकते हैं और इसके जवाब में शान्ति की एक अभूतपूर्व सेना का उदय होगया। एक मामूली सी स्त्री फ़ौजी गाड़ी को रोकने के लिये रेल की पटरी पर लेट गई। एक अन्य स्त्री दौड़ कर परेड के मैदान में पहुंची और उसने सैनिकों का आह्वान किया कि वे अपने भाइयों के खिलाफ़ हाथ न उठायें। घाट-मज़दूरों ने अपनी बांहों को समेट लिया और हमलावरों के हथियारों को लादने या उतारने से इन्कार कर दिया। अपने खेतों को विदेशी हवाई अड्डों के रूप में परिवर्तित करने के खिलाफ़, किसान अपने

खेतों के लिये लड़े। शान्ति की मांग करते हुये, लोग बाज़ारों में निकल आये। विराट कांग्रेसों का आह्वान किया गया, जिनमें सभी देशों के प्रतिनिधि पुरुषों और स्त्रियों ने, सभी विचारों और सभी धर्मों के लोगों ने शान्ति के झंडे को ऊंचा उठाने की शपथ ली। करोड़ों लोगों ने अपीलों पर अपने हस्ताक्षर किये। ये अपीलें नहीं, बल्कि वचन-पत्र थे। इतिहास में पहले कभी लोगों की चेतना इतनी जाग्रत नहीं हुई थी, पहले कभी इतनी आशा का संचार नहीं हुआ था।

आज, इन दुःखपूर्ण दिनों में, शान्ति के सारे समर्थकों ने—वे चाहे जिस देश के भी रहने वाले हों, वे चाहे जैसे भी विचार रखते हों—देखा है कि वे स्तालिन के कितने ऋणी हैं। वही है जिसने लोगों को एक दूसरे युद्ध को रोकने में मदद दी, वही है जिसने करोड़ों बच्चों और हजारों नगरों की रक्षा की।

लोगों से इस छोर से उस छोर तक भरे, रोम के प्रांगण में टार्चों के प्रकाश से आलोकित स्तालिन का चित्र लगाया गया। और, देर तक जोरों से ये शब्द गूंजते रहे : "स्तालिन ही शांति हैं।" मिसीसीपी राज्य के एक छोटे से क़स्बे में एक नीग्रो मजदूर ने मुझे बताया—" वे हमें क़त्ल करने के लिये ले जाना चाहते हैं, लेकिन स्तालिन यह नहीं होने देंगे।" डेनमार्क में एक सीधी-साधी, पांच बच्चों की मां ने कहा—"मुझे अपने बच्चों के लिये डर नहीं है। स्तालिन उनकी रक्षा करेंगे।"

चीन के गांवों में मैंने स्तालिन के चित्रों को देखा और इन चित्रों की ओर इशारा करते हुये, चीन के पुरुषों और स्त्रियों ने कहा—" वह हमारे घर की रक्षा कर रहे हैं।" पेरिस में घरों की दीवारों पर दो शब्द अंकित थे, जो लोगों के मस्तिष्क में एक-दूसरे से मिल कर एक होगये हैं : " स्तालिन " और " शान्ति "।

स्वभावतः शान्ति की सेना में अनेक, बहुत से कम्युनिस्ट हैं। ठीक वैसे ही जैसे कि फ़ासिज़्म से मानव जाति को मुक्त करने वाली सेना में कितने ही, बहुत से कम्युनिस्ट थे। लेकिन, अकेले कम्युनिस्ट ही शान्ति को ऊंचा नहीं उठा रहे हैं। सभाओं में, सम्मेलनों और कांग्रेसों में कितने ही विश्वासों के लोगों ने—कैण्टबरी के डीन ह्यूलेट जॉन्सन, एबॉट बौलियर, रोम के भूतपूर्व चान्सलर वर्थ और इटली के उदारदली नेता नित्ति ने—स्तालिन की बुद्धिमत्ता और शांति-प्रेम का जिक्र किया है। शांति के महान् रखवारे की अन्त्येष्टि में भारत की राष्ट्रीय कांग्रेस के सदस्य डाक्टर किचलू ने हिस्सा लिया, फ्रांस के प्रगतिशील नेताओं—येव फार्ज और पियरे कोत ने हिस्सा लिया। मानव जाति के दुश्मन शान्ति के अन्य समर्थकों से कम्युनिस्टों को अलग करने के लिये व्यर्थ ही जोड़-तोड़ लगा रहे हैं। व्यर्थ ही वे सोवियत संघ, चीन और जनता के जनतंत्रों को शांति के लक्ष्य की रक्षा करने वाली पश्चिमी युरोप, अमरीका और एशिया की जनप्रिय ताक़तों से अलग करने की सोचते हैं। स्तालिन

के ये शब्द कि भिन्न व्यवस्थायें, भिन्न दुनियायें एक साथ रह सकती हैं और शांतिपूर्ण प्रतियोगिता कर सकती हैं, मानव जाति की चेतना में समा गये हैं। इन शब्दों ने लोगों को संयुक्त बनाया है, उन्होंने एक ऐसी ताक़त को जन्म दिया है, जिसे कुत्सित युद्ध-प्रेमी कुचल नहीं सकते।

स्तालिन ने एक से अधिक बार राष्ट्रों के आज़ादी के अधिकार के पक्ष में आवाज़ उठाई है। अब राष्ट्र समझ गये हैं कि अगर आज़ादी नहीं, तो सुरक्षा भी नहीं। गुप्त या खुले आधिपत्य के ख़िलाफ़, विदेशी अड्डों के ख़िलाफ़ और नये हमलावर कृत्यों के लिये सभी प्रकार के "विदेशी सैनिक दलों" के ख़िलाफ़ संघर्ष में स्तालिन के शब्द उन्हें प्रेरणा देते हैं।

दिसम्बर के अन्त में, एक अमरीकी पत्रकार को स्तालिन ने जवाब देते हुये कहा था कि संयुक्त राज्य अमरीका और सोवियत संघ के बीच युद्ध को अनिवार्य नहीं माना जा सकता और यह कि दोनों देश आगे भी शान्ति के साथ रह सकते हैं। ये स्तालिन के आख़िरी शब्द थे, जो समूचे भूमण्डल में व्याप्त हुये थे। ये दुनिया में सबसे ज़्यादा मज़बूत और सबसे ज़्यादा शान्तिप्रिय राज्य के अध्यक्ष के शब्द थे। सारी दुनिया के आम लोगों की रक्षा के लिये, रक्तपात के ख़िलाफ़, स्तालिन ने शान्ति के पक्ष में आवाज़ उठाई थी।

शान्ति के महान् रखवारे के निधन का समाचार सुन कर, हर जगह के लोगों पर छा जाने वाला शोक कितना स्वाभाविक शोक है। लेकिन, हर कोई जानता है कि स्तालिन मर नहीं सकते। वह केवल अपनी कृतियों में ही जीवित नहीं हैं, केवल सोवियत राज्य की शक्ति और बढ़ती में ही जीवित नहीं हैं, बल्कि वह करोड़ों लोगों के मस्तिष्क में जीवित हैं—रूसियों और चीनियों के, पोलों और जर्मनों के, फ्रांसिसीयों और वियतनामियों के, इटालियनों और ब्राज़ीलियनों के, कोरियनों और अमरीकियों के। जब स्तालिन का हृदय धड़कना बन्द हुआ, तो मानव जाति का शोक सन्तप्त हृदय और भी ज़्यादा ज़ोरों से धड़कने लगा। साधारण पुरुषों और स्त्रियों ने अनुभव किया कि स्तालिन की स्मृति ने, स्तालिन के आदेशों ने, शान्ति और मानव जाति की खुशहाली के लिये संघर्ष ने, उन्हें और भी ज़्यादा घनिष्ट सूत्र में बांध दिया है।

स्तालिन की अर्थी पर, ये शब्द गूंज कर चारों ओर फैल गये : "हम जनता के सच्चे सेवक हैं और जनता शान्ति चाहती है, युद्ध से घृणा करती है। करोड़ों के रक्त की होली को रोकने और खुशहाल जीवन के निर्माण की गारंटी करने की लोगों, की इच्छा, हम सबकी पवित्र इच्छा हो!" ये शब्द साथी स्तालिन के विचारों, चिन्ताओं और उनके इरादों के मूर्त रूप थे और इन शब्दों को उनके सहकर्मी,

सोवियत सरकार के अध्यक्ष ने उच्चारित किया था। ये शब्द हर कहीं और जगह सर्वसाधारण पुरुषों और स्त्रियों के पास पहुंचेंगे और हमारे साथ मिल कर, कहेंगे—" स्तालिन जीवित हैं ! "

६. स्तालिन सम्बंधी कवितायें

चिरकाल से जनगण अपने वीरों की गाथायें गाता आया है, लेकिन स्तालि तो सोवियत की जनता के लिये गाथाओं के वीरों से बहुत विलक्षण थे। उन्हं अपने कार्यों से उनके जीवन में अद्भुत परिवर्तन किया है। स्तालिन ने उ अत्याचारों और भूख से मुक्त किया, अगाध अन्धकार से निकाल कर प्रकाश में रख उनकी सभी तरह की बेड़ियां काट फेकीं और कुछ ही वर्षों में उनके सामने ऐ सुखमय संसार ला दिया, जिसकी वह कल्पना भी नहीं कर सकते थे। स्तालि के बारे में, जनसाधारण ने अपनी-अपनी भाषाओं में अनेक गीत बनाये और उ गाकर साइबेरिया के तेगा, तुंद्रा, पामीर और काकेशश के हिमाच्छादित शिख किज़िलकुम और कराकुम के रेगिस्तानों, उक्रइन और रूस की शस्यश्यामला भूमि प्रतिध्वनित किया है। इन गीतों में बहुतों के रचयिताओं का भी पता नहीं है। ह यहां सोवियत में जन-प्रसिद्ध ऐसे पाँच गीतों को ही दे रहे हैं। अंत में, हिन्दी अ उर्दू की भी एक-एक कविता है।

● अज्ञात कवि

यदि होते दो हृदय मेरे सीने में,
चढ़ घोड़े पर मैं,
ले आता उन्हें मॉस्को।

पुर-द्वार उतरता अश्व से,
लेता निकाल कटिबन्द रेशमी,
रखता उस पर दो ज्वलित हृदय।

देता रख सुघड़ पॉवड़ों पर,
कहता पुकार दरबानों से:
"उपहार स्तालिन के लिये एक रेशमी पोटलि का।"

पोटलि से हृदय द्वय जल उठते;
जल उठते, जैसे महाहृदय
जगमग करता क्रेमलिन में।

● अज्ञात कवि

ऊपर-ऊपर घाटी के
गिरि-शिखर तुंग ।
ऊपर-ऊपर शिखरों के
है नभ महान् ।
किन्तु स्तालिन के आगे,
है खर्व गगन ।
सम हैं, तेरे सम केवल
वे उच्च विचार ।
ऊंचे उगते हैं नभ में
तारे और रजनीपति ।
तेरे सन्मुख तारे होते मलिन, किन्तु
वह रवि भी होता मलिन,
चमक तेरे सन्मुख ।
रवि-किरण लुप्त होती,
रजनी के सन्मुख,
पर बुद्धि पार कर उसे चमकती ।
यह लौह कठिन,
पर धातु कल्पना की तेरी
है कठिन, कठिनतर ।
तू है नभ से अतिमहान्,
सम्मानित है इससे ही
तू इन सभी पर्वतों से भी ।

औरों के ऊंचे-ऊंचे,
नभचुम्बी सुविचारों को,
ऊंचे पर्वत के वासी,
लाते मन में नहीं ।
जन-नेत्र चमत्कृत होते उन
गिरिबाजों से,
जब शब्द पहुंचते तेरे,
आदेश हमें देने को ।
शब्द जो तेरे सुनता है,
नहीं उसे बिसर वह सकता ।
जो कोई अवगम करता
तेरी उस हित-शिक्षा को,
जय-शिक्षा पाता है, वह
हारेगा कभी न रण में ।
उत्सुक हैं सारे जनगण
ऊंचे पर्वत-पुंजों में कि दे दें दिल
हृय अपने
तेरी सच्ची शिक्षा में ।
मुंह फेर, ज़रा तो देखो,
शत-शत हैं पीछे तेरे
अनुयायी वे हैं तेरे,
क्योंकि सत्पथ है तेरा ।
बनता जो अनुचर तेरा,
नहीं वह मरने से डरता—स्तालिन !

● दाग़िस्तानी कवि सुलेमान स्तालस्की

जीवन बढ़ता है आगे,
दल करता है नेतृत्व ।
श्रमिकों का महाप्रयाण,
साथ तुम्हारे उनका ध्वज
—स्तालिन ! ॥ १ ॥

नव तरुणायी में चमकी,
ज्योति दिखाती पथ श्रमिकों को,
नेतृत्व जहां, तब शोक नहीं,
जीवन है सुखमय
—स्तालिन ! ॥ २ ॥

वर्षों बीते और कभी नहीं
आया दुर्भग वत्सर कोई,
जबसे हमको त्राण दिया ।
उत्तुंग शिखर से तुमको,
हैं साफ़ दीखते दूर क्षितिज
—स्तालिन ! ॥ ३ ॥

अरिभुज को तुमने भग्न किया,
दृढ़ किया हमारी भुज को
और पूर्ण विजय-माला को
रख दिया शीश दुर्बल के ।
एक कुंजी नव जीवन की
—स्तालिन ! ॥ ४ ॥

तेरा, ओ मेरे युग-प्रसिद्ध !
जिसका है नाम,
है सुन्दर कृतियों की संज्ञा,
तेरा कि जिसने शब्द सुने,
औ' समझे मन दुखियों के;
तेरा गाता हूं मैं यश
—स्तालिन ! ॥ ५ ॥

● मिखाइल इन्युश्किन

भू-सीमा से सीमा तक, घाटी, वन और पर्वत में—
जहां बाज़ परम अभिमानी मंडराता केवल ऊपर ।
अति प्रेम-पात्र स्तालिन सुचतुर के गुण-गौरव को लेकर,
जनता के हृदयों से उठता संगीत ।
द्रुततर बाज़ों की गति से, यह गीत उड़ रहा नभ में,
कम्पित हैं अत्याचारी सब इसके भय-भैरव से ।
कंटकित-तार-संरक्षित औ' दुर्ग-गुप्त सीमायें,
अवरुद्ध न कर सकती हैं संगीत सतत-प्रसरण को ।
नहिं गोली और न कोड़ा चुप कर सकता है इसको,
यह साभिमान लांघ जाता खाई औ' मोर्चा-बन्दी ।
रिक्शों के चलते पहियों और ओठों से कुलियों के,
हलवाहों के हल से भी है गीत निकलता इसका ।
जयकर्त्ता-ध्वज-सा इसको ऊंचे स्वर से वह गाते,
जनता का संयुत-संगर बढ़ रहा प्रबल पांती में ।

ऊंचे और ऊंचे स्वर से साहस और ताप बढ़ाता,
बढ़ रहा, हटाता अत्याचारी को अपने मग से।
कर प्राप्त विजय हम यों सब, अब साभिमान हैं गाते,
स्तालिन के युग को मिल कर हम सम्मानित हैं करते।
सुखमय अद्भुत नवजीवन को गाते हैं हम अपने,
अपनी पाई विजयों के गाते सुख के गीतों को।
भू-सीमा से सीमा तक, घाटी, वन औ' पर्वत में,
घहराता यान गगन का, मोटर गर्जन करती जहां,
जनता के अतिशय प्रेम का भाजन जो है स्तालिन,
यह विजयी जनता सारी उस सुचतुर के यश गाती।

● चेरकास स्वायत्त प्रजातंत्र की जुरियत् शकोवा रचित—लोरी

लाउ-लाउ-लाउ-ला।
रात आई मेरे बच्चे सो जा।
सो जा मेरे छोटे, भूरी आंखों वाले!
मैं गाती हूं तेरे लिये।
बड़े दिन होंगे।
तेरा भाग्य, ओ मेरे प्रसिद्ध!
खेत और जंगल, सरिता और गिरिवर,
जो कुछ देखता है मेरे धनी, सब तेरे।
मेरे छोटे, भूरी आंखों वाले!
रात आई,
हो गये राजपथ सूने,
खेतों का काम बन्द हुआ,
सुनता है घर आने के गीत,
दूर से ट्रैक्टर-ड्राइवरों के।
जल्दी ही मेरे बच्चे तू होगा बड़ा,
जब बढ़ के तू युवा होगा,
तू भी पुत्र, कम्बाइन चलायेगा,
हां मेरे छोटे, भूरी आंखों वाले!
तू सिद्ध करेगा अपने को मेरा पुत्र,
बढ़ने को हैं तेरे समाजवादी सम्वत्सर।
तेरे सीने पर अच्छे कामों के लिये,
चमकेंगे रंग पदक के।
तू होगा सम्मानित अपने कामों में,
तू पिछड़ेगा नहीं संगर में।
कौन तुझसे हाथ मिलायेगा?
हमारे स्तालिन!
मिलायेंगे वह छोटे हाथों से।
लाउ-लाउ-लाउ-ला।
सो जा कोमल औ' गहरी नींद,
ओह! कैसा चमकीला यश
तेरे लिये रक्खा है,
कैसा सुन्दर और यशस्वी जीवन!

● श्री नरेन्द्र शर्मा

जागरूक प्रहरी धरती का, जनता का अभिभावक !
लौह और हिम का तन धर कर आया था ज्यों पावक !
हिटलर से हिरनाकुस मारे बन बन कर नर-नाहर,
खेल सके फिर धरती की फुलवारी में मनु-शावक !

निर्भय अभय-स्वरूप कि जिससे जन का भय भगता था,
गहन मौन जिसका रिपु को हुंकार सदृश लगता था !
नपी-तुली संयत वाणी में उत्स नए जन-मन का,
उसके दो नयनों में शतमुख स्वप्न-दीप जगता था !

उसकी अँगुली के इंगित पर स्वयम् काल भी नाचा,
रक्त-मांस का मनुज बना दुर्दान्त क्रान्ति का ढाँचा !
अंतर में करुणा, कराल कर स्वार्थों के संहारक,
कोमल मोम लिए सीने में वह इस्पाती साँचा !

पूंजीवादी चक्रव्यूह का द्वार तोड़ने वाला,
अधोगामिनी सरिताओं की धार मोड़ने वाला,
सदियों के भूखे बंजर को दिया बीज का दाना—
नित्य नए नौतोड़ जोत कर भूमि गोड़ने वाला !

निश्चित नियत योजनाओं से नियति प्रकृति को कीला,
क्रांति विपथगा उसके बल-कौशल से बनी सुशीला !
सबल राष्ट्र का सार्थवाह वह पहुँच चुका मंज़िल तक,
उसके लिए सोच क्यों कर हो? क्यों हो आँचल गीला !

अपने लिए न जीने वाले मर कर भी कब मरते ?
हर घर में वह दीपक बनते, हर दिल में घर करते !
सौ सौ भाग्य बिगड़ते जग में एक स्वार्थ के कारण,
एक अमर निरस्वार्थ भाव से सौ सौ भाग्य सवँरते !

अमर होगया है मर कर भी वह अरुणध्वज--धारी !
लड़ा सर्वहारा के हित में, कभी न हिम्मत हारी !
आशा का उद्धार किया युग युग के अंधकूप से,
अर्थपिशाचों से स्वतंत्र की मानवता सुकुमारी !

वह सुकुमारी, थी जो कामुक सामन्तों की दासी,
जिसकी सुंदरता ही जिसको बनी गले की फाँसी !
वह सुकुमारी, जो अब भी क्रय-विक्रय की सामग्री,
जो बल-संबल की भूखी है और शांति की प्यासी !

मुक्त किया उस सुकुमारी को, दिया शान्ति-शीतल जल !
जन-बल धन-बल की भूखी को दिया श्रमिक का संबल !
अब न बवंडर उड़ा सकेंगे धरती को अंबर में,
भँवर धरा को दिखा सकेगी अब न दिनांध रसातल !

जन-नेता के चरण-चिह्न अब दीपस्तम्भ बनेंगे,
चरण चरण पर मुक्तचरण यश के कवि गीत रचेंगे !
उसके सुफल मनोरथ सब के संबल बन जाएँगे,
उसकी सुध को हम भी धुँधली होने कभी न देंगे !

● श्री जाँ निसार अख़्तर

उफ़क़े-वक़्त[1] से खुर्शीदे-दुरख़्शाँ[2] टूटा,
कौन खुर्शीदे-दुरख़्शाँ वो मेरा स्तालिन !
दफ़अतन[3] चीख़ सी एक सीनये-गेती[4] से उठी
दफ़अतन दिल की पुकारों से जहाँ गूँज उठा
नालये-दर्द से काशानये-जाँ[5] गूँज उठा

दश्तो-दर[6] गूँज उठे—कौन मेरा स्तालिन !
बहरो-बर[7] गूँज उठे—कौन मेरा स्तालिन !
क़ल्बे-गुलशन[8] से जुनूख़ेज़ पुकारें निकलीं
चाक करती हुई दामन को बहारें निकलीं
बाल खोले हुये खेतों से हवायें लपकीं
कारख़ानों से दिल-अफ़गार[9] सदायें लपकीं
बादबानों[10] से लरज़ती हुई आहें दौड़ीं
थरथराती हुई तारों की निगाहें दौड़ीं
एक लमहे के लिये छा सी गई दहर[11] पे रात

१-काल का क्षितिज, २-चमकीला सूरज, ३-एकदम, ४-धरती का सीना, ५-प्राण का प्रासाद, ६-जंगल और घर, ७-भूमि और समुद्र, ८-उपवन का हृदय, ९-दिल चीरनेवाली, १०-पालों, ११-दुनिया ।

रौशनी चीख़ उठी—कौन मेरा स्तालिन !
एक लमहे के लिये रुक सी गई नब्ज़े-हयात[१२]
ज़िन्दगी चीख़ उठी—कौन मेरा स्तालिन !

साथियो जादये-मंज़िल[१३] पै हमारा रहबर
ज़िन्दगी भर की मशक़्क़त से थका सोता है
ज़र्रे-ज़र्रे को फ़रोग़े-महो-अन्जुम[१४] देकर
आसमाँ सीनये-गेती से लगा सोता है

दोस्तो बारगहे-अज़मते-आदम[१५] है यही
पाये-रफ़्तार[१६] को आदाब[१७] सिखा दो, ठहरो
दिल हमारे हैं उसी के तो खिलाये हुये फूल
उसके क़दमों पै यही फूल चढ़ा दो, ठहरो
सरबख़म[१८] अज़मते-कौनैन[१९] हुई जाती है
साथियो परचमे-गुलरंग[२०] झुका दो, ठहरो

तुझमें ये परचमे-गुलरंग अदा किसकी है ?
सुर्ख़ तारे तेरे सीने में ज़िया[२१] किसकी है ?
चीन किस अब्र[२२] का परतौ[२३] तेरे गुलज़ार[२४] पै है ?
रंग किसका ये तेरे बाग़ की दीवार पै है ?
तेरे झूमे हुये धानों में लहक है किसकी ?
माओ के नर्म तबस्सुम[२५] में झलक है किसकी ?
कोरिया अज़्म[२६] है किसका तेरे जांबाज़ों में ?
किसकी ललकार छुपी है तेरी आवाज़ों में ?
वीतमिन्ह ये तेरे शोले में लपक किसकी है ?
तेरे बढ़ते हुये क़दमों में धमक किसकी है ?
आग ये किसकी मलाया तेरे बाग़ात में है ?
कौन सा सुर्ख़ निशाँ देख तेरे हाथ में है ?
मिश्र ये धूम है क्या तेरे ख़रीदारों में ?

१२–ज़िन्दगी की नब्ज़, १३–मंज़िल की देहरी, १४–चाँद-तारों की चमक, १५–मनुष्यता का महानतम स्थान, १६–गति के पैरों को १७–आचार, १८–नत-मस्तक, १९–सृष्टि की महत्ता, २० लाल गुलाब जैसे रंग का, २१–रोशनी, २२–बादल, २३–छाया, २४–बाग़, २५–मुस्कराहट, २६–निश्चय ।

आ गया कौन सा *यूसुफ़ तेरे बाज़ारों में ?
वादिये-नील पे है लालेंफ़िशानी[27] किसकी ?
छागई अर्ज़े-जुलेखा[28] पे जवानी किसकी ?
खाके-ईरान तेरे दिल में लगी है किसकी ?
आग ये तेल के सीने में दबी है किसकी ?
हिन्द, ऐ मेरे वतन, मेरे हिमाला की ज़मीं
मेरे फ़िरदौस[29], मेरे ताजो-अजन्ता की ज़मीं
जुल्फे-बंगाल में ये ख़म, ये अदा किसकी है ?
ये दकन पर तेरे गुलनार[30] घटा किसकी है ?
सुर्ख़ है किससे जबीं तेरे तेलंगाने की ?
किसकी ममनून[31] है सुर्ख़ी[32] तेरे अफ़साने[33] की ?

एशिया तेरे गुलिस्ताँ का सजानेवाला
इक नई आबोहवा देके गया है तुझको
अर्ज़े-मशरिक़ तेरी ज़ीनत[34] का बढ़ाने वाला
सुर्ख़ फूलों की क़बा[35] देके गया है तुझको
उम्र भर तेरे लिये जान खपानेवाला
अपनी मेहनत का सिला देके गया है तुझको
जाते-जाते भी तेरा नाज़ उठानेवाला
तोहफ़ये-अमनो-बक़ा[36] देके गया है तुझको
हाँ बढ़े चल कि तेरा राह बताने वाला
तेरी मंज़िल का पता देके गया है तुझको

स्तालिन तेरी साहेबे-नज़री[37] बाक़ी है
दीदावर देख तेरी दीदावरी[38] बाक़ी है
राहबर अब भी तेरी राहबरी बाक़ी है

२७–लाले के फूलों की बारिश, २८–जुलेखा का देश, २९–स्वर्ग, ३०–सुर्ख़, ३१–कृतज्ञ, ३२–शीर्षक, ३३–कथा, ३४–सजावट, ३५–लिबास, ३६–शान्ति और जीवन, ३७–दार्शनिक दृष्टि, ३८–व्यापक दृष्टि ।

* यूसुफ़ का सौन्दर्य अद्वितीय था और उन्हें मिश्र के बाजार में एक दास की तरह बेचा गया था । उनके सौन्दर्य के कारण, मिश्र के प्रभु वर्ग का हर आदमी उन्हें ख़रीदने को लालायित था । मिश्र की रानी जुलेखा ने उन्हें सबसे अधिक दाम देकर ख़रीद लिया था ।

अज़्मे-मोहकम[39] है तेरा नाम ज़माने के लिये
जेहदे-पैहम[40] है तेरा नाम ज़माने के लिये
एक परचम है तेरा नाम ज़माने के लिये

साथियो दोश[41] पै गुलरंग निशाँ[42] लेके चलो
इक जहाँ लेके उठो, एक जहाँ लेके चलो
स्तालिन अभी जिन्दा है हमारे दिल में
हर क़दम एक नया अज़्मे-जवाँ[43] लेके चलो
ज़िन्दगानी के ख़ज़ाने कहीं लुट सकते हैं ?
ज़िन्दगानी से नई ताबो-तवाँ[44] लेके चलो
सैले-रफ़्तार में दरिया की रवानी खो जाय
अपनी ठोकर में हर इक [45]कोहे-गराँ लेके चलो
जगमगा जाय सितारों से ज़मीं दूर नहीं
अपने क़दमों में कोई काहकशाँ[46] लेके चलो
जुल्मते-आख़िरे-शब[47] भी न रहेगी बाक़ी
और दो-चार क़दम मिशअले-जाँ[48] लेके चलो

साथियो हौसलये-शौक़ को महमेज़[49] करो
हाँ क़दम तेज़ करो, तेज़ करो, तेज़ करो
[50]इर्तिक़ा वक़्त का फ़र्मान सुनाता है चलो
हर क़दम माओ हमें राह दिखाता है चलो
स्तालिन हमें मंज़िल पै बुलाता है चलो

३९-दृढ़ निश्चय, ४०-निरंतर संघर्ष, ४१-कंधा, ४२-ध्वजा, ४३-जवान निश्चय, ४४-शक्ति, ४५-भारी पहाड़, ४६-आकाश गंगा, ४७-रात के पिछले प्रहर का अंधेरा, ४८-जीवन ज्योति, ४९-ऐड़ लगाओ, ५०-विकास ।

परिशिष्ट

स्तालिन का वर्ष-पत्र

सन्	स्थान	घटना विवरण
१८७९, दिसम्बर, २१	गोरी	स्तालिन का जन्म
१८८८, सितम्बर	,,	पुरोहित स्कूल में प्रवेश
१८९४, सितम्बर, २	तिफ़लिस	अर्थोडक्स धर्मशास्त्रीय सेमिनरी में प्रवेश
१८९५	,,	स्तालिन की कविता छपी
१८९६–९८	,,	मार्क्सीय अध्ययन-चक्र स्थापित किया
१८९८, अगस्त	,,	क्रान्तिकारी संख्या के सदस्य बने
अगस्त	,,	हड़ताल का संगठन
१८९९, मई, २९	,,	स्तालिन सेमिनरी से निकाले गये
१९००, अप्रैल, २३	,,	मई दिवस पर भाषण
१९०१, नवम्बर, ११	,,	समाजवादी कमिटी के सदस्य
नवम्बर	बातूम	मज़दूरों में काम आरम्भ
दिसम्बर, ३१	,,	अध्ययन-चक्र-कान्फ्रेंस
१९०२, मार्च, ८	,,	मज़दूर-प्रदर्शन का संगठन
मार्च, ९	,,	मज़दूरों के प्रदर्शन पर गोली चली
अप्रैल, ५	,,	स्तालिन की प्रथम गिरफ़्तारी
१९०३, फरवरी	,,	काकेशीय पार्टी कांग्रेस
जुलाई, ९	कुतैस	साइबेरिया में तीन वर्ष का निर्वासन-दंड
नवम्बर, २७	,,	साइबेरिया पहुंचे
दिसम्बर	,,	लेनिन का प्रथम पत्र
१९०४, जनवरी, ५	,,	स्तालिन साइबेरिया से गायब
जनवरी, ६	काकेशिया	स्तालिन का प्रथम विवाह
दिसम्बर, १३-३१	बाकू	हड़ताल का नेतृत्व
१९०५, फरवरी, १३	,,	खूनी रविवार के विरुद्ध पर्चा
जुलाई, १५	,,	**हथियारबंद विद्रोह और हमारे दांव-पेच** लेख प्रकाशित
अक्तूबर, १८	,,	जार की सुधार-घोषणा पर भाषण
नवम्बर	बाकू	काकेशीय चतुर्थ सम्मेलन का संचालन
दिसम्बर	मॉस्को	प्रथम रूसी क्रान्ति

१९०५, दिसम्बर, १२-१७	तमरफोर्स	लेनिन से प्रथम मुलाक़ात
१९०६, अप्रैल, १५	तिफ़लिस	गुप्त छापाख़ाना पकड़ा गया
अप्रैल, १०-२५	स्टॉकहोम	पार्टी की चौथी कांग्रेस में
जून, २१	तिफ़लिस	**अराजकतावाद या समाजवाद?** लेख छपा
१९०७, अप्रैल, ३०	लन्दन	पंचम पार्टी कांग्रेस में
अगस्त, १२	बाकू	**गुद्दांक** का प्रकाशन
सितम्बर, २९	,,	**ख़ानलार की घटना** लेख छपा
अक्तूबर, २५	,,	बाकू पार्टी कमिटी के सदस्य चुने गये
१९०८, मार्च, ९	,,	**तेल के मालिक** लेख छपा
मार्च, २५	,,	स्तालिन गिरफ़्तार
नवम्बर, ९	वलोग्दा	निर्वासन-दंड
१९०९, जून, २४	,,	भाग निकले
१९१०, मार्च, २३	,,	स्तालिन तीसरी बार गिरफ़्तार
अगस्त, २७	,,	काकेशिया से पांच साल के लिये निष्कासित
सितम्बर, २३	,,	निर्वासित, नज़रबन्द
१९११, जून, १	,,	अनुपस्थिति में केंद्रीय कांफ्रेंस की संगठन-कमिटी के सदस्य चुने गये
सितम्बर, ६	,,	निर्वासन से निकल भागे
सितम्बर, ९	पीतरबुर्ग	चौथी गिरफ़्तारी
दिसम्बर, १४	वलोग्दा	तीन वर्ष के लिये निर्वासित
१९१२, फरवरी, २९	,,	नज़रबन्दी से भागे
अप्रैल, २२	पीतरबुर्ग	पांचवीं गिरफ़्तारी
जुलाई, २	नारिम	साइबेरिया में निर्वासित
सितम्बर, १	,,	निर्वासन से भगे
१९१३, फरवरी, २३	पीतरबुर्ग	छठी गिरफ़्तारी
१९१४, सितम्बर	युरोप	प्रथम विश्व-युद्ध घोषित
१९१५, ग्रीष्म	साइबेरिया	बोल्शेविकों की सभा में
१९१७, फरवरी	,,	बूर्ज्वा-क्रान्ति
मार्च, १२	पीतरबुर्ग	स्तालिन पहुंचे
मई	,,	पोलित ब्यूरो के सदस्य चुने गये
जुलाई, २६	,,	छठी पार्टी कांग्रेस का संचालन

१९१७, अगस्त-अक्तूबर	पीतरबुर्ग	केन्द्रीय पत्रों **प्रॉलितारी** और **रबोची** का सम्पादन
अक्तूबर, २४ (६ नवम्बर)	,,	अस्थायी सरकार को उलटने का आह्वान
अक्तूबर, २५ (७ नवम्बर)	,,	महाक्रान्ति
१९१८, मार्च	,,	ब्रेस्तलितोवस्क-सन्धि
मई, २६	,,	खाद्य-विभाग के प्रधान संचालक
अगस्त	मॉस्को	समाजवादी-क्रान्तिकारियों का विद्रोह
,,	,,	स्तालिन ज़ारित्सीन में
१९१९, मार्च	पीतरबुर्ग	राजनियंत्रण लोककमीसार नियुक्त
जून-जुलाई	,,	पेत्रोग्राद की रक्षा
मई-अक्तूबर	उक्रइन	दक्षिणी मोर्चे पर
१९२०, नवम्बर	,,	पोल और रेंगल की पराजय
१९२१, मार्च	मॉस्को	मॉस्को दसवीं पार्टी-कांग्रेस
,,	,,	नवीन-आर्थिक नीति
१९२२, मार्च-अप्रैल	,,	११ वीं पार्टी-कांग्रेस—स्तालिन पार्टी के महामंत्री चुने गये
दिसम्बर, ३०	,,	सोवियत समाजवादी गण संघ की स्थापना
१९२३, अप्रैल	,,	१२ वीं पार्टी-कांग्रेस
१९२४, जनवरी, २१	गोर्की	लेनिन का निधन
मई	,,	१३ वीं पार्टी-कांग्रेस
१९२५, दिसम्बर	मॉस्को	१४ वीं पार्टी-कांग्रेस
१९२७, दिसम्बर	,,	१५ वीं पार्टी-कांग्रेस
१९२९, दिसम्बर, २१	,,	स्तालिन की ५० वीं वर्षगांठ
१९३०, मार्च, १५	,,	**सफलता से चकाचौंध** लेख
अप्रैल, ३	,,	**कलखोज़ी साथियों को जवाब** ,,
१९३०, जून	,,	१६ वीं पार्टी कांग्रेस
१९३३, दिसम्बर, ११	,,	निर्वाचन-भाषण
नवम्बर, ३	,,	पत्नी नादेज़्दा का देहांत
१९३४, जनवरी	,,	१७ वीं पार्टी-कांग्रेस
जनवरी, २८	,,	लेनिन संस्मरण सभा में भाषण
दिसम्बर, १	,,	किरोफ़ की हत्या
१९३६, मार्च, १	,,	राय होवार्ड से मुलाक़ात